भौतिक विज्ञान में क्रान्ति

[फ़्रेंच भाषा की मूल पुस्तक "La Physique Nouvelle et les Quanta" के नीमेयर (R. W. Niemeyer) कृत अंग्रेजी भाषान्तर (1950) से अनूदित]

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला—२६

भौतिक विज्ञान में क्रान्ति

(क्वांटमों का गणितविहीन पर्यवेक्षण)

लेखक

लूई दे ब्रोगली

अनुवादक

डॉ० निहाल करण सेठी

प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग

उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण
१९५८

मूल्य
साढ़े चार रुपया

मुद्रक
पं० पृथ्वीनाथ भार्गव,
भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, वाराणसी

प्रकाशकाय

भारत की राजभापा के रूप में हिन्दी की प्रतिप्ठा के पश्चात् यद्यपि इस देश के प्रत्येक जन पर उसकी समृद्धि का दायित्व है, किन्तु इससे हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों के विशेष उत्तरदायित्व में किसी प्रकार की कमी नहीं आती। हमें संविधान में निर्धारित अवधि के भीतर हिन्दी को न केवल सभी राजकार्यों में व्यवहृत करना है, उसे उच्चतम शिक्षा के माध्यम के लिए भी परिपुष्ट बनाना है। इसके लिए अपेक्षा है कि हिन्दी में वाङमय के सभी अवयवों पर प्रामाणिक ग्रन्थ हों और यदि कोई व्यक्ति केवल हिन्दी के माध्यम से ज्ञानार्जन करना चाहे तो उसका मार्ग अवरुद्ध न रह जाय।

इसी भावना से प्रेरित होकर उत्तर प्रदेश शासन ने हिन्दी समिति के तत्त्वावधान में हिन्दी वाङमय के सभी अङ्गों पर ३०० ग्रन्थों के प्रणयन एवं प्रकाशन के लिए पंचवर्षीय योजना परिचालित की है। यह प्रसन्नता का विषय है कि देश के बहुश्रुत विद्वानों का सहयोग इस सत्प्रयास में समिति को प्राप्त हुआ है जिसके परिणाम-स्वरूप थोड़े समय में ही विभिन्न विषयों पर पचीस ग्रन्थ प्रकाशित किये जा चुके हैं। देश की हिन्दी-भाषी जनता एवं पत्र-पत्रिकाओं से हमें इस दिशा में पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है जिससे हमें अपने इस उपक्रम की सफलता पर विश्वास होने लगा है।

प्रस्तुत ग्रन्थ हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला का २६ वाँ पुष्प है। भौतिक विज्ञान सम्बन्धी धारणाओं में पिछले ५०-६० वर्षों के भीतर जो क्रान्ति हुई है, उसका विवरण और इतिहास बहुत रोचक है। इस पुस्तक में इसी विषय का दिग्दर्शन कराया गया है। इसके लेखक हैं नोबुल पुरस्कार विजेता लूई दे ब्रोगली, जिन्होंने स्वयं इस क्रान्ति में प्रमुख भाग लिया है और जो द्रव्य के तरंग-सिद्धान्त के प्रणेता के रूप में विश्वविख्यात

हैं। उनकी कलापूर्ण तथा अधिकारी लेखनी ने इस पुस्तक को और भी महत्त्वपूर्ण बना दिया है। मूल पुस्तक फ्रेञ्च भाषा में लिखी गयी थी और उसका संसार की अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। आशा है, हिन्दी भाषा में उसका यह अनुवाद जो हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिक डॉ० श्री निहालकरण सेठी ने किया है, हमारे पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

भगवतीशरण सिंह

सचिव, हिन्दी समिति

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

भूमिका

क्वांटमों का महत्त्व

१. क्वांटमों के विषय में ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक क्यों ?

इसमें सन्देह नहीं कि इस छोटी-सी पुस्तक के आवरण पर रहस्यमय शब्द क्वांटम को देखकर ही अनेक पाठक आशंकित हो उठेंगे। जन-साधारण को आपेक्षिकता के सिद्धान्त[1] के सम्बन्ध में तो थोड़ा बहुत अस्पष्ट—बहुधा अत्यन्त ही अस्पष्ट—परिचय है क्योंकि पिछले कई वर्षों से इसके विषय में बहुत चर्चा होती रही है। किन्तु मेरा विश्वास है कि क्वांटम-सिद्धान्त[2] के सम्बन्ध में जनता को प्रायः कुछ भी आभास—अस्पष्ट आभास भी—नहीं है। मानना पड़ेगा कि ऐसा होना क्षन्तव्य भी है क्योंकि क्वांटम सचमुच ही रहस्यमय वस्तुएँ हैं। जब मैं केवल बीस वर्ष का था तभी मैंने इनका अध्ययन प्रारम्भ किया था और उन पर विचार करते अब प्रायः चौथाई शताब्दी बीत चुकी है, तथापि मुझे नम्रतापूर्वक यह स्वीकार करना पड़ता है कि इतने चिन्तन के बाद भी मैं उनके केवल थोड़े-से ही गुणों को कुछ थोड़ा अधिक अच्छी तरह समझ सका हूँ। किन्तु अभी तक मुझे ठीक-ठीक नहीं मालूम कि बाहरी आवरण के पीछे छिपा हुआ उनका वास्तविक स्वरूप कैसा है। फिर भी मैं समझता हूँ कि यह अब निस्सन्देह कहा जा सकता है कि यद्यपि पिछली कई शताब्दियों में भौतिक विज्ञान में बहुत विस्तृत और महत्त्वपूर्ण प्रगति हो गयी है तथापि जब तक भौतिकज्ञों को क्वांटमों के अस्तित्व का पता नहीं लगा था तब तक वे भौतिक घटनाओं के वास्तविक तथा गूढ़ रहस्य को समझने में बिलकुल ही असमर्थ थे, क्योंकि क्वांटमों के बिना इस संसार में न तो प्रकाश का अस्तित्व हो सकता है और न द्रव्य का। धर्मशास्त्र की भाषा का अनुकरण करके यह भी कहा जा सकता है कि ईश्वर की इस सृष्टि में किसी भी वस्तु का निर्माण क्वांटमों के बिना नहीं हुआ है।

1. Theory of Relativity 2. Quantum Theory

अब हम समझ सकते हैं कि जिस दिन विज्ञान में चुपके से क्वांटमों का प्रवेश हुआ था उस दिन हमारे मानवीय विज्ञान की प्रगति की दिशा ने सचमुच ही वास्तविक मोड़ ले लिया था। उस दिन चिरप्रतिष्ठित (क्लैसिकल) भौतिक विज्ञान की विशाल और भव्य इमारत की नींव तक हिल गयी थी। किन्तु उस समय इस बात का किसी को भी स्पष्टतः अनुभव नहीं हुआ था। बौद्धिक जगत् के इतिहास में इतनी बड़ी उथल-पुथल बहुत कम ही हुई है।

जो क्रान्ति हो गयी है उसकी वृहत्ता का अन्दाज़ा लगाने में हमें अब कुछ थोड़ी-सी सफलता मिलने लगी है। देकार्ते[1] के आदर्श का अनुसरण करके चिरप्रतिष्ठित भौतिकी ने हमें यह बताया था कि यह विश्व एक विशाल यान्त्रिक रचना के समान है। आकाश[2] में उसके विभिन्न भागों के अवस्थापन[3] से तथा काल के प्रवाह में होनेवाले उसके परिवर्तनों के ज्ञान से उसका पूर्णतः यथार्थ वर्णन हो सकता है। और प्रारम्भिक स्थिति के सम्बन्ध में कुछ ज्ञान होने पर सिद्धान्ततः उसकी भविष्य में हो सकनेवाली प्रगति के विषय में बिलकुल सही प्रागुक्ति भी की जा सकती है। किन्तु यह धारणा जिन अनेक प्रच्छन्न परिकल्पनाओं पर निर्भर थी वे प्रायः अनजाने ही स्वीकार कर ली गयी थीं। इन परिकल्पनाओं में एक यह भी थी कि आकाश[4] और काल[5] के जिस ढाँचे या संस्थान में हम अपने समस्त अनुभवों की अवस्थापना करने का प्रयत्न स्वभावतः करते हैं वह पूर्णतः दृढ़[6] और अपरिवर्ती है। सिद्धान्ततः इस ढाँचे में प्रत्येक भौतिक घटना की अवस्थापना समस्त निकटवर्ती गत्यात्मक प्रक्रियाओं से सर्वथा स्वतन्त्र होती है। फलतः भौतिक जगत् के समस्त परिणमन (वैरियेशन्स) आकाश की स्थानीय अवस्था के काल-प्रवाह में होनेवाले रूपान्तरों के द्वारा अवश्य ही व्यक्त हो सकते हैं। और यही कारण है कि चिरप्रतिष्ठित विज्ञान में ऊर्जा[7] तथा संवेग[8] जैसी गत्यात्मक राशियाँ व्युत्पन्न[9] राशियों के रूप में प्रकट हुई थीं और वेग[10] की धारणा पर आश्रित थीं। अर्थात् गतिमिति[11] ही गति-विज्ञान[12] का आधार बन गयी थी।

किन्तु क्वांटम-भौतिकी[13] के दृष्टिकोण से तथ्य सर्वथा विपरीत है। क्रिया के क्वांटम[14] के अस्तित्व में (जिसका उल्लेख हमें इस पुस्तक में अनेक बार करना पड़ेगा) यह बात निहित है कि आकाश और काल में अवस्थापन के दृष्टिकोण में तथा

1. Descartes 2. Space 3. Localisation 4. Space 5. Time 6. Rigid 7. Energy 8. Momentum 9. Derived 10. Velocity 11. Kinematics 12. Dynamics 13. Quantum Physics 14. Quantum of action

गत्यात्मक परिणमन के दृष्टिकोण में एक प्रकार का वैपरीत्य है। वास्तव जगत् के वर्णन में दोनों ही दृष्टिकोणों का उपयोग हो सकता है, किन्तु यह सम्भव नहीं है कि एक ही साथ दोनों को पूर्ण कठोरतापूर्वक अपनाया जा सके। आकाश और काल के संस्थान में अविकल यथार्थतापूर्वक अवस्थापन एक प्रकार का स्थैतिक आदर्शीकरण[1] है जिसमें परिणमन और गत्यात्मकता की संभावना नहीं हो सकती। विपरीत इसके गतिशील अवस्था की पूर्णतः शुद्ध कल्पना गत्यात्मक[2] आदर्शीकरण है जो सिद्धान्ततः स्थान और क्षण की धारणाओं का पूर्णतः विरोधी है। क्वांटम सिद्धान्त में भौतिक जगत् का वर्णन तभी सम्भव है जब इन दो परस्पर विरोधी प्रतिरूपों में से किसी एक का ही थोड़ा या बहुत उपयोग किया जाय। इससे एक प्रकार का समझौता-सा हो जाता है। हाइज़नबर्ग[3] के विख्यात अनिश्चितता के अनुबन्ध[4] हमें यही बताते हैं कि यह समझौता किस हद तक संभव है। इन नये विचारों से अनेक अन्य परिणामों के अतिरिक्त यह भी प्रमाणित हो जाता है कि गतिमिति कोई ऐसा विज्ञान नहीं है जिसका कुछ भौतिक अर्थ हो। चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी[5] में यह मान लिया गया था कि आकाश में होनेवाले विस्थापनों का स्वतन्त्र रूप से अध्ययन हो सकता है और इसके द्वारा विस्थापनों[6] और त्वरणों[7] की परिभाषाए बिना इस बात की चिन्ता किये भी बन सकती हैं कि वे विस्थापन वस्तुतः सम्पन्न क्यों होते हैं। गति के इस निरपेक्ष अध्ययन से प्रारम्भ करने के बाद उसमें कई नये भौतिक-सिद्धान्तों के समावेशन से ही गति-विज्ञान[8] की दिशा में प्रगति हुई थी। किन्तु क्वांटम-सिद्धान्त में विषय का इस प्रकार विभाजन सिद्धान्ततः मान्य नहीं है क्योंकि आकाश और काल में अवस्थापन, जो गतिमिति का मूल आधार है, केवल गतिवैज्ञानिक प्रतिबन्धों द्वारा निश्चित सीमा तक ही स्वीकार किया जा सकता है। फिर भी हम आगे चलकर देखेंगे कि स्थूल घटनाओं के अध्ययन के लिए गतिमिति का उपयोग पूर्णतः न्यायसंगत हो सकता है। किन्तु जिन परमाणु-मापदंडीय सूक्ष्म घटनाओं में क्वांटमों का प्राधान्य होता है उनके लिए हमें यह कहना पड़ता है कि जिस गतिमिति में समस्त प्रवर्तक कारणों को छोड़कर गति का अध्ययन स्वतन्त्र रूप में किया जाता है वह सर्वथा अर्थहीन है।

चिरप्रतिष्ठित भौतिकी के मूल में दूसरी प्रच्छन्न परिकल्पना यह है कि प्राकृतिक

1. Static idealisation 2. Dynamic 3. Heisenberg 4. Uncertainty relations 5. Classical mechanics 6. Displacements 7. Accelerations 8. Dynamics

घटनाओं के यथार्थतापूर्वक अध्ययन के लिए वैज्ञानिक जो प्रेक्षण और माप करता है उनके द्वारा घटना-प्रवाह में होनेवाले विकारों को समुचित पूर्वविधानताओं[1] की सहायता से उपेक्षणीय कर देना संभव है। दूसरे शब्दों में यह मान लिया जाता है कि सुसम्पादित प्रयोगों में ऐसे विकार यथेष्ट परिमाण में छोटे और सूक्ष्म कर दिये जा सकते हैं। स्थूल परिमाणवाली घटनाओं में तो यह परिकल्पना सदैव बहुत-कुछ पूरी उतरती है, किन्तु परमाणु-जगत् में ऐसा नहीं होता। वस्तुतः हाइज़नबर्ग और बोह्र[2] के सूक्ष्म और गहन विश्लेषणों के द्वारा प्रमाणित हो गया है कि क्रिया के क्वांटम की वास्तविकता का यह निश्चित परिणाम होता है कि किसी निकाय[3] की किसी एक लाक्षणिक राशि को नापने के प्रयत्न से ही उस निकाय-सम्बन्धी अन्य राशियों में किसी अज्ञात रीति से कुछ परिवर्तन हो जाता है। अधिक यथार्थतापूर्वक यों कह सकते हैं कि जिस राशि के द्वारा निकाय का आकाश और काल में यथार्थ अवस्थापन सम्भव हो सके उसके नापने की प्रक्रिया का यह परिणाम होता है कि उस राशि से संयुग्मित[4] जिस दूसरी राशि के द्वारा उस निकाय की गत्यात्मक अवस्था निर्धारित होती है वह बदल जाती है। विशेषतः यह असम्भव है कि किन्हीं भी दो संयुग्मित राशियों को एक साथ पूर्ण यथार्थतापूर्वक नापा जा सके। अब हम समझ सकते हैं कि क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व के कारण किसी निकाय के अवयवों का आकाश और काल में अवस्थापन किस प्रकार उस निकाय की सुनिश्चित गत्यात्मक अवस्था के निर्धारण का विरोधी हो जाता है क्योंकि निकाय के अवयवों के अवस्थापन के लिए यह आवश्यक है कि हमें गत्यात्मक अवस्था सम्बन्धी दोनों ही संयुग्मी राशि-समूहों का यथातथ[5] (एग्ज़ैक्ट) ज्ञान हो। किन्तु एक राशि-समूह का यथातथ ज्ञान ही उस राशि-समूह से संयुग्मित दूसरे राशि-समूह के यथातथ ज्ञान को असम्भव बना देता है। अपने अध्ययन के लिए किसी निकाय में जो विकार वैज्ञानिक उत्पन्न करता है उसके लिए क्वांटमों का अस्तित्व एक निश्चित प्रकार की निम्न सीमा निर्धारित कर देता है। इस प्रकार चिरप्रतिष्ठित भौतिकी के मूल में जो परिकल्पनाएँ प्रच्छन्न थीं उनमें से एक का प्रतिषेध हो जाता है। इस तथ्य के परिणाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

इससे यह नतीजा निकलता है कि सनातन विचारधारा के अनुसार किसी निकाय के यथातथ विवरण के लिए जिन राशियों का ज्ञान आवश्यक है उनमें से

1. Precautions 2. Bohr 3. System 4. Conjugate 5. Exact

आधी से अधिक का ज्ञान हमें यथार्थतापूर्वक हो ही नहीं सकता। सच तो यह है कि निकाय की किसी एक लाक्षणिक राशि का जितना ही अधिक यथार्थ ज्ञान हमें होगा उतनी ही अधिक अनिश्चित उससे संयुग्मित दूसरी राशि हो जायगी। इस बात से प्राकृतिक घटनाओं की प्राक्‌निर्णीतता के सम्बन्ध में प्राचीन और नवीन भौतिक विज्ञान में बहुत महत्त्वपूर्ण अन्तर पैदा हो जाता है। प्राचीन भौतिक विज्ञान में कम-से-कम सिद्धान्ततः तो यह सम्भव था कि किसी निकाय के अवयवों के स्थान और उससे संयग्मित गत्यात्मक राशियों को निर्धारित करनेवाली राशियों के यौग-पदिक ज्ञान के द्वारा किसी परवर्ती क्षण पर उस निकाय की जो अवस्था होनेवाली है उसको हम कठोर[1] गणना के द्वारा पहले से ही जान लें। किसी क्षण t_0 पर किसी निकाय की परिलक्षक राशियों के मान x_0, y_0, ...को यथार्थतः जान लेने पर पहले हम निश्चित रूप से बता सकते थे कि किसी परवर्ती क्षण t पर उन राशियों को नापने से उनके क्या मान x, y, ...पाये जायँगे। यह परिणाम भौतिक तथा यान्त्रिक सिद्धान्तों के मूल समीकरणों के रूप तथा उन समीकरणों के गणितीय गुणों का था। वर्तमान घटनाओं के द्वारा भविष्य की घटनाओं की बिलकुल संशयहीन प्रागुक्ति की सम्भावना के द्वारा अर्थात् भविष्य किसी न किसी प्रकार वर्तमान में ही निहित है और उसमें कोई नवीन बात प्रविष्ट नहीं होती इस धारणा के ही द्वारा उस मान्यता की सृष्टि हुई थी जिसे हम प्राकृतिक घटनाओं का नियतिवाद[2] कहते हैं। किन्तु इस संशयहीन प्रागुक्ति के लिए आकाशीय[3] अवस्थापन की चर राशियों के तथा उनसे संयुग्मित गतिकीय राशियों के यौगपदिक मानों का यथातथ ज्ञान आवश्यक है। और क्वांटम सिद्धान्त ठीक इसी ज्ञान को असम्भव बतलाता है। इसी कारण आज प्राकृतिक घटनाओं के परम्परा-क्रम और भौतिक सिद्धान्तों की प्रागुक्ति कर सकने की क्षमता के सम्बन्ध में भौतिकज्ञों की (कम से कम उनमें से बहुतों की) विचारधारा में बहुत बड़ा परिवर्तन हो गया है। किसी क्षण t_0 पर निकाय की लाक्षणिक राशियों के नापे हुए मानों में क्वांटम-सिद्धान्त के अनुसार कुछ अनिवार्य अनिश्चितता रहती ही है। इस कारण भौतिकज्ञ पहले से यह ठीक-ठीक नहीं बता सकता कि उन राशियों के मान किसी परवर्ती क्षण पर क्या होंगे। वह केवल यही कह सकता है कि किसी परवर्ती क्षण पर नापे हुए मान किन्हीं निर्दिष्ट संख्याओं के बराबर होंगे, इस बात की प्रायिकता[4] कितनी है। जिन नापों से भौतिकज्ञों को

1. Rigorous 2. Determinism 3. Spatial 4. Probability

घटनाओं के पारिमाणिक रूप का ज्ञान होता है उनके उत्तरोत्तर पाये जानेवाले मानों का सम्बन्ध अब चिरप्रतिष्ठित नियतिवाद का कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं रह गया है। अब यह केवल प्रायिकता का सम्बन्ध है क्योंकि जैसा हम ऊपर बता चुके हैं, केवल ऐसा ही सम्बन्ध क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व से उत्पन्न अनिश्चितता से अविरुद्ध हो सकता है। इस प्रकार भौतिक नियमों के सम्बन्ध में जो हमारी धारणा थी उसमें अब बहुत बड़ा परिवर्तन हो गया है। हमारा विश्वास है कि इस परिवर्तन के समस्त दार्शनिक परिणामों को पूरी तरह समझने में अभी बहुत देर लगेगी।

सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान के आधुनिक विकास ने दो ऐसे विचारों को जन्म दिया है जिनका उपयोग अत्यन्त व्यापक है—एक तो बोह्र के अर्थ में परिपूरकता[1] और दूसरा धारणाओं की सीमितता[2]। सबसे पहले बोह्र ने ही इस बात को स्पष्ट किया कि तरंग-यांत्रिकी[3] के विकास ने नवीन क्वांटम सिद्धान्त को जो रूप दिया है उसमें कणिकाओं[4] और तरंगों[5] की धारणाएँ अर्थात् आकाश और काल में अवस्थापन और सुनिर्दिष्ट गत्यात्मक अवस्थाएँ परस्पर परिपूरक[6] हैं। इससे उनका आशय यह है कि प्रेक्ष्य घटनाओं के अविकल वर्णन के लिए इन दोनों ही धारणाओं का उत्तरोत्तर उपयोग करना आवश्यक तो है, किन्तु फिर भी ये धारणाएँ एक प्रकार से असंधेय[7] हैं क्योंकि इनके द्वारा हमारे मस्तिष्क में जो प्रतिरूप बनते हैं वास्तविकता के वर्णन में उन दोनों का एक साथ पूर्णतः उपयोग कभी नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए पारमाणविक भौतिक विज्ञान में बहुत बड़ी संख्या ऐसे प्रेक्षित तथ्यों की है जिनका विवेचन केवल कणिकाओं की धारणा की सहायता से ही किया जा सकता है और इसलिए यह धारणा भौतिकज्ञ के लिए अपरित्याज्य समझी जा सकती है। इसी तरह तरंगों की धारणा भी अन्य बहुसंख्यक घटनाओं के विवेचन के लिए उतनी ही अपरित्याज्य है। यदि वास्तविकता पर इन दोनों धारणाओं में से किसी एक का पूर्ण कठोरता से उपयोग किया जाय तो दूसरी को पूर्णतः अपवर्जित[8] समझना होगा। किन्तु वस्तुतः दोनों ही धारणाएँ घटनाओं के विवेचन के लिए कुछ हद तक लाभदायक सिद्ध हुई हैं और परस्पर पूर्णतः विरोधी होने पर भी परिस्थिति के अनुसार कभी एक का और कभी दूसरी का उपयोग विकल्पतः वांछनीय है। यही बात आकाश-कालीय अवस्थापन और सुनिर्दिष्ट गत्यात्मक अवस्था के सम्बन्ध

1. Complementarity. 2. Limitation of concepts 3. Wave-mechanics 4. Corpuscles 5. Waves 6. Complementary 7. Irreconcilable 8. Excluded

में भी है। कणिकाओं और तरंगों की धारणाओं के समान ही ये धारणाएँ भी "परिपूरक" हैं। इसके अतिरिक्त हम आगे चलकर देखेंगे कि इन दोनों प्रकार की धारणाओं में बहुत गहरा सम्बन्ध भी है। यह प्रश्न हो सकता है कि इन दो परस्पर विरोधी प्रतिरूपों में सीधी टक्कर कभी क्यों नहीं होती। इसका कारण हम पहले ही बता चुके हैं। दोनों परिपूरक प्रतिरूपों का प्रत्यक्ष सामना यों नहीं हो सकता कि दोनों प्रतिरूपों को पूर्णतः यथार्थ बनाने के लिए आवश्यक समस्त सूक्ष्म अवयवों को एक साथ और एक ही क्षण पर यथातथ नापना सम्भव नहीं है और यह असम्भवता जो वैश्लेषिकीय भाषा में हाइज़नबर्ग के अनिश्चितता के अनुबन्धों के द्वारा व्यक्त होती है, क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व पर ही पूर्णतः आधारित है। इस प्रकार आधुनिक सैद्धान्तिक भौतिकी के विकास में क्वांटम के आविष्कार का महत्त्वपूर्ण प्रभाव अत्यन्त स्पष्टता से प्रकट हो जाता है।

बोह्र द्वारा प्रतिपादित परिपूरकताएँ और धारणाओं की सीमितता में घनिष्ठ सम्बन्ध है। कणिका, तरंग, आकाशीय विन्दु या सुनिर्दिष्ट गत्यात्मक अवस्थाओं के सरल प्रतिरूप अमूर्त हैं, आदर्शीकरण मात्र हैं। बहुत से विषयों में तो ये आदर्शीकरण प्रकृत जगत् में भी सन्निकटतः वास्तविक सिद्ध होते हैं। फिर भी उनकी उपयोगिता सीमित होती है। प्रत्येक ऐसे आदर्शीकरण की मान्यता उसके "परिपूरक" आदर्शीकरण की मान्यता के द्वारा सीमित है। इस दृष्टि से हम यह कह सकते हैं कि कणिकाओं का अस्तित्व वास्तविक है क्योंकि उनके अस्तित्व को मान लेने से बहुत-सी घटनाओं की व्याख्या हो जाती है। किन्तु अन्य अनेक घटनाओं में यह कणिका-रूप तो बहुत-कुछ छिपा रहता है और केवल तरंग-रूप ही प्रकट होता है। हमारा मस्तिष्क जिन बहुत-कुछ योजनात्मक आदर्शीकरणों का निर्माण करता है वे वस्तु-तत्त्वों के कुछ पक्षों को निरूपित करने में तो समर्थ होते हैं, किन्तु उनकी भी अपनी सीमाएँ हैं और वे अपने परिदृढ़ ढाँचों में वास्तविकता की सम्पूर्ण सम्पदा को समाविष्ट नहीं कर सकते।

हम नवीन दृष्टिकोणों के इस प्रारम्भिक पर्यवेक्षण को जिसमें हमने क्वांटम-भौतिक विज्ञान के विकास की थोड़ी-सी झाँकी दिखायी है बहुत अधिक लम्बा नहीं करना चाहते। इस पुस्तक में आगे चलकर इन प्रश्नों में से एक-एक की पुनः विशद विवेचना तथा पूर्ण समीक्षा करने का अवसर हमें मिलेगा। जितना हमने यहाँ कह दिया है वही पाठक को यह बताने के लिए पर्याप्त है कि क्वांटम-सिद्धान्त की उपयोगिता कितनी गहरी है। इससे न केवल भौतिक विज्ञान की सबसे अधिक

जीवन्त और उत्साहपूर्ण शाखा पारमाणविक भौतिकी को उत्तेजना मिली है, किन्तु इसने निर्विवाद रूप से हमारी दृष्टि-सीमा को भी विस्तारित कर दिया है और ऐसी कई नवीन विचारधाराओं को भी जन्म दिया है जिनके चिह्न मानव विचारों की भविष्य प्रगति में निस्सन्देह सदा विद्यमान रहेंगे। इस कारण क्वांटम-भौतिकी में केवल विशेषज्ञों की ही रुचि नहीं होनी चाहिए। वह तो सभी सुसंस्कृत मनुष्यों के लिए ज्ञातव्य वस्तु हो गयी है।

२. चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी और भौतिकी सन्निकटन[1] मात्र हैं

अब हम संक्षेप में यह विचार करना चाहते हैं कि क्वांटम—वैज्ञानिक की दृष्टि में इस समय समस्त चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी तथा भौतिकी का मूल्य क्या रह गया है। जिन तथ्यों के लिए इनका निर्माण किया गया था और जिनके सम्बन्ध में इनकी सचाई प्रमाणित हो चुकी है उनके क्षेत्र में स्वभावतः अब भी इन विज्ञानों का मूल्य ज्यों-का-त्यों है। क्वांटमों के आविष्कार से भारी पिंडों के पतन सम्बन्धी नियमों अथवा ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान[2] के नियमों की सत्यता किसी तरह नष्ट नहीं हो सकती। जब कभी किसी नियम का सत्यापन[3] सन्निकटन की किसी कोटि तक निर्विवादतः हो जाता है (और प्रत्येक सत्यापन में किसी न किसी कोटि का सन्निकटन निहित रहता ही है) तब हम एक निश्चित परिणाम को प्राप्त कर लेते हैं जिसको कोई आगामी परिकल्पना नष्ट नहीं कर सकती। यदि ऐसा न होता तो किसी प्रकार का विज्ञान संभव ही नहीं हो सकता था। किन्तु यह अच्छी तरह सम्भव है कि नवीन प्रायोगिक तथ्यों के अथवा नयी सैद्धान्तिक धारणाओं के कारण हमें यह मानना पड़े कि पहले के सत्यापित नियम सन्निकटतः ही सत्य थे अर्थात् सत्यापन के प्रयोगों की यथार्थता में असीम वृद्धि कर देने पर भी उन नियमों की सत्यता अधिक यथार्थतापूर्वक प्रमाणित नहीं की जा सकती। विज्ञान के इतिहास में ऐसा कई बार हो चुका है। इसी प्रकार यद्यपि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के नियम (यथा प्रकाश का सरल रेखात्मक गमन) यथार्थतापूर्वक सत्यापित हो चुके थे और विश्वास हो गया था कि वे पूर्णतः सत्य हैं तथापि जिस दिन विवर्तन[4] की घटना का तथा प्रकाश के तरंग-रूप का आविष्कार हुआ उसी दिन यह मानना पड़ा कि ये नियम केवल सन्निकटतः ही सत्य हैं। इस उत्तरोत्तर सन्निकटन की विधि से ही बिना पूर्वापर विरोध के विज्ञान की प्रगति सम्भव हुई है। जिन भवनों का विज्ञान

1. Approximation 2. Geometrical optics 3. Verification 4. Diffraction

द्वारा मजबूती से निर्माण हो चुका है वे उत्तरकालीन प्रगति के द्वारा उखाड़ कर फेंक नहीं दिये जाते वरन् वे विशालतर भवनों में सन्निविष्ट कर लिये जाते हैं।

चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी और भौतिकी भी इसी प्रकार क्वांटम भौतिकी में सन्निविष्ट समझे जा सकते हैं। चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी तथा भौतिकी का निर्माण उन घटनाओं की व्याख्या के लिए हुआ था जो साधारण मानव मापदंडीय क्षेत्र में होती रहती हैं। वे इनसे वृहत्तर (खगोलीय) क्षेत्र के लिए भी मान्य हैं। किन्तु जब हम पारमाणविक क्षेत्र में उतर आते हैं तब चिरप्रतिष्ठित विज्ञानों की सत्यता क्वांटमों के अस्तित्व के कारण सीमित हो जाती है। ऐसा क्यों होता है? इसलिए कि प्लांक[1] के विख्यात नियतांक[2] के द्वारा नापे हुए क्रिया के क्वांटम का मान हमारे साधारण मात्रकों[3] की अपेक्षा असाधारण रूप से कम है। अर्थात् क्वांटम उन सब राशियों की अपेक्षा अत्यन्त छोटा है जो हमारे मानव मापदंडीय क्षेत्र में पायी जाती हैं। क्वांटमों के अस्तित्व के कारण और विशेषकर हाइज़नबर्ग की अनिश्चितताओं के कारण जो विक्षोभ[4] उत्पन्न होते हैं वे मानवीय क्षेत्र की साधारण अवस्थाओं में इतने छोटे होते हैं कि उनका हमें पता ही नहीं चल सकता। वस्तुतः वे उन अनिवार्य प्रायोगिक भूलों की अपेक्षा भी अत्यन्त ही छोटे होते हैं जिनके कारण चिरप्रतिष्ठित नियमों का सत्यापन सदैव सीमित रहता है।

अतः क्वांटम-सिद्धान्तों की दृष्टि से चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी और भौतिकी सिद्धान्ततः पूरी तरह से यथार्थ नहीं मालूम पड़तीं। साधारण अवस्थाओं में प्रायोगिक भूलों के कारण उनकी अयथार्थता इस प्रकार पूरी तरह से छिप जाती है कि मानव मापदंड से उन्हें अत्युत्तम सन्निकटन समझा जा सकता है। यह बात फिर वैज्ञानिक प्रगति की उसी नियमित परम्परा का निदर्शन करती है जिसमें सुसंस्थापित सिद्धान्त और सु-सत्यापित नियम ज्यों-के-त्यों सुरक्षित तो रहते हैं, किन्तु उन्हें कुछ विशेष प्रकार की घटनाओं के लिए उपयोगी सन्निकटनों के रूप में ही सत्य समझा जा सकता है।

साधारण मानवीय क्षेत्र में क्वांटमों का हस्तक्षेप न होने से चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी और भौतिकी में आभासी सत्यता दिखाई देती है उससे शायद हमें यह कहने का प्रलोभन हो सकता है कि "वस्तुतः क्वांटमों को जितना महत्त्व दिया जाता है उतना उनमें है नहीं, क्योंकि जिस विशाल क्षेत्र में चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी और

1. Planck 2. Constant 3. Unit 4. Perturbation

भौतिकी सत्य हैं और विशेषतः जिस क्षेत्र में उनका व्यावहारिक उपयोग होता है उसमें क्वांटमों की पूर्णरूप से उपेक्षा की जा सकती।" किन्तु इस विषय को इस नजर से देखना हमें युक्तिसंगत नहीं मालूम होता। सबसे पहले तो पारमाणविक और नाभिकीय[1] भौतिक-विज्ञान के समान महत्त्वपूर्ण प्राणवान् और भविष्य सम्भावनाओं* से परिपूर्ण क्षेत्र में क्वांटमों की अनिवार्य उपयोगिता है और बिना इनकी सहायता के घटनाओं की व्याख्या पूर्णतः असम्भव है। फिर स्थूल मापदंडीय भौतिकी में भी यद्यपि क्वांटम अपनी सूक्ष्मता के तथा नापने की प्रक्रिया में उपस्थित अनिवार्य अनिश्चितता के कारण अप्रकट ही रहते हैं तथापि वे विद्यमान तो होते हैं और उनके अस्तित्व के फलस्वरूप सिद्धान्ततः वे सब परिणाम भी उपस्थित रहते ही हैं जिनको हम ऊपर गिना चुके हैं। यद्यपि व्यवहार में इनका कोई प्रभाव अनुभव-गम्य नहीं होता तथापि इस बात से उनकी व्यापक दार्शनिक उपयोगिता में कोई कमी नहीं आती। अतः आजकल क्रिया के क्वान्टम का ज्ञान और उसका अध्ययन प्राकृतिक विज्ञान का एक आवश्यक आधार है।

1. Nuclear.

*यह वाक्य दस वर्ष पहले लिखा गया था। परमाणु-बम के आधुनिक प्रत्यक्षीकरण से यह भली-भाँति प्रकट हो गया है कि व्यावहारिक अनुप्रयोग के क्षेत्र में पारमाणविक तथा नाभिकीय भौतिक विज्ञान की प्रगति के कितने गहरे परिणाम हो सकते हैं। (यह नोट १९४६ में जोड़ा गया था)

पहला परिच्छेद

चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी[1]

१. गतिमिति तथा गतिविज्ञान[2]

हमारा यह इरादा बिलकुल ही नहीं है कि इस बहुत छोटे-से परिच्छेद में चिरप्रतिष्ठित गति-विज्ञान के सिद्धान्तों का संक्षेप में भी विश्लेषण या उनकी आलोचना करने का प्रयत्न करें। इनमें से केवल एक ही कार्य के लिए एक पूरी पुस्तक भी पर्याप्त नहीं होगी। इसके अतिरिक्त यह काम कई प्रतिष्ठित विद्वान् पहले ही कर चुके हैं। हम केवल कई ऐसी विशेष बातों पर जोर देना चाहते हैं जो हमें प्रस्तुत विषय के दृष्टिकोण से रोचक जान पड़ती हैं।

वैज्ञानिक यांत्रिकी की पुस्तकों में इस विषय को दो अत्यन्त असमान अध्ययनों में विभाजित किया गया है—एक तो गतिमिति का अध्ययन और दूसरा गति-विज्ञान का अध्ययन जिसे 'गतिकी' भी कहते हैं। स्थैतिकी[3] इसी का एक विशेष रूप है। चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के इस विभाजन पर थोड़ा विचार करना आवश्यक है क्योंकि यह उन परिकल्पनाओं पर आधारित है जिनके विषय में हम भूमिका में पहले ही इंगित कर चुके हैं कि क्वांटम दृष्टिकोण से अब वे युक्ति-संगत नहीं मालूम होतीं। वास्तव में गतिमिति क्या है और उसका अध्ययन गतिविज्ञान के अध्ययन से पहले क्यों आवश्यक समझा गया है? परिभाषा के अनुसार गतिमिति में त्रिविमितीय आकाश[4] के संस्थान में उन गतियों का अध्ययन किया जाता है जो काल के प्रवाह में सम्पन्न होती रहती हैं। यह अध्ययन ऐसी गतियों के भौतिक नियमों से सर्वथा स्वतंत्र अथवा निरपेक्ष होता है। गति-विज्ञान से पहले ही गतिमिति का अध्ययन करना पूर्णतः स्वाभाविक मालूम होता है क्योंकि सर्वथा तर्क-संगत यही प्रतीत

1. Classical Mechanics 2. Kinematics and Dynamics 3. Statics
4. Three-dimensional Space

होता है कि आकाश में होनेवाली विभिन्न गतियों का निरपेक्ष अध्ययन कर लेने के बाद ही यह प्रश्न उठाया जाय कि किन कारणों से और किन नियमों के अनुसार अमुक परिस्थिति में अमुक प्रकार की गति वस्तुतः उत्पन्न होती है। यह दृष्टिकोण कितना ही स्वाभाविक क्यों न मालूम हो, फिर भी इसमें एक ऐसी परिकल्पना गर्भित है जिसकी तरफ वर्तमान काल से पहले प्रखरतम बुद्धिवाले मस्तिष्कों का भी ध्यान नहीं गया था। यह तो प्रत्यक्ष ही है कि गणितज्ञ त्रिविमितीय (थ्री-डाइमेंशनल) आकाश में होनेवाली गति का अध्ययन किसी ऐसे प्राचल[1] के फलन[2] के रूप में अध्ययन कर सकता है जिसका काल से तादात्म्य स्थापित किया जा सकता है। किन्तु जब हम भौतिक वस्तुओं की वास्तविक गति का अध्ययन करना चाहते हैं तब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या ऐसा निरपेक्ष अध्ययन वास्तव में व्यवहारोपयोगी है। वस्तुतः गतिमिति से गति-विज्ञान के चिरप्रतिष्ठित संक्रमण में यह परिकल्पना निहित है कि त्रिविमितीय आकाश और काल के निरपेक्ष संस्थान में भौतिक वस्तुओं का अवस्थापन उन भौतिक वस्तुओं के निजी गुणों (यथा द्रव्यमान[3]) से स्वतंत्र रूप में संभव है। यह तो निश्चित है कि जो साधारण भौतिक मापदंडीय वस्तुएँ हमारे चारों ओर विद्यमान हैं उनका तो आकाश और काल में अवस्थापन विना कठिनाई के हो ही सकता है। इन्हीं वस्तुओं—विशेषतः ठोस वस्तुओं—के गुणों से ही तो हम उस त्रिविमितीय आकाश की कल्पना करने में समर्थ हुए हैं जिसमें ये वस्तुएँ अवस्थित हैं और इन्हीं वस्तुओं की विभिन्न गतियों के द्वारा ही हम काल के प्रवाह और उसके माप की यथार्थता-पूर्ण परिभाषा भी दे सके हैं। अतः यह नितान्त स्वाभाविक है कि इन वस्तुओं के लिए वैज्ञानिक यांत्रिकी की विधि फलवती हो और उससे वे सब सफलताएँ प्राप्त हों जिनसे हम सुपरिचित हैं। किन्तु यह अत्यन्त साहसिक अतिक्रम होगा यदि पारमाणविक भौतिकी के विकास के प्रारम्भ काल के समान ही आज भी हम यह समझ लें कि त्रिविमितीय आकाश में और काल में भौतिक वस्तुओं के अवस्थापन की सम्भावना को द्रव्य की मूल कणिकाओं अर्थात् असाधारण रूप से हलकी वस्तुओं के लिए भी अपरिवर्तित रूप में विस्तारित किया जा सकता है। वास्तव में आकाश और काल की चिरप्रतिष्ठित धारणाएँ इन चरम-सूक्ष्म वस्तुओं के लिए अब मान्य नहीं हैं और अब उनका उपयोग करने के लिए हमें अनेक प्रतिबन्धों और अनिश्चितताओं को स्वीकार करना आवश्यक हो गया है। यही बात क्वांटम सिद्धान्त की सबसे अधिक

1. Parameter 2. Function 3. Mass

विचित्रता है। आगे चलकर हमें इस प्रश्न पर अधिक विस्तारपूर्वक विचार करना पड़ेगा। इस समय तो यह बता देना ही पर्याप्त होगा कि भौतिक वस्तुओं की गतियों के वर्णन और अध्ययन के लिए चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी ने जो मार्ग ग्रहण किया था वह जिस प्रच्छन्न परिकल्पना पर आधारित था उसकी सत्यता केवल साधारण मापदंडीय वस्तुओं के लिए ही सुनिश्चित है।

२. द्रव्य-विन्दु के गति-विज्ञान सम्बन्धी न्यूटन के नियम

आकाश और काल के संस्थान में भौतिक वस्तुओं को यथार्थतापूर्वक निरूपित करने की संभावना को आधार मानकर चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी अपना अध्ययन उस सरलतम अवस्था से प्रारम्भ करती है जिसमें भौतिक वस्तु का द्रव्यमान[1] तो उपेक्षणीय न हो; किन्तु विस्तार उपेक्षणीय हो। गति-विज्ञान के नियमों के स्पष्टीकरण के प्रारम्भ में ही वैज्ञानिक यांत्रिकी में द्रव्य की मूल कणिका की जो रूपरेखा इस प्रकार प्रस्तुत की जाती है वह द्रव्य की असंतत[2] संरचना की धारणा से सर्वथा संगत है और जब आज से आधी शताब्दी पहले भौतिक-विज्ञान के जिज्ञासु द्रव्य को गतिशील मूल-कणिकाओं के समुदाय के रूप में चित्रित करने का प्रयत्न कर रहे थे तब द्रव्य-विन्दु के गति-विज्ञान ने उनके सैद्धान्तिक अनुसंधानों के लिए आवश्यक साधन सहज में ही प्रस्तुत कर दिया था।

द्रव्य-विन्दु के गति-विज्ञान का प्रारम्भ अवस्थितित्व[3] के नियम से होता है जिसके अनुसार जब तक किसी द्रव्य-विन्दु पर किसी बाह्य क्रिया का प्रभाव न पड़े तब तक वह काल के प्रवाह में अपनी गति अथवा स्थिति की अवस्था को ज्यों-की-त्यों सुरक्षित रखता है। कम से कम यह उक्ति उस समय तो यथार्थ है ही जब द्रव्य-विन्दु की गति उन निर्देशांक-तंत्रों[4] के द्वारा व्यक्त की जाती है जिन्हें गलीलीय-तंत्र[5] कहते हैं, यथा वह तंत्र जो अचल नक्षत्र-समूह से आबद्ध है। इन गलीलीय तंत्रों की अधिमान्यता की व्याख्या निम्न प्रकार की गयी थी—जिस त्रिविमितीय आकाश में भौतिक वस्तुओं का अवस्थापन किया जाता है उसको निरपेक्ष समझने के कारण गलीलीय तंत्र की निदशाक्षें[6] उस निरपेक्ष आकाश की अपेक्षा या तो अचल होती हैं या अचर वेग से सरल-रेखा में गमन करती हैं।

अवस्थितित्व के सिद्धान्त के अनुसार स्वतंत्र द्रव्य-विन्दु की गति सरल रेखात्मक

1. Mass 2. Discontinuous 3. Inertia 4. Systems of Coordinates 5. Galilean System 6. Coordinate axis

होती है और उसका वेग अपरिवर्ती होता है। वेग का मान शून्य हो जाने पर उसकी अवस्था विराम अवस्था कहलाती है। अतः यह समझ लेना बहुत स्वाभाविक है कि यदि उस द्रव्य-विन्दु पर कोई बल लगाया जाय तो उस बल का परिणाम यह होगा कि उसका वेग बदल जायगा। इसके लिए जो सरलतम परिकल्पना[1] स्वीकार कर ली गयी है वह यह है कि वेग का तात्कालिक परिवर्तन बल का अनुपाती होता है और जितने ही अधिक अवस्थितित्व के द्वारा वह द्रव्य-विन्दु इस परिवर्तन का विरोध करता है उतना ही इस वेग-बल-अनुपात के गुणांक का मान भी छोटा होता है। इस प्रकार एक अवस्थितित्व गुणांक (अर्थात् द्रव्य-मान) के द्वारा उस द्रव्य-विन्दु को परिलक्षित करने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। फलतः द्रव्य-विन्दु के गति-विज्ञान का मूल नियम यह हो जाता है—प्रत्येक क्षण पर द्रव्य-विन्दु का त्वरण[2] उस पर लगनेवाले बल में उसके द्रव्यमान का भाग देने से प्राप्त भागफल के बराबर होता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि गति-विज्ञान में द्रव्यमान का गुणांक, जिसका कार्य द्रव्य-विन्दु को गतिकीय दृष्टिकोण से परिलक्षित करना है, बाद में प्रविष्ट हुआ है अर्थात् उस द्रव्य-विन्दु के सुनिश्चित स्थान, गमन-पथ, वेग तथा त्वरण के अस्तित्व को मान लेने के बाद। यह बात उस व्यवस्था के अनुकूल है जिसमें गतिमिति को गति-विज्ञान से पूर्ववर्ती समझा जाता है।

द्रव्य-विन्दु के चिरप्रतिष्ठित गतिकीय समीकरण यह बताते हैं कि उस विन्दु के द्रव्यमान को और उसके त्वरण के किसी भी समकोणिक संघटक[3] का गुणनफल बल के तदानुषंगिक[4] संघटक के बराबर होता है। यदि समय के सब मानों के लिए प्रत्येक स्थान पर बल ज्ञात समझ लिया जाय तो हमें समय-सापेक्ष द्वितीय श्रेणी[5] के तीन अवकल-समीकरणों के संघ का हल निकालना होगा जिसमें अज्ञात राशियाँ उस विन्दु के निर्देशांक[6] होंगे। वैश्लेषिक गणित का एक प्रख्यात प्रमेय हमें यह बताता है कि यदि किसी प्रारम्भिक क्षण पर निर्देशांकों के तथा उनके काल-सापेक्ष व्युत्पन्नों अथवा अवकलजों[7] के मान ज्ञात हों तो उस समीकरण-संघ का हल पूर्णतः निर्णीत[8] होता है। अर्थात् यदि किसी भी एक क्षण पर किसी द्रव्य-विन्दु का स्थान और वेग ज्ञात समझे जायें तो उसकी परवर्ती गति की प्रागुक्ति पूर्णतः सम्भव है। यह परिणाम इस बात का द्योतक है कि द्रव्य-विन्दु का चिरप्रतिष्ठित गति-विज्ञान भौतिक नियतिवाद की परिकल्पना के सर्वथा अनुकूल है। इस

1. Hypothesis 2. Acceleration 3. Component 4. Corresponding 5. Second order 6. Coordinates 7. Derivatives 8. Determinate

परिकल्पना के अनुसार यदि भौतिक जगत् की वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में कुछ न्यासों[1] का ज्ञान विद्यमान हो तो उसकी आगामी स्थिति के विषय में निश्चित रूप से भविष्यवाणी सम्भव होनी चाहिए।

यहाँ एक और बात भी कह देना उचित है। द्रव्य-विन्दु को ज्यामितीय विन्दु मान लेने के कारण उसका गमन-पथ ऐसी रेखा हो जाता है जो त्रिविमितीय आकाश में केवल एक-विमितीय सांतत्यक[2] का अन्वेषण करती है। गमनपथ के प्रत्येक विन्दु पर बल के जिस मान का प्रभाव द्रव्य-विन्दु पर पड़ता है वही परवर्ती अनन्त-सूक्ष्म क्षण में होनेवाली उसकी गति को निर्णीत करता है। अतः वह द्रव्य-विन्दु बल-क्षेत्र का अन्वेषण केवल अपने गमन-पथ पर ही करता है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि वास्तव में उसकी गति गमन-पथ के अत्यन्त निकटवर्ती प्रदेश के बल-क्षेत्र पर भी अवलम्बित होती है। क्योंकि समस्त भौतिक समस्याओं में साधारणतः बल-क्षेत्र का आकाश में इस प्रकार संतत परिवर्तन होता है कि गमन-पथ के किसी भी विन्दु पर बल का मान गमन-पथ से अव्यवहित प्रतिवेश के बल-मानों से स्वतन्त्र नहीं होता। यह बात उन बहुधा घटनेवाली अवस्थाओं में तो स्पष्टतः प्रकट हो जाती है जिनमें बल किसी विभव[3] का व्युत्पन्न होता है अर्थात् जिनमें किसी भी विन्दु पर बल का मूल्य उस विन्दु के स्थान के किसी विशिष्ट फलन[4] की प्रवणता[5] के बराबर होता है। सच तो यह है कि प्रवणता की परिभाषा में यह पहले से ही मान लिया जाता है कि विचाराधीन बल जिस विन्दु पर लगता है वह अनन्ततः अल्प मात्रा में इधर-उधर विचरित किया जा सकता है। इसलिए गमन-पथ के प्रत्येक विन्दु पर बल का मान गमन-पथ से अव्यवहित प्रतिवेशी प्रदेश के विभव के मानों पर अवश्य ही अवलम्बित रहता है। न्यूनतम क्रिया के नियम[6] के द्वारा भी जिसका वर्णन हम आगे चलकर करेंगे यही परिणाम निकलता है क्योंकि इस सिद्धान्त के अनुसार किसी द्रव्य-विन्दु के वास्तविक गमन-पथ अर्थात् गति-विज्ञान के नियमों द्वारा निर्दिष्ट गमन-पथ को उससे अनन्ततः निकटवर्ती कल्पित गमन-पथों से तुलना करके ही निर्णीत किया जाता है और गति को इस प्रकार निर्णीत करने में वास्तविक गमन-पथ से अनन्ततः निकटवर्ती पूरे प्रदेश का प्रभाव भी निहित रहता है। किन्तु चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी में उन स्थानीय विलक्षणताओं[7] का गति पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ सकता जो द्रव्य-विन्दु के गमन-पथ से परिमित[8] दूरी पर अवस्थित हों। उदाहरण

1. Data. 2. Continuum 3. Potential 4. Function 5. Gradient 6. Principle of least action 7. Singularities 8. Finite

के लिए मान लीजिए कि द्रव्य-विन्दु के गमन-पथ में छोटे से छिद्रवाला एक परदा रख दिया गया है। यदि गमन-पथ इस छिद्र के केन्द्र में से जाता हो तो परदे द्वारा प्रस्तुत स्थानीय विलक्षणता गमन-पथ में कोई विकार उत्पन्न नहीं करेगी। विपरीत इसके यदि गमन-पथ छिद्र की कोर के अनन्ततः निकट से जाता हो तो वह टेढ़ा हो जायगा और प्रचलित भाषा में हम यह कहते हैं कि कणिका छिद्र की कोर से थोड़ी-सी मुड़ जाती है। किन्तु चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती है कि उस छेद में से गुजरनेवाले द्रव्य-विन्दु की गति उस छेद से परिमित दूरी पर अवस्थित अन्य छेदों के अस्तित्व पर अवलम्बित हो सकती है। इन वक्तव्यों का महत्त्व तुरन्त समझ में आ सकता है क्योंकि यंग[1] के व्यतिकरण प्रयोग[2] के कणिका-मूलक निर्वचन[3] का इनसे स्पष्ट सम्बन्ध है और तरंग-गतिकी[4] भविष्य में जो कुछ बातें हमारे समक्ष इस सम्बन्ध में प्रस्तुत करेगी उनका पूर्व परिचय भी मिल जाता है। द्रव्य-विन्दु के चिर प्रतिष्ठित यांत्रिकीय समीकरणों के द्वारा द्रव्य-विन्दु की गति को परिलक्षित करनेवाली दो गतिकीय राशियों की धारणा उत्पन्न हुई है। इनमें से पहली तो एक दिष्ट राशि[5] है जिसका नाम संवेग[6] है और चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में इसकी परिभाषा यह है कि संवेग द्रव्य-विन्दु के द्रव्य-मान तथा वेग का गुणनफल है। इस राशि का महत्त्व गति के समीकरणों से ही उत्पन्न हुआ है। क्योंकि इन समीकरणों को यह कहकर भी व्यक्त किया जा सकता है कि संवेग का काल-सापेक्ष अवकल-गुणांक[7] द्रव्य-विन्दु पर लगनेवाले बल के बराबर रहता है। प्रकट है कि चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त में यह गतिकीय राशि गतिमितीय राशि वेग से द्रव्यमान के गुणांक द्वारा सरल गुणन की सहायता से प्राप्त की गयी है। तथापि वेग और संवेग की प्रकृतियों में वड़ा भारी अन्तर दिखाई देता है क्योंकि इनमें से द्वितीय राशि किसी विशिष्ट द्रव्य-विन्दु के निजी गतिकीय गुणों को प्रकट करती है।

यही बात उस दूसरी राशि (ऊर्जा[8]) पर भी लागू है जिसकी ओर हम ऊपर इंगित कर चुके हैं। यह राशि अदिष्ट[9] है और जिस महत्त्वपूर्ण अवस्था में बल किसी विभव-फलन[10] से व्युत्पन्न होता है उसमें इस राशि का कार्य परम आवश्यक है। यदि प्रत्येक विन्दु पर विभव में काल-सापेक्ष परिवर्तन नहीं होता हो तो गति-समीकरणों से तुरन्त यह परिणाम निकलता है कि द्रव्य-विन्दु की अवस्था द्वारा निर्दिष्ट एक विशिष्ट

1. Young 2. Interference experiment 3. Corpuscular interpretation 4. Wave-mechanics 5. Vectorial quantity 6. Momentum 7. Differential coefficient 8. Energy 9. Scalar 10. Potential function

राशि का मान गमन की प्रगति में प्रत्येक क्षण पर अचर[1] रहता है। यह राशि द्रव्यमान और वेग के वर्ग के आधे गुणनफल और द्रव्य-विन्दु के अवस्थान-विन्दु पर के विभव के जोड़ के बराबर होती है अर्थात् वह गतिज[2] तथा स्थितिज[3] ऊर्जाओं के जोड़ के बराबर होती हैं। इस प्रकार विभव-जात स्थायी बल-क्षेत्र स्थिरोर्ज क्षेत्र[4] में उपर्युक्त विधि से निर्दिष्ट पूर्ण ऊर्जा अचर रहती है। गणितीय भाषा में वह प्रथम अनुकल[5] है। यहाँ ऊर्जा के लिए जो व्यंजक[6] हमें प्राप्त हुआ है वह वेग की गतिमितीय धारणा में द्रव्यमान तथा विभव की विशिष्टतः गतिकीय धारणाओं के सम्मेलन से बनाया गया है। विभव का बल से सम्बन्ध प्रत्यक्ष ही है। यह बता देना भी आवश्यक है कि यांत्रिकी की सीमा का अतिक्रम करके ऊर्जा की धारणा ने अब पूरे भौतिक विज्ञान में महत्त्व प्राप्त कर लिया है। जिस प्रकार विभव का काल-सापेक्ष अवकल सदैव शून्य होने पर ऊर्जा अचर रहती है उसी प्रकार यदि किसी एक निर्देशांक की अपेक्षा विभव का अवकल सदैव शून्य हो तो संवेग का तदानुषंगिक संघटक भी अचर रहता है। इस बात से ऊर्जा और संवेग के संघटकों में एक विशेष प्रकार का सम्बन्ध प्रगट होता है—ऊर्जा का सम्बन्ध काल के निर्देशांक से है और संवेग के संघटकों का सम्बन्ध आकाशीय निर्देशांकों से है। आपेक्षिकता-सिद्धान्त[7] के द्वारा इस सम्बन्ध का सम्बन्ध अधिक सुनिश्चित हो गया है क्योंकि इस सिद्धान्त में ऊर्जा और संवेग के तीनों संघटक एक दिक्-कालीय दिष्ट-राशि विश्वबल-चतुर्दिष्ट[8] के संघटक मान लिये गये हैं।

द्रव्य-विन्दु की यांत्रिकी में कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण राशियों का भी सन्निवेश होता है। किसी अचर विन्दु के परितः द्रव्य-विन्दु के संवेग-घूर्ण[9] (या घूर्णन के घूर्ण) के संघटक ऐसी ही राशियाँ हैं और ये भी स्थान और वेग की गतिमितीय धारणाओं में द्रव्यमान की गतिकीय धारणा के सम्मेलन से व्यक्त होती हैं। यह ज्ञात है कि जब उस अचर विन्दु के सापेक्ष बल-क्षेत्र केन्द्रिक[10] होता है तब ये संघटक प्रथम अनुकल होते हैं। खगोलीय यांत्रिकी[11] में इस दशा का महत्त्व सुपरिचित है।

संक्षेप में यों कह सकते हैं कि सनातन सिद्धान्त में आवश्यक गति-वैज्ञानिक राशियों का निर्माण स्थान और वेग की गतिमितीय धारणाओं से प्रारम्भ करके उनमें द्रव्यमान और विभव की तत्त्वतः गतिकीय धारणाओं को जोड़ने से किया जाता है।

1. Constant. 2. Kinetic 3. Potential 4. Conservative field 5. First integral 6. Expression 7. Theory of Relativity 8. World-force four-vector 9. Moment of momentum 10. Central 11. Celestial mechanics

आगे हम देखेंगे कि आधुनिक क्वांटम सिद्धान्तों में ये राशियाँ सर्वथा भिन्न रूप से प्रकट होती हैं।

३. द्रव्य-विन्दु-निकायों का गति-विज्ञान[1]

द्रव्य-विन्दु के गति-विज्ञान में हम यह मान लेते हैं कि प्रत्येक क्षण पर और प्रत्येक आकाशीय विन्दु पर बल-क्षेत्र का मान निश्चित है। किन्तु चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकीय धारणाओं के अनुसार जो बल-क्षेत्र किसी द्रव्य-विन्दु पर कार्य करता है वह स्वयं अन्य द्रव्य-विन्दुओं द्वारा उत्पन्न होता है। इस प्रकार हमें स्वभावतः परस्पर प्रभावकारी द्रव्य-विन्दुओं के निकायों की कल्पना करना पड़ता है और उनकी संभाव्य गतियों का निर्णय करना पड़ता है। सरसरी दृष्टि से यह समस्या जटिल मालूम हो सकती है क्योंकि इस निकाय का प्रत्येक द्रव्य-विन्दु इसी निकाय के अन्य द्रव्य-विन्दुओं के प्रभाव से विस्थापित होता है और इस विस्थापन का यह परिणाम होता है कि किसी एक द्रव्य-विन्दु द्वारा अन्य द्रव्य-विन्दुओं पर लगनेवाले समस्त बल बदल जाते हैं। फिर भी वैश्लेषिक दृष्टिकोण से यह समस्या सरल रूप में प्रस्तुत की जा सकती है। हम यों कहेंगे कि प्रत्येक द्रव्य-विन्दु के लिए प्रत्येक क्षण पर द्रव्यमान और त्वरण का गुणनफल उस पर लगनेवाले तात्क्षणिक बल के बराबर होता है। स्वभावतः ही यह बल उस निकाय के अन्य द्रव्य-विन्दुओं के स्थानों पर अवलम्बित होता है। इस प्रकार N संख्यक द्रव्य-विन्दुओं के निकाय के लिए हमें उन N द्रव्य-विन्दुओं के 3 N निर्देशांकों के काल-सापेक्ष द्वितीय श्रेणी[2] के 3 N अवकल-समीकरणों का संघ प्राप्त हो जाता है। यदि किसी क्षण विशेष पर उस निकाय के समस्त द्रव्य-विन्दुओं के स्थान और वेग हमें ज्ञात हों तो गणितीय विश्लेषण प्रकट करता है कि इस समीकरण-संघ का पूर्णतः निर्णीत हल प्राप्त हो सकता है। और इस प्रकार अकेले एक द्रव्य-विन्दु की गति के लिए जो यांत्रिक प्राक्-निर्णीतता[3] स्थापित हो चुकी है वही अनेक द्रव्य-विन्दुओं के निकाय के लिए भी विस्तारित हो जाती है।

द्रव्य-विन्दु-निकायों की गतियों का अध्ययन गुरुत्व-केन्द्र[4] पर विचार करने से बहुत ही सरल हो जाता है। यह ज्ञात ही है कि गुरुत्व केन्द्र उस निकाय के समस्त विन्दुओं का भारित माध्य[5] स्थान होता है। यदि निकाय पर बाह्य बल न लग रहा हो तो इस विन्दु की गति सरल रेखात्मक तथा अचर वेगवाली प्रमाणित होती है।

1. The Dynamics of Systems of Material Points 2. Order 3. Determinism 4. Centre of gravity 5. Weighted mean

यह यांत्रिकी में निविष्ट बलों के उस व्यापक गुण का परिणाम है जिसे क्रिया[1] और प्रतिक्रिया[2] की समता के नियम के द्वारा व्यक्त किया जाता है। इस नियम के अनुसार कोई द्रव्य-विन्दु **क** जितना बल किसी अन्य द्रव्य-विन्दु **ख** पर लगाता है ठीक उतना ही विपरीत बल **ख** भी **क** पर लगाता है। जब उस निकाय में स्थितिज ऊर्जा[3] विद्यमान होती है तब इस नियम का मतलब यह मान लेना है कि यह स्थितिज ऊर्जा केवल उन द्रव्य-विन्दुओं की पारस्परिक दूरियों पर ही अवलम्बित होती है और यह परिकल्पना भौतिक दृष्टिकोण से बहुत स्वाभाविक भी है। इस प्रकार शुद्ध यांत्रिकी[4] में किसी निकाय की गति को निर्णीत करने की समस्या दो भागों में विभाजित की जा सकती है। पहले तो गुरुत्व-केन्द्र की गति का अध्ययन कर लिया जाता है और तब उसी गुरुत्व-केन्द्र के परितः निकाय के घूर्णन की गति का अध्ययन किया जाता है। सुविख्यात प्रमेयों की एक पूरी शृंखला के द्वारा यह अध्ययन सुकर हो गया है।

द्रव्य-विन्दु-निकाय के संवेग की अति सरल परिभाषा यह है कि वह निकाय के अवयव-विन्दुओं के संवेगों का ज्यामितीय योग[5] होता है। प्रत्येक विन्दु के द्रव्यमान और वेग के गुणनफलों के योग से उसका व्यंजक[6] बनता है। इस व्यंजक में सदैव वेग की धारणा का उपयोग होता है। और निकाय की ऊर्जा में सदैव एक गतिज भाग निविष्ट रहता है जो विभिन्न द्रव्य-विन्दुओं की गतिज ऊर्जाओं के योग के बराबर होता है। इसका व्यंजक प्रत्येक विन्दु के द्रव्यमान के और वेग के वर्ग[7] के गुणनफलों के योग के आधे के बराबर होता है। किन्तु यदि निकाय स्थिरोर्ज हो तो उसकी ऊर्जा में एक भाग स्थितिज ऊर्जा का भी होता है जो स्वयं भी दो भागों में विभक्त होता है। पहला भाग तो उन स्थितिज ऊर्जाओं के जोड़ के बराबर होता है जो सम्पूर्ण निकाय पर प्रभावकारी बाह्य बल-क्षेत्र के कारण प्रत्येक द्रव्य-विन्दु में विद्यमान होती हैं। स्थितिज ऊर्जा का दूसरा भाग सब द्रव्य-विन्दुओं की पारस्परिक ऊर्जा[8] है जो दो-दो विन्दुओं के प्रत्येक युग्म की पारस्परिक स्थितिज ऊर्जाओं के जोड़ के बराबर होती है। बाह्य बल-क्षेत्र के अभाव में केवल यह दूसरा भाग ही विद्यमान रहता है। सबसे अधिक उल्लेखनीय बात यह है कि यह पारस्परिक स्थितिज ऊर्जा प्रत्यक द्रव्य-विन्दु में अलग-अलग समारोपित स्थितिज ऊर्जाओं के जोड़ के रूप में विघटित नहीं हो सकती। प्रत्येक अन्योन्य-प्रभावक[9] विन्दु-युग्म के लिए स्थितिज ऊर्जा का एक प्रकार का संकोषण[10] हो जाता है जिसके कारण उन द्रव्य-विन्दुओं के

1. Action 2. Reaction 3. Potential energy 4. Rational Mechanics 5. Geometrical sum 6. Expression 7. Square. 8. Mutual energy 9. Interacting 10. Pooling

निजत्व का एक प्रकार से ह्रास हो जाता है। स्थितिज ऊर्जा के कुछ भाग का यह संकोपण ऐसा गुण है जो सब अन्योन्य प्रभावक द्रव्य-विन्दुओं के निकायों में लाक्षणिक रूप से पाया जाता है और इसी के द्वारा किसी बाह्य-क्षेत्र में अवस्थित पारस्परिक प्रतिक्रिया-हीन द्रव्य-विन्दु समुदाय से अन्योन्य प्रभावक निकाय की विभिन्नता व्यक्त होती है।

द्रव्य-विन्दु-निकायों के गति-विज्ञान पर ही ठोस वस्तुओं का गति-विज्ञान आधारित है। ठोस वस्तुएँ ऐसे द्रव्य-विन्दुओं से बनी हुई समझी जा सकती हैं जिनकी पारस्परिक दूरियाँ बदल नहीं सकतीं क्योंकि इन दूरियों में प्रकृत मानों की अपेक्षा थोड़ी भी घट-बढ़ होते ही द्रव्य-विन्दुओं का पारस्परिक बल अत्यधिक बढ़ जाता है। पारस्परिक दूरियों के अपरिवर्ती होने के कारण किसी भी ठोस वस्तु का स्थान प्रत्येक क्षण पर केवल ६ प्राचलों[1] के द्वारा परिलक्षित हो सकता है—यथा उस वस्तु के किसी भी यदृच्छ विन्दु के तीन निर्देशांक तथा उस विन्दु के परितः वस्तु का अनुस्थापन[2] निर्धारित करनेवाले तीन कोण। जब समस्या अनेक ठोस वस्तुओं की हो और इन विभिन्न वस्तुओं के बीच में कोई नियंत्रक[3] बन्धन भी विद्यमान हो तब अधिक-संख्यक प्राचलों का निवेशन वांछनीय होता है। किन्तु जिन द्रव्य-विन्दुओं द्वारा वे ठोस वस्तुएँ निर्मित समझी जायें उनके गति-समीकरणों से प्रारम्भ करके उस वस्तु-निकाय के गति-समीकरण सदैव लिखे जा सकते हैं।

इस प्रकार पारमाणविक भौतिक विज्ञान की प्रगति के पहले ही द्रव्य की असंतत[4] संरचना मानकर ठोस वस्तुओं की यांत्रिकी का विकास किया गया था। यहीं यह बात कह देना लाभदायक होगा कि हमारे साधारण अनुभव में हम स्थूल परिमाण की वस्तुओं का ही प्रेक्षण करते हैं; न कि द्रव्य-विन्दुओं का। विशेषतः आकाश और काल को नापने की जिस क्रिया के द्वारा घटनाओं की प्रगति के अध्ययन में परिशुद्धि आती है उसके अधिकांश भाग में ठोस वस्तुओं का ही उपयोग किया जाता है। अतः स्थूल-मापदंडीय वस्तुओं और विशेषतः ठोस वस्तुओं के प्रेक्षणों के द्वारा हम जो धारणाएँ बनाते हैं उन्हीं की सहायता से हम द्रव्य-विन्दुओं की गति के नियमों का भी निर्णय करते हैं। और एक बार इन नियमों के स्वीकृत हो जाने पर ठोस वस्तुओं को द्रव्य-विन्दुओं द्वारा निर्मित मानकर हम उनके यांत्रिक गुणों का पुनः निगमन[5] कर सकते हैं। ऐसा करने में अवश्य ही कोई परस्पर विरोध नहीं है

1. Parameters 2. Orientation 3. Restraining 4. Discontinuous 5. Deduction.

तथापि यह मान लेना बड़ी साहसिक परिकल्पना है कि ठोस वस्तुओं के प्रेक्षण से प्राप्त और परिशोधित आकाश-कालीय धारणाएँ अपरिवर्तित रूप में मूल-कणिकाओं और द्रव्य-विन्दुओं पर भी लागू होंगी। यह भली-भाँति स्वीकार किया जा सकता है कि मूल-कणिकाओं पर लागू करने के लिए उन धारणाओं में अत्यन्त गहन परिवर्तन की आवश्यकता हो सकती है। केवल यही एक शर्त अनिवार्य है कि ये धारणाएँ ऐसी ही रहें कि मूल कणिकाओं के गुणों को मान लेने पर उनके द्वारा ही अनेक कणिकाओं के निकाय में भौतिक वस्तुओं के—विशेषत: ठोस वस्तुओं के—समस्त ज्ञात गुण तथा आकाश और काल की साधारण परिभाषाएँ पुनः प्राप्त हो सकें। इस दृष्टिकोण के महत्त्व पर जीन लुई डिस्टू शे[1] ने हाल में ही बहुत जोर दिया है; किन्तु सम्भवत: यह चिरप्रतिष्ठित शुद्ध यांत्रिकी द्वारा प्रतिपादित विधि के विरुद्ध कोई वास्तविक आपत्ति उपस्थित नहीं करता क्योंकि उसमें द्रव्य-विन्दु को मूल-कणिका न मानकर उसकी यह परिभाषा दी जा सकती है कि वह द्रव्य का उपेक्षणीय आकारवाला छोटा-सा टुकड़ा तो होता है; किन्तु उसमें मूल-कणिकाओं की प्रचुर संख्या विद्यमान रहती है। किन्तु पारमाणविक भौतिक विज्ञान में जब हम मूल-कणिकाओं के अस्तित्व को मानकर उन कणिकाओं पर उन द्रव्य-विन्दुओं की चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी के नियम अथवा आकाश तथा काल की साधारण धारणाओं पर अवलम्बित किसी अन्य प्रकार के नियम लागू करने लगते हैं तब इस आपत्ति की प्रबलता ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। इस प्रश्न की अधिक विस्तृत विवेचना करने का अवसर हमें फिर मिलेगा। इसलिए यहाँ अधिक न कहकर हम भौतिक निकायों के गति-विज्ञान-विषयक इन वक्तव्यों को यहीं समाप्त कर देते हैं।

४. वैश्लेषिक यांत्रिकी और याकोबी[2] का सिद्धान्त

वैश्लेषिक यांत्रिकी जिसके साथ लाग्रांज[3] जैसे महान् व्यक्ति का नाम जुड़ा हुआ है, मुख्यत: उन विधियों का समुच्चय है जिनकी सहायता से किसी भौतिक निकाय के समीकरण शीघ्रता से लिखे जा सकते हैं, यदि हमें उस निकाय के स्थान को निर्णीत करनेवाले चरों[4] के विचरण[5] का ज्ञान हो।

यहाँ हमें यह किसी तरह भी अभीष्ट नहीं है कि हम वैश्लेषिक यांत्रिकी की विधियों की विस्तृत विवेचना करें। अत: हम अपने वक्तव्य को केवल यह कहकर

1. Jean Louis Destouches 2. Jacobi 3. Lagrange 4. Variables 5. Variation

ही समाप्त कर देंगे कि ये विधियाँ अन्ततः दो सुविख्यात समीकरण-संघों का रूप ले लेती हैं—लाग्रांज के समीकरण तथा हैमिल्टन[1] के समीकरण। लाग्रांज और हैमिल्टन की विधियों की विपरीतता इस बात में है कि लाग्रांज की विधि में तो निकाय की ऊर्जा व्यापकीकृत वेगों[2] के द्वारा अर्थात् स्थान-सम्बन्धी प्राचलों के काल-सापेक्ष अवकलनों के द्वारा निर्दिष्ट की जाती हैं, किन्तु हैमिल्टन की विधि में वही ऊर्जा व्यापकीकृत सवेगों[3] अथवा लाग्रांजीय संवेगों के फलन के रूप में प्रस्तुत की जाती है। परन्तु सनातन धारणाओं के ढाँचे में हम सदैव व्यापकीकृत वेगों से अत्यन्त सरलतापूर्वक लाग्रांजीय संवेगों को प्राप्त कर सकते हैं और व्युत्क्रमतः लाग्रांजीय संवेगों से व्यापकीकृत वेगों को भी प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि उसमें संवेगों की परिभाषा सदैव वेगों के द्वारा ही दी जाती है। अतः जहाँ कहीं लाग्रांज के समीकरण और हैमिल्टन के समीकरण दोनों ही सफलतापूर्वक लिखे जा सकते हों वहाँ उनमें केवल बाह्य रूप मात्र का अन्तर रहता है और अन्तिम विश्लेषण में वे अभिन्न ही होते हैं। किन्तु हम देखेंगे कि क्वांटम-यांत्रिकी में तो समुचित पक्षान्तरण[4] कर देने पर हैमिल्टन के समीकरणों की सार्थकता बनी रहती है, किन्तु लाग्रांज के समीकरणों के लिए इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यदि हम यह ध्यान में रखें कि क्वांटम-सिद्धान्त में गतिकीय धारणाओं की सार्थकता तो विद्यमान रहती है; किन्तु गतिमितीय धारणाएँ अर्थहीन हो जाती हैं तो यह बात सरलता से समझ में आ जायगी। सनातन विचारानुसार जो संवेग वेग की व्युत्पन्न राशि के समान जान पड़ता है वही क्वांटम-यांत्रिकी में मौलिक तथा स्वतंत्र राशि का रूप ले लेता है जिसका वेग की धारणा से कोई सम्बन्ध नहीं होता क्योंकि यहाँ वेग की धारणा का अर्थ सब अवस्थाओं में सुनिर्णीत नहीं रहता।

जिस दृष्टिकोण से हम विचार कर रहे हैं उसके अनुसार याकोबी का सिद्धान्त वैश्लेषिक यांत्रिकी का एक अत्यन्त रोचक और महत्त्वपूर्ण परिच्छेद है। वस्तुतः यह सिद्धान्त किसी विशिष्ट बल-क्षेत्र में द्रव्य-विन्दु की संभाव्य गतियों का ऐसा वर्गीकरण कर देता है कि जिससे पुरातन यांत्रिकी का क्वांटम-यांत्रिकी में संक्रमण सुकर हो जाता है। यहाँ हम याकोबी के सिद्धान्त का विस्तृत विवरण नहीं दे सकते क्योंकि इसके लिए अत्यन्त जटिल गणितीय प्रक्रियाओं की आवश्यकता पड़ेगी। अतः हम इस प्रसंग को केवल इस सिद्धान्त के सारांश तक ही सीमित रखेंगे और केवल

1. Hamilton 2. Generalised velocities 3. Generalised momenta 4. Transposition.

उस विशेष, किन्तु महत्त्वपूर्ण अवस्था में उसके उपयोग का ही वर्णन करेंगे जिसमें बल-क्षेत्र स्थायी हो अर्थात् काल से स्वतन्त्र हो। बल-क्षेत्र में किसी द्रव्य-विन्दु के समस्त संभव गमन-पथों का समुदाय ६ प्राचलों पर अवलम्बित होता है क्योंकि प्रत्येक गमन-पथ द्रव्य-विन्दु के प्रारम्भिक स्थान और प्रारम्भिक वेग पर अवलम्बित होता है। किन्तु इन गमन-पथों का ऐसे कुलों[1] में विभाजित करना भी संभव है जो केवल ३ प्राचलों पर ही अवलम्बित हों तथा प्रत्येक कुल के गमन-पथ इस प्रकार के वक्र हों जो किसी विशेष पृष्ठ-कुल को अभिलम्बतः[2] काटते हों। तब यदि ऐसा पृष्ठ-कुल निर्णीत करने में सफलता मिल जाय तो उसकी अपेक्षा समस्त लम्ब-कोणिक[3] वक्र उस द्रव्य-विन्दु के सम्भव गमन-पथ होंगे। याकोबी का सिद्धान्त हमें ठीक यही बात सिखाता है कि किस प्रकार किसी प्रथम श्रेणी और द्वितीय घात के आंशिक अवकल-समीकरण से जिसे याकोबी समीकरण कहते हैं प्रारम्भ करके हम वैसे पृष्ठ-कुलों को निर्णीत कर सकते हैं। ऊर्जा के हैमिल्टनीय व्यंजक से प्रारम्भ करके ही यह समीकरण प्राप्त किया जाता है। इस व्यंजक में प्रत्येक क्षण पर द्रव्य-विन्दु की ऊर्जा उसके संवेग के संघटकों के तथा निर्देशांकों के तात्क्षणिक मानों के फलन के रूप में व्यक्त की जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि याकोबी के सिद्धान्त की कृपा से द्रव्य-विन्दु के गमन-पथों की षड्गुण अनन्ती[4] का हम ऐसे कुलों में वर्गीकरण कर सकते हैं कि प्रत्येक कुल में गमन-पथों की त्रिगुण अनन्ती विद्यमान रहती है और प्रत्येक कुल का आनुषंगिक एक-एक लम्ब-कोणीय पृष्ठ-कुल होता है। गमन-पथों का प्रत्येक कुल और उसके आनुषंगिक लम्ब-कोणीय पृष्ठ-कुल का सम्बन्ध ठीक उसी प्रकार का होता है जिस प्रकार का सम्बन्ध तरंग-प्रचरण के तरंगाग्रों[5] और किरणों[6] में ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान की विधि से चित्रित किया जाता है। स्काटलैंड निवासी ज्यामितिज्ञ हैमिल्टन का ध्यान एक शताब्दी से अधिक हुआ तब ही इस सादृश्य की ओर गया था और उसकी सहायता से ही उन्होंने वैश्लेषिक यांत्रिकी के इस पक्ष के स्पष्टीकरण की अत्यन्त पथ-प्रदर्शक विधि मालूम की थी। किन्तु क्वांटम-सिद्धान्त के आधुनिक विकास के द्वारा ही हम इस सादृश्य में सरल गणितीय समानता के अतिरिक्त कुछ और भी देख पाये हैं।

1. Families 2. Normally 3. Orthogonal 4. Sextuple Infinity 5. Wave-fronts 6. Rays.

द्रव्य-विन्दु की इस सनातन धारणा के सम्बन्ध में यह बता देना भी रुचिकर होगा कि याकोबी के सिद्धान्त द्वारा प्राप्त तरंग-प्रचरण के प्रतिरूप का अर्थ केवल अमूर्त रूप में ही हो सकता है। वस्तुतः सनातन विचारधारा में प्रत्येक क्षण पर द्रव्य-विन्दु के स्थान और वेग सुनिर्णीत होते हैं और बल-क्षेत्र में वह किसी ऐसे अद्वितीय गमन-पथ पर चलता है जिसका स्वरूप प्रारम्भिक स्थिति के प्रतिवन्धों पर अवलम्बित होता है। याकोबी के सिद्धान्त द्वारा वर्गीकृत गमन-पथ-कुल में जो गमन-पथ होते हैं वे केवल संभाव्य होते हैं और प्रत्येक दशा में उनमें से केवल एक ही वास्तविक होता है। इसलिए उन गमन-पथ-कुलों की सार्थकता बहुत कुछ सारहीन होती है क्योंकि वे जिन अनेक संभाव्यताओं को प्रकट करते हैं उनमें से अधिक से अधिक केवल एक ही वास्तविक होती है। फिर भी याकोबी के सिद्धान्त द्वारा निर्दिष्ट गमन-पथ-कुल को सारयुक्त अर्थ देने का भी एक उपाय हो सकता है। मान लीजिए कि हमारे पास अनन्त-संख्यक बिलकुल एक-से द्रव्य-विन्दु हैं जो एक-दूसरे पर कुछ भी प्रभाव नहीं डालते। तब यह मान लेने की संभावना उपस्थित हो जायगी कि वे द्रव्य-विन्दु उन विविध कुलों के समस्त गमन-पथों पर सचमुच चल सकते हैं और तब ये गमन-पथ वास्तविक मालूम पड़ेंगे। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि याकोबी का सिद्धान्त एक प्रकार से सांख्यिकीय सिद्धान्त[1] है क्योंकि इसमें अनेक गमन-पथ समुदायों की यौगपदिक कल्पना की जाती है। इससे हमें इस बात का कुछ आभास मिलता है कि इस सिद्धान्त में तरंग-यांत्रिकी की प्रायिकतामूलक[2] तथा सांख्यिकीय व्याख्याएँ बीजरूप में विद्यमान हैं। आगे चलकर हम देखेंगे कि बात है भी बहुत कुछ ऐसी ही।

ऊपर की पंक्तियों में हमने ज्ञात बल-क्षेत्र में किसी एक द्रव्य-विन्दु की गति के सम्बन्ध में याकोबी के सिद्धान्त की रूपरेखा प्रस्तुत की है। यदि यह अभीष्ट हो कि इसी विचारधारा को बढ़ाकर परस्पर-प्रभावक द्रव्य-विन्दुओं के निकाय पर भी लागू किया जाय तो एक ऐसी विशेष परिकल्पना को इस सिद्धान्त में निविष्ट करना पड़ेगा जो आगे चलकर निकायों की तरंग-यांत्रिकी में भी उपयोगी प्रमाणित होगी। यदि निकाय में द्रव्य-विन्दुओं की संख्या n हो तो हमें एक ऐसे अमूर्त[3] आकाश की कल्पना करनी पड़ेगी जो निकाय के n विन्दुओं के $3n$ निर्देशांकों के द्वारा निर्मित माना जाता है और जो विन्यासाकाश[4] कहलाता है और तब यदि ऊर्जा के हैमिल्टनीय व्यंजक से प्रारम्भ करके उस निकाय के लिए याकोबी का समीकरण बनाया जाय

1. Statistical Theory 2. Probabilistic 3. Abstract 4. Space of Configuration

तो हमें प्रथम श्रेणी और द्वितीय घात के आंशिक अवकलनों का ऐसा समीकरण प्राप्त होगा जिसमें उस निकाय के समस्त विन्दुओं के 3n निर्देशांक समाविष्ट होंगे। फलतः इस समीकरण के द्वारा उपर्युक्त विन्यासाकाश में ही पृष्ठ-कुल भी निर्दिष्ट करने पड़ेंगे—साधारण त्रिविमितीय आकाश में नहीं। अतः निकाय की उत्तरोत्तरवर्ती अवस्थाओं का अनुक्रम[1] इस विन्यासाकाश में एक वक्र द्वारा निरूपित हो जायगा और यह वक्र उस निकाय के निरूपक-विन्दु[2] का गमन-पथ होगा। निकाय के सांकेतिक[3] गमन-पथ 6n प्राचलों पर अवलम्बित होते हैं जो n विन्दुओं में से प्रत्येक से सम्बन्धित 6 प्रारम्भिक प्रतिबन्धों से प्राप्त होते हैं। याकोबी का सिद्धान्त हमें संभाव्य गमन-पथों की इस 6n–गुणी अनन्ती को कुलों में वर्गित करने की क्षमता प्रदान कर देता है। इनमें से प्रत्येक कुल 3n प्राचलों पर अवलम्बित होगा और ऐसे वक्रों से संघटित होगा जो याकोबी के समीकरण के अनुकल-पृष्ठों[4] के कुल से लम्ब-कोणीय होंगे। किन्तु इस बार तरंग के प्रतिरूप का प्रचरण 3n–विमितीय विन्यासाकाश में होगा। इससे यह प्रकट हो जाता है कि निकायों के गतिविज्ञान की समस्याओं के अध्ययन में तरंग-यांत्रिकी को भी याकोबी के सिद्धान्त का सहारा लेकर इसी मार्ग का अनुसरण करना पड़ेगा और तरंग-प्रचरण का विवेचन विन्यासाकाश में करना पड़ेगा। इससे तरंग-यांत्रिकी की तरंगों को न केवल उपर्युक्त प्रायिकतामय तथा सांख्यिकीय अभिव्यक्ति प्राप्त हो जायगी, किन्तु उनका स्वरूप चिरप्रतिष्ठित भौतिकी में चित्रित तरंगों के रूप से सर्वथा भिन्न और असार तथा सांकेतिक भी हो जायगा।

५. न्यूनतम क्रिया का नियम[5]

किसी विभव-जात बल-क्षेत्र में अवस्थित द्रव्य-विन्दु के गतिकीय समीकरणों को उस सिद्धान्त से भी प्राप्त करना संभव है जो अपने व्यापक रूप में हैमिल्टन का सिद्धान्त या स्थिर-क्रिया[6] का सिद्धान्त कहलाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार द्रव्य-विन्दु की गतिज और स्थितिज ऊर्जाओं के अन्तर का t_1 और t_2 सीमाओं के बीच में प्राप्त कालानुकल[7] वास्तविक गमन-पथ के लिए उस अत्यल्पतः भिन्न अन्य पथ की अपेक्षा लघुतर (या महत्तर) होता है जिसके द्वारा उस द्रव्य-विन्दु के लिए उसी प्रारम्भिक स्थान से उसी अन्तिम स्थान तक पहुँच सकना सम्भव समझा जा सकता हो।

1. Sequence 2. Representative point 3. Symbolic. 4. Integral surfaces 5. Principle of Least Action 6. Stationary action 7. Time-integral

जब बल-क्षेत्र स्थायी[1] होता है तब इस स्थिर क्रिया के सिद्धान्त का रूप विशेषतः सरल हो जाता है। वह तब मापरटच्यूइस[2] का न्यून-तम क्रिया का नियम बन जाता है जिसके अनुसार स्थायी बल-क्षेत्र में विन्दु क से विन्दु ख तक जाने के लिए द्रव्य-विन्दु का वास्तविक पथ वह वक्र होता है जिस पर संवेग का परिचलन[3] अथवा रेखा-अनुकल[4] उन्हीं क और ख विन्दुओं को जोड़नेवाले किसी अन्य अनन्ततः निकटवर्ती वक्र की अपेक्षा न्यूनतर होता है। मापरटच्यूइस का सिद्धान्त हैमिल्टन के सिद्धान्त से तो व्युत्पन्न हो ही सकता है, किन्तु उसका सम्बन्ध याकोबी के सिद्धान्त से भी स्थापित किया जा सकता है। हम देख चुके हैं कि उस सिद्धान्त के अनुसार स्थायी बल-क्षेत्र में गमन-पथ किसी विशेष पृष्ठ-कुल से लम्बकोणीय वक्र समझे जा सकते हैं। इससे सरल वितर्क द्वारा यह परिणाम निकाला जा सकता है कि ये गमन-पथ किसी विशेष अनुकल को न्यूनतम बनाने के प्रतिबन्ध द्वारा निर्णीत हो सकते हैं और यह अनुकल मापरटच्यूइस की क्रिया अर्थात् संवेग का रेखा-अनुकल प्रमाणित होता है। न्यूनतम क्रिया के नियम को इस प्रकार सिद्ध करना बड़ा रोचक है क्योंकि इसके द्वारा इस नियम का और फ़रमा[5] के न्यूनतम समय के नियम[6] का सम्बन्ध प्रकट हो जाता है। वस्तुतः हम देख चुके हैं कि याकोबी के सिद्धान्त द्वारा ये गमन-पथ ठीक उसी प्रकार के समझे जा सकते हैं जिस प्रकार ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान में तरंग-प्रचरण के प्रसंग में किरणें समझी जाती हैं। इस दृष्टि से विचार करने पर न्यूनतम क्रिया के नियम को सिद्ध करनेवाली युक्ति ठीक वही जान पड़ती है जिसके द्वारा ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान में न्यूनतम समय के नियम अर्थात् फ़रमा के नियम को प्रमाणित किया जाता है। फ़रमा के नियम का वक्तव्य यह है—स्थायी अवस्थावाले किसी वर्तक माध्यम[7] में दो अचल विन्दु क तथा ख में से गुजरनेवाली किरण उस वक्र की संपाती[8] होती है जिस पर क से ख तक जाने में प्रकाश को न्यूनतम समय लगता है अर्थात् जो प्रकाश प्रचरण के वेग के व्युत्क्रम[9] के रेखा-अनुकल को न्यूनतम बना देता है। इस प्रकार मापरटच्यूइस के नियम और फ़रमा के नियम का सम्बन्ध प्रत्यक्ष हो जाता है। फिर भी इन दोनों नियमों में एक महत्त्वपूर्ण अन्तर बाकी रह जाता है। न्यूनतम-क्रिया नियम के स्थिर अनुकल में संवेग इस प्रकार निविष्ट होता है कि उस अनुकल की भौतिक विमितियाँ[10] ठीक वही

1. Permanent 2. Maupertuis 3. Circulation of momentum 4. Line-integral 5. Fermat 6. Principal of least time. 7. Refracting medium 8. Coincident 9. Reciprocal 10. Dimensions

होती हैं जो क्रिया की होती हैं (अर्थात् ऊर्जा×समय अथवा संवेग×दैर्घ्य)। विपरीत इसके फ़रमा के नियम के अनुकल में प्रचरण के वेग का व्युत्क्रम निविष्ट होता है। यही कारण था कि दीर्घ काल तक इन दोनों नियमों के सादृश्य को केवल आभासी सादृश्य के अतिरिक्त और किसी प्रकार का ऐसा सादृश्य समझना सम्भव नहीं था कि जिसका कोई गहरा भौतिक आधार हो। भौतिक दृष्टिकोण से तो इन दोनों नियमों में स्पष्ट विपरीतता प्रकट होती थी क्योंकि संवेग तो वेग का अनुपाती होता है और इस कारण मापरटच्यूइस के अनुकल में वेग अंश-स्थान[1] में निविष्ट होता है, किन्तु फ़रमा के अनुकल में वह हर-स्थान[2] में निविष्ट होता है। इस बात ने उस समय बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य किया था जब फ़्रैनेल[3] की प्रतिभा के कारण प्रकाश के तरंग-सिद्धान्त ने अपने प्रतिपक्षी कणिका-सिद्धान्त पर विजय प्राप्त की थी। मापरटच्यूइस तथा फ़रमा के अनुकलों में वेग की इन्हीं विभिन्न भूमिकाओं पर भरोसा करके यह परिणाम निकालना सम्भव समझा गया था कि शून्याकाश की अपेक्षा जल में प्रकाश वेग को कम प्रमाणित करनेवाले फ़ूको[4] और फ़ीज़ो[5] के विख्यात प्रयोग में तरंग-सिद्धान्त का समर्थन करनेवाला अकाट्य और निर्णायक तर्क निहित है। किन्तु न केवल यांत्रिकी और ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के इन दोनों नियमों की विपरीतता प्रदर्शित करने के लिए, बल्कि फ़ूको और फ़ीज़ो के प्रयोग का ठीक अर्थ समझने के लिए भी यह मान लिया गया था कि मापरटच्यूइस के अनुकल में प्रयुक्त द्रव्य-विन्दु का वेग और फ़रमा के अनुकल में भिन्न प्रकार से प्रयुक्त तरंग-वेग को एक ही प्रकार का समझना तर्क-संगत है। इन दोनों महान् नियमों के गहन सम्बन्ध और उस सम्बन्ध के भौतिक अर्थ का सत्य रूप केवल तब ही प्रकट हुआ था जब तरंग-यांत्रिकी ने यह सिद्ध कर दिया कि किसी भी द्रव्य-विन्दु की गति के साथ-साथ एक तरंग-प्रचरण भी अवश्य विद्यमान रहता है जिसका प्रचरण-वेग उस द्रव्य-विन्दु के वेग का उत्क्रमानुपाती होता है। उसने यह भी प्रमाणित कर दिया कि फ़ीज़ो का प्रयोग इतना उत्कृष्ट निर्णायक नहीं था जितना कि पहले समझा गया था। यह प्रयोग इस बात को तो अच्छी तरह प्रमाणित कर देता है कि प्रकाश के प्रचरण को तरंगों के प्रचरण के द्वारा निरूपित करना चाहिए और वर्तनांक[6] की परिभाषा भी प्रचरण-वेग के द्वारा ही देनी चाहिए। किन्तु यदि प्रकाश की कणिकाओं का और तरंगों का समुचित

1. Numerator 2. Denominator 3. Fresnel 4. Foucault 5. Fizeau 6. Index of refraction

अनुषंग स्थापित हो सके तो इस प्रयोग से प्रकाश के कणिकामय रूप के अस्तित्व का पूर्णतः निराकरण नहीं होता। किन्तु ये प्रश्न तो ऐसे हैं जिनका विवेचन हम आगे चलकर करेंगे।

हमने मापरटचूइस और फ़रमा के नियमों का सादृश्य मुख्यतः स्थायी बल-क्षेत्र में द्रव्य-विन्दु की गति के साथ स्थायी अवस्थावाले वर्तक माध्यम में तरंग-प्रचरण की तुलना के द्वारा स्थापित किया है। यदि हम समय के साथ परिवर्तित होनेवाले बल-क्षेत्र में द्रव्य-विन्दु की गति की तुलना उत्तरोत्तर परिवर्ती अवस्थावाले वर्तक माध्यम में तरंग के प्रचरण से करें तो हम न्यूनतम क्रिया नियम के हैमिल्टन प्रदत्त व्यापक रूप का और अस्थायी वर्तक माध्यमों के लिए उपयुक्त व्यापकीकृत फ़रमा के नियम का सादृश्य स्थापित करने में भी सफल हो सकेंगे। इस व्यापकीकरण के सम्बन्ध में हम और अधिक नहीं कहेंगे। इतना ही कह देना पर्याप्त होगा कि यांत्रिकी और ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान का मौलिक सादृश्य स्थायी अवस्थाओंवाली अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, किन्तु विशिष्ट दशा की सीमा से बाहर भी तथ्यपूर्ण है।

द्रव्य-विन्दुओं के निकायों के लिए भी स्थिर-क्रिया का सिद्धान्त स्वभावतः ही उपयोगी है। किन्तु यहाँ इस सिद्धान्त में शाब्दिक यथार्थता लाने के लिए उस निकाय से संगत पूर्व-निर्दिष्ट विन्यासाकाश पर विचार करना लाभदायक होगा। उदाहरण के लिए हम अपना विवेचन केवल उसी दशा तक सीमित रखेंगे जिसमें उस निकाय की स्थितिज ऊर्जा स्पष्टतः समय पर अवलम्बित नहीं होती। अर्थात् वह ऐसी अनन्यसंसक्त निकाय हो जिस पर कोई बाह्य प्रभाव न पड़ रहा हो क्योंकि तब स्थितिज ऊर्जा केवल पारस्परिक प्रभावों पर ही अवलम्बित रहेगी और समय पर स्पष्टतः अवलम्बित नहीं होगी। इस दशा में भी न्यूनतम क्रिया का नियम मापरटचूइस के रूप में उपलब्ध है। उसका प्रतिज्ञापन हम 3n–विमितीय विन्यासाकाश की सहायता से करेंगे और उस आकाश में ऐसी दिष्ट राशि की कल्पना करेंगे जिसके 3n संघटक उस निकाय के n द्रव्य-विन्दुओं के संवेगों के संघटक होंगे। न्यूनतम क्रिया का नियम हमें बताता है कि निकाय का निरूपक विन्दु जब विन्यासाकाश के दो अचल विन्दुओं (**क** और **ख**) में से गुजरता है तब उसका गमन-पथ ऐसा होता है कि उपर्युक्त दिष्ट-राशि का उस पथ पर **क** से **ख** तक परिकलित रेखा-अनुकल **क** और **ख** विन्दुओं को जोड़नेवाले और उस गमन-पथ से अनन्ततः निकटवर्ती अन्य किसी भी वक्र की अपेक्षा न्यूनतर होता है। यह नियम भी याकोबी के सिद्धान्त से प्रारम्भ करके सरलतापूर्वक प्रमाणित किया जा सकता है और अब भी फ़रमा के

नियम से इसका सादृश्य इस बात की संभावना के द्वारा प्रकट होता है कि विन्यासाकाश में निरूपक विन्दु के गमन-पथ उसी विन्यासाकाश में किसी विशेष तरंग-प्रचरण की किरणों के रूप में समझे जा सकते हैं। यहाँ भी वही बात एक बार फिर प्रकट होती है कि निकायों के लिए चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी से तरंग-यांत्रिकी में संक्रमण अनिवार्यतः अमूर्त विन्यासाकाश में ही हो सकेगा।

दूसरा परिच्छेद

चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान[1]

१. यांत्रिकी के विस्तारण[2]

पिछले परिच्छेद के थोड़े-से पृष्ठों में हमारा इरादा चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी का पूर्ण विवरण देने का नहीं था। इस परिच्छेद में चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान का सम्पूर्ण दिग्दर्शन कराना तो और भी कम सम्भव होगा। अधिक से अधिक हम उसकी प्रमुख शाखाओं के लक्षण बताने का और उनमें से प्रत्येक के बारे में कुछ थोड़ी-सी बातें कह देने का प्रयत्न कर सकते हैं।

चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान की एक प्रमुख शाखा तो यांत्रिकी के विविध प्रत्यक्ष विस्तारणों के द्वारा निर्मित हुई है, यथा, द्रव-गतिकी[3] तरल द्रव्यों[4] का अध्ययन, ध्वनि-विज्ञान[5], प्रत्यास्थता[6] का सिद्धान्त। भौतिकज्ञों का ध्यान इन विज्ञानों की ओर बहुत पहले ही गया था क्योंकि जिन घटनाओं का इनमें अध्ययन किया जाता है वे नित्य के जीवन में हमारा ध्यान बरबस आकृष्ट करती रहती हैं। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से वे यांत्रिकी के ही अव्यवहित[7] विस्तारण दिखाई देते हैं। उनके मूल सिद्धान्त और तर्क-प्रणाली यांत्रिकी से ही प्राप्त हुए हैं। और उनमें कुछ अनुभव द्वारा सुझायी हुई परिकल्पनाएँ जोड़ दी गयी हैं। इनमें यह धारणा स्पष्टतः निविष्ट नहीं है कि द्रव, ठोस या गैसीय वस्तुओं का संघटन पारमाणविक होता है। विपरीत उसके उनमें द्रव्य संतत[8] माना जाता है और उसी सांतत्यक[9] में आयतन के अल्पांशों[10] को पृथक् मानकर उन पर प्रतिवेशी अल्पांशों की पारस्परिक क्रिया का परिगणन यांत्रिकी के नियमों के द्वारा किया जाता है। किन्तु द्रव्य के पारमाणविक

1. Classical Physics 2. Extensions of Mechanics 3. Hydro-dynamics 4. Fluids 5. Acoustics 6. Elasticity 7. Immediate 8. Continuous 9. Continuum 10. Elements

संघटन की परिकल्पना के साथ इन प्रक्रियाओं का समाधान करने में कोई भी बाधा नहीं है, यदि हम यह समझ लें कि आयतन के जिन अल्पांशों पर हमारा ध्यान केन्द्रित होता है वे अत्यन्त छोटे होने पर भी इतने बड़े अवश्य हैं कि उनमें अणुओं की बहुत बड़ी संख्या विद्यमान रहती है और उनमें संतत द्रव्य के गुण विद्यमान समझे जा सकते हैं।

यद्यपि ये विज्ञान-यांत्रिकी के विस्तार---उन सिद्धान्तों पर आधारित हैं जिनका यांत्रिकी के नियमों में से अत्यन्त सरलतापूर्वक उद्गम हुआ है तथापि वास्तव में ये विज्ञान कठिन हैं और उनके लिए प्रयोगकर्त्ताओं और सैद्धान्तिकों में बड़ी योग्यता और प्रचुर अध्यवसाय की आवश्यकता होती है। इन विषयों के भौतिक न्यास जटिल होते हैं और बहुधा उनका अध्ययन कठिन होता है। उनके परिकलन में उच्चतर गणित की सहायता आवश्यक होती है। इसलिए यद्यपि ये विज्ञान बहुत पुराने हैं तथापि इनमें अभी बहुत अधिक उन्नति होना बाकी है। इंजीनियरी के काम में इनके उपयोगों के कारण ये विज्ञान अत्यन्त आवश्यक हैं। किन्तु उन व्यावहारिक व्यक्तियों की सुविधा के लिए जिन्हें व्यापक सिद्धान्तों की अपेक्षा तात्कालिक परिणामों से अधिक प्रयोजन रहता है इन विज्ञानों को सन्निकटित रूप लेना पड़ा है। यथा द्रव-इंजीनियरी[1] या द्रव्यों के प्रतिरोध[2] में।

इन विज्ञानों पर और अधिक विचार हम नहीं करेंगे। आधुनिक भौतिक विज्ञान के रूपान्तरों ने इनमें बहुत ही थोड़ा परिवर्तन किया है और अभी तक इनमें क्वांटमों का कार्य उल्लेखनीय नहीं रहा है। अतः ये हमारे अध्ययन के मुख्य भाग की सीमा से बाहर हैं।

२. प्रकाश-विज्ञान[3]

यद्यपि द्रव-गति-विज्ञान[4] में और प्रत्यास्थता के सिद्धान्त में उन लोगों की कोई प्रत्यक्ष रुचि नहीं होती जो क्वांटमों का अध्ययन करना चाहते हैं तथापि प्रकाश-विज्ञान के सम्बन्ध में बात बिलकुल उल्टी है। इस विज्ञान की प्रगति में और भौतिक विज्ञान की आधुनिक उन्नति में गहरा सम्बन्ध रहा है। द्रव और ठोस वस्तुओं की गति के समान ही प्रकाश-सम्बन्धी घटनाओं ने सदैव मनुष्यों का ध्यान बरबस आकृष्ट किया ह। किन्तु १७वीं शताब्दी में ही जाकर प्रकाश-विज्ञान ने यथार्थ विज्ञान का

1. Hydraulics 2. Resistance of materials 3. Optics 4. Hydro-dynamics

रूप लिया था। उसी समय देकार्ते[1] के नियम प्रतिपादित हुए थे जिनके द्वारा परावर्तन[2] और वर्तन[3] की घटनाएँ यथार्थतापूर्वक नियंत्रित होती हैं और उसी समय उपर्युक्त फ़रमा का नियम भी प्रतिपादित हुआ था जिसमें समस्त ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान निहित है। प्रकाश-विज्ञान के इतिहास के उस युग में किरणों की धारणा ने ही मौलिक काम किया था। उस समय शून्याकाश में अथवा समांगी[4] माध्यमों में किरणों के सरल-रेखा-गमन का, दर्पण-पृष्ठ पर अथवा वर्तक माध्यम में प्रवेश करने पर किरणों के मुड़ने का और असमांगी वर्तक माध्यम में किरणों की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई वक्रता का अध्ययन किया जाता था। इसी समय हाइगन्स[5] ने इन्हीं घटनाओं की व्याख्या तरंगों और तरंगाग्रों[6] की धारणाओं के द्वारा करने की दूसरी विधि का भी विकास किया था। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी प्रमाणित कर दिया था कि इस विधि के उपयोग से नवाविष्कृत द्वि-वर्तन[7] की घटना की व्याख्या भी हो सकती है। शुद्ध ज्यामितीय दृष्टिकोण से किरणों की धारणा का उपयोग करनेवाली विधि में तथा तरंगाग्रों की धारणा का उपयोग करनेवाली विधि में एक प्रकार की समानता है। ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के प्रमेय इस समानता को प्रकट करते ह और बिना कठिनाई के हमें एक दृष्टिकोण से दूसरे दृष्टिकोण को प्राप्त करने में सहायता करते हैं। जैसा हम पिछले परिच्छेद में बता चुके हैं, ये किरणें तरंगाग्र-कुल को अभिलम्बतः काटनेवाले वक्र हैं और फ़रमा का नियम इस बात का सीधा परिणाम है। किन्तु यदि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान की समस्याओं का विवेचन करने के विविध तरीकों में गणितीय तुल्यता विद्यमान हो तो प्रकाश के सम्बन्ध में दो सर्वथा विभिन्न धारणाएँ उत्पन्न होती हैं जो इस बात पर अवलम्बित होती हैं कि हम किरणों के कार्य को मौलिक समझते हैं अथवा तरंगाग्रों के कार्य को। यदि हम किरणों की धारणा को अनिवार्य समझें तब तो प्रकाश कणिका-रूप में प्रकट होता है। और हमें यह मानना पड़ता है कि प्रकाश अत्यन्त छोटी और तीव्रगामी कणिकाओं से बना हुआ होता है और किरणें उन कणिकाओं के गमन-पथ हैं। तब किरणों के सरल-रेखात्मक रूप (सरल रेखात्मक गमन) और दर्पणों पर प्रकाश के परावर्तन की अत्यन्त स्वाभाविक और सहज व्याख्या हो जाती है और वर्तन भी समझ में आ जाता है। इस दृष्टिकोण से किरणों का तो कुछ भौतिक अर्थ है क्योंकि वे प्रकाश-कणिकाओं के गमन-पथ हैं, किन्तु तरंगाग्र केवल ज्यामितीय कल्पना मात्र है जिसके द्वारा किरण-

1. Descartes 2. Reflection 3. Refraction 4. Homogeneous 5. Huyghens 6. Wave-fronts 7. Double refraction

समूह को किसी एक कुल के रूप में संघटित समझा जा सकता है, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार याकोबी-समीकरण के अनुकल-पृष्ठों की धारणा के द्वारा गमन-पथों के समुदाय को एक विशेष कुल के रूप में संघटित समझा जाता है। किन्तु इसके विपरीत हम यह भी मान सकते हैं कि यथार्थ वास्तविकता तरंग-पृष्ठों में है। तब हमें प्रकाश के स्वरूप की तरंगमय धारणा प्राप्त होगी और हमें यह समझना पड़ेगा कि प्रकाश आकाश में प्रचरण करनेवाली वास्तविक तरंगों से निर्मित है और किरणें केवल क्रमागत तरंगाग्रों को अभिलम्बतः काटनेवाले वास्तविकताहीन कल्पित वक्र मात्र हैं। हाइगन्स के प्रखर विश्लेषणों से यह अच्छी तरह प्रमाणित हो गया था कि प्रकाश के इस तरंग-सिद्धान्त के द्वारा भी परावर्तन और वर्तन की घटनाओं की व्याख्या हो जाती है। किन्तु पहले-पहल यह समझ में आना आसान नहीं है कि इसके द्वारा समांगी माध्यमों में प्रकाश के सरल-रेखात्मक गमन की व्याख्या कैसे हो सकती है। यह भौतिक घटना ऐसी है जिसकी व्याख्या कणिका-सिद्धान्त में अत्यन्त ही प्रत्यक्ष दिखाई देती है क्योंकि वहाँ यह अवस्थितित्व के नियम[1] का ही परिणाम है।

१७वीं तथा १८वीं शताब्दी के विद्वानों ने इन दोनों ही धारणाओं का—कणिकामय धारणा अथवा उत्सर्जन सिद्धान्त[2] का तथा तरंग-धारणा का—अध्ययन किया था। न्यूटन[3], जो महान् अधिकारी पुरुष थे तथा खगोल-यांत्रिकी[4] के प्रतिभावान् स्रष्टा थे, तरंग-धारणा की कुछ कठिनाइयों से, विशेषकर सरल-रेखागमन की व्याख्या सम्बन्धी कठिनाई से बहुत प्रभावित हो गये थे और उन्होंने अपना मत स्पष्टतः कणिका-सिद्धान्त[5] के पक्ष में दे दिया था। न्यूटन के बाद अठारहवीं शताब्दी के प्रायः सभी वैज्ञानिक साधारणतः प्रकाश के इस स्वरूप के पक्ष में थे और जिस तरंग-धारणा का सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में हाइगन्स ने इतनी तेजस्विता से प्रतिपादन किया था, उसके पक्ष में कुछ थोड़े से इने-गिने समर्थकों (यथा आयलर[6]) को छोड़कर कोई भी नहीं था। उस समय तो ऐसा ही मालूम होता था कि प्रकाश के असंतत (कणिकामय) संघटन के पक्षपातियों की विजय हो गयी है।

किन्तु १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ में स्थिति बिलकुल पलट गयी। व्यतिकरण[7] और विवर्तन[8] की घटनाओं का आविष्कार ही इस परिवर्तन का कारण था। इनमें से कुछ घटनाओं के विशेष अंशों का तो न्यूटन के समय में ही आविष्कार हो चुका

1. Principle of inertia 2. Theory of emission 3. Newton 4. Celestial mechanics 5. Corpuscular Theory 6. Euler 7. Interference 8. Diffraction

था—पहले हुक[1] और ग्रिमाल्डी[2] के द्वारा और बाद में स्वयं न्यूटन के द्वारा। वह सुन्दर घटना जो आज तक भी न्यूटन के वलय[3] के नाम से विख्यात है व्यतिकरण की ही घटना है। अपनी स्वाभाविक सूक्ष्म दृष्टि से न्यूटन ने अत्यन्त स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि इन घटनाओं की व्याख्या के लिए उनके द्वारा समर्थित कणिका-सिद्धान्त में भी थोड़े बहुत आवर्तत्व[4] को निविष्ट करने की आवश्यकता पड़ेगी। अतः उन्होंने यह परिकल्पना बनायी कि प्रकाश-कणिकाओं को सुगम पारगमन और सुगम परावर्तन के दौरे[5] एकान्तरतः आते हैं। यह सिद्धान्त पहले-पहल तो बड़ा जटिल तथा विचित्र मालूम देता है; किन्तु वास्तव में यह प्रकाश के कणिका तथा तरंग-रूपों में सामंजस्य स्थापित करने का सबसे पहला प्रयत्न था और दो शताब्दी पहले ही वर्तमान सिद्धान्तों का उसने सूत्रपात कर दिया था। १८वीं शताब्दी में प्रकाश के कणिका-स्वरूप की धारणा का प्रभाव इतना प्रबल था कि उस समय व्यतिकरण की घटनाओं पर यथोचित ध्यान नहीं दिया गया। उस शताब्दी के अन्त में और परवर्ती शताब्दी के प्रारम्भ में ही जाकर अंग्रेज़ भौतिकज्ञ टामस यंग ने पुनः इन घटनाओं का गंभीर अध्ययन प्रारम्भ किया था। किन्तु इनकी पूर्ण और परिष्कृत व्याख्या देना फ़्रांसीसी विद्वान् आगस्टिन फ़्रैनेल[6] की प्रतिभा का ही काम था। हाइगन्स की तरंग-धारणा का पुनर्विवेचन करके विवर्तन और व्यतिकरण सम्बन्धी उस समय तक ज्ञात समस्त बातों की पूरी व्याख्या फ़्रैनेल ने तरंग-सिद्धान्त के द्वारा प्रस्तुत कर दी। और इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे यह प्रमाणित करने में भी सफल हो गये कि समांगी माध्यमों में सरल-रेखा-गमन और प्रकाश के तरंगमय स्वरूप में विपरीतता नहीं है। तरंग-सिद्धान्त के विरोधियों ने इस बात की कड़ी आलोचना की थी क्योंकि इस व्याख्या के द्वारा कुछ विरुद्धाभासी परिणामों की सम्भावना प्रकट होती है। किन्तु उन्होंने प्रयोग के द्वारा प्रमाणित कर दिया कि ये परिणाम वास्तव में सत्य हैं। इसके बाद से ही उनके विचारों की विजय निश्चित हो गयी और बियो[7] तथा लाप्लास[8] जैसे वैज्ञानिकों का समर्थन बना रहने पर भी कणिका-सिद्धान्त का पूर्णतः अपकर्ष होने लगा और प्रतिदिन उसके समर्थकों की संख्या घटने लगी।

किन्तु फ़्रैनेल के कार्य का यहीं अन्त नहीं हो गया। ध्रुवण[9] की घटना की

1. Hooke 2. Grimaldi 3. Newton's rings 4. Periodicity 5. Fit 6. Augustin Fresnel 1788-1827. 7. Biot 8. Laplace 9. Polarisation

व्याख्या करने के लिए उन्होंने प्रकाश-कम्पनों की अनुप्रस्थता[1] की परिकल्पना उपस्थित की जिसके द्वारा यह समझ में आ जाता है कि ध्रुवित प्रकाश[2] के गुण प्रचरण की दिशा से समकोणिक दिशाओं में सम-दिक्[3] क्यों नहीं होते। इन अनुप्रस्थ कम्पनों के गुणों के अध्ययन से फ़्रैनेल ने वर्तक वस्तु के पृष्ठ से होनेवाले परावर्तन की तीव्रता[4] के सिद्धान्त का तथा विषम-दिक्[5] माध्यमों में प्रकाश के उस प्रचरण के सिद्धान्त का विकास किया जो द्विवर्तन[6] का कारण है और इसी सिद्धान्त से द्विवर्तन के नियम भी प्रकट हुए। इस पूरे विवेचन को सचमुच ही सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त है और आजकल भी भौतिक-प्रकाश की समस्त पुस्तकों में बिना किसी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के यह ज्यों-का-त्यों पाया जाता है। इस घोर मानसिक परिश्रम से क्षीण होकर आगस्टिन फ़्रैनेल बीमार पड़ गये और १८२७ में केवल ३९ वर्ष की आयु में ही उनका देहान्त हो गया। किन्तु उन्होंने जो कार्य पूरा कर दिया वह प्रशंसनीय है और भौतिक विज्ञान के विकास के इतिहास के सर्वोत्तम अध्यायों में उसकी गणना होती रहेगी।

फ़्रैनेल की मृत्यु के बाद प्रकाश का तरंगमय स्वरूप क्रमशः अधिकाधिक वैज्ञानिकों द्वारा स्वीकृत होता गया और फ़ूको[7] तथा फ़ीज़ो के प्रयोग ने तो, जिसका उल्लेख हम पहले ही कर चुके हैं, इस परिकल्पना के पक्ष में एक अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत कर दिया। हम आगे चलकर देखेंगे कि इसके बहुत दीर्घ काल के बाद वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भ में भौतिकज्ञों का ध्यान पुनः प्रकाश के कणिकामय स्वरूप की ओर आकृष्ट तो हुआ, किन्तु इसमें फ़्रैनेल की तरंग-मूलक व्याख्या को त्याग देने का विचार भी करने का साहस किसी को नहीं हुआ। फलतः यह आवश्यक हो गया कि इन कणिकामय और तरंगमय स्वरूपों का किसी-न-किसी प्रकार का संश्लेषण[8] करने का अथवा उन्हें समान स्थान[9] देने का प्रयत्न किया जाय। इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि फ़्रैनेल उस समय की ज्ञात अथवा स्वयं अपने द्वारा आविष्कृत प्रकाश-वैज्ञानिक घटनाओं की व्याख्या तरंगों के द्वारा करने में सही थे तो अपर-पक्षी भौतिकज्ञों ने भी प्रकाश के असंतत स्वरूप के अस्तित्व का अनुमान करने में भूल नहीं की थी। प्रकाश किरणों के और यांत्रिकीय द्रव्य-विन्दुओं के गमन पथों के लक्षणों में गहरे सम्बन्ध का अनुमान कराने में न्यूटन अथवा बियो के अन्तर्ज्ञान ने भी धोखा नहीं दिया था। यह बात केवल आकस्मिक नहीं हो सकती कि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान और

1. Transversality 2. Polarised light 3. Isotropic 4. Intensity 5. Anisotropic 6. Double refraction 7. Foucault 8. Synthesis 9. Juxta-position

गति-विज्ञान में सादृश्य हो और विशेषकर यह बात कि फ़रमा का नियम और न्यूनतम कार्य का नियम एक ही साँचे में ढले हों। जैसे वैश्लेषिक यांत्रिकी के महान् प्रमेय और सर्वोपरि याकोबी का सिद्धान्त हमें ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के नियमों का यथार्थ अभिप्राय समझाते हैं वैसे ही प्रकाश का तरंग-सिद्धान्त भी हमें चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के विस्तारण का उपाय सुझाता है और हमें यह सिखाता है कि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के ही समान चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी भी केवल सन्निकटन मात्र ही है जो बहुधा सत्य तो निकलता है, किन्तु फिर भी जिसके उपयोग का क्षेत्र सीमित है।

इन प्रश्नों पर हमें आगे चलकर पुनः विचार करना पड़ेगा, किन्तु इसका रास्ता साफ करने के लिए शायद यह लाभकारी होगा कि इसी समय यह बता दिया जाय कि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान को तरंगीय प्रकाश-विज्ञान किस प्रकार आत्मसात कर सका है अर्थात् फ़्रैनेल के दृष्टिकोण से फ़रमा के नियम का औचित्य किस प्रकार प्रमाणित हो सकता है। तरंग-सिद्धान्त में तरंग-प्रचरण को प्रकट करनेवाला समीकरण द्वितीय श्रेणी के आंशिक अवकलजों का समीकरण होता है। यही तरंग-समीकरण[1] के नाम से विख्यात है। इस समीकरण में एक विशेष राशि (कलावेग[2]) विद्यमान रहती है। अस्थायी वर्तक माध्यम में प्रकाश-प्रचरण के व्यापकतम प्रसंग में यह आकाश और काल के निर्देशांकों का एक विशेष फलन होता है। स्थायी अवस्थावाले माध्यमों के महत्त्वपूर्ण प्रसंग में यह प्रचरण-वेग काल की अपेक्षा अचर होता है और प्रत्येक विन्दु पर एक निश्चित वर्तनांक[3] निर्णीत करता है। तब इस प्रचरण-समीकरण के कई एक-वर्णीय[4] हल होते हैं जो उस माध्यम में विभिन्न आवृत्तियों[5] अथवा विभिन्न रंगों के प्रकाश का प्रचरण (प्रॉपेगेशन) प्रकट करते हैं। यह प्रमाणित किया जा सकता है कि यदि एक तरंग-दैर्घ्य[6] की कोटि[7] की दूरी में माध्यम के वर्तनांक में कोई बोधगम्य परिवर्तन नहीं होता हो तो तरंग की कला के परिवर्तन जिस आंशिक अवकलज समीकरण के द्वारा पर्याप्त सन्निकटनपूर्वक निरूपित हो जाते हैं वह प्रथम श्रेणी तथा द्वितीय घात का होता है। इस समीकरण को "ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान का समीकरण" कहते हैं और इसका रूप ठीक याकोबी के समीकरण के समान ही होता है। इस ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के समीकरण के द्वारा हम प्रत्येक एकवर्णीय तरंग-प्रचरण के तरंगाग्रों को अर्थात् उन पृष्ठों के कुल को प्राप्त कर सकते हैं जिन पर कला का मान एक-सा रहता है। इसके बाद इस तरंगाग्र-कुल पर अभिलम्बित

1. Wave-equation 2. Phase-velocity 3. Index of refraction 4. Mono chromatic 5. Frequencies 6. Wave-length 7. Order.

वक्र प्राप्त किये जा सकते हैं और इन्हीं वक्रों को हम उस प्रचरण की आनुषंगिक किरणें कह सकते हैं। इससे फ़रमा के नियम, मालुस[1] के प्रमेय, हाइगन्स की रचना[2] और ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के अन्य समस्त नियमों का निगमन हो सकता है। तरंगों के दृष्टिकोण से जब कभी यथार्थ तरंग-समीकरण की जगह ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान का समीकरण सन्निकटतः स्थापित किया जा सकता हो तभी ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान सत्य या वैध समझा जा सकता है। जैसा हम देख चुके हैं, इसके लिए आवश्यक शर्त यह है कि माध्यम में एक विन्दु से दूसरे विन्दु तक जाने में वर्तनांक अधिक शीघ्रता से न बदले। किन्तु इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि प्रकाश के मार्ग में, उसके स्वतंत्र प्रचरण में, विघ्न उपस्थित करनेवाला कोई ऐसा अवरोध[3] विद्यमान न हो जिससे व्यतिकरण और विवर्तन की घटनाएँ प्रकट हो जायँ। इस प्रकार तरंग-सैद्धान्तिक की दृष्टि में ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान ऐसा सन्निकटन प्रतीत होता है जो बहुधा सत्य तो होता है, किन्तु जिसकी सत्यता का क्षेत्र सीमित रहता है।

अब हम पुनः तरंग-सिद्धान्त के भौतिक अर्थ पर विचार करेंगे। यह स्पष्ट है कि प्रकाश-तरंगों का प्रचरण द्रव्य के द्वारा नहीं होता क्योंकि शून्याकाश में भी प्रकाश विना कठिनाई के गमन करता है। तब इन तरंगों का वाहक क्या है और वह माध्यम कौन-सा है जिसके कम्पन प्रकाश-कम्पन समझे जा सकते हैं? तरंग-सिद्धान्त के समर्थकों से यही प्रश्न पूछा गया था। इसका उत्तर देने के लिए उन्होंने एक ऐसे अतिसूक्ष्म माध्यम (प्राकाशिक ईथर[4]) की कल्पना की थी जो पूरे ब्रह्माण्ड में विस्तृत है, जो समस्त शून्य स्थानों में भी भरा हुआ है और जो भौतिक वस्तुओं के अभ्यन्तर में भी व्याप्त है। इस रहस्यमय माध्यम में गुण ऐसे होने चाहिए कि शून्याकाश में प्रकाश-प्रचरण की घटना की व्याख्या हो सके। और इस ईथर तथा द्रव्य की पारस्परिक क्रिया ऐसी होनी चाहिए कि वर्तक माध्यमों में प्रकाश-प्रचरण की प्रक्रिया भी समझ में आ सके। फ़्रैनेल के अनुयायी इस ईथर-समस्या के हल करने में जुट गये। उनका प्रयत्न यह था कि ईथर के यांत्रिक गुण बिलकुल ठीक-ठीक निर्णीत हो जायँ और उसकी संरचना का रूप भी स्पष्ट हो जाय। इस अनुसंधान के परिणाम वास्तव में विचित्र निकले। यदि ईथर को प्रत्यास्थ[5] माध्यम समझा जाय तो यह आवश्यक है कि वह इस्पात से भी अधिक दृढ़ हो क्योंकि उसमें केवल अनुप्रस्थ कम्पनों का प्रचरण ही हो सकता

1. Malus 2. Construction 3. Obstacle 4. Luminiferous ether 5. Elastic

है, किन्तु फिर भी इस दृढ़तम माध्यम के द्वारा उसमें चलनेवाली वस्तुओं पर कोई घर्षण-बल नहीं लगता और ग्रहों की गति में भी यह कोई रुकावट नहीं पैदा करता। परस्पर-विरुद्धाभासी लक्षणों से युक्त इस माध्यम का कोई पूर्णतः पूर्वापर-विरोधहीन[1] सिद्धान्त स्थापित नहीं किया जा सका और अनेक भौतिकज्ञों के मन में इस कल्पित पदार्थ के वास्तविक अस्तित्व में सन्देह उत्पन्न हो गया। आगे चलकर हम देखेंगे कि यह प्रश्न पहले विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त में और फिर आपेक्षिकता के सिद्धान्त में कैसे प्रस्फुटित हुआ है।

३. विद्युत् और विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त[2]

यांत्रिकी और उसके विस्तारण (शब्द-विज्ञान तथा प्रकाश-विज्ञान) तो ऐसे विज्ञान हैं जिनका जन्म बहुत प्राचीन काल में हुआ था क्योंकि उनमें ऐसी घटनाओं का अध्ययन किया जाता है जिनके अस्तित्व का ज्ञान मनुष्य को सदा से ही है; किन्तु इसके विपरीत विद्युत्-विज्ञान का जन्म आधुनिक है। यह सच है कि कुछ थोड़ी-सी बातें जैसे घर्षण के द्वारा वस्तुओं का आवेपण[3] अथवा प्राकृतिक चुम्बकों के गुण बहुत प्राचीन काल से ज्ञात थे और यह हो नहीं सकता था कि तड़ित् जैसी महान् और भयंकर घटना की ओर मनुष्यका ध्यान न जाता। किन्तु १८वीं शताब्दी के अन्त से पहले इन विविध घटनाओं की इतनी समुचित आलोचना हो चुकी थी कि इसमें बहुत सन्देह है कि किसी के मन में यह बात पैदा हो सकती कि ये भी एक स्वतंत्र विज्ञान का विषय हो सकती हैं और इनके द्वारा भौतिक विज्ञान की एक नवीन शाखा बन सकती है। यह आविष्करण तो वास्तव में १८वीं शताब्दी के अन्त में और १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही हुआ था। यहाँ यह जान लेना भी रोचक होगा कि यही समय व्यतिकरण के आविष्कार और तरंग-सिद्धान्त के विकास का भी था। विज्ञान के इतिहास के इस आश्चर्यजनक काल का महत्त्व विद्युत् और प्रकाश के आधुनिक विज्ञानों की उत्पत्ति के कारण स्थूल-मापदंडीय भौतिक विज्ञान के लिए उतना ही है जितना पारमाणविक भौतिक विज्ञान के लिए पिछले पचास वर्षों का है।

यहाँ हमारी इच्छा विद्युत्-विज्ञान के विकास के इतिहास का विस्तृत विवरण देने की नहीं है और न हम यह विश्लेषण करना चाहते हैं कि वोल्टा[4], कूलम्ब[5],

1. Coherent 2. Electricity and Electromagnetic Theory 3. Electrification 4. Volta 5. Coulomb

औरस्टेड[1], डेवी[2], बियो[3], लाप्लास[4], गाउस[5], अम्पीयर[6], फ़ैरेडे[7] और अन्य भौतिकज्ञों ने इस नवीन विज्ञान के निर्माण में क्या भाग लिया था। ऐसा अध्ययन निश्चय ही बहुत रोचक होगा, किन्तु वह बड़ा लम्बा होगा और जिस विषय पर हम इस समय विचार कर रहे हैं उससे वह हमें बहुत दूर ले जायगा। इसलिए हम यही कहकर सन्तोष करेंगे कि १९वीं शताब्दी के मध्य के बाद विद्युत् के नियम पर्याप्त रूप से ज्ञात हो चुके थे और यह संभव हो गया था कि उनका संश्लेषण करके उन्हें एक समांगी सिद्धान्त के रूप में संघटित करने का प्रयत्न किया जाय। यह विशाल कार्य जान क्लार्क मैक्सवेल[8] के द्वारा अपने पूर्ववर्ती वैज्ञानिकों के कार्य के आलोक में अपने व्यक्तिगत महान् गुणों की सहायता से सम्पादित हुआ था और उन्हीं के द्वारा उस व्यापक विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त का निर्माण हुआ था जिसके साथ उनका नाम संलग्न है। मैक्सवेल विद्युत् के समस्त नियमों को एक ही समीकरण-संघ में संक्षेपित करने में सफल हुए थे और ये समीकरण अभी तक मैक्सवेल-समीकरणों के नाम से ही प्रसिद्ध हैं। इन मैक्सवेल-समीकरणों के अन्तर्गत दो दिष्ट-राशीय समीकरण तथा दो अदिष्ट-राशीय समीकरण सम्मिलित हैं। दोनों दिष्ट-राशीय समीकरण निर्देशांकों के संघटकों द्वारा निर्मित छः समीकरणों को निरूपित करते हैं। इन समीकरणों के एक पक्ष में तो बल-क्षेत्रों के तथा वैद्युत और चुम्बकीय प्रेरणों[9] के संघटक निविष्ट रहते हैं और दूसरे पक्ष में वैद्युत-आवेशों[10] और धाराओं[11] के घनत्व[12]। दिष्ट-राशीय समीकरणों में से एक तो फ़ैरेडे द्वारा आविष्कृत प्रेरण के महान् नियम को व्यक्त करता है। एक अदिष्ट-राशीय समीकरण इस बात का द्योतक है कि किसी अकेले चुम्बकीय ध्रुव का पृथक्करण असंभव है। और दूसरा अदिष्ट-राशीय समीकरण वैद्युत बल के प्रवाह[13] सम्बन्धी गाउस के प्रमेय[14] का शब्दान्तर है। किन्तु दूसरे दिष्टराशीय समीकरण के लिखने में ही इस विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त को मैक्सवेल की असली व्यक्तिगत सहायता मिली है। इस द्वितीय समीकरण का उद्देश यह स्पष्ट करना है कि अम्पीयर द्वारा आविष्कृत नियमों के अनुसार विद्युत्-धारा का सम्बन्ध चुम्बकीय क्षेत्र से किस प्रकार का है। इन नियमों के अनुसार हमें यह लिखना पड़ता है कि चुम्बकीय क्षेत्र का कर्ल[15] (मात्रकों पर अवलम्बित किसी अचर गुणांक के साथ) विद्युत्-धारा के घनत्व के बराबर होता है।

1. Oersted 2. Davy 3. Biot 4. Laplace 5. Gauss 6. Ampere 7. Faraday 8. John Clark Maxwell 9. Inductions 10. Electric Charges 11. Currents 12. densities. 13. Flux 14. Gauss's theorem 15. Curl

किन्तु मैक्सवेल ने देखा कि यदि इन समीकरणों में निविष्ट विद्युत्-धारा को केवल विद्युत् का ही प्रवाह समझा जाय तो कुछ कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। इनका निराकरण करने के लिए उनकी प्रशंसनीय सूझ से यह कल्पना उत्पन्न हुई कि विद्युत्-धारा-व्यंजक पदसंहति[1] को पूर्ण बनाने के लिए चालन[2] और संवहन[3] जनित विद्युत्-विस्थापन को निरूपित करनेवाले पदों[4] में वैद्युत-प्रेरण के तात्कालिक परिणमन[5] सम्बन्धी एक और पद जोड़ देना चाहिए। यह नया पद एक नवीन प्रकार की धारा को निरूपित करता है जिसे 'विस्थापन-धारा'[6] कहते हैं और जिसका विद्युत् के प्रवाह से कोई आवश्यक सम्बन्ध नहीं है। यह ठीक है कि ध्रुवणीय माध्यमों[7] में इस विस्थापन-धारा के एक अंश को ध्रुवण द्वारा उत्पन्न विद्युत् के स्वतंत्र आवेशों[8] का प्रवाह समझा जा सकता है। किन्तु परिणमनशील वैद्युत बल-क्षेत्र की उपस्थिति में विस्थापन-धारा का दूसरा अंश शून्याकाश में भी सदा विद्यमान रहता है और यह अंश विद्युत् के प्रवाह से सर्वथा स्वतंत्र होता है। जिन कठिनाइयों का हमने ऊपर ज़िकर किया था उन्हें दूर करने का श्रेय विस्थापन-धारा की इस परिकल्पना को ही है। और इसी के द्वारा निमीलित[9] और उन्मीलित[10] धाराओं की कठिन समस्या का भी रहस्य खुल गया जिसको लेकर उस समय के सैद्धान्तिक व्यस्त रहते थे क्योंकि विस्थापन-धारा को सम्मिलित कर लेने पर निमीलित धाराओं के अतिरिक्त और किसी प्रकार की धाराओं का अस्तित्व ही नहीं रहता।

किन्तु वैद्युत घटनाओं के व्यापक समीकरण प्राप्त कर लेने के बाद वास्तव में मैक्सवेल की प्रतिभापूर्ण सूझ तो यह थी कि उन्होंने इन समीकरणों में प्रकाश को भी विद्युत्-चुम्बकीय विक्षोभ[11] समझ लेने की संभावना देखी। इसके द्वारा उन्होंने सम्पूर्ण प्रकाश-विज्ञान को भी विद्युत्-चुम्बकत्व के ढाँचे में ही बैठा दिया और विज्ञान की ऐसी दो शाखाओं का एकीकरण कर दिया जो बिलकुल ही विभिन्न जान पड़ती थीं और इस प्रकार उन्होंने हमारे सामने भौतिक-विज्ञान के इतिहास के सुन्दरतम संश्लेषणों का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत कर दिया।

मैक्सवेल ने इस संश्लेपण को कैसे प्राप्त किया यह बात समझने के लिए यह समझना आवश्यक है कि उन विद्युत्-चुम्बकीय समीकरणों में एक नियतांक विद्यमान है जो विद्युत्-चुम्बकीय पद्धति और स्थिर-वैद्युत-पद्धति के आवेशों अथवा बल-क्षेत्रों

1. Expression 2. Conduction 3. Convection 4. Terms 5. Variation 6. Displacement current 7. Polarisable media 8. free charges 9. Closed 10. Open 11. Disturbance

के मात्रकों के अनुपात के बराबर होता है। उन मूल समीकरणों के संयोजन से यह सरलतापूर्वक सिद्ध हो जाता है कि शून्याकाश में विद्युत्-चुम्बकीय बल-क्षेत्रों का प्रचरण तरंग-समीकरण के अनुसार होता है और इस प्रचरण का कला-वेग[1] उक्त नियतांक के बराबर होता है। इसलिए यदि हम मैक्सवेल के समान प्रकाश को विद्युत्-चुम्बकीय विक्षोभ समझना चाहें तो हमें यह भी मानना पड़ेगा कि शून्याकाश में प्रकाश-प्रचरण का वेग (जो साधारणतः अक्षर c के द्वारा व्यक्त किया जाता है) मात्रकों के इस अनुपात के बराबर ही होना चाहिए। मैक्सवेल के समय में प्रकाश-वेग के जो सांख्यिक मान मालूम थे उनके द्वारा उस समय भी यह कहा जा सकता था कि यह समता[2] ३ या ४ प्रतिशत तक तो यथार्थ ही थी। उसके बाद जितने भी नाप लिये गये हैं उनसे प्रकट होता है कि यह समता पूर्णतः यथार्थ है। इस बात से मैक्सवेल द्वारा प्रस्तावित प्रकाश की विद्युत्-चुम्बकीय धारणा की सत्यता आश्चर्य-जनक रीति से प्रमाणित हो जाती है।

मैक्सवेल की धारणा के अनुसार शून्याकाश में प्रकाश की एकवर्ण समतल तरंग दो दिष्ट राशियों के द्वारा संलक्षित होती है। ये दिष्ट राशियाँ वैद्युत और चुम्बकीय क्षेत्र हैं जो उस तरंग की आवृत्ति से ही कम्पन करते हैं और प्रकाश-गमन की दिशा में ही प्रचरण करते हैं। ये राशियाँ बराबर परिमाण की होती हैं, परस्पर समकोणिक तथा प्रचरण की दिशा से भी समकोणिक होती हैं। और समकलीय[3] भी होती हैं। इन वैद्युत कम्पनों के साथ ईथर के प्रत्यास्थ-कम्पनों की तुलना करने से फ्रैनेल के सिद्धान्त के सभी परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। हम यों भी कह सकते हैं कि इसके लिए तर्क को दूसरी भाषा में रूपान्तरित कर देना ही पर्याप्त है। विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त में ईथर के सम्बन्ध में इससे अधिक और कुछ भी ठीक तरह नहीं कहा जा सकता। उसमें केवल यह मान लेना ही काफ़ी है कि प्रत्येक विन्दु पर शून्याकाश के गुण वैद्युत क्षेत्र तथा चुम्बकीय क्षेत्र की दो दिष्ट-राशियों के द्वारा निर्णीत हो जाते हैं। तब यह सिद्धान्त वह निरपेक्ष रूप धारण कर लेता है जो आधुनिक भौतिक विज्ञान के अधिकतर सिद्धान्तों का लक्षण है। विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त की यह निरपेक्षता उस रूप में और भी अधिक प्रत्यक्ष हो जाती है जो मैक्सवैल के पश्चात् हर्ट्ज़[4] के द्वारा इस सिद्धान्त को दिया गया था। फिर भी उस समय के अनेक भौतिकज्ञों को इस विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्र को सहारा देने के लिए यह मानने की

1. Phase-velocity 2. Equality 3. In same phase 4. Hertz

आवश्यकता प्रतीत होती थी कि वह किसी द्रव्य-विशेष की अवस्था है। इस बात की बड़ी कोशिश की गयी—विशेषकर लार्ड केल्विन[1] के द्वारा—कि ईथर के तनावों[2] और विकृतियों[3] की सहायता से विद्युत्-चुम्बकीय घटनाओं का यांत्रिकीय निरूपण सम्भव हो जाय। किन्तु ये निरूपण पूर्णतः संतोषजनक कभी नहीं हो पाये। अतः अन्त में उन पर से विश्वास जाता रहा। तब से ईथर का काम केवल निर्देशन के लिए कल्पित माध्यम की तरह का ही रह गया है जिसके द्वारा ऐसे निर्देशांक-तंत्र निर्णीत हो सकते हैं जिनकी अपेक्षा मैक्सवेल के समीकरण अपने साधारण रूप में सत्य माने जा सकते हैं। उसका कार्य इतना सीमित हो जाने पर भी ईथर दुखदायी ही बना रहा। परम अचल[4] अक्षों को ईथर निर्णीत कर सकता है, इस धारणा के द्वारा जो गतिशील वस्तुओं का विद्युत्-गति-विज्ञान[5] बनाया गया था वह बड़ा जटिल था और अन्त में प्रमाणित हो गया कि प्रयोगों के द्वारा उसका समर्थन भी नहीं होता। आपेक्षिकता के सिद्धान्त[6] ने ईथर की धारणा का पूर्णत्याग करने में अग्रणी होकर इस दुरवस्थिति को दूर कर दिया है।

हर्ट्ज़[7] द्वारा विद्युत्-चुम्बकीय तरंगों (हर्ट्ज़ीय कम्पनों) के आविष्कार से मैक्सवेल की विचारधारा का सबसे अधिक संतोषजनक सत्यापन हुआ है। विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त ने वास्तव में यह प्रागुक्ति पहले ही कर दी थी कि यदि हम किसी वैद्युत परिपथ में काफी ऊँची आवृत्ति[8] की विद्युत्-चुम्बकीय घटनाएँ उत्पन्न करने में सफल हो जायें तो चारों ओर के आकाश में एक विद्युत्-चुम्बकीय तरंग की उत्पत्ति संभव हो सकती है और मैक्सवेल की धारणा के अनुसार इस तरंग की संरचना बिलकुल प्रकाश-तरंगों की संरचना के समान ही होनी चाहिए। किन्तु किसी व्यावहारिक वैद्युत परिपथ में से जो तरंगें उत्पन्न हो सकती हैं उनकी आवृत्ति प्रकाश-तरंगों की अपेक्षा बहुत ही कम होती है और तरंग-दैर्घ्य[9] बहुत ही लम्बा होता ह। इस बात से स्वभावतः ही उन तरंगों के महत्त्वपूर्ण गुणों में भी अन्तर पैदा हो जाते हैं। हर्ट्ज़ीय तरंगों का हमारी इंद्रियों पर कोई असर नहीं होता और उनका दैर्घ्य बहुत बड़ा होने के कारण वे मुड़कर विस्तृत अवरोधों के पीछे भी सुगमता से पहुँच जाती हैं। फिर भी, इन विभिन्नताओं के विद्यमान रहने पर भी प्रकाश-तरंगों में और हर्ट्ज़ीय तरंगों में बहुत बड़ी समानता है। परावर्तन, वर्तन, व्यतिकरण अथवा

1. Lord Kelvin 2. Tension 3. Deformations 4. Absolutely at rest 5. Electro-dynamics 6. Theory of Relativity 7. Hertz. 8. Frequency 9. Wave-length

विवर्तन के सभी प्रयोग जो प्रकाश-तरंगों के लिए पुराने प्रयोग थे हर्ट्ज़ीय तरंगों के द्वारा भी सम्पादित हो सकते हैं। किन्तु तरंग-दैर्घ्य अधिक होने के कारण स्वभावतः ही यह आवश्यक होगा कि प्रायोगिक व्यवस्था भी बहुत अधिक स्थूल परिमाण-वाली बना दी जाय। हर्ट्ज़ीय तरंगों के तथा उनके गुणों के इस चिर-स्मरणीय आविष्कार के कारण अब मैक्सवैल की प्रकाश-सम्बन्धी प्रधान धारणाओं की मौलिक सत्यता के विषय में कोई सन्देह बाकी नहीं रह गया है। यह कहने की तो शायद ही आवश्यकता हो कि हर्ट्ज़ीय तरंगों के आविष्कार से ही रेडियो तथा उससे उत्पन्न अन्य कई प्रकार की दूर-संचारण[1] की प्रणालियों का जन्म हुआ है।

विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त के द्वारा हम भौतिक माध्यमों में भी प्रकाश-प्रचरण का अध्ययन कर सकते हैं। इससे हमें वह विख्यात समीकरण प्राप्त होता है जिसके द्वारा किसी समांगी माध्यम के पारवैद्युतांक[2] में और उसके वर्तनांक में पारस्परिक सम्बन्ध प्रकट होता है और इसीसे हम चालक माध्यमों में प्रकाश के क्षय[3] का भी विश्लेषण कर सकते हैं। किन्तु सबसे अधिक महत्त्व की बात यह है कि जब इस सिद्धान्त में हम यह परिकल्पना जोड़ देते हैं कि द्रव्य के अन्तर्गत विद्युत् की संरचना असंतत होती है (इलैक्ट्रान-परिकल्पना) तब तो भौतिक माध्यमों में भी प्रकाश-प्रचरण का परिपूर्ण विश्लेषण संभव हो जाता है। इस परिकल्पना पर अगले परिच्छेद में हम पुनः विचार करेंगे।

४. ऊष्मा-गतिकी[4]

चिरप्रतिष्ठित विज्ञान के इस छोटे-से विवेचन को हम उस विज्ञान-ऊष्मा-गतिकी के विषय में थोड़े-से शब्द कहे बिना समाप्त नहीं कर सकते जिसका समस्त निर्माण १९वीं शताब्दी के वैज्ञानिकों के द्वारा ही किया गया था। १८वीं शताब्दी में यह माना जाता था कि ऊष्मा एक तरल पदार्थ है जो अविनाशी है अर्थात् विभिन्न भौतिक रूपान्तरणों से भी जिसकी सम्पूर्ण मात्रा में कुछ भी घट-बढ़ नहीं होती। बहुत-से प्रसंगों में तो यह परिकल्पना पूर्णतः पर्याप्त होती है—विशेषतः पदार्थों में होनेवाले ऊष्मा-प्रवाह के अध्ययन में। फ़ूरियर[5] द्वारा प्रतिपादित ऊष्मा-प्रवाह का सुन्दर सिद्धान्त उन समीकरणों से प्रारम्भ होता है जो इस ऊष्मा-तरल (कैलोरिक)[6] की अविनाशिता के द्योतक हैं। किन्तु इस दृष्टिकोण से उन बहुत-सी घटनाओं की

1. Tele-communication 2. Dielectric constant 3. Extinction 4. Thermo-dynamics 5. Fourier 6. Caloric

व्याख्या करना कठिन हो जाता है जिनमें ऊष्मा घर्षण के द्वारा उत्पन्न होती है। अतः धीरे-धीरे भौतिकज्ञ ऊष्मा को अविनाशी द्रव्य के स्थान में एक प्रकार की ऊर्जा मानने लगे। हमारे चारों ओर जितनी शुद्ध यांत्रिक घटनाएँ होती रहती हैं उन सब में सदैव ऊर्जा की अविनाशिता वर्तमान रहती है सिवाय उस अवस्था के जिसमें घर्षण विद्यमान रहता है और उसी से ऊष्मा की उत्पत्ति होती है। यदि ऊष्मा को भी ऊर्जा का ही एक रूप समझ लिया जाय तो ऊर्जा की अविनाशिता का सिद्धान्त व्यापक माना जा सकता है। यहाँ यह स्मरण कराने की आवश्यकता नहीं है कि लगभग गत शताब्दी के मध्य में भौतिकज्ञों के मन में यह सिद्धान्त किस प्रकार स्पष्टतः प्रकट हुआ था और किस प्रकार ऊष्मा के यांत्रिक तुल्यांक[1] को नाप कर इसकी पुष्टि की गयी थी। किन्तु यह विदित है कि केवल ऊर्जा की अविनाशिता का सिद्धान्त ही ऊष्मा-गतिकी के विज्ञान के निर्माण के लिए काफी नहीं है। उसमें कार्नो[2] के सिद्धान्त का अर्थात् ऐन्ट्रोपी[3] की वृद्धि के सिद्धान्त का समावेश भी आवश्यक है। कार्नो ने १८२४ में ही सबसे पहले इस सिद्धान्त की ओर संकेत किया था, जब उन्होंने अग्नि की संचालन-शक्ति[4] पर अपने विचार लिखे थे और उन्हें यह मालूम हुआ था कि ऊष्मा पूर्णतः कार्य[5] में परिणत नहीं की जा सकती। इन्हीं विचारों से कुछ वर्षों बाद उस सिद्धान्त की उत्पत्ति हुई जिसका उपयोग हम आज करते हैं। उसे व्यक्त करने के लिए क्लासियस[6] ने ऐन्ट्रोपी की धारणा को जन्म दिया और यह प्रमाणित कर दिया कि किसी भी अनन्यसंसक्त[7] निकाय की ऐन्ट्रोपी सदा बढ़ती ही जाती है।

इन दो मूल सिद्धान्तों के आधार पर ही ऊष्मा-गतिकी का विकास हुआ है जिसके द्वारा अनेक घटनाओं की प्रागुक्ति हो सकती है और जो उन घटनाओं की व्याख्या के लिए—विशेषकर गैसों के सिद्धान्त के लिए—अत्यन्त आवश्यक है। यह एक निरपेक्ष[8] विज्ञान है जिसमें केवल वस्तुओं में संचित ऊर्जा का और ऊष्मा अथवा कार्य की मात्राओं के विनिमय[9] का ही विवेचन किया जाता है। वह मूल घटनाओं की बारीकियों का विस्तृत विवरण देने का प्रयत्न नहीं करता। उसका सम्बन्ध तो केवल घटनाओं के स्थूल पक्षों से ही है। अतः मूल घटनाओं के विविध प्रकार के अनेक विवरणों के साथ उसकी संगतता संभव है। वह तो केवल उन प्रतिबन्धों को निर्णीत कर देता है जिनका पूरा होना प्रत्येक विवरण के लिए आवश्यक है।

1. Mechanical equivalent of heat 2. Carnot 3. Entropy 4. Motive power 5. Work 6. Clausius 7. Isolated 8. Abstract 9. Exchange.

इस प्रकार क्वांटमों के बिना ही चिरप्रतिष्ठित पारमाणविक भौतिक विज्ञान इन घटनाओं के ऐसे चित्र प्रस्तुत कर सका था जो ऊष्मा-गतिकी के प्रतिवन्धों के प्रतिकूल नहीं थे। किन्तु बिलकुल भिन्न धारणाओं पर आश्रित होने पर भी क्वांटमीय भौतिक विज्ञान भी उनका जो चित्र प्रस्तुत करता है वह ऊष्मा-गतिकी से उतना ही संगत होता है। समकालीन सिद्धान्तों के रचनात्मक विकास के दृष्टिकोण से ऊष्मा-गतिकी ने मान्य परिकल्पनाओं की संख्या को सीमित रखने में पथ-प्रदर्शक का काम किया है। किन्तु उसने यह बताने का प्रयत्न नहीं किया कि एकान्ततः कौन से मार्ग पर चलना उचित है। ऊष्मा-गतिकी केवल स्थूल आकृतियों का ही चित्रण करती है और सूक्ष्म मूल-क्रियाओं के विस्तृत विवरण का प्रयत्न नहीं करती। यही कारण है जिससे उसमें उन गलतियों का भय नहीं है जो ऐसे अधिक साहसिक सिद्धान्तों में अनिवार्य हैं जिनमें उन क्रियाओं के विवरण की चेष्टा की जाती है। इसीलिए चालीस वर्ष पहले बहु-संख्यक भौतिकज्ञों की राय यह थी कि अधिक सूक्ष्मदर्शी, किन्तु अधिक संकटास्पद धारणाओं का सहारा लेने की अपेक्षा ऊष्मा-गतिकी के इन स्थूल-दर्शी प्रमेयों से ही संतोष कर लेना अधिक अच्छा है। इस दूरदर्शी मार्ग का नाम 'ऊर्जा-विज्ञान'[1] रखा गया है। किन्तु यद्यपि दूरदर्शिता सुरक्षितता की जननी है तथापि सौभाग्य की कृपा साहसिकों पर ही होती है। फलतः ऊर्जा-विज्ञान के समर्थक तो ठोस, किन्तु सीमित भूमि पर ही चक्कर काटते रहे, किन्तु मूल घटनाओं के अधिक सूक्ष्म विवरण के पक्षपातियों ने परमाणुओं और कणिकाओं सम्बन्धी धारणाओं का विकास करके नवीन क्षेत्रों का आविष्कार कर लिया। प्रयोगों के द्वारा इन धारणाओं के इतने अधिक प्रमाण मिले हैं और इनके द्वारा अनेक ऐसे गुप्त सम्बन्धों का पता लगा है जिनके अस्तित्व का ऊर्जा-विज्ञान को कभी सन्देह भी नहीं हो सकता था। आज तो ऊर्जा-विज्ञान की पुरानी मनोवृत्ति यात्रा के उस मुकाम के समान हो गयी है जो बहुत ही पीछे छूट गया है। चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान के विकास के अध्ययन में प्रगति करने के लिए अब तो हमारे लिए परमाणुओं और कणिकाओं की नयी दुनिया में प्रवेश करना आवश्यक ही हो गया है।

1. Energetics

तीसरा परिच्छेद

परमाणु और कणिकाएँ[1]

१. द्रव्य की परमाणुमय संरचना[2]

यह भली भाँति विदित है कि अत्यन्त प्राचीन काल के विचारकों को द्रव्य की परमाणुमय संरचना का थोड़ा-बहुत अन्तर्ज्ञान था। उनको इसकी उपलब्धि इस दार्शनिक धारणा के कारण हुई थी कि द्रव्य में अनन्त विभाज्यता की कल्पना करना संभव नहीं है और उसको उत्तरोत्तर अधिक छोटी मात्राओं में विभाजित करने की क्रिया का, कहीं न कहीं, अन्त हो जाना अनिवार्य है। उनकी दृष्टि में परमाणु वह चरम अविभाज्य अंश था जिससे परे जानने योग्य और कुछ हो ही नहीं सकता। आधुनिक भौतिक विज्ञान भी द्रव्य की पारमाणविक कल्पना पर जा पहुँचा है, परन्तु उसका परमाणु उस प्राचीन परमाणु से सर्वथा भिन्न है क्योंकि अब वह अन्य अल्पतर अंशों का छोटे से आकार का जटिल संघटन माना जाता है। आधुनिक भौतिकज्ञों के मतानुसार पुरातन विद्वानों के अर्थ में तो सच्चे परमाणु इलैक्ट्रानों[3] जैसी वे मूल-कणिकाएँ ही हैं जो आज (संभवतः अस्थायी रूप से) परमाणु की और इसलिए द्रव्य की भी चरम संघटक समझी जाती है।

यह विदित है कि सबसे पहले रसायनज्ञों ने ही आधुनिक विज्ञान में परमाणुओं को यथार्थतः निविष्ट किया था। वास्तव में रासायनिक दृष्टि से सुनिर्दिष्ट पदार्थों के गुण-धर्मों के अध्ययन का ही यह परिणाम था कि समस्त पदार्थों को दो वर्गों में विभाजित करना पड़ा था—(१) यौगिक पदार्थ जो उचित क्रिया करने से टूटकर सरलतर पदार्थों में परिणत हो सकते हैं और (२) वे निरवयव पदार्थ जिनके विघटन[4] के समस्त प्रयत्न विफल होते हैं (कम से कम उन अपवाद-स्वरूप तत्त्वान्तरणों[5] को

1. Atoms and Corpuscles 2. Atomic Structure of Matter 3. Electrons 4. Decomposition 5. Transmutations

छोड़कर जिनका ज्ञान आधुनिक भौतिकज्ञों को हो चुका है)। ये निरवयव पदार्थ-तत्त्व[1] कहलाते हैं। जिन पारिमाणिक नियमों के अनुसार तत्त्व परस्पर मिलकर यौगिक पदार्थों का निर्माण करते हैं उन्हीं के विवेचन ने क्रमशः गत शताब्दी के रसायनज्ञों को निम्नलिखित सिद्धान्त का प्रतिपादन करने के लिए बाध्य किया था —

प्रत्येक तत्त्व अत्यन्त छोटे और बिलकुल एक-से कणों का बना हुआ होता है और ये उस तत्त्व के परमाणु कहलाते हैं। यौगिक पदार्थ अणुओं[2] द्वारा बने होते हैं जो कई परमाणुओं के संयोजन से निर्मित होते हैं।

इस सिद्धान्त के अनुसार किसी यौगिक पदार्थ का विघटन करके तत्त्वों को प्राप्त करने का अर्थ है अणुओं को तोड़कर उनमें अवस्थित परमाणुओं को मुक्त कर देना। पूर्णतः सुनिश्चित तत्त्वों की सूची लम्बी हो गयी है। उसमें ८९ नाम हैं और जो कारण आगे चलकर बताये जायँगे उनके द्वारा यह निश्चित है कि यदि सूची पूरी होती तो उसमें कम से कम ९२ नाम होते। इसलिए जिन परमाणुओं से समस्त भौतिक पदार्थ बने हैं वे कम से कम ९२ प्रकार के हैं।

इस परमाणु-सिद्धान्त ने केवल मूल रासायनिक घटनाओं की व्याख्या करने में ही सफलता नहीं प्राप्त की है, किन्तु उसके द्वारा भौतिक सिद्धान्तों के निर्माण में भी सहायता मिली है। यदि सचमुच ही वस्तुएँ परमाणुओं से बनी हुई हैं तो इस पारमाणविक संरचना के आधार पर ही उनके भौतिक गुणों की प्रागुक्ति संभव होनी चाहिए। उदाहरण के लिए गैसों के सुपरिचित गुणों की व्याख्या इस धारणा के द्वारा हो सकनी चाहिए कि वे तीव्रगामी अणुओं और परमाणुओं की बहुत बड़ी संख्या के द्वारा बनी हुई हैं। जिस पात्र में गैस भरी हो उसकी दीवारों पर गैस का जो दबाव होता है वह उन दीवारों पर लगनेवाली अणुओं की टक्करों के कारण ही होना चाहिए।

गैस का टेम्परेचर इन अणुओं के औसत आन्दोलन से सम्बन्धित होना चाहिए और टेम्परेचर के बढ़ने से इस आन्दोलन में वृद्धि भी होनी चाहिए। गैसों के सम्बन्ध में इस धारणा का विकास गैसों के गत्यात्मक सिद्धान्त[3] के रूप में हुआ है और उसके द्वारा गैसों के प्रयोगात्मक नियमों में संशोधन भी हुआ है। इसके अतिरिक्त यदि पारमाणविक धारणा तथ्य का यथार्थ निरूपण हो तो ठोस और द्रव द्रव्यों के गुण-धर्मों की व्याख्या भी यह मानकर हो जानी चाहिए कि इन भौतिक अवस्थाओं

1. Elements 2. Molecules 3. Kinetic theory

में अणु या परमाणु गैसों की अपेक्षा बहुत नजदीक-नजदीक होते हैं और उनके पारस्परिक बन्धन अधिक प्रबल होते हैं। जब अणु या परमाणु बहुत अधिक पास-पास होते हैं तो उनके पारस्परिक बल भी बहुत बड़े हो जाते हैं यह मान लेने से ठोस और द्रव पदार्थों के असंपीडचता[1], संसंजन[2] आदि गुणों का कारण भी समझ में आ सकता है। इस दिशा में जिन सिद्धान्तों का विकास हुआ है उनमें कुछ कठिनाइयाँ भी उपस्थित हुई थीं जिनमें से अनेक तो क्वांटम-सिद्धान्त के द्वारा दूर हो गयी हैं। फिर भी उनसे निकले हुए परिणाम अधिकतर इतने संतोषजनक हैं कि यह मान लेना अनुचित नहीं कि हम ठीक मार्ग पर ही चल रहे हैं।

किन्तु यद्यपि पारमाणविक परिकल्पना अनेक भौतिक सिद्धान्तों के आधार के रूप में उपयोगी सिद्ध हुई है, फिर भी उसकी पूर्ण प्रतिष्ठा के लिए यह बात कम अनिवार्य नहीं थी कि उसकी यथार्थता पूर्णतः अथवा अंशतः प्रत्यक्ष प्रयोगों के द्वारा भी प्रमाणित कर दी जाय। इस काम का अधिकतर भाग तीस वर्ष पहले उन भौतिकज्ञों के द्वारा सम्पन्न हुआ था जिनमें जीनपेरां को अवश्य ही अग्रणी समझना चाहिए। इस प्रसंग में उनके प्रयोग चिरस्मरणीय रहेंगे। यद्यपि यह असम्भव है कि इन अणुओं या परमाणुओं की गति को हम प्रत्यक्ष देख सकें तथापि कम से कम यह तो सम्भव है ही कि गैस या द्रव में तैरते हुए अत्यन्त छोटे कणों में अणुओं अथवा परमाणुओं की टक्करों से उत्पन्न उच्छृंखल[3] गति का हम प्रेक्षण कर सकें। ब्राउनीय गति[4] नामक इस विक्षुब्ध गति के अध्ययन के द्वारा साधारण टेम्परेचर और दबाव की अवस्था में किसी भी गैस के एक ग्राम-अणु[5] में विद्यमान अणुओं की संख्या का अनुमान करने में जीनपेरां को सफलता प्राप्त हो गयी। यह विदित है कि साधारण रसायन विज्ञान के ऐवोगाड्रो[6] द्वारा आविष्कृत सुविख्यात नियम के अनुसार यह संख्या समस्त गैसों के लिए बराबर है। यह ऐवोगाड्रो की संख्या[7] कहलाती है। जीनपेरां के प्रयोगों के द्वारा इस संख्या का मान ६×१०^{२३} और ७×१०^{२३} के बीच निकला था और उसके बाद जितने भी प्रयोग किये गये हैं उनसे इस अनुमान की आश्चर्यजनक पुष्टि हुई है। ऐवोगाड्रो-संख्या का अनुमान अन्य अनेक परोक्ष-रीतियों से भी प्राप्त हो सकता है। ये रीतियाँ कई सर्वथा विभिन्न घटनाओं के अध्ययन पर आधारित, हैं, यथा, ऊष्मा-गतिकीय संतुलन में अवस्थित विकिरण-ऊर्जा[8] का

1. Incompressibility 2. Cohesion 3. Random 4. Brawnion motion 5. Gram-molecule 6. Avogadro 7. Avogadro Number 8. Radiant energy

स्पैक्ट्रमीय वितरण[1], गैस द्वारा प्रकाश का प्रकीर्णन[2], स्वोत्सर्जी पदार्थों[3] से ऐक्स-किरणों का उत्सर्जन[4]। इन विविध रीतियों से प्राप्त एवोगाड्रो की संख्या के तथा उनके द्वारा निगमित[5] अन्य पारमाणविक राशियों (यथा हाइड्रोजन के परमाणु का द्रव्यमान) के मानों में इतनी समता पायी गयी है कि अब पारमाणविक परिकल्पना की सत्यता में संदेह नहीं किया जा सकता।

इस प्रकार रसायनज्ञों द्वारा कल्पित परमाणुओं का अस्तित्व भौतिकज्ञों द्वारा प्रत्यक्षतः प्रमाणित कर दिया गया है। अब यह देखना है कि सैद्धान्तिकों ने इसका उपयोग किस प्रकार किया है।

२. गैसों का गत्यात्मक सिद्धान्त और सांख्यिकीय यांत्रिकी[6]

यदि हम वह दृष्टिकोण स्वीकार कर लें जिसमें यह मान लिया जाता है कि समस्त पदार्थ परमाणुओं से बने हैं तो हमें यह मानना पड़ता है कि गैस अवस्था में ये परमाणु औसत रूप से इतने अधिक दूर-दूर अवस्थित रहेंगे कि समय के अधिकतर भाग में तो वे पारस्परिक प्रभाव से मुक्त ही रहेंगे। कभी-कभी, अत्यन्त थोड़े समय के लिए कोई परमाणु गैस के अन्य किसी परमाणु के अथवा पात्र की दीवार के इतने निकट जा पहुँचेगा कि उस पर उनकी प्रतिक्रिया हो सके। ऐसी अवस्था में यह कहा जाता है कि उसकी अन्य किसी परमाणु से अथवा पात्र की दीवार से टक्कर हो गयी। दो टक्करों के बीच में परमाणु स्वतंत्र रूप से गमन करेगा और उस पर कोई ऐसा बल नहीं लगेगा जो उपेक्षणीय न हो। और यद्यपि प्रति सेकंड होनेवाली टक्करों की संख्या बहुत ही अधिक होती है तथापि किसी भी परमाणु के लिए इन टक्करों में लगनेवाला समस्त समय स्वतंत्र गति के समय की अपेक्षा अनन्ततः स्वल्प होगा। यदि यह मान लिया जाय कि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के नियम परमाणुओं के लिए भी यथार्थ हैं तो स्पष्ट है कि दो टक्करों के बीच में परमाणु की गति सरल-रेखात्मक तथा अचर वेगवाली होनी चाहिए और यद्यपि विभिन्न प्रकार की टक्करों के विभिन्न परिणाम होंगे तथापि उन सब टक्करों में ऊर्जा और संवेग की अविनाशिता के नियमों का पालन होना ही चाहिए। और अगर यह भी मान लिया जाय—कम से कम इन टक्करों के परिणामों की प्रागुक्ति के लिए ही—कि परमाणु भी दृढ़ प्रत्यास्थ-गोलों के समान समझे जा सकते हैं तब तो चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के समीकरणों

1. Spectral distribution 2. Scattering 3. Radio-active 4. Emission 5. Deduced 6. Statistical Mechanics

की सहायता से गैस की सम्पूर्ण प्रक्रिया का परिकलन संभव हो जाना चाहिए। किन्तु यद्यपि गैस का जो रूप उसे दृढ़ प्रत्यास्थ-गोलों के सदृश अणुओं और परमाणुओं से बनी मान लेने से प्रकट होता है उसकी समस्या पूर्णतः सुनिर्दिष्ट है और सिद्धान्ततः उसका पूर्णतः शुद्ध हल भी संभव है तथापि इस समस्या में इतनी जटिलताएँ विद्यमान हैं कि उसका यथार्थ और ब्योरेवार हल प्राप्त कर सकने की कोई संभावना हो ही नहीं सकती। यह बात समझने के लिए हमें स्मरण रखना चाहिए कि साधारण अवस्थाओं में प्रत्येक घन-सेन्टीमीटर आयतन में परमाणुओं की संख्या $१०^{१९}$ की कोटि की होती है और इनमें से प्रत्येक परमाणु पर प्रति सेकंड लगभग $१०^{१०}$ टक्करें लगती रहती हैं।

अतः यह समस्या असाध्य ही मालूम पड़ती है। फिर भी जिन नियमों का आधिपत्य गैसों पर है वे अत्यन्त सरल हैं—कम से कम उस दशा में जब हम प्रथम सन्निकटनों से ही संतुष्ट रह सकें (आदर्श गैसों के नियम)। अतः यह बात संभवतः बड़ी विचित्र जान पड़ेगी कि गतिशील परमाणुओं की धारणा के द्वारा गैस का जो इतना जटिल रूप प्रकट होता है उससे प्रारम्भ करके हम इतने सरल नियमों का कारण समझने की आशा करते हैं। किन्तु वास्तव में इन सरल नियमों के निगमन की संभावना का कारण गैसों के स्वरूप की इस जटिलता की पराकाष्टा ही है। गैसों के अणुओं में वर्तमान गत्यात्मक प्रक्रियाओं की संख्या असाधारणतः बड़ी होने के कारण ही हम प्रायिकता-कलन[1] की सहायता से इन प्रक्रियाओं की समष्टि का अध्ययन कर सकते हैं और इनके माध्यों के नियम इतनी यथार्थतापूर्वक और बहुधा अत्यन्त सरल रूप मे प्राप्त कर सकते हैं। इन नियमों के किसी अपवाद के प्रेक्षण की संभावना बहुत ही कम है क्योंकि इन औसत परिणामों को प्राप्त करने के लिए जिन सूक्ष्म प्रक्रियाओं का उपयोग किया गया है उनकी संख्या असाधारणतः बड़ी है।

गैसों के गत्यात्मक सिद्धान्त का विकास १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के प्रारम्भ में मुख्यतः मैक्सवेल[2] और क्लासियस[3] के द्वारा सम्पन्न हुआ था और यह कहा जा सकता है कि बोल्ट्ज़मान[4] के प्रयत्न से ही उसके नियमों का निर्माण हुआ था। हमारा इरादा यहाँ इस सिद्धान्त के मुख्य परिणामों का विवरण संक्षिप्त रूप में भी देने का नहीं है क्योंकि जिन्होंने सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान का थोड़ा भी अध्ययन किया है वे सब इन परिणामों से सुपरिचित हैं। इतना ही कह देना काफ़ी होगा कि

1. Calculus of Probabilities 2. Maxwell 3. Clausius 4. Boltzmann

इसमें पात्र की दीवारों पर पड़नेवाले दबाव की उत्पत्ति गैस के अणुओं की असंख्य टक्करों के कारण मानी गयी है और टेम्परेचर अणुओं की गतिज ऊर्जा के औसत मान का माप माना गया है। इससे आदर्श गैस का अवस्था-समीकरण[1] सरलता से प्राप्त हो जाता है। विशिष्ट ऊष्मा[2], गैसों के विसरण[3] तथा उनकी श्यानता[4] इत्यादि के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के रोचक और प्रथम सन्निकटन तक यथार्थ प्रागुक्तियाँ भी इस सिद्धान्त द्वारा प्राप्त हुई हैं। यह सच है कि अभी इस क्षेत्र में अनेक प्रश्नों का समाधान होना बाकी है। अभी हाल में ही ईव्स रोकर्ड[5] जैसे विद्वानों के अनुसंधानों के द्वारा कई नये रास्ते अवश्य खुल गये हैं। फिर भी सब बातों पर दृष्टि रखकर यह मानना ही पड़ता है कि द्रव्य की परमाणुमयी परिकल्पना पर आधारित गैसों की गत्यात्मक धारणा से ही वास्तविकता का बहुत अच्छा चित्रण हो सका है।

ऐन्ट्रोपी की धारणा का स्पष्टीकरण गैसों के गत्यात्मक सिद्धान्त की एक बहुत बड़ी सफलता है। गैस के परमाणुओं की पारस्परिक टक्करों का और उनके द्वारा सन्तुलित अवस्था की स्थापना का विश्लेषण करके बोल्ट्ज़मान ने एक ऐसी राशि की कल्पना को जन्म दिया है जो इन टक्करों के ही कारण बराबर तब तक बढ़ती ही जाती है जब तक कि सन्तुलित अवस्था स्थापित न हो जाय और तब इस लाक्षणिक राशि का मान महत्तम हो जाता है। ऐन्ट्रोपी से इस राशि की समानता प्रत्यक्ष है और बोल्ट्ज़मान ने प्रमाणित कर दिया कि ऐन्ट्रोपी गैसीय द्रव्य की तात्कालिक अवस्था की प्रायिकता[6] के लागरिथ्म[7] के बराबर होती है।

ऐन्ट्रोपी की जिस धारणा को आंरी प्वांकरे[8] ने अनन्यतः अभौतिक घोषित कर दिया था उसके भौतिक अर्थ पर इस वक्तव्य के द्वारा विशद प्रकाश पड़ा है। और अब क्लासियस के जिस प्रमेय के अनुसार किसी भी अनन्यसंसक्त वस्तु-निकाय की ऐन्ट्रोपी बराबर बढ़ती ही जाती है उसका अर्थ यह हो गया है कि किसी भी अनन्य-संसक्त वस्तु-निकाय का विकास स्वतः ही उन अवस्थाओं की दिशा में होता है जिनकी प्रायिकता अधिक होती है। ऐन्ट्रोपी की यह सुन्दर परिभाषा परमाणु-सिद्धान्त के समर्थकों की अपूर्व सफलता प्रकट करती है।

ऊर्जा-विज्ञान में तो एन्ट्रोपी का सिद्धान्त एक अबोध्य प्रायोगिक तथ्य मात्र समझा जाता था, किन्तु गत्यात्मक-सिद्धान्त ने अव्यवस्थित रूप से दौड़ते हुए असंख्य

1. Equation of State 2. Specific heat 3. Diffusion 4. Viscosity 5. Yves Rocard. 6. Probability 7. Logarithm 8. Henry Poincare

परमाणुओं के सांख्यिकीय विकास का विवेचन करके इस सिद्धान्त का भौतिक रहस्य समझने में अनायास ही सफलता प्राप्त कर ली।

इस प्रकार गत्यात्मक सिद्धान्त के द्वारा सैद्धान्तिकों का ध्यान बहुसंख्यक सूक्ष्म और असम्बद्ध यांत्रिक प्रक्रियाओं के सामूहिक तथा सांख्यिकीय पक्षों की ओर आकर्षित हुआ। और तब यांत्रिकी के व्यापक नियमों तथा प्रायिकता-कलन के सिद्धान्तों के आधार पर इन पक्षों के नियमित अध्ययन की प्रेरणा भी इसी गत्यात्मक-सिद्धान्त से मिली। और पहले बोल्ट्ज़मान ने और बाद में गिब्स ने सचमुच ही ऐसा अध्ययन कर लिया जिसका फल यह हुआ कि सांख्यिकीय यांत्रिकी[1] नामक एक नवीन विज्ञान का जन्म हो गया। इस सांख्यिकीय यांत्रिकी के द्वारा केवल गत्यात्मक सिद्धान्त के सभी सारपूर्ण परिणामों की पुनःस्थापना ही नहीं हुई, किन्तु उसके द्वारा ऐसे व्यापक नियमों का भी उद्घाटन हो गया है जो गैसों के अतिरिक्त अणुओं और परमाणुओं के अन्य निकायों पर भी लागू किये जा सकते हैं—यथा ठोस पिण्डों पर। ऊर्जा के समविभाजन[2] का सुविख्यात नियम भी ऐसे ही नियमों का उदाहरण है। इसके अनुसार किसी भी बहुसंख्यक अवयवोंवाले निकाय को सन्तुलित अवस्था में उसकी ऊर्जा विभिन्न स्वतंत्रता की कोटियों[3] में इस प्रकार वितरित होती है कि प्रत्येक कोटि की औसत ऊर्जा का परिमाण बराबर रहता है और यदि निकाय का परम टेम्परेचर[4] T हो तो यह परिमाण T का अनुपाती होता है। गैसों के लिए तो इस नियम के अत्यन्त रोचक और बहुधा सु-सत्यापित परिणाम निकलते ही हैं, किन्तु ठोस पिण्डों के लिए भी इस नियम का प्रागुक्त परिणाम यह निकलता है कि साधारणतः उनकी पारमाणविक-ऊष्मा[5] का मान ६ के बराबर होना चाहिए (ड्यूलांग और पेटिट का नियम[6])। अन्ततः वह ३ से कम तो कभी हो ही नहीं सकता। ये प्रागुक्तियाँ भी बहुसंख्यक दशाओं में उतनी ही सुसत्यापित प्रमाणित हुई हैं। फिर भी यद्यपि सांख्यिकीय यांत्रिकी की ये संशयहीन प्रागुक्तियाँ बहुधा प्रयोगात्मक परीक्षा में सही निकली हैं तो भी कभी-कभी ये अपर्याप्त भी पायी गयी हैं। जैसे बहुत नीचे टेम्परेचरों पर गैसों की स्थिर आयतनवाली विशिष्ट ऊष्मा का परिवर्तन इस सिद्धान्त की प्रागुक्ति के अनुसार नहीं होता और कुछ ठोस पिंडों (यथा हीरे) की पारमाणविक-ऊष्मा ३ से बहुत कम होती है। ये विपरीत बातें अवश्य ही क्षोभकारी थीं क्योंकि सांख्यिकीय यांत्रिकी की विधियाँ इतनी व्यापक होती हैं कि उनमें अपवाद होना ही

1. Statistical Mechanics 2. Equi-partition 3. Degrees of freedom. 4. Absolute temperature 5. Atomic heat 6. Dulong and Petit's Law

नहीं चाहिए। और इसीलिए यह बात समझ में नहीं आती थी कि इतनी सु-सत्यापित प्रागुक्तियों के साथ-ही-साथ इस सिद्धान्त को कुछ प्रसंगों में निर्विवाद रूप से असफलता क्यों मिले। हम देखेंगे कि क्वांटमों के आविष्कार ने ही चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी की और फलतः गिब्स और बोल्ट्ज़मान की सांख्यिकीय यांत्रिकी की विधियों के औचित्य की सीमाओं को निर्दिष्ट करके इस स्थिति के रहस्य का उद्घाटन कर दिया है।

सांख्यिकीय यांत्रिकी ने ऊष्मागतिकीय परिणामों का जो अर्थ बताया है उसके अनुसार ऊष्मा-गतिकी के नियमों में कठोर अनिवार्यता का गुण नहीं है। केवल उनके सत्यापन की प्रायिकता असाधारण रूप से अधिक है। जैसे यदि किसी पात्र में भरी हुई गैस का टेम्परेचर स्थिर रहे तो उसके ऊष्मा-गतिकीय गणना से प्राप्त दबाव और ऐन्ट्रोपी केवल इन राशियों के ऐसे प्रायिकतम मान मात्र हैं जो उन आरोपितप्रति बन्धों से संगत हों। किन्तु ये प्रायिकतम मान अन्य अत्यन्त निकटवर्ती मानों से इतने अधिक प्रायिक होते हैं कि केवल उन्हीं का प्रेक्षण हो सकता है। सिद्धान्ततः इन राशियों के तात्क्षणिक मानों में ऊष्मा-गतिकी द्वारा परिकलित प्रायिकतम मानों की अपेक्षा कुछ घट-बढ़[1] भी संभव है। यह घट-बढ़ अधिकतर तो इतनी कम और इतनी विरल होती है कि वह प्रेक्षण-सुलभ नहीं होती, किन्तु कुछ अनुकूल स्थितियों में वह प्रत्यक्ष भी हो सकती है। उदाहरण के लिए हमें मालूम है कि संक्रमण[2] टेम्परेचर के निकट गैस के घनत्व की घट-बढ़ कुछ प्रेक्षण-गम्य अभिव्यक्तियाँ उत्पन्न कर देती हैं (सांक्रमणिक मेघिता[3])।

सांख्यिकीय यांत्रिकी की सफलता के कारण भौतिकज्ञों को प्राकृतिक नियमों की उत्पत्ति सांख्यिकीय मानने का अभ्यास हो गया है। गैसीय द्रव्य में सूक्ष्म प्रक्रियाओं की संख्या अत्यधिक होने के कारण गैस के दबाव और ऐन्ट्रोपी सरल नियमों का पालन करते हैं। ऊष्मागतिकीय नियम ऐसी परमाणु-स्तरीय घटनाओं के सांख्यिकीय परिणाम मात्र हैं जिनका प्रत्यक्ष अध्ययन और सूक्ष्म विश्लेषण असंभव है। अर्थात् वे प्रायिकता के नियम हैं। पूर्णतः यथार्थ यांत्रिकीय नियम और यांत्रिक घटनाओं की चरम प्राक्-निर्णीतता तो परमाणु जगत् में ही रह जाते हैं और वहाँ वह प्रेक्षणगम्य नहीं होते। स्थूल जगत् में केवल उनके औसत प्रायिक परिणाम ही प्रेक्षणगम्य होते हैं। इसी कारण सबसे पहले उस समय प्रायिकता के नियमों के महत्त्व की ओर ध्यान आकर्षित हुआ था और इस तथ्य की ओर भी कि कम से कम घटनाओं की बहुत बड़ी

1. Fluctuations 2. Critical 3. Gritical opalescence.

संख्या के लिए तो प्रेक्षण-गम्य नियम औसतों के ही नियम होते हैं। हम देखेंगे कि तरंग-यांत्रिकी के द्वारा इस दृष्टि-कोण को और अधिक बल मिला है और उसमें यह भी माना जाने लगा है कि स्वयं मूल-कणों के प्रेक्षण-गम्य नियम भी प्रायिकता के ही नियम हैं।

३. विद्युत् की कणिकामय संरचना—इलैक्ट्रान और प्रोटान[1]

जो हम ऊपर लिख आये हैं उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि रसायन-विज्ञान के समान ही भौतिक विज्ञान में भी वह परिकल्पना सफल प्रमाणित हुई है जिसमें वस्तुएँ अणुओं द्वारा बनी हुई और अणु मूल परमाणुओं के विविध प्रकार के संघटन माने गये हैं, और प्रयोगों द्वारा भी इसकी अच्छी पुष्टि हुई है। किन्तु भौतिकज्ञों ने इतने से ही संतोष नहीं किया। उन्होंने यह भी जानना चाहा कि स्वयं परमाणुओं की बनावट किस प्रकार की है और यह समझना चाहा कि विभिन्न तत्त्वों के परमाणुओं में अन्तर किस प्रकार का है। इस कठिन कार्य में उन्हें विद्युत् की संरचना के ज्ञान की प्रगति से बहुत सहायता मिली है। वैद्युतिक घटनाओं के अध्ययन के प्रारम्भ से ही यह समझना स्वाभाविक मालूम देता था कि विद्युत् एक तरल पदार्थ है और जब धातु के किसी तार में विद्युत्-धारा चलती है तो यह माना जाता था कि उस तार में किसी वैद्युतिक तरल का प्रवाह हो रहा है। किन्तु यह भी बहुत पहले से ज्ञात था कि विद्युत् दो प्रकार की होती है—धन-विद्युत् और ऋण-विद्युत्। इसलिए यह मानना भी आवश्यक जान पड़ा कि वैद्युतिक तरल भी दो विभिन्न प्रकार के होते हैं—धन-तरल और ऋण-तरल। इन तरलों को भी हम दो विभिन्न प्रकार से चित्रित कर सकते हैं; या तो हम यह कल्पना कर सकते हैं कि जिस प्रदेश में इन तरलों का अस्तित्व होता है उस सम्पूर्ण प्रदेश में कोई पदार्थ संतत अथवा अविच्छिन्न[2] रूप से भरा हुआ है या हम यह समझ सकते हैं कि इन तरलों का स्वरूप अनेक अत्यन्त छोटी कणिकाओं से संघटित बादल के समान होता है और प्रत्येक कणिका विद्युत् की एक अत्यन्त छोटी-सी गोली के समान होती है। प्रयोग ने द्वितीय धारणा के ही पक्ष में फैसला दिया है। चालीस वर्ष पहले यह प्रमाणित हो गया था कि ऋण-विद्युत् ऐसी अत्यन्त छोटी-छोटी कणिकाणों के द्वारा बनी हुई है जो सब बिलकुल एक-सी होती हैं और जिनका द्रव्यमान और वैद्युतिक आवेश असाधारणतः छोटा होता है। ऋण-

1. The Granular strutcture of Electricity; Electrons and Protons
2. Continuous

विद्युत् की इन कणिकाओं को इलैक्ट्रान[1] कहते हैं। सबसे पहले ये इलैक्ट्रान विसर्ग-नलिकाओं[2] में द्रव्य से बाहर स्वतंत्र अवस्था में कैथोड किरणों[3] के रूप में प्रेक्षित हुए थे। और बाद में प्रकाश-वैद्युत[4] विधि से तथा तापदीप्त[5] वस्तुओं में से तापायनिक उत्सर्जन[6] के द्वारा इलैक्ट्रानों को प्राप्त करने के तरीके भी हमें मालूम हो गये। इसके पश्चात् स्वोत्सर्जी[7] पदार्थों के आविष्कार से हमें इलैक्ट्रानों को प्राप्त करने के नये स्रोत मिल गये क्योंकि ऐसे बहुत से पदार्थों में से स्वतः ही बीटा-किरणें निकलती रहती हैं जो अति तीव्रगामी इलैक्ट्रानों के अतिरिक्त और कुछ नहीं होतीं। यह भी प्रमाणित हो गया है कि सभी इलैक्ट्रानों में चाहे वे किसी भी प्रकार से उत्पन्न हुए हों बराबर मात्रा का अत्यन्त स्वल्प ऋण-वैद्युतिक आवेश रहता है। शून्याकाश में उनकी गति के अध्ययन से हम यह प्रमाणित करने में भी सफल हो गये हैं कि विद्युत् से आविष्ट सूक्ष्म कणिकाओं के यांत्रिकीय नियमों के अनुसार जिस प्रकार की गति उनमें होनी चाहिए ठीक वैसी ही गति वास्तव में उनकी होती भी है। और वैद्युत अथवा चुम्बकीय क्षेत्र में इन सूक्ष्म कणिकाओं की गति का प्रेक्षण करके हमने उनके द्रव्यमान तथा वैद्युतिक आवेश को भी नाप लिया है, यद्यपि ये दोनों राशियाँ अत्यन्त ही छोटी होती हैं।

धन-विद्युत् की कणिका-मय बनावट का प्रमाण प्राप्त करने में कुछ अधिक समय लगा था। फिर भी भौतिकज्ञ इस परिणाम पर पहुँच गये हैं कि धन-विद्युत् भी अन्तिम विश्लेषण में सर्वथा एक-सी छोटी कणिकाओं (प्रोटानों[9]) के द्वारा संघटित होती है। यद्यपि प्रोटान का द्रव्यमान भी अत्यन्त छोटा होता है, फिर भी वह इलैक्ट्रान की अपेक्षा लगभग दो हजार गुना भारी होता है। इस बात से धन-विद्युत् और ऋण-विद्युत् में अद्भुत विसंमितता[10] प्रकट होती है। इसके विपरीत प्रोटान के आवेश का निरपेक्ष मान ठीक इलैक्ट्रान के आवेश के बराबर होता है, किन्तु स्वभावतः ही वह धन-चिह्नीय होता है, ऋण चिह्नीय नहीं। कुछ समय पहले तक तो प्रोटान ही धन-विद्युत् की मूल-कणिका समझा जाता था। किन्तु धन-इलैक्ट्रान[11] के आविष्कार ने इस विषय में जटिलता उत्पन्न कर दी है। हम आगे चलकर देखेंगे कि सचमुच ही हमें धन-विद्युत् की ऐसी कणिकाओं का पता चल गया है जिनका द्रव्यमान ठीक इलैक्ट्रान के द्रव्यमान के बराबर होता है और जिनका वैद्युत आवेश भी ठीक इलैक्ट्रान

1. Electron 2. Discharge tubes 3. Cathode rays 4. Photo-electric 5. Incandescent 6. Thermionic emission 7. Radio-active 8. β-rays 9. Protons 10. Dis-symmetry 11. Positive electron

के आवेश के बराबर, किन्तु विपरीत चिह्नीय होता है। ये ही धन-इलैक्ट्रान या पाज़ीट्रान[1] हैं। तब धन-विद्युत् की वास्तविक मूल कणिका कौन-सी है? वह प्रोटान है या पाज़ीट्रान? या हमें यह समझना चाहिए कि धन-विद्युत् की मूल-कणिकाएँ दो प्रकार की होती हैं और परस्पर अपरिणम्य होती हैं? धन-इलैक्ट्रान से कुछ ही पहले जिस न्यूट्रान[2] का आविष्कार हुआ था उससे तो ऐसी धारणा होना संभव है कि प्रोटान मौलिक नहीं है। वह एक न्यूट्रान के साथ एक पाज़ीट्रान के संयोजन से बनता है। किन्तु आज तो हम यह मानने लगे हैं कि प्रोटान और न्यूट्रान दोनों एक ही मूल कणिका की दो विभिन्न अवस्थाएँ हैं। जो भी हो, कुछ समय पहले तक तो भौतिकज्ञ सदा प्रोटान को ही धन-विद्युत् की मूल-कणिका मानते थे। इस समय तो यहाँ भी हम इसी दृष्टिकोण का अवलम्बन करेंगे।

यह सच है कि इलैक्ट्रानों और प्रोटानों का द्रव्यमान अत्यन्त छोटा होता है। फिर भी वह पूर्णतः शून्य के बराबर नहीं होता। अतः इलैक्ट्रानों और प्रोटानों की बहुत बड़ी संख्या का सम्मिलित द्रव्यमान प्रेक्षण-गम्य हो जाता है। इसलिए यह धारणा बहुत आकर्षक मालूम होती थी कि समस्त भौतिक वस्तुएँ जिनका आवश्यक लक्षण यह है कि उनमें भार और अवस्थितित्व होते हैं अर्थात् द्रव्यमान होता है वे सब अन्तिम विश्लेषण में केवल बहुसंख्यक इलैक्ट्रानों और प्रोटानों के द्वारा ही निर्मित हुई हैं। इस दृष्टिकोण से यह मानना पड़ता है कि तत्त्वों के परमाणु भी जो समस्त भौतिक वस्तुओं के निर्माण के चरम संघटक हैं, प्रोटानों और इलैक्ट्रानों द्वारा ही निर्मित होते हैं और ९२ तत्त्वों के ९२ प्रकार के विभिन्न परमाणु भी इलैक्ट्रानों और प्रोटानों के ९२ प्रकार के विभिन्न संयोजनों के ही द्वारा बने हैं।

तब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि इलैक्ट्रानों और प्रोटानों के ये संयोजन किस प्रकार के होते हैं अर्थात् परमाणुओं के प्रतिरूप[3] बनाने की आवश्यकता प्रतीत होती है। इसके लिए विभिन्न परिकल्पनाएँ प्रस्तावित हुई थीं। एक प्रतिरूप जिसको थोड़ी बहुत मान्यता मिली थी सर जे० जे० टामसन[4] द्वारा प्रस्तुत किया गया था। ये वही प्रसिद्ध भौतिकज्ञ हैं जिनके प्रयत्नों से द्रव्य के संघटन को यथार्थतापूर्वक समझने में बहुत अधिक सहायता मिली है। इस प्रतिरूप में परमाणु को धन-विद्युत् की ऐसी समांगी गोली के रूप में चित्रित किया गया है जिसके अन्दर ऋण-इलैक्ट्रान सन्तुलित अवस्था में उपस्थित रहते हैं। किन्तु एक दूसरा प्रतिरूप और है जिसने अन्त में इसको तिरोहित

1. Positron 2. Neutron. 3. Model 4. Sir J. J. Thomson

कर दिया। यह रदरफोर्ड-बोह्र प्रतिरूप[1] कहलाता है। इसमें परमाणु को सौर-मंडल के सूक्ष्माकार प्रतिरूप के समान माना गया है जिसमें केन्द्रीय धन-विद्युत् के आवेश के चारों ओर इलैक्ट्रान वैद्युत आकर्षण के कारण परिभ्रमण करते हैं। यह प्रतिरूप सबसे पहले जीनपेरां[2] द्वारा प्रस्तुत किया गया था और बाद में आलफ़ा-कणिकाओं[3] के द्रव्य के सम्पर्क से उत्पन्न हुए विक्षेप के अध्ययन से इसका सत्यापन हुआ था। यह अध्ययन मुख्यतः लार्ड रदरफ़ोर्ड और उनके सहकारियों द्वारा किया गया था और इससे यह प्रमाणित हो गया कि सौर-मंडलीय प्रतिरूप की भाँति ही परमाणु का समस्त धन-विद्युत् भी परमाणु के केन्द्र में अत्यन्त ही छोटे-से आयतन में एकत्र रहता है। इससे प्रकट होता है कि परमाणु के केन्द्र में धन-विद्युत् से आविष्ट एक कणिका होती है जिसे नाभिक[4] कहते हैं और इस सूर्योपम नाभिक के चारों ओर ग्रहोपम इलैक्ट्रान कूलम्बीय वैद्युत बल के प्रभाव से परिभ्रमण करते रहते हैं। प्रत्येक परमाणु के विशेष प्रकार के गुणों का कारण इन्हीं ग्रहोपम इलैक्ट्रानों की वह संख्या Z है जो साधारण अवस्था में उस परमाणु में विद्यमान रहती है। सामान्यतः परमाणु का वैद्युत दृष्टि से अनाविष्ट[5] होना यह प्रकट करता है कि जिस परमाणु में Z इलैक्ट्रान होंगे उसके नाभिक में धन-विद्युत् का परिमाण अवश्य ही Z इलैक्ट्रानों के आवेश के बराबर, किन्तु विपरीत चिह्नीय होगा। जिस परमाणु में केवल एक ही ग्रहीय इलैक्ट्रान रहता है उसके नाभिक में विद्युत् का आवेश एक इलैक्ट्रान के आवेश के बराबर, किन्तु विपरीत-चिह्नीय होना चाहिए। और दूसरे परमाणुओं के नाभिकों में धन-विद्युत् का परिमाण इसी का अपवर्त्य[6] होना चाहिए। अतः एक इलैक्ट्रान-वाले परमाणु (हाइड्रोजन परमाणु) के नाभिक को धन-विद्युत् का मात्रक समझा जा सकता है। यह ठीक वही प्रोटान है जिसकी चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं। इस प्रकार प्रत्येक परमाणु का एक लक्षक पूर्णांक Z होता है जिसे परमाणु-क्रमांक[7] कहते हैं और इसके द्वारा हम ९२ तत्त्वों को ऐसे रैखिक क्रम में लिख सकते हैं जिसमें परमाणु-क्रमांक क्रमशः १ से ९२ तक बराबर बढ़ता जाय। प्राकाश्यतः तो संभावना इसी की अधिक मालूम होती है कि यह क्रम ठीक वही क्रम होगा जिसमें परमाणु-भार निरन्तर बढ़ता जाय क्योंकि नाभिक जितना ही अधिक जटिल होगा उतना ही उसका भार भी अधिक होना चाहिए। बहुत-सी घटनाओं के द्वारा विभिन्न तत्त्वों के परमाणु-क्रमांक असंदिग्ध रूप से निश्चित हो गये हैं। ऐसी एक घटना तत्त्वों

1. Rutherford-Bohr model 2. Jean Perrin 3. α-Paritcles 4. Nucleus 5. Neutral 6. Multiple 7. Atomic Number

के ऐक्स-किरण स्पैक्ट्रम की समानधर्मी[1] रेखाओं का आवृत्ति-विस्थापन[2] है। मोसले[3] के प्रायोगिक नियमानुसार यह विस्थापन परमाणु-क्रमांक के वर्ग का अनुपाती होता है। कुछ थोड़े से विपर्ययों को छोड़कर वर्धमान परमाणु-क्रमांकों का यह क्रम वर्धमान परमाणु-भारों के क्रम से अभिन्न है।

इस तरह परमाणु का ग्रहीय[4] सिद्धान्त प्रयोगों के द्वारा समर्थित भी हो गया है। १९१३ के एक सुविख्यात लेख में इस सिद्धान्त के गणितीय रूप को विकसित करने में भी बोह्र को सफलता प्राप्त हुई जिससे प्राकाशिक स्पैक्ट्रमों तथा रंटजन[5] स्पैक्ट्रमों की यथातथ प्रागुक्ति संभव हो गयी है। किन्तु इन अद्भुत परिणामों को प्राप्त करने के लिए बोह्र परमाणु के ग्रहीय प्रतिरूप पर क्वांटम सिद्धान्त की पथ-प्रदर्शक धारणाओं का उपयोग करना पड़ा था क्योंकि जैसा आगे बताया जायगा, चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी तथा विद्युत्-चुम्बकीय धारणाओं के उपयोग से तो कोई भी अच्छा फल नहीं निकला। इस समय हम बोह्र के सिद्धान्त का अध्ययन किसी आगे के परिच्छेद के लिए स्थगित रखेंगे, क्योंकि इस सिद्धान्त का विशद विवरण केवल क्वांटम-सिद्धान्त की सहायता से ही दिया जा सकता है।

४. विकिरण[6]

हम अभी बता चुके हैं कि आधुनिक भौतिक विज्ञान ने मुख्यतः १८७० और १९१० के बीच के काल में द्रव्य तथा विद्युत् की संरचना के विषय में हमारे ज्ञान को किस प्रकार प्रवर्धित किया है। उसने हमारे विकिरण-सम्बन्धी ज्ञान की वृद्धि किस प्रकार की है इस विषय में भी अब कुछ शब्द कहना उचित जान पड़ता है।

प्रकाश-विज्ञान और तरंग-सिद्धान्त के क्षेत्र का विस्तार कुछ नवीन प्रकार की तरंगों के आविष्कार के द्वारा बहुत बढ़ गया है। इन तरंगों में और साधारण तरंगों में भेद इतना ही है कि इनका तरंग-दैर्घ्य अपेक्षाकृत कुछ बड़ा या छोटा होता है। दीर्घकाल तक ये तरंगे अज्ञात रहीं क्योंकि इनका प्रभाव हमारे नेत्र पर कुछ भी नहीं होता। किन्तु उनके द्वारा कई भौतिक क्रियाएँ सम्पन्न हो सकती हैं; यथा, ऊष्मा की उत्पत्ति, फ़ोटो-चित्रों का अंकन, वैद्युतिक प्रभाव इत्यादि। इन्हीं के द्वारा भौतिकज्ञों ने इनके अस्तित्व को प्रमाणित किया था। ऐसी तरंगों को जिनका स्वरूप तरंग-दैर्घ्य को छोड़कर प्रकाश से सर्वथा अभिन्न है, "विकिरण" का व्यापक नाम दिया गया

1. Homologous 2. Frequency displacement 3. Mosley 1913. 4. Planetary 5. Rontgen 6. Radiation

है और ऐसा मालूम पड़ता है कि विकिरण के वृहत् परिवार में विभिन्न प्रकार के समस्त दृश्य प्रकाश केवल एक छोटे-से अंश से अधिक नहीं हैं।

पिछले ५० वर्षों में जो आविष्कार हुए हैं उनकी कृपा से आज हम ५० किलोमीटर से लेकर एक मिलीमीटर के दस खरबवें भाग ($१०^{-१०}$ मम०) तक के तरंग-दैर्घ्यों के समस्त विकिरणों से परिचित हो गये हैं। ५० किलोमीटर से $\frac{१}{१०}$ मिलीमीटर तक तो उन हर्ट्ज़ीय तरंगों का विस्तार है जो रेडियो में उपयोगी होने के कारण सुविख्यात हैं। $\frac{१}{१०}$ से $\frac{८}{१००००}$ मिलीमीटर तक अवरक्त[1] विकिरण होता है जिसका प्रभाव अत्यन्त उत्तापक होता है और $\frac{८}{१००००}$ से $\frac{४}{१००००}$ मिलीमीटर तक परा-बैंगनी[2] विकिरण होता है जो प्रबल रासायनिक और फ़ोटोग्राफ़ी क्रियाएँ उत्पन्न करता है। इसके बाद रांजन किरणों[3] अथवा एक्स-किरणों[4] का विशाल प्रदेश आता है जो $\frac{१}{१००००}$ से प्रायः एक मिलीमीटर के दस करोड़वें भाग ($१०^{-८}$ मम०) तक विस्तृत है। और अन्त में इनसे भी छोटे तरंग-दैर्घ्यवाली वे तरंगें हैं जो अत्यन्त वेधनशील[5] गामा किरणों[6] के रूप में स्वोत्सर्जी पदार्थों में से निकलती हैं।

यहाँ इस बात का विस्तृत वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है कि इतने विशाल और विस्तीर्ण अनुक्रम के विकिरणों का आविष्कार प्रशंसनीय प्रयोगों की बहुत लम्बी परम्परा के द्वारा उत्तरोत्तर किस प्रकार हुआ था। जिस बात का उल्लेख आवश्यक है वह यह है कि जो तरंगमयी परिकल्पना दृश्य प्रकाश के क्षेत्र में प्रेक्षित तथ्यों के द्वारा इतने चमत्कारी ढंग से सत्यापित होचु की थी, वही इन समस्त विकिरणों के लिए भी उतनी ही सत्य प्रमाणित हुई। हर्ट्ज़ीय तरंगों के द्वारा, ऐक्स-किरणों के द्वारा, यहाँ तक कि गामा-किरणों के द्वारा भी हम ऐसी घटनाओं का प्रेक्षण करने में समर्थ हो गये हैं जो स्पष्टतः तरंगधर्मी हैं (यथा वर्तन, व्यतिकरण, विवर्तन, विसरण)। अतः आज इस बात में शंका करने का कोई कारण नहीं है कि तरंग-सिद्धान्त अन्य समस्त प्रकार के विकिरणों के लिए भी उतना ही तथ्यपूर्ण है जितना कि दृश्य प्रकाश के लिए। विभिन्न प्रकार के विकिरणों में भेद केवल तरंग-दैर्घ्य का ही है और उनके गुणों में जो अन्तर दिखाई देता है उसका कारण केवल तरंग-दैर्घ्य की विभिन्नता ही है। किन्तु यहीं यह कह देना भी उचित है कि जिस प्रकार तरंगमयी परिकल्पना सभी प्रकार के विकिरणों के लिए समान रूप से उपयोगी है, उसी प्रकार भौतिक विज्ञान के आधुनिक विकास के इतिहास में सभी विकिरणों के सम्बन्ध में इस परिकल्पना की

1. Infra-red 2. Ultra-violet 3. Rontgen rays 4. X-Rays 5. Penetrating 6. γ-rays

उपयोगिता समान रूप से ही सीमित भी प्रमाणित हुई है। हम देखेंगे कि विकिरण के सम्पूर्ण क्षेत्र में फ़ोटान[1] की धारणा के रूप में व्यक्त कणिकामयी परिकल्पना अनिवार्य हो गयी है। और इस अन्तिम बात से यह पूर्णतः सिद्ध हो जाता है कि समस्त प्रकार के विकिरणों का भौतिक स्वरूप वास्तव में एक-सा ही है।

विभिन्न विकिरणों के आविष्कार और उनके वर्गीकरण के द्वारा तथा उनके स्वरूप की अभिन्नता के प्रमाणित हो जाने से वैज्ञानिक आज से ४० वर्ष पहले भौतिक जगत् में दो सर्वथा भिन्न सत्ताओं का अस्तित्व मानने के लिए विवश हो गये थे। एक तो द्रव्य—जो परमाणुओं से बना है और जिसके परमाणु स्वयं प्रोटानों और इलैक्ट्रानों के अर्थात् विद्युत् की मूल-कणिकाओं के सम्मेलन से बने हैं। दूसरा विकिरण—जिसमें अनेक विभिन्न प्रकार के विकिरण सम्मिलित हैं जिनका स्वरूप बिलकुल एक-सा है और जिनकी विभिन्नता केवल तरंग-दैर्घ्य के ही कारण होती है। द्रव्य और विकिरण सर्वथा स्वतंत्र सत्ताएँ तो हैं क्योंकि द्रव्य के अस्तित्व के लिए किसी विकिरण की आवश्यकता नहीं होती और विकिरण का प्रचरण पूर्णतः रिक्त आकाश में भी संभव है। तथापि जब कभी ये दोनों सत्ताएँ साथ-साथ विद्यमान होती हैं तब इनकी पारस्परिक प्रतिक्रियाएँ क्या होती हैं इस प्रश्न का विवेचन भी भौतिक विज्ञान की एक महत्त्वपूर्ण समस्या है। विकिरण द्वारा द्रव्य पर तथा द्रव्य द्वारा विकिरण पर होनेवाली क्रियाओं के विश्लेषण का प्रयत्न जरूरी है। यह समझना भी आवश्यक है कि द्रव्य विकिरण का अवशोषण अथवा उत्सर्जन किस प्रकार कर सकता है। आधुनिक भौतिक विज्ञान में जिस सिद्धान्त ने इन प्रश्नों का सम्पूर्ण और विस्तृत उत्तर पाने का प्रयत्न किया है वह है इलैक्ट्रान-सिद्धान्त। अब उसी के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना आवश्यक है।

५. इलैक्ट्रान-सिद्धान्त[2]

मैक्सवैल के विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त से हमें ऐसे समीकरण प्राप्त हुए थे जो माप्य विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्रों से वैद्युत आवेशों के और धाराओं के स्थूल दृष्टिकोणीय सम्बन्ध को यथार्थतः प्रदर्शित कर देते हैं। ये समीकरण स्थूल-जगतीय प्रयोगों के परिणामों को एक ही वैधानिक पद्धति[3] में संघटित करने से प्राप्त हुए थे। अतः इस क्षेत्र में इनका मूल्य असंदिग्ध था। किन्तु द्रव्य के अन्तरतम प्रदेशों में और परमाणुओं के अभ्यन्तर में होनेवाली वैद्युत घटनाओं के विस्तृत विवरण के लिए और इन चरम द्रव्य-कणों के द्वारा अवशोषित और उत्सर्जित विकिरण की प्रागुक्ति के लिए भी मैक्सवैल

1. Photon 2. The Electron Theory 3. Formal system

के समीकरणों के बहिर्वेशन[1] की ज़रूरत हुई और यह आवश्यक हुआ कि उन्हें ऐसा रूप दिया जाय जो परमाणवीय और कणिकीय स्तर पर होनेवाली घटनाओं के अध्ययन के लिए भी उपयुक्त हो सके। यह ऊपर से साधारण दिखाई देनेवाला, किन्तु वास्तव में अत्यन्त साहसिक कार्य एच० ए० लोरैन्ट्ज़[2] ने किया था जिनकी गिनती आधुनिक सैद्धान्तिक भौतिकी के महान् निर्माताओं में है।

विद्युत् की असंतत कणिकामय संरचना को विद्युत्-चुम्बकत्व के समीकरणों में निविष्ट करने की धारणा से ही लोरैन्ट्ज़ ने इस कार्य का प्रारम्भ किया। उन्होंने विद्युत् में सूक्ष्म कणिकाओं का अस्तित्व मान लिया। उन्होंने इन कणिकाओं का सामान्य नाम 'इलैक्ट्रान रख दिया और यह धारणा बनायी कि समस्त द्रव्यों की रचना इन्हीं कणिकाओं के सम्मेलनों के द्वारा होती है। जिस वस्तु को हम विद्युत् से आविष्ट कहते हैं उसमें किसी एक चिह्नवाली वैद्युत कणिकाओं की अपेक्षा दूसरे चिह्नवाली वैद्युत कणिकाओं की संख्या अधिक होती है। और अनाविष्ट[3] वस्तु वह होती है जिसमें दोनों प्रकार की विद्युत् की कणिकाओं की संख्या बराबर होती है। हमारी स्थूल अनुभूति के स्तर पर समस्त भौतिक वस्तुओं में विद्यमान वैद्युत कणिकाओं की संख्या सदैव अत्यन्त विशाल होती है। इस दृष्टिकोण से किसी चालक[4] में विद्युत्-धारा के प्रवाह का कारण उस चालक में विद्यमान समस्त इलैक्ट्रानों का विस्थापन है। अतः इन इलैक्ट्रानों का गति-स्वातंत्र्य ही चालकता का कारण ठहरता है। विपरीत इसके, विलागकों[5] के गुण की व्याख्या यह है कि उनमें विद्यमान प्रत्येक इलैक्ट्रान का एक विशेष सन्तुलन-स्थान होता है और वह उस स्थान से बहुत ही थोड़ा-सा विस्थापित हो सकता है। प्रत्येक इलैक्ट्रान अपने चारों ओर एक सूक्ष्म विद्युत्-चुम्बकीय बल-क्षेत्र की सृष्टि कर लेता है और हम अपने प्रयोगों में जिन बल-क्षेत्रों का प्रेक्षण करते हैं और जिन्हें नापते हैं वे द्रव्य के इन्हीं विभिन्न इलैक्ट्रानों के अत्यन्त बहु-संख्यक सूक्ष्म बल-क्षेत्रों के अध्यारोपण[6] के सांख्यिकीय[7] परिणाम होते हैं। ये सांख्यिकीय परिणाम बहुधा कुछ सरल नियमों का पालन करते हैं और ये नियम मैक्सवैल के सिद्धान्त के वे ही नियम हैं जो प्रत्यक्ष प्रेक्षित वैद्युत आवेशों और विद्युत्-धाराओं से स्थूल बल-क्षेत्रों का सम्बन्ध निर्धारित करते हैं। लोरैन्ट्ज़ का सिद्धान्त मैक्सवैल के सिद्धान्त की अपेक्षा अधिक साहसिक है। वह उन सूक्ष्मस्तरीय विद्युत्-चुम्बकीय घटनाओं का विवरण

1. Extrapolation 2. H.A. Lorentz 3. Electrically neutral 4. Conductor 5. Insulators (पृथक्कारी) 6. Super-imposition 7. Statistical

देने का प्रयास करता है जिनके औसत प्रभाव के रूप में वे घटनाएँ प्रकट होती हैं जिनका हमारे प्रयोगों में प्रेक्षण किया जाता है। तब वह प्रत्येक स्थान पर और प्रत्येक क्षण पर विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्रों, आवेशों और धाराओं को निर्णीत करने का प्रयास करता है, न केवल विविध इलैक्ट्रानों के मध्यवर्ती आकाश में, किन्तु इलैक्ट्रानों के अभ्यन्तर में भी। लोरैन्ट्ज़ ने यह मान लिया कि सूक्ष्म-स्तरीय राशियाँ, बल-क्षेत्र, आवेश और धाराएँ भी ऐसे समीकरणों के द्वारा निर्णीत होती हैं जिनका रूप ठीक मैक्सवैल के स्थूल-स्तरीय समीकरणों के समान ही होता है। अन्तर केवल यह होता है कि अब इन समीकरणों के लिए बल-क्षेत्रों को उनके अनुषंगी प्रेरणों[1] से भिन्न मानना उचित नहीं है और आवेशों और धाराओं को विद्युत् की संरचना[2] के ही फलन[3] के रूप में व्यक्त करना होगा। यह प्रमाणित किया जा सकता है कि मूल सूक्ष्म-स्तरीय घटनाओं का औसत निकालने पर लारैन्ट्ज़ के समीकरण मैक्सवैल के समीकरणों में परिणत हो जाते हैं और साथ ही साथ बल-क्षेत्रों और प्रेरणों की विभिन्नता की भी व्याख्या हो जाती है। इस प्रकार मैक्सवैल का विद्युत्-चुम्बकत्व "स्थूल" विद्युत्-चुम्बकत्व प्रतीत होने लगता है जो लोरैन्ट्ज़ के "सूक्ष्म" विद्युत्-चुम्बकत्व का औसत लेने पर प्राप्त होता है। जिन बातों की रूपरेखा ऊपर बतायी गयी है उनके आधार पर निर्मित इलैक्ट्रान-सिद्धान्त को बहुत-सी घटनाओं की प्रागुक्ति करने में महत्त्वपूर्ण सफलताएँ प्राप्त हुई हैं। प्रथम तो वर्ण-विक्षेपण[4] के जिन नियमों की व्याख्या कई पूर्ववर्ती सिद्धान्तोंके द्वारा हो चुकी थी उनकी व्याख्या इस सिद्धान्त के द्वारा भी हो गयी। इसके बाद निस्सन्देह इसकी सबसे महत्त्वपूर्ण सफलता यह थी कि इसके द्वारा सामान्य ज़ीमान-प्रभाव[5] की यथातथ प्रागुक्ति भी संभव हो गयी अर्थात् हम यह समझ सके कि सरलतम दशा में परमाणु द्वारा उत्सर्जित स्पैक्ट्रमीय रेखाओं पर समांगी चुम्बकीय क्षेत्र का किस प्रकार का प्रभाव पड़ता है। स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की आवृत्ति पर चुम्बकीय क्षेत्र के इस प्रभाव के प्रयोगात्मक आविष्कार से इलैक्ट्रान सिद्धान्त का पूर्ण रूप से सत्यापन हो गया है और आवृत्ति-परिवर्तन के परिमाण को नापकर यह प्रमाणित किया जा सकता है कि जिन गतिशील कणिकाओं का इस स्पैक्ट्रमीय उत्सर्जन से सम्बन्ध है वे ऋण-इलैक्ट्रान ही हैं और इस प्रकार द्रव्य के अभ्यन्तर में इन इलैक्ट्रानों का अस्तित्व भी प्रमाणित हो जाता है। इस बात में लोरैन्ट्ज़ के सिद्धान्त को वास्तव में बड़ी सफलता मिली है और इससे सामान्यतः उन सब घटनाओं की भी व्याख्या हो गयी है जिनमें किसी वैद्युत

1. Inductions 2. Structure 3. Function 4. Dispersion 5. Normal Zeeman effect

या चुम्बकीय क्षेत्र के कारण प्रकाश के उत्सर्जन, प्रचरण और अवशोषण के साधारण प्रतिबन्धों में परिवर्तन हो जाता है। उदाहरण के लिए वृत्त-ध्रुवन[1] की चुम्बकीय घटना है (फ़ैरैडे प्रभाव)[2] जो लोरैन्ट्ज़ के सिद्धान्त की दृष्टि से उत्क्रम[3] ज़ीमान-प्रभाव समझा जा सकता है। वैद्युत और चुम्बकीय द्विवर्तन[4] भी ऐसी ही घटनाएँ हैं। वस्तुतः विद्युत्-प्राकाशिकी[5] तथा चुम्बक-प्राकाशिकी[6] के सम्पूर्ण क्षेत्र में लोरैन्ट्ज़ के सिद्धान्त ने बहुत बड़ी सेवाएँ की हैं। ऐसा भी प्रतीत होने लगा था कि "द्रव्य में से विकिरण का उत्सर्जन कैसे होता है ?" इस और भी अधिक महत्त्वपूर्ण समस्या का समाधान भी इलैक्ट्रान सिद्धान्त से हो जायगा। लोरैन्ट्ज़ के समीकरणों के अनुसार जब इलैक्ट्रान सरल रेखा में अचर वेग से गमन करता है तब उसके साथ-साथ उसका विद्युत्-चुम्बकीय बल-क्षेत्र भी ज्यों-का-त्यों सतत चलता रहता है। अतः इस दशा में पार्श्व-वर्ती आकाश में ऊर्जा का उत्सर्जन नहीं होता। किन्तु यदि इलैक्ट्रान की गति में कुछ त्वरण[7] उत्पन्न हो जाय तो यह प्रमाणित किया जा सकता है कि उसमें से विद्युत्-चुम्बकीय उत्सर्जन होगा और इस प्रकार इलैक्ट्रान की ऊर्जा में प्रतिक्षण जो ह्रास होगा वह उसके त्वरण के वर्ग का अनुपाती होगा। प्रत्यावर्ती धारा[8] असंख्य इलैक्ट्रानों की आवर्तगति[9] का ही परिणाम है। इसलिए यह तुरन्त समझ में आ जाता है कि ऐसी विद्युत्-धारा से ऊर्जा का उत्सर्जन क्यों संभव है। इस प्रकार रेडियो के एरियल[10] के समान खुले परिपथ में जो प्रत्यावर्ती धाराएँ प्रवाहित होती हैं उनसे हर्ट्ज़ीय तरंगों के उत्सर्जन की भी व्याख्या हो जाती है। फलतः हर्ट्ज़ीय तरंगों के उत्सर्जन का सिद्धान्त भी हमें मैक्सवैल के समीकरणों में पुनः प्राप्त हो जाता है। किन्तु अकेले एक इलैक्ट्रान की त्वरित गति के कारण जो तरंग उत्सर्जित होती है उसका परिकलन करके इलैक्ट्रान-सिद्धान्त द्रव्य में से विकिरण के उत्सर्जन का एक सूक्ष्म-स्तरीय प्रतिरूप प्रस्तुत कर देता है। अतः सिद्धान्ततः यह समझना भी संभव हो जाना चाहिए कि परमाणवीय स्तर पर विद्युत्-चुम्बकीय तरंगें कैसे उत्पन्न होती हैं। उदाहरण के लिए यह प्रमाणित करना भी संभव होना चाहिए कि किसी भी परमाणु में से उत्सर्जित स्पैक्ट्रम उसी परमाणु में विद्यमान इलैक्ट्रानों की गति का परिणाम होता है। अभी क्षण भर में हम देखेंगे कि इस योजना के सफल होने में क्या-क्या कठिनाइयाँ उपस्थित हुई थीं। किन्तु प्रारम्भ में तो ऐसा ही जान पड़ा कि इस "त्वरण-जनित तरंग" के सिद्धान्त के द्वारा

1. Circular polarisation 2. Faraday effect 3. Inverse 4. Bi-refringence 5. Electro-optics 6. Magneto-optics 7. Acceleration 8. Alternating current 9. Periodic motion 10. Antenna

द्रव्य में से विकिरण के उत्सर्जन की समस्या का पूर्ण रूप से स्पष्टीकरण हो जायगा। और इस मत के पक्ष में यह प्रमाण भी बड़ा प्रबल प्रतीत हुआ कि ऐक्स-किरणें तभी प्रकट होती हैं जब किसी ठोस प्रतिकैथोड[1] से टक्कर खाकर कोई इलैक्ट्रान जल्दी से रुक जाता है।

किन्तु इलैक्ट्रान-सिद्धान्त का ऐसा चमत्कारिक प्रारम्भ होने पर भी वह द्रव्य के परमाणु-स्तरीय गुणों का कारण निश्चित करने के लिए पर्याप्त प्रमाणित नहीं हुआ। हम देखेंगे कि लारैन्ट्ज़ के समीकरणों के द्वारा द्रव्य और विकिरण के ऊष्मा-गतिकीय[2] सन्तुलन के अध्ययन में ऐसी कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई थीं जिनका निराकरण केवल क्वांटम-सिद्धान्त की बिलकुल नयी धारणाओं के सन्निवेशन के द्वारा ही संभव हुआ था। इसके अतिरिक्त यदि हम परमाणुओं के विकिरण का कारण उनके आभ्यन्तरिक इलैक्ट्रानों को ही मानने का प्रयास करें तो यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि प्रकृत अवस्था में परमाणु के भीतर के इलैक्ट्रान गतिविहीन होते हैं। अन्यथा यदि वे परमाणु के अन्तर्गत अत्यन्त छोटे-से प्रदेश में गमन करने के लिए बाध्य हों तो यह आवश्यक होगा कि उनकी गति में अत्यधिक त्वरण भी विद्यमान हो और तब वे विकिरण के रूप में निरन्तर ऊर्जा का उत्सर्जन भी करते रहेंगे। किन्तु यह बात तो परमाणु के स्थायित्व की धारणा के ही विपरीत है। हम पहले ही देख चुके हैं कि हमारे परमाणु-सम्बन्धी ज्ञान की प्रगति से हमें परमाणु संरचना के लिए ऐसे ग्रहीय[3] प्रतिरूप को स्वीकार करना पड़ा है जिसमें ग्रह-स्थानीय इलैक्ट्रान निरन्तर दौड़ते ही रहते हैं। अतः परमाणु की स्थायी अवस्था के अस्तित्व में और त्वरण-जनित तरंग के सिद्धान्त में प्रत्यक्ष ही घोर विपर्यय है। इस समस्या का निराकरण भी (बोह्र के सिद्धान्त में) क्वांटम-धारणाओं के सन्निवेशन से ही हो सका है।

इस प्रकार इन थोड़े से उदाहरणों से, जिनकी संख्या और भी बढ़ायी जा सकती है, हम देख सकते हैं कि विद्युत् की असंतत संरचना का सहारा लेकर लोरैन्ट्ज़ ने जिस विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त को पल्लवित किया और परिपूर्ण बनाया वह बहुत-सी घटनाओं की व्याख्या करने में तो विलक्षण रूप से समर्थ हुआ, किन्तु मूल चिरप्रतिष्ठित मान्यताओं से सर्वथा भिन्न प्रकार की नवीन धारणाओं की सहायता के बिना पारमाणविक क्षेत्र में प्रायोगिक तथ्यों को समझने की असंभवता ने उसके सामने एक अलंघ्य दीवार खड़ी कर दी।

1. Anti-cathode 2. Thermo-dynamic 3. Planetary

चौथा परिच्छेद

आपेक्षिकता का सिद्धान्त[1]

१. आपेक्षिकता का नियम[2]

आपेक्षिकता के सिद्धान्त के विषय में कम से कम एक छोटा-सा परिच्छेद लिखे बिना क्वांटम-सम्बन्धी ज्ञान के विकास का अध्ययन प्रारम्भ करना असंभव है। आपेक्षिकता और क्वांटम ये दोनों ही आधुनिक सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान के स्तम्भ हैं और यद्यपि इस पुस्तक में हम अपना ध्यान मुख्यतः द्वितीय स्तम्भ पर ही केन्द्रित करना चाहते हैं, फिर भी प्रथम के विषय में सर्वथा मौन भी नहीं रह सकते।

आपेक्षिकता-सिद्धान्त के विकास का प्रारम्भ गतिशील माध्यमों से सम्बन्धित प्रकाश-वज्ञानिक तथ्यों के अध्ययन से हुआ था। हम देख चुके हैं कि फ़्रैनेल की प्रकाश-सम्बन्धी धारणा में ऐसे ईथर का अस्तित्व माना गया था जो सम्पूर्ण ब्रह्मांड में व्याप्त है और समस्त वस्तुओं के अभ्यन्तर में भी भरा हुआ है तथा जो प्रकाश-तरंगों के लिए वाहन का कार्य करता है। मैक्सवैल के सिद्धान्त ने इस ईथर के महत्त्व को कुछ कम कर दिया था क्योंकि इस सिद्धान्त में यह आवश्यक नहीं रह गया था कि प्रकाश-तरंग को किसी विशेष द्रव्य का कम्पन समझा जाय। उसमें यह मान लिया गया था कि प्रकाश-तरंग विद्युत्-चुम्बकीय दिष्ट-राशियों[3] के द्वारा अविकल्पतः निर्णीत हो सकती है। विद्युत्-चुम्बकीय नियमों का यांत्रिक आधार खोजने के जितने भी प्रयत्न किये गये उनसे कोई भी संतोषजनक फल प्राप्त नहीं हुआ। इस कारण अन्त में मैक्सवैल के सिद्धान्त के बल-क्षेत्रों को ही ऐसी प्राथमिक अथवा मूल सत्ताएँ समझ लिया गया जिनका यांत्रिक प्रतिरूपों के द्वारा स्पष्टीकरण करने का प्रयत्न व्यर्थ समझा गया। इसके पश्चात् विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त के लिए किसी कम्पनशील प्रत्यास्थ[4] ईथर की आवश्यकता नहीं रह गयी और ऐसा मालूम होने लगा कि मैक्सवैल के उत्तरा-

1. Theory of Relativity 2. The Principle of Relativity 3. Vector quantities 4. Elastic

धिकारियों के लिए ईथर की धारणा निष्प्रयोजन हो गयी है। किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं हुआ और मैक्सवैल के बाद के वैज्ञानिकों को, विशेपतः लोरैन्ट्ज़ को उसका स्मरण करते रहना पड़ा। ऐसा क्यों हुआ ? इसका कारण यह था कि मैक्सवैल के विद्युत्-चुम्बकीय समीकरण यांत्रिक आपेक्षिकता[1] के सिद्धान्त से संगत सिद्ध नहीं हुए। अर्थात् यदि वे किसी एक निर्देशाक्ष-तंत्र[2] की अपेक्षा सत्य हों तो वे किसी ऐसे दूसरे निर्देशाक्ष-तंत्र की अपेक्षा सत्य नहीं रहते जिसमें पहले तंत्र की अपेक्षा सरल-रेखात्मक और अचर वेगवाली गति विद्यमान हो—कम से कम उस अवस्था में जब कि यह मान लिया जाय कि प्रथम तंत्र से द्वितीय में पहुँचने के लिए निर्देशांकों का रूपान्तरण[3] उन्हीं नियमों के अनुसार किया जायगा जिनके अनुसार चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में सदा से होता आया है। चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में तो वस्तुतः ऐसे निरपेक्ष काल की सत्ता को मान लिया गया था जो सभी प्रेक्षकों के लिए और समस्त निर्देशाक्ष-तंत्रों के लिए समान-रूप से सत्य हो। इसके अतिरिक्त यह भी मान लिया गया था कि दो विन्दुओं के बीच की आकाशीय दूरी (दिगन्तराल) की भी उतनी ही निरपेक्ष सत्ता है और उन विन्दुओं का स्थान निर्णीत करने के लिए जितने भी निर्देशाक्ष-तंत्र संभव हों उन सब में उस दूरी का मान बराबर ही रहता है। इन्हीं दोनों नियमों के द्वारा, जिनको स्वीकार करना इतना स्वाभाविक जान पड़ता है वे सरल और चिरप्रतिष्ठित सूत्र तुरन्त प्राप्त हो गये जिनकी सहायता से एक निर्देशाक्ष-तंत्र से चलकर उसकी अपेक्षा अचर वेग से सरल-रेखा पर स्थानान्तरित होनेवाले दूसरे तंत्र में पहुँचने के लिए निर्देशांकों का रूपान्तरण किया जाता है। गलीलीय रूपान्तरण इन्हीं सूत्रों के द्वारा निर्दिप्ट होता है। चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी का यह एक मूल प्रमेय है कि यांत्रिकीय समीकरण गलीलीय रूपान्तरण के प्रति निश्चर[4] रहते हैं। यदि एक निर्देशाक्ष-तंत्र से दूसरे निर्देशाक्ष-तंत्र में संक्रमण करने के लिए गलीलीय रूपान्तरण की सत्यता मान ली जाय तो न्यूटन के जो समीकरण अचल नक्षत्र-समूह से निबद्ध निर्देशाक्ष-तंत्र में सत्य हैं वे अन्य किसी ऐसे निर्देशाक्ष-तंत्र में भी सत्य रहेंगे जो अचल नक्षत्रों की अपेक्षा सरल रेखा में अचर वेग से स्थानान्तरित हो रहा हो। विपरीत इसके, मैक्सवैल और लोरैन्ट्ज़ के समीकरण जिनका रूप चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के समीकरणों से बहुत भिन्न होता है, गलीलीय रूपान्तरण की अपेक्षा निश्चर नहीं रहते। इससे यही परिणाम निकलता है कि यदि मैक्सवैल के समीकरण किसी विशेष निर्देशाक्ष-

1. Mechanical relativity 2. System of Coordinates 3. Transformation 4. Invariant

तंत्र की अपेक्षा सत्य हों तो वे उसकी अपेक्षा अचर वेग से सरल रेखा में गमन करने-वाले दूसरे निर्देशाक्ष-तंत्र की अपेक्षा सत्य नहीं रहते। अतः सब काम इस प्रकार होता है मानो जगत् में कोई खास निर्देश-माध्यम[1] विद्यमान है और केवल इसी माध्यम में अवस्थित निर्देशाक्ष-तंत्र की अपेक्षा ही विद्युत्-चुम्बकीय समीकरण सत्य होते हैं। मैक्सवैल के उत्तराधिकारियों ने इसी निर्देश-माध्यम का नाम ईथर रख दिया था। उनके लिए ईथर वह प्रत्यास्थ माध्यम नहीं था जिसमें थोड़ा-सा द्रव्यत्व भी माना जाता था और जिसमें प्रकाश-तरंगों का प्रचरण करने की सामर्थ्य थी। वह तो अब एक निःसत्त्व और सांकेतिक माध्यम के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं रह गया था जिसका कार्य केवल इतना ही था कि ऐसे निर्देशाक्ष-तंत्र को छाँटकर अलग कर दे जिसकी अपेक्षा मैक्सवैल-समीकरण यथार्थ समझे जा सकें।*

हम देख चुके हैं कि इस सीमित भूमिका में भी ईथर की धारणा काफी कष्टदायक प्रमाणित हुई है। मैक्सवैल-सिद्धान्त के अनुसार प्रकाश की प्रेक्षित घटनाओं पर प्रेक्षक की ईथर-सापेक्ष गति का सचमुच ही कुछ प्रभाव पड़ना चाहिए। और भौतिकज्ञ के लिए यह संभव होना चाहिए कि प्रकाश-प्रचरण सम्बन्धी प्रेक्षणों के द्वारा वह यह मालूम कर सके कि ईथर की अपेक्षा उसका (प्रेक्षक का) अपना वेग कितना है। यदि ऐसा हो सके तो इस रहस्यमय सत्ता को अवश्य ही थोड़ा-बहुत द्रव्यत्व प्राप्त हो जायगा। यथार्थता के लिए यह मानना ही पड़ेगा कि जो पार्थिव भौतिकज्ञ अपनी प्रयोगशाला में बैठकर प्रयोग करता है वह पृथ्वी के साथ-साथ बड़े वेग से सूर्य की परिक्रमा करता रहता है और पृथ्वी की यह गति लगभग वृत्ताकार होने के कारण उसके वेग की दिशा भी प्रायः छः महीनों के बाद बिलकुल उलट जाती है। अतः यदि किसी दुःसंभाव्य दैवयोग से किसी समय उसे यह मालूम पड़े कि वह ईथर की अपेक्षा अचल है तो कुछ ही सप्ताहों या महीनों के बाद वह अवश्य ही ईथर की अपेक्षा तीव्र वेग से चलने लगेगा। अतः वर्ष भर में विभिन्न समयों पर कई प्रयोग करके पृथ्वी की ईथर-सापेक्षा गति का पता लगा लेना अवश्य ही संभव होना चाहिए। किन्तु १९ वीं शताब्दी के वैज्ञानिकों ने

1. Medium of reference

* यहाँ यह कहना उचित जान पड़ता है कि हाल में ही डिरैक (Dirac) को अपने वैद्युत-गतिकी (Electro-dynamics) के क्वांटम-सिद्धान्त के सम्बन्ध में ईथर की धारणा के पुनरुद्धार की आवश्यकता प्रतीत हुई है। उनके मत में आकाश और काल के प्रत्येक विन्दु के साथ, वहाँ द्रव्य अथवा विद्युत् के आवेश का अभाव होने पर भी एक आनुषंगिक वेग होना ही चाहिए और इस वेग को किसी वास्तविक भौतिक वस्तु (ईथर) का वेग ही समझना चाहिए।—अंग्रेजी अनुवादक।

जितने भी प्रकाशीय प्रयोग किये उनमें से किसी के द्वारा भी पृथ्वी की ईथर-सापेक्ष गति के प्रभाव का पता नहीं चल सका, यद्यपि ये प्रयोग बहुत ही विभिन्न प्रकार के थे और अत्यन्त यथार्थतापूर्ण रीति से किये गये थे। फिर भी दीर्घकाल तक यह असफलता चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्तों से असंगत नहीं समझी गयी क्योंकि इन सिद्धान्तों के अनुसार जिन प्रभावों के प्रेक्षण की आशा की जा सकती थी वे असाधारणतः सूक्ष्म थे और अत्यन्त यथार्थतापूर्ण प्रयोगों से जिन प्रभावों का प्रेक्षण संभव हो सकता था उनसे भी अधिक स्वल्प थे। वस्तुतः यह प्रमाणित किया जा सकता है कि प्रेक्षक की ईथर-सापेक्ष गति के कारण जो प्रभाव संभव हों वे प्रेक्षक के ईथर-सापेक्ष वेग और प्रकाश के शून्याकाशीय वेग के अनुपात के वर्ग के अनुपाती होते हैं। इस अनुपात के सदैव अत्यन्त छोटे होने के कारण अपेक्षित प्रभाव भी अत्यन्त दुर्बल होते हैं। किन्तु प्रायोगिक कौशल की अनवरत प्रगति का परिणाम यह हुआ कि वह समय भी आ गया जब कि व्यतिकरण के प्रयोगों के द्वारा प्रयोगकर्त्ताओं ने उस कोटि की सूक्ष्म राशियों के प्रेक्षण की क्षमता भी प्राप्त कर ली जिस कोटि के सूक्ष्म प्रभाव सिद्धान्त के अनुसार प्रेक्षक की ईथर-सापेक्ष गति के कारण संभव समझे जा सकते हैं। तिस पर भी प्रयोग का परिणाम नकारात्मक ही निकला और जिन सिद्धान्तों के अनुसार प्रागुक्त प्रभावों को निस्सन्देह बहुत छोटे होने पर भी अब नाप लेना संभव हो गया था उनका कुछ भी पता न चल सका। ईथर अब भी अलक्षित ही बना रहा और अब तो चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त से घोर विपर्यय स्पष्ट ही हो गया। यही वह दूरगामी परिणाम था जो १८८१ में माइकेल्सन[1] के सुविख्यात प्रयोग से और कुछ समय बाद इसी की माइकेल्सन और मोरले[2] द्वारा की गयी पुनरावृत्ति के द्वारा निकला था। और वे दूसरे प्रयोग भी माइकेल्सन के प्रयोग के समान ही असफल रहे जिनसे प्रकाशीय प्रभावों के स्थान में विद्युत्-चुम्बकीय प्रभावों के द्वारा पृथ्वी की ईथर-सापेक्ष गति का पता लग जाना चाहिए था (यथा ट्राउटन और नोबल[3] का प्रयोग)।

स्वभावतः ही माइकेल्सन के प्रयोग के नकारात्मक परिणाम के साथ प्रचलित सिद्धान्तों का सांगत्य स्थापित करने के अनेक प्रयत्न किये गये। विशेषतः फ़िट्ज़जिरैल्ड और लोरैन्ट्ज़[4] ने यह धारणा प्रस्तुत की कि जब भौतिक वस्तुएँ ईथर में गमन करती हैं तो उनका कुछ आकुंचन[5] हो जाता है जिससे गमन की दिशा में तो उनकी लम्बाई घट जाती है, किन्तु उससे अनुप्रस्थ दिशा की लम्बाई अपरिवर्तित रहती है और इस

1. Michelson 2. Michelson and Morley 3. Trouton and Noble 4. Fitz-gerald and Lorentz 5. Contraction

आकुंचन का ही यह परिणाम होता है कि उस गति के कारण प्रकाश-प्रचरण पर जो प्रभाव पड़ना चाहिए था उसका बिलकुल पूरी तरह प्रतीकार[1] हो जाता है। किन्तु प्रत्यक्ष है कि यह चतुर परिकल्पना पूर्णतः कृत्रिम थी और असफलता को ढकने के ही लिए बनायी हुई मालूम देती थी। यह विदित है कि १९०५ में ऐलबर्ट आइन्स्टाइन[2] के प्रशंसनीय बौद्धिक प्रयास के द्वारा ही इस समस्या का यथार्थ समाधान प्राप्त हुआ था।

"प्रकाशीय अथवा विद्युत-चुम्बकीय प्रयोगों के द्वारा किसी प्रेक्षक कीई थर-सापेक्ष अचर वेगवाली गति के प्रेक्षण की संभावना मैक्सवैल और लोरैन्ट्ज़ के सिद्धान्त में निहित है।" इस धारणा का मूल कारण यह था कि यह बात पहले से ही मान ली गयी थी कि जब एक निर्देशाक्ष-तंत्र से दूसरे ऐसे तंत्र में संक्रमण किया जाता है जिसमें पहले तंत्र की अपेक्षा अचर वेगवाली सरल-रेखात्मक गति हो तब दोनों तंत्रों के निर्देशांक गलीलीय रूपान्तरण के सूत्रों के द्वारा परस्पर सम्बद्ध रहते हैं। मैक्सवैल-लोरैन्ट्ज़ समीकरण गलीलीय रूपान्तरण के प्रति निश्चर नहीं रहते और हम देख चुके हैं कि इसी कारण पृथ्वी की ईथर-सापेक्ष गति के प्रेक्षण की संभावना उत्पन्न होती है। किन्तु प्रायोगिक तथ्यों के द्वारा इसका सत्यापन नहीं हुआ। परन्तु विद्युत्-चुम्बकत्व के समीकरणों के गणितीय अध्ययन के द्वारा लोरैन्ट्ज़ ने देखा कि यद्यपि ये समीकरण गलीलीय रूपान्तरण के प्रति निश्चर नहीं रहते तथापि गलीलीय रूपान्तरण से कुछ अधिक जटिल एक और रैखिक[3] रूपान्तरण है जिसमें ये समीकरण अविचल रहते हैं। यह आजकल लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण कहलाता है। प्रारम्भ में तो यह केवल गणितीय कौतुक मात्र ही दिखाई दिया और ऐसा नहीं जान पड़ा कि लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण का कोई स्पष्ट भौतिक अर्थ भी हो सकता है। किन्तु आइन्स्टाइन की प्रतिभापूर्ण धारणा का एक पक्ष यह भी था कि उन्होंने यह मान लिया कि अन्योन्य-सापेक्ष अचर-वेगीय स्थानान्तरण की गतिवाले दो प्रेक्षक जिन निर्देशांकों का उपयोग करते हैं उनमें सचमुच ही कुछ भौतिक सम्बन्ध होता है और लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण इसी भौतिक सम्बन्ध का यथार्थ निरूपण करता है (कम से कम उस अवस्था में जब दोनों ही प्रेक्षकों का स्थानान्तरण अचल नक्षत्र समुदाय की अपेक्षा अचर-वेगीय हो)। अतः इस प्रसंग में गलीलीय रूपान्तरण के स्थान में लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण ही भौतिक दृष्टि से यथार्थ हो सकता है। और विद्युत्-चुम्बकत्व के समीकरणों के लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण के प्रति निश्चर होने के कारण यह भी परिणाम निकलता है कि अन्योन्य-सापेक्ष अचर वेगवाले दो

1. Compensation 2. Albert Einstein 3. Linear

प्रेक्षकों के लिए इन समीकरणों का रूप बिलकुल एक-सा ही होता है। अतः उन दोनों प्रेक्षकों को समस्त प्रकाशीय और विद्युत्-चुम्बकीय घटनाएँ भी बिलकुल एक-सी ही मालूम होंगी और यह असंभव होगा कि किसी भी घटना से कोई भी प्रेक्षक अपनी ईथर-सापेक्ष गति का पता चला सके। फलतः माइकेल्सन के प्रयोग तथा ईथर-सापेक्ष पृथ्वी के वेग को नापने के अन्य प्रयोगों का नकारात्मक परिणाम पूर्णतः स्वाभाविक हो जाता है। विपरीततः यदि समस्त प्रकाशीय और विद्युत्-चुम्बकीय घटनाओं की "आपेक्षिकता" मूल-सिद्धान्त के रूप में उसी प्रकार स्वीकार कर ली जाय जिस प्रकार चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में यांत्रिक घटनाओं की आपेक्षिकता स्वीकार कर ली गयी थी, तब यह भी स्वीकार करना आवश्यक हो जाता है कि अन्योन्य-सापेक्ष सरल-रेखात्मक अचर वेग-वाले दो प्रेक्षकों के निर्देशांकों का सम्बन्ध लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण के द्वारा ही व्यक्त हो सकता है, न कि गलीलीय रूपान्तरण के द्वारा।

गलीलीय रूपान्तरण के स्थान में लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण को स्थापित करने की आवश्यकता के कारणों और उसके भौतिक परिणामों का विवेचन अत्यन्त आवश्यक है। आकाश और काल की धारणाओं के गहन आलोचनात्मक अध्ययन के द्वारा आइन्स्टाइन ने यह विवेचन किया था। यह विवेचन जरूरी यों हो गया था कि लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण को स्वीकार करने से कुछ ऐसे परिणाम अनिवार्य हो गये जिन्हें हम न्यायतः विरुद्धाभासी[1] समझ सकते थे। इस रूपान्तरण में एक तो यह बात निहित है कि निरपेक्ष काल का अस्तित्व है ही नहीं अर्थात् सापेक्ष गतिवाले दो प्रेक्षकों द्वारा निर्णीत समय अथवा कालान्तराल बराबर नहीं होते। और दूसरी बात यह भी निहित है कि दो द्रव्य-विन्दुओं के बीच की दूरी का मान या दिगन्तराल भी निरपेक्ष नहीं होता अर्थात् उन दो प्रेक्षकों के लिए बराबर नहीं होता। यदि समय और दूरी की निरपेक्षता को हम स्वतःसिद्ध मान लें तो अनिवार्यतः हमें गलीलीय रूपान्तरण भी स्वीकार करने पड़ेंगे। विपरीततः लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण को स्वीकार करने का यह अर्थ होगा कि अत्यन्त स्वाभाविक जान पड़नेवाली इन स्वतःसिद्ध मान्यताओं को छोड़ देना पड़ेगा। इस कठिनाई को दूर करने के लिए आइन्स्टाइन ने आलोचनात्मक विश्लेषण करके ऐसे उपाय प्रस्तुत किये हैं जिनसे कालान्तरालों और दिगन्तरालों को प्रयोग के द्वारा निर्णीत किया जा सके। इस विश्लेपण में उन्होंने यह मूल-परिकल्पना बनायी कि ऊर्जा का अथवा किसी भी प्रकार के संकेत[2] का स्थानान्तरण प्रकाश के शून्याकाशीय वेग की अपेक्षा

1. Paradoxical 2. Signal

अधिक वेग से नहीं हो सकता और प्रकाश के इस शून्याकाशीय वेग का मान नियत[1] है और प्रचरण की दिशा पर भी अवलम्बित नहीं है। और तब उन्होंने यह भी प्रमाणित कर दिया कि द्रुततम संकेतों के प्रचरण-वेग की इस उच्चतम सीमा के अस्तित्व की धारणा के द्वारा लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण के सूत्रों को समझ लेना संभव हो जाता है और उनकी सत्यता युक्तिसंगत भी प्रतीत होने लगती है।

सबसे पहले तो आइन्स्टाइन ने इस प्रश्न पर विचार किया कि किसी भी निर्देश-तंत्र में विभिन्न स्थानों पर समय के नापनेवाली घड़ियों में संकालत्व[2] कैसे स्थापित किया जाय। यह तो असंभव है कि जो घड़ियाँ एक ही स्थान पर अवस्थित नहीं हैं उनके समय की तुलना प्रत्यक्षतः की जा सके। अतः ऐसी घड़ियों का संकालन केवल संकेतों के विनिमय के द्वारा ही किया जा सकता है। यह बताना सरल है कि इस कार्य को करने की यथार्थतापूर्ण विधि क्या है। उस तंत्र की समस्त घड़ियों में संकालत्व स्थापित हो जाने पर ही हम कह सकेंगे कि इस तंत्र का कोई "नैज समय"[3] है। किन्तु इस प्रकार से स्थापित किया हुआ संकालत्व केवल उसी तंत्र के लिए यथार्थ होगा जिसमें यह संकालन संपन्न हुआ था या उन तंत्रों के लिए जो उसकी अपेक्षा स्थिर हों। किन्तु समस्त प्रकार के विभिन्न तंत्रों के लिए एक ही निरपेक्ष समय निर्णीत करना संभव नहीं है। यही आइन्स्टाइन के विश्लेपण का सर्वथा नवीन परिणाम था। इस बात को अधिक सूक्ष्मता से स्पष्ट करने के लिए मान लीजिए कि **क** और **ख** दो निर्देश-तंत्र हैं जिनमें अन्योन्य-सापेक्ष सरल-रेखात्मक तथा अचर-वेगीय गति है। और यह भी मान लीजिए कि दोनों ही तंत्रों में घड़ियों का संकालन कर लिया गया है और तब **क**–तंत्र के विभिन्न विन्दुओं पर परस्पर-संकालित घड़ियाँ रख दी गयी हैं और इसी तरह **ख**–तंत्र के विभिन्न विन्दुओं पर भी परस्पर संकालित घड़ियाँ रख दी गयी हैं। तब आपेक्षिक गति के कारण **क** की घड़ियाँ **ख** की घड़ियों के पास से उत्तरोत्तर गुजरेंगी। अब यदि **क**–तंत्र में इन घड़ियों के पास ही कुछ प्रेक्षक बैठा दिये जायँ और उन्हें यह आदेश हो कि जिस समय उनकी अपनी घड़ी में कोई, विशेषतः निर्दिष्ट, क्षण आये (यथा मध्याह्न) ठीक उसी समय **ख**–तंत्र की जो घड़ी उनके सामने आये उसमें निर्दशित समय को देखकर लिख लें, तो हम देखेंगे कि उन विभिन्न प्रेक्षकों द्वारा **ख**–तंत्र की गतिशील घड़ियों में प्रेक्षित समय विभिन्न निकलेंगे। दूसरे शब्दों में **क**–तंत्र के एक ही नैज क्षण पर **ख**–तंत्र

1. Constant 2. Synchronism 3. Proper time

की विभिन्न घड़ियों के प्रेक्षित समय विभिन्न निकलेंगे। और क तथा ख–तंत्रों की सभी बातें अन्योन्यानुवर्ती[1] होने के कारण ख–तंत्र के किसी विशेष नैज क्षण पर क–तंत्र से सम्बन्धित प्रेक्षकों द्वारा प्रेक्षित क की घड़ियों के समय भी विभिन्न निकलेंगे। आपेक्षिकता के सिद्धान्त में यौगपद्य[2] का अस्तित्व ऐसे निरपेक्ष अर्थ में है ही नहीं जो समस्त अन्योन्य-सापेक्ष गतिशील विभिन्न तंत्रों के लिए ठीक समझा जा सके। और आइन्स्टाइन ने अच्छी तरह प्रमाणित कर दिया है कि यह विरोधाभासी तथ्य प्रकाश के शून्याकाशीय वेग की अपेक्षा तीव्रतर वेगवाले संकेतों से संकालन की असंभवता का ही परिणाम है।

इस प्रकार लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण की भौतिक व्याख्या के प्रयास में आइन्स्टाइन ने सिद्ध कर दिया है कि यदि कोई भौतिक वस्तु किसी प्रेक्षक को चलती हुई दिखाई देती हो तो उसे गति की दिशा में उस वस्तु की लम्बाई उस वस्तु के सहगामी किसी अन्य प्रेक्षक द्वारा नापी हुई लम्बाई की अपेक्षा छोटी मालूम पड़ेगी। दूसरे शब्दों में मान लीजिए कि दो प्रेक्षक ऐसे हैं जो किसी दिशा द में अन्योन्य-सापेक्ष सरल-रेखा में अचर वेग से चल रहे हैं और मान लीजिए कि इनमें से एक प्रेक्षक के पास एक छड़ है जिसको इस प्रकार रखा गया है कि उसकी लम्बाई गति की दिशा में हो और उस प्रेक्षक के नाप के अनुसार यह लम्बाई एक मीटर है तो दूसरे प्रेक्षक के नाप में वह छड़ एक मीटर से कम लम्वी निकलेगी और उन प्रेक्षकों का आपेक्षिक वेग जितना ही अधिक तीव्र होगा उतना ही लम्बाई का यह अन्तर भी अधिक निकलेगा। किन्तु दूसरे प्रेक्षक की अपेक्षा छड़ के इस आकुंचन का परिमाण साधारणतः अत्यन्त ही छोटा होता है और केवल उसी दशा में प्रेक्षणगम्य होता है जब उनका आपेक्षिक वेग प्रकाश के शून्याकाशीय वेग के नजदीक पहुँच जाता है। यही कारण है कि प्रयोग के द्वारा इस आकुंचन के अस्तित्व का प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिल सकता। किन्तु यह आकुंचन जो व्यवहारतः सदैव स्वल्प ही होता है ठीक उस आकुंचन के बराबर परिमाण का होता है जिसकी फ़िट्ज़जिरैल्ड और लोरैन्ट्ज़ ने कल्पना की थी और जो माइकेल्सन के प्रयोग के दृढ़तः नकारात्मक परिणाम की व्याख्या के लिए पर्याप्त समझा गया था। फिर भी फ़िट्ज़जिरैल्ड-लोरैन्ट्ज़ के आकुंचन में और आइन्स्टाइन के मतानुसार लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण से उत्पन्न आकुंचन में तात्त्विक भेद है। पहला तो वस्तुतः ईथर में निरपेक्ष गति के द्वारा उत्पन्न वास्तविक[3] आकुंचन माना गया था, किन्तु दूसरा तो द्वितीय प्रेक्षक द्वारा अनुभूत केवल आभासी[4]

1. Reciprocal 2. Simultaneity 3. Real 4. Apparent

आकुंचन है। उसकी अविकल्प व्युत्पत्ति का कारण वह विधि है जिसके अनुसार विभिन्न प्रेक्षक कालान्तरालों और दिगन्तरालों का नाप करते हैं और वह लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण है जो उन दोनों प्रेक्षकों के द्वारा किये गये नापों के गणितीय सम्बन्ध को व्यक्त करता है। लम्बाई के इस आभासी आकुंचन का ही परिपूरक[1] घड़ियों का आभासी मन्दन[2] है। क–तंत्र से सम्बन्धित प्रेक्षक जब ख–तंत्र की घड़ी की चाल का अध्ययन करते हैं तब उन्हें मालूम देता है कि वह घड़ी उनकी क–तंत्रीय घड़ियों की अपेक्षा धीरे चलती है और वे समझते हैं कि गतिशील घड़ी पीछे होती जाती है। आइन्स्टाइन ने सिद्ध किया कि यह भी लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण का ही परिणाम है। लम्बाई का आकुंचन और घड़ियों का मंदन दोनों ही आभासी हैं और आकाश तथा काल की उन नवीन परिभाषाओं से उत्पन्न हुए हैं जिनका लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण से सम्बन्ध है। विपरीततः यदि लम्बाई के आकुंचन और घड़ियों के मन्दन को पूर्वतः स्वीकृत मान लिया जाय तो लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण के सूत्रों का सत्यापन हो जाता है।

जिन युक्तियों से आइन्स्टाइन ने आकाश तथा काल की अपनी नूतन धारणा का औचित्य सिद्ध किया है वे अधिकतर ऐसी हैं जिनका यथार्थ प्रतिपादन बहुधा गूढ़ और जटिल होता है। किन्तु वे युक्तियाँ पूर्णतः प्रबल हैं और तर्क की दृष्टि से उनके विरुद्ध कोई गंभीर दोषारोपण नहीं किया जा सकता। विशेषतः हम इस विरोधाभासी तथ्य को अकाट्य रूप से सिद्ध कर सकते हैं कि छड़ों का आकुंचन और घड़ियों का मन्दन अन्योन्यानुवर्ती आभास हैं अर्थात् यदि अन्योन्य-सापेक्ष अचर-वेगीय गतिवाले दो प्रेक्षकों को एक-एक छड़ और एक-एक घड़ी ऐसी दे दी जाय जिनकी बनावट बिलकुल एक-सी हो तो प्रत्येक प्रेक्षक को दूसरे प्रेक्षक की छड़ अपनी छड़ से छोटी दिखाई देगी और दूसरे प्रेक्षक की घड़ी अपनी घड़ी की अपेक्षा सुस्त चलती हुई मालूम पड़ेगी। यह अन्योन्यानुवर्तन देखने में कितना ही आश्चर्यजनक क्यों न मालूम दे, किन्तु जब इस सिद्धान्त की परीक्षा सावधानी से की जाती है तब इसकी संतोषजनक व्याख्या सरलतापूर्वक हो जाती है। किन्तु स्वभावतः ही ऐसी परीक्षा यहाँ संभव नहीं है।

आइन्स्टाइन के आपेक्षिकता-सिद्धान्त के द्वारा आकाश और काल की धारणाओं में जो परिवर्तन हुआ उसके कारण गतिमिति के नियमों में भी परिवर्तन करने की आवश्यकता हो गयी। विशेष कर इस सिद्धान्त से वेगों के संयोजन[3] का जो नियम प्राप्त होता है वह चिरप्रतिष्ठित नियम से अधिक जटिल है। वेग-संयोजन के

1. Comptementary 2. Slowing 3. Composition

इस नवीन नियम के द्वारा गतिशील वर्ण-विक्षेपी[1] माध्यमों में प्रकाश-प्रचरण सम्बन्धी फ़्रैनैल के प्रयोग के परिणाम की सरल व्याख्या ही वस्तुतः आपेक्षिकता-सिद्धान्त की एक अच्छी सफलता मानी जाती है। ईथर-सिद्धान्त की भाषा में तो इस प्रयोग का परिणाम यह कहकर समझाया जा सकता था कि वर्तक वस्तु की गति के कारण ईथर का भी उसके साथ-साथ आंशिक सहकर्पण[2] हो जाता है। इस आंशिक सहकर्षण के लिए गतिशील वस्तु के वर्तनांक[3] के फलन के रूप में फ़्रैनैल ने जिस सूत्र का प्रतिपादन किया था उसका सत्यापन फ़ीजो[4] ने कर दिया था। लोरैन्ट्ज़ के इलैक्ट्रान-सिद्धान्त से भी इस सूत्र के निगमन में सफलता मिली थी, किन्तु आपेक्षिकता के सिद्धान्त के द्वारा इसकी जो व्याख्या प्राप्त हुई है वह बहुत ही अधिक सरल और सुन्दर है क्योंकि इसमें तो यह वेग-संयोजन के नवीन सूत्र के प्रत्यक्ष परिणाम के रूप में ही प्रकट हो जाता है।

२. दिक्-काल[5]

गलीलीय रूपान्तरण उस परिकल्पना पर आधारित था जिसमें दिक् (आकाश) और काल एक दूसरे से पूर्णतः स्वतंत्र माने गये थे और इस स्वतंत्रता के ही कारण इन सत्ताओं में निरपेक्षता का गुण आरोपित हुआ था। इसके विपरीत लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण के समीकरणों के रूप से ही प्रकट है कि आपेक्षिकता के सिद्धान्त में यह संभव ही नहीं है कि आकाशीय निर्देशांकों को समय के निर्देशांक से स्वतंत्र समझा जाय। विभिन्न प्रेक्षकों के लिए उपयोगी आकाश और काल के निर्देशांकों के पारस्परिक सम्बन्ध का ज्यामितीय विधि से निदर्शन करने के लिए एक चतुर्विमितीय[6] सांतत्यक[7] की कल्पना करना आवश्यक हो जाता है जिससे लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण में निहित आकाश और काल का प्रगाढ़ ऐक्य अमूर्त रूप में सम्पन्न हो जाता है। इस ज्यामितीय निरूपण को मिनकाउस्की[8] ने संवर्धित और विकसित किया था और अब यह दिक्-काल के नाम से प्रख्यात है।

लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण से दिक्-काल के दो विन्दुओं का अन्तराल निश्चर रहता है और आपेक्षिकता के सिद्धान्त में भौतिक विज्ञान के समस्त नियम दिक्-कालीय टेन्सरों[9] के अनुबन्धों के रूप में प्रकट होते हैं। प्रत्येक प्रेक्षक उस चतुर्विमितीय दिक्-काल-सांतत्यक[10] को किसी विशेप प्रकार से काटकर अपने निजी आकाश और काल को पृथक् कर लेता है और जिन विभिन्न रीतियों से दो अन्योन्य-सापेक्ष अचर वेगवाले

1. Dispersing 2. Drag 3. Refracting index 4. Fizeau 5. Space-Time 6. Four dimensional 7. Continuum 8. Minkowski 9. Tensor 10. Continuum

प्रेक्षक अपने-अपने आकाश और काल को पृथक् करते हैं उन्हीं से लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण के सूत्र तुरन्त प्राप्त हो जाते हैं।

इस प्रकार आपेक्षिकता का सिद्धान्त काल के एक तथा आकाश के तीनों निर्देशांकों को मिलाकर किसी प्रकार उनको एक ही सांतत्यक में संघटित कर देता है यद्यपि उनके भौतिक रूपों में इतना अधिक अन्तर है। किन्तु इससे हमें यह परिणाम नहीं निकालना चाहिए कि आपेक्षिकता के सिद्धान्त ने आकाश और काल में अभिन्नता सिद्ध कर दी है। केवल इतना ही नहीं है कि अपने भौतिक गुणों के कारण आकाश और काल अब भी वस्तुतः भिन्न ही रहते हैं, किन्तु मिन्काउस्की के दिक्-काल के गणितीय विवेचन में यह भिन्नता स्पष्टतः इस बात से प्रकट होती है कि उसमें काल के निर्देशांक का कार्य और आकाश के निर्देशांकों के कार्य एक-से नहीं माने जाते। यदि हम चाहें कि इस दिक्-काल को भी ज्यामितीय धारणा के अनुसार यूक्लिडीय आकाश ही समझा जाय तो इस चतुर्विमितीय सांतत्यक के निर्माण के लिए केवल तीनों आकाशीय निर्देशांकों का ज्यों-का-त्यों संयोजन करने से काम नहीं चलता। समय के निर्देशांक को $\sqrt{-१}$ से गुणा करके तब उसे आकाशीय निर्देशांकों से मिलाना आवश्यक होता है। यही आकाश और काल की मौलिक भिन्नता का प्रतीक है।

इसके अतिरिक्त काल का एक मूल गुण यह है कि उसका प्रवाह केवल एक ही दिशा में होता है। इससे दिक्-काल में एक प्रकार की ध्रुवीयता[1] प्रकट होती है और जिस अक्ष पर काल का नाप किया जाता है उसकी धन-दिशा को विशिष्टता[2] प्राप्त हो जाती है। प्रत्येक क्षण पर द्रव्य-विन्दु की स्थिति दिक्-काल के किसी एक विन्दु के द्वारा निरूपित होती है और काल-प्रवाह में इस विन्दु के उत्तरोत्तरवर्ती स्थानों से दिक्-काल में एक रेखा बन जाती है जो उस द्रव्य-विन्दु की विश्व-रेखा[3] कहलाती है। प्रत्येक विश्व-रेखा की एक दिशा विशिष्ट होती है जो भूतकाल से भविष्य की ओर जाती है और विश्व-रेखा खींचने की यह अद्वितीय दिशा ही इस बात को प्रकट करती है कि आकाश और काल में अन्तर कहाँ है।

किन्तु आकाश और काल चाहे कितने ही भिन्न क्यों न हों, इस बात में भी कम सत्यता नहीं है कि आपेक्षिकता के सिद्धान्त में वे एक-दूसरे से स्वतंत्र नहीं हो सकते और यह चतुर्विमितीय दिक्-काल ही उनकी इस पारस्परिक परतंत्रता का प्रतीक है और यही वह नवीन निर्देश-तंत्र प्रस्तुत करता है जिसमें समस्त प्राकृतिक नियमों को व्यक्त करना आवश्यक है।

1. Polarity 2. Privilege 3. World-line

दिक्-काल के विषय में हम अब और अधिक नहीं कहना चाहते क्योंकि बिना गणितीय सांकेतिकता[1] की सहायता के इसका अधिक सूक्ष्म अध्ययन संभव नहीं है। हम तो अब यह बताना चाहते हैं कि आइन्स्टाइन के सिद्धान्त ने यांत्रिकी के नियमों में परिवर्तन क्यों और कैसे किया।

३. आपेक्षिकीय गति-विज्ञान[2]

न्यूटन के चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकीय समीकरण गलीलीय-रूपान्तरण में निश्चर रहते हैं। जब तक यह समझा जाता था कि दो अन्योन्य-सापेक्ष अचर वेगवाले प्रेक्षकों के निर्देशांकों का सम्बन्ध गलीलीय रूपान्तरण से प्राप्त हो सकता है तब तक तो यह भी स्वीकार करना पड़ता था कि न्यूटन के समीकरण अचल नक्षत्रों की अपेक्षा सरल रेखा में अचर वेग से चलनेवाले सभी निर्देश-तंत्रों में सत्य रहते हैं। इनमें से प्रत्येक तंत्र के समस्त प्रेक्षकों की दृष्टि में यांत्रिकीय घटनाओं के नियम यथार्थतः अभिन्न होते हैं और उसी तंत्र में सम्पन्न किसी भी यांत्रिकीय प्रेक्षण के द्वारा उस तंत्र की निरपेक्ष गति का निर्णय करना संभव नहीं होता। पुरातन यांत्रिकी में आपेक्षिकता का सिद्धान्त यही था। किन्तु जब अन्योन्य-सापेक्ष अचर-वेगीय तंत्रों के निर्देशांकों के रूपान्तरण के लिए आइन्स्टाइन ने गलीलीय रूपान्तरण के स्थान में लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण को प्रतिस्थापित कर दिया, तब स्थिति बदल गयी। इस प्रतिस्थापन[3] के कारण माइकैल्सन के प्रयोग तथा वैसे ही अन्य प्रयोगों के नकारात्मक परिणामों से सुसंगत आपेक्षिकता का सिद्धान्त प्रकाशीय तथा विद्युत्-चुम्बकीय घटनाओं के लिए यथार्थ समझा जाने लगा। किन्तु न्यूटन के यांत्रिकीय समीकरण लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण में निश्चर नहीं रहते। अतः यह आपेक्षिकता का सिद्धान्त यांत्रिकीय घटनाओं के लिए सत्य नहीं हो सकता—कम से कम दृढ़तापूर्वक तो हो ही नहीं सकता। आइन्स्टाइन ने इस परिणाम को स्वीकार करने योग्य नहीं माना और यह धारणा बनायी कि आपेक्षिकता का सिद्धान्त समस्त प्रकार की भौतिक घटनाओं के लिए मान्य होना चाहिए। किन्तु तब यह आवश्यक हो गया कि यांत्रिकी के समीकरणों को परिवर्तित करके ऐसा रूप देना चाहिए कि वे लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण में निश्चर रहें। किन्तु यह परिवर्तन इस ढंग से होना चाहिए कि जिन समस्त सामान्य अवस्थाओं में उन समीकरणों से अत्यन्त चमत्कारी परिणाम निकले हैं उनमें वे पहले के समीकरण अब भी प्रथम ों के रूप में यथार्थ बने रहें। यांत्रिकी के इन मूल समीकरणों के लिए लोरैन्ट्ज़-

1. Symbolism 2. Relativistic Dynamics 3. Substitution

रूपान्तरण में निश्चर रहनेवाला रूप मालूम करना आसान था। न्यूटन के समीकरणों के अनुसार संवेग[1] का काल-सापेक्ष अवकलज[2] बल के बराबर होता है। आइन्स्टाइन के गति-विज्ञान में यह नियम तो ज्यों-का-त्यों रखा गया है, किन्तु संवेग की परिभाषा चिर-प्रतिष्ठित गति-विज्ञान की परिभाषा से भिन्न कर दी गयी है। द्रव्य-विन्दु के संवेग को द्रव्यमान तथा वेग के गुणनफल के बराबर मानने के स्थान में इस नवीन गति-विज्ञान में उसे उस राशि के बराबर माना गया है जो द्रव्यमान तथा वेग के गुणनफल को एक ऐसे गुणक से भाग देने पर प्राप्त होती है जो वेग का फलन होता है। जब तक वेग इतना कम होता है कि उसके वर्ग और प्रकाश के शून्याकाशीय वेग के वर्ग का अनुपात उपेक्षणीय रहे तब तक तो इस गुणक को एक के बराबर मान लेने में कोई ध्यान देने योग्य गलती नहीं होती। फलतः संवेग का वही पुराना सूत्र पुनः प्राप्त हो जाता है। किन्तु प्रकाश के शून्याकाशीय वेग की कोटि के तीव्र वेगों के लिए उस गुणक का मान एक के बराबर नहीं रहता और वह वेग के साथ-साथ बदलता भी है। उस दशा में पुराने और नये नियमों के परिणामों में अन्तर पैदा हो जाते हैं और द्रव्य-विन्दु का वेग ज्यों-ज्यों प्रकाशीय वेग के निकट पहुँचता जाता है त्यों-त्यों इन अन्तरों के प्रेक्षण की संभावना भी अधिक बढ़ती जाती है। इसके अतिरिक्त गति-विज्ञान के नवीन समीकरणों से यह भी परिणाम आसानी से निकल आता है कि किसी भी द्रव्य-विन्दु का वेग प्रकाश के शून्याकाशीय वेग से अधिक कभी भी नहीं हो सकता। अतः ऐसा मालूम होता है कि आकाश में ऊर्जा के स्थानान्तरण के वेग के लिए प्रकाश का शून्याकाशीय वेग ही उच्चतम सीमा है। इस प्रकार घड़ियों के संकालन की विधि की मीमांसा में आइन्स्टाइन ने जिस परिकल्पना का निर्माण किया था उसकी भी परतः[3] पुष्टि हो जाती है।

हम यहाँ आपेक्षिक यांत्रिकी के समीकरणों के विस्तृत विवेचन में प्रवृत्त नहीं हो सकते। इतना ही कह देना पर्याप्त होगा कि यह यांत्रिकी ठीक उसी पद्धति का अनुसरण करने से विकसित हो सकती है जिसे पुरानी यांत्रिकी में इतनी अच्छी सफलता मिली थी। उदाहरणार्थ, जिस स्थिर-क्रिया[4] के सिद्धान्त से प्रारम्भ करके हैमिल्टन और लाग्रांज के समीकरण प्राप्त किये गये थे, ठीक उसी सिद्धान्त से इन नवीन गति-विज्ञान के समस्त समीकरणों का भी निगमन हो सकता है और अपरिवर्ती बल-क्षेत्रों में मापरट्यूइस का अल्पतम क्रिया का नियम[5] और याकोबी का सिद्धान्त ये भी पुनः प्राप्त हो जाते हैं। किन्तु पुरानी और नयी यांत्रिकी में एक गहरा भेद यह है कि क्रिया के अनुकल[6]

1. Momentum 2. Differential 3. A posteriori 4. Stationary action 5. Law of least action 6. Integral of action.

में प्रयुक्त फलन दोनों में अभिन्न नहीं है। किन्तु जब भी गतिशील द्रव्य का वेग इतना कम हो कि उसके तथा प्रकाश के शून्याकाशीय वेग के वर्गों का अनुपात उपेक्षणीय हो जाय, तब इस आपेक्षिकीय फलन का मान क्रिया के चिरप्रतिष्ठित फलन के मान के बराबर हो जाता है। इसका प्रत्यक्ष तात्पर्य यह है कि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी ऐसा सन्निकटन है जो अधिकांश साधारण अवस्थाओं में सत्य ही ठहरता है।

हम देख चुके हैं कि यांत्रिकी के आपेक्षिकीय समीकरणों में जो परिवर्तन निविष्ट किया गया है वह इस बात से व्यक्त किया जा सकता है कि किसी द्रव्य-विन्दु का संवेग उसके एक लाक्षणिक नियतांक को वेग से गुणा करके तथा इस गुणनफल में वेग के एक विशेष फलन का भाग देने से प्राप्त होता है। किन्तु यदि हम चाहें तो यह भी कह सकते हैं कि पुरानी यांत्रिकी के समान ही द्रव्य-विन्दु का संवेग अब भी द्रव्यमान और वेग का गुणनफल होता है; किन्तु शर्त यह है कि यह मान लिया जाय कि वेग के परिवर्तन के साथ-साथ द्रव्यमान भी परिवर्तित हो जाता है। ज्यों-ज्यों वेग का मान शून्य के निकट पहुँचता जाता है त्यों-त्यों संवेग के व्यंजक[1] के हर[2] का मान भी १ के निकट पहुँचता जाता है। इस कारण इस व्यंजक के अंश[3] का लाक्षणिक नियतांक ही विराम-अवस्था में उस द्रव्य-विन्दु का द्रव्यमान होता है। इसे बहुधा "नैज द्रव्यमान"[4] अथवा 'विराम द्रव्यमान"[5] कहते हैं क्योंकि यही उस द्रव्य-विन्दु के सहचारी प्रेक्षक द्वारा प्रेक्षित द्रव्यमान होगा। हम पहले ही बता चुके हैं कि द्रव्यमान का वेगानुचारी परिवर्तन प्रेक्षण-गम्य तभी होगा जब वेग प्रकाश के शून्याकाशीय वेग के निकट पहुँच जायगा।

आपेक्षिकता के द्वारा संवेग के व्यंजक में जो परिवर्तन हुआ है उसी का आनुषंगिक परिवर्तन ऊर्जा के व्यंजक में भी हो गया है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि यह आसानी से प्रमाणित किया जा सकता है कि संवेग के तीनों संघटक[6] और ऊर्जा ये चारों ही दिक्-काल की एक चतुर्विमितीय राशि के संघटक हैं जिसे हम विश्व-बल[7] चतुर्दिष्ट[8] कह सकते हैं। और जब संवेग और ऊर्जा एक ही गणितीय धारणा के अंश हैं तब क्या आश्चर्य है कि एक का परिवर्तन दूसरे में भी प्रतिलक्षित हो। ऊर्जा के नये व्यंजक में यह रोचक गुण है कि वेग का मान शून्य हो जाने पर भी ऊर्जा का मान शून्य नहीं हो जाता, किन्तु तब उसका मान अपरिवर्ती हो जाता है और नैज द्रव्यमान और आकाश के शून्याकाशीय वेग के वर्ग के गुणनफल के बराबर हो जाता है। इससे प्रकट होता है कि प्रत्येक द्रव्य-विन्दु में और प्रत्येक अवस्थितित्व[9] गुणवाली वस्तु में वेग से

1. Expression 2. Denominator 3. Numerator 4. Proper mass 5. Rest-mass 6. Components 7. World-force 8. Four-vector. 9. Inertia

स्वतंत्र भी कुछ "नैज ऊर्जा" विद्यमान रहती है। यदि वेग का मान शून्य न हो तो उस वस्तु की ऊर्जा नैज ऊर्जा की अपेक्षा अधिक होती है और गतिशील वस्तु की सम्पूर्ण ऊर्जा तथा नैज ऊर्जा में जो अन्तर होता है वही गति के कारण उत्पन्न ऊर्जा होती है और उसी को हम गतिज ऊर्जा[1] कह सकते हैं। यदि गतिज ऊर्जा के इस आपेक्षिकीय व्यंजक पर गौर किया जाय तो हम देखेंगे कि प्रकाश-वेग की अपेक्षा अल्प वेगों के लिए इस व्यंजक के मान में और पुरानी यांत्रिकी द्वारा निर्धारित मान में कोई प्रेक्षण-गम्य अन्तर नहीं रहता अर्थात् यह भी द्रव्यमान और वेग के वर्ग के गुणनफल के अर्धांश के बराबर ही हो जाता है। इसमें फिर वही प्रथम सन्निकटन का लक्षण दिखाई देता है जो प्रकाश-वेग की अपेक्षा स्वल्प वेगों के लिए यथार्थ समझा जा सकता है और यही कारण है कि आपेक्षिकतावादी की दृष्टि से भी सामान्यतः न्यूटन के सूत्रों का उपयोग उचित समझा जा सकता है।

जो प्रेक्षक किसी भौतिक वस्तु की अपेक्षा अचल रहता है उसके दृष्टिकोण से उस वस्तु में विद्यमान ऊर्जा का मान उस वस्तु के नैज-द्रव्यमान और प्रकाश-वेग के वर्ग के गुणनफल के बराबर होता है। किन्तु हम देख चुके हैं कि यदि उस वस्तु में गति हो तो उसका द्रव्यमान उसके वेग पर अवलम्बित तो होता है, किन्तु स्वल्प वेगों के लिए उसमें और नैज द्रव्यमान में कुछ भी अन्तर नहीं दिखाई देता। परन्तु जब उसका वेग प्रकाश-वेग के लगभग पहुँचने लगता है तब यह द्रव्यमान भी बढ़कर अनन्त की ओर प्रवृत्त होता है। यह भी प्रमाणित किया जा सकता है कि प्रत्येक प्रेक्षक के द्वारा नापा हुआ किसी भी वस्तु की ऊर्जा का मान सर्वदा ही प्रकाश-वेग के वर्ग और उस गतिमान् वस्तु के प्रेक्षक-सापेक्ष द्रव्यमान के गुणनफल के बराबर होता है। अतः ज्यों-ज्यों वस्तु का वेग बढ़कर प्रकाश-वेग के निकट पहुँचता जाता है त्यों-त्यों उस गतिशील वस्तु की ऊर्जा का मान भी बढ़कर अनन्त के निकट पहुँचता जाता है। किसी वस्तु में प्रकाश के शून्याकाशीय वेग के बराबर या उससे अधिक वेग उत्पन्न करने की असंभवता का ही यह एक नवीन रूप है। आइन्स्टाइन ने इस परिणाम को यह प्रमाणित करके और भी अधिक व्यापक रूप दे दिया कि सब वस्तुओं में—सब भौतिक सत्ताओं में—जिनका किसी प्रेक्षक द्वारा प्रेक्षित कुछ द्रव्यमान होता है उनमें इस द्रव्यमान के अस्तित्व के ही कारण कुछ ऊर्जा भी होती है जिसका उसी प्रेक्षक द्वारा प्रेक्षित मान द्रव्यमान और प्रकाश-वेग के वर्ग के गुणनफल के बराबर होता है। उन्होंने इस बात को बहुत से उदाहरणों द्वारा भी

1. Kinetic energy

स्पष्ट कर दिया है। इस प्रकार ऊर्जा के अवस्थितित्व के इस सिद्धान्त के द्वारा द्रव्यमान और ऊर्जा में एक व्यापक पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित हो गया है। और इससे यह परिणाम निकलता है कि ऊर्जा का ह्रास होने से सब वस्तुओं का द्रव्यमान घट जाता है। विपरीततः यदि उनमें ऊर्जा की वृद्धि हो जाय तो उनका द्रव्यमान भी बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए जब किसी परमाणु में से विकिरण का उत्सर्जन होता है तब उसका द्रव्यमान घट जाता है। जब से ऊर्जा के अवस्थितित्व का सिद्धान्त प्रतिपादित हुआ है तब से सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान की समस्याओं में—जितना तारा-भौतिकी[1] की समस्याओं में उतना ही नाभिकीय तथा पारमाणविक भौतिकी की समस्याओं में भी—इसका महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। विशेषतः परमाणु-विघटन[2] की घटनाओं के ऊर्जा-सम्बन्धी आँकड़ों के तैयार करने में और इन घटनाओं के प्रवर्तक नाभिकों की पारस्परिक प्रतिक्रियाओं के सूत्रों के निर्माण में तो इसने वड़ी प्रबल सहायता दी है। किन्तु यह स्थान इन प्रश्नों के विवेचन का नहीं है।

४. व्यापक आपेक्षिकता[3]

इस पुस्तक में हम व्यापक आपेक्षिकता के सम्बन्ध में वहुत थोड़े ही शब्द कहेंगे। अपने सिद्धान्त के विकास के प्रारम्भ में तो आइन्स्टाइन का विवेचन केवल ऐसे निर्देश-तंत्रों तक ही सीमित था जिनमें अचल नक्षत्रों के सापेक्ष सरल-रेखात्मक और अचर-वेगीय गति हो। इससे उन्होंने आपेक्षिकता के सिद्धान्त का केवल वही रूप प्राप्त किया जो सरल-रेखात्मक और अचर-वेगीय गति के लिए पुरानी यांत्रिकी के समान ही उपयोगी था। इसी लिए जिन परिणामों की उन्होंने प्रारम्भ में घोषणा की थी उनके समूह का नाम 'विशिष्ट आपेक्षिकता'[4] रखा गया था। इसी के सम्बन्ध में हमने मूल बातें ऊपर लिखी हैं। किन्तु प्रत्यक्षतः ही यह आवश्यक था कि इन परिणामों को अधिक व्यापक बनाकर ऐसा सिद्धान्त प्रस्तुत किया जाय जो असरल-रेखात्मक और त्वरित वेगवाली[5] गतियों के लिए भी उपयोगी हो। ऐसी गतियों के लिए सामान्यतः विशिष्ट शब्द के अर्थ के ठीक अनुरूप तो कोई आपेक्षिकता का सिद्धान्त हो ही नहीं सकता क्योंकि किसी त्वरित तंत्र में (यथा किसी घूर्ण-गति युक्त तंत्र में) निबद्ध प्रेक्षक को यांत्रिक, प्रकाशीय और विद्युत्-चुम्बकीय घटनाओं के प्रवाह पर उस गति का प्रभाव अवश्य ही मालूम पड़ जायगा। विशेषतः त्वरित तंत्र में यांत्रिक घटनाओं के सम्बन्ध

1. Astro-physics 2. Disintegration 3. General Relativity 4. Special Relativity 5. Accelerated

का परिकलन तभी संभव होता है जब हम उसमें अपकेन्द्र-बल[1] और "कोरियालिस-बल"[2] जैसे काल्पनिक बलों का उपयोग करें और इन बलों के द्वारा उत्पन्न प्रभाव उस त्वरित प्रेक्षक को यह बता देते हैं कि वह स्थिर नहीं है। फिर भी आपेक्षिकता की धारणा को व्यापक रूप में अक्षुण्ण रखने के लिए आवश्यक है कि यह मान लिया जाय कि प्रकृति के नियम सदा दिक्-काल में टेन्सरीय समीकरणों के द्वारा व्यक्त होते हैं और भौतिक घटनाओं पर त्वरण के प्रभावों की व्याख्या केवल उस व्यवस्था द्वारा दी जाय जो उस त्वरित प्रेक्षक के निर्देशांकों को निर्णीत करने के लिए बनायी गयी हो। इस विश्लेषण से प्रकट होता है कि त्वरित प्रेक्षक दिक्-काल में वक्र-रेखीय[3] निर्देशांकों का उपयोग करता है और केवल यही बात प्रेक्षित बातों की विशेषतः अपकेन्द्र-बलों और अपकेन्द्र-संघटकों के प्रादुर्भाव की व्याख्या के लिए पर्याप्त होती है।

इस समस्या पर सूक्ष्म विचार करते समय ही आइन्स्टाइन को एक विलक्षण बात सूझी और उसी के द्वारा उन्हें गुरुत्वाकर्षण के विख्यात सिद्धान्त का प्रतिपादन करने में सफलता मिली। नक्षत्र-जगत् के तथ्यों की व्याख्या में जिस गुरुत्वाकर्पण-बल का इतना महत्त्वपूर्ण स्थान है वह सदा से हमारे परिचित अन्य सभी प्राकृतिक बलों से बहुत कुछ पृथक् ही रहा है। उसका एक अनिवार्य लक्षण यह है कि वह सदा आकर्षित वस्तु के द्रव्यमान का अनुपाती होता है और इओटवो[4] के अत्यन्त यथार्थता पूर्णप्रयोगों से प्रमाणित हो चुका है कि यह अनुपातत्व पूर्णतः यथार्थ है। अतः गतिविज्ञान के समीकरणों के रूपमात्र से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि शुद्ध गुरुत्वीय बल-क्षेत्र में भौतिक वस्तुओं की गति द्रव्यमान पर अवलम्बित नहीं होती। इसलिए गमन-पथ[5] निर्णीत करने के लिए यह जानने की आवश्यकता नहीं होती कि गमन करनेवाली वस्तु किस प्रकार की है। गुरुत्वीय बल-क्षेत्र के अपने आभ्यन्तरिक गुणों से ही ये गमन-पथ न जाने कैसे बन जाते हैं। इस तथ्य में आइन्स्टाइन को इस बात का प्रमाण दिखाई दिया कि किसी प्रदेश में गुरुत्वीय बल-क्षेत्र का अस्तित्व दिक्-काल में स्थानीय वक्रता की उपस्थिति प्रकट करता है। विशिष्ट आपेक्षिकता का दिक्-काल तो ठीक वैसा ही चतुर्विमितीय सांतत्यक है जैसे सब यूक्लिडीय सांतत्यक होते हैं और समतल जिनका एक द्विविमितीय उदाहरण है। किन्तु यह मानने में हमारे सामने कोई बाधा नहीं है कि दिक्-काल सर्वत्र यूक्लिडीय नहीं होता और उसमें कहीं-कहीं स्थानीय वक्रताएँ भी होती हैं। और तब

1. Centrifugal force 2. Coriolis force 3. Curvilinear 4. Eotvos 5. Trajectories

इस दिक्-काल में सरल-रेखात्मक कार्तीय निर्देशांक-तंत्रों का अस्तित्व संभव नहीं हो सकता और उसके विन्दुओं के स्थान-निरूपण के लिए उस प्रकार के निर्देशांकों की आवश्यकता है जैसे ज्यामिति में वक्र-तलों के अध्ययन के लिए काम में लिये जाते हैं। अतः इस दिक्-काल के वक्र प्रदेशों में स्थित प्रेक्षक को वहाँ की घटनाओं के निरूपण के लिए अनिवार्यतः वक्र-रेखीय निर्देशांकों का व्यवहार करना पड़ता है और इसी से गुरुत्वीय बलों का प्रादुर्भाव होता है। जिस तरह किसी घूर्ण-तंत्र में अपकेन्द्र-बलों की उपस्थिति का कारण यह है कि उस तंत्र से निबद्ध प्रेक्षक घटनाओं को यूक्लिडीय दिक्-काल में निर्दिष्ट करने के लिए वक्र-रेखीय निर्देशांकों का उपयोग करता है। ठीक इसी तरह जहाँ गुरुत्वीय बल-क्षेत्र होता है वहाँ गुरुत्वीय-बल भी इस कारण प्रकट होता है कि वहाँ दिक्-काल में वक्रता है और प्रेक्षक के लिए वक्र-रेखीय निर्देशांकों का उपयोग करना अनिवार्य हो जाता है। यहाँ मैं आइन्स्टाइन के गुरुत्वाकर्पण सम्बन्धी सिद्धान्त की इस संक्षिप्त रूप-रेखा से ही संतोष करूँगा क्योंकि इससे अधिक विवेचन जटिल गणितीय प्रक्रियाओं की सहायता के बिना संभव नहीं है। किन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि यह सिद्धान्त सर्वथा सांगत्यपूर्ण है और बुद्धि के लिए पूर्णतः संतोषजनक है।

विशिष्ट-आपेक्षिकता के सिद्धान्त का प्रायोगिक सत्यापन बहुत अच्छी तरह हो चुका है। आइन्स्टाइन के गति-विज्ञान ने द्रव्यमान के जिस वेगानुचारी परिवर्तन की प्रागुक्ति की थी और जो प्रकाश-वेग के सदृश तीव्रगामी इलैक्ट्रानों के सम्बन्ध में सहज में ही प्रेक्षण-गम्य होना चाहिए वह अनेक प्रायोगिक अनुसंधानों के द्वारा संतोषजनक रीति से सत्य प्रमाणित हो गया है। ऐसे अनुसंधानों में गाई[1] और लैवैन्शी[2] के अनुसंधान सबसे नये और सबसे अधिक निर्णायक हैं। इसी तरह ऊर्जा के अवस्थितित्व का सिद्धान्त भी इतना अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है (विशेषकर नाभिकीय भौतिक विज्ञान में) कि उसकी सत्यता में सन्देह करने की गुंजायश नहीं है। किन्तु यद्यपि विशिष्ट आपेक्षिकता का सिद्धान्त प्रयोगों के द्वारा सुसत्यापित जान पड़ता है, फिर भी हम समझते हैं कि व्यापक आपेक्षिकता-सिद्धान्त के विषय में उतनी निश्चितता प्रकट करना उचित नहीं है। जिन नवीन घटनाओं के अस्तित्व की प्रागुक्ति इस सिद्धान्त ने की है वे इतनी सूक्ष्म और दुर्ग्राह्य हैं कि उनका वास्तविक प्रेक्षण हो जानें पर भी यह प्रश्न बना ही रहता है कि क्या सचमुच इनका वही कारण है जो आइन्स्टाइन का सिद्धान्त बताता है। कहीं ऐसा तो नहीं है कि इनका वास्तविक कारण कोई दूसरा ऐसा अत्यन्त

1. Guye 2. Lavenchy

स्वल्प विक्षोभ[1] हो जिस पर उन घटनाओं से सम्बन्धित विश्लेषण में विचार नहीं किया गया। न तो बुध ग्रह के परिसौर बिन्दु[2] के अत्यन्त दीर्घकालिक[3] विस्थापन में और न सूर्य-बिम्ब के पास से निकलनेवाली प्रकाश किरणों के विचलन[4] में ही गुरुत्वाकर्षण की आपेक्षिकीय धारणाओं की सत्यता का अकाट्य प्रमाण दिखाई देता है। इन घटनाओं का अस्तित्व तो है और उनके परिमाण की कोटि भी वही है जो आइन्स्टाइन के सिद्धान्त के अनुसार होनी चाहिए। फिर भी उनकी व्याख्या में पूर्ण एकान्तता नहीं है। इनकी अपेक्षा तो सीरियस[5] नक्षत्र के प्रतिवेशी तारे के द्वारा उत्सर्जित स्पैक्ट्रम-रेखाओं का रक्ताभिमुखी विस्थापन अधिक संशयहीन मालूम पड़ता है। किन्तु इस प्रकार का केवल एक ही सत्यापन पर्याप्त नहीं समझा जा सकता।

व्यापक आपेक्षिकता-सिद्धान्त का प्रायोगिक सत्यापन जसा भी हो, फिर भी यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि आइन्स्टाइन के सिद्धान्त की धारणाओं का समुच्चय एक भव्य कीर्तिस्तम्भ है। इस सिद्धान्त से हमें अनेक नयी और उपयोगी धारणाएँ प्राप्त हुई हैं। इसने हमें पूर्व-कल्पित धारणाओं का प्रत्याख्यान करना सिखाया है और हमारी सैद्धान्तिक मान्यताओं के आधारों की गहरी और सूक्ष्म परीक्षा करने की आवश्यकता से भी हमें परिचित कराया है। अत्यधिक कठिनता के ही कारण आपेक्षिकता के सिद्धान्त का अध्ययन हमारे सैद्धान्तिक भौतिकज्ञों के मस्तिष्कों के अनुकूलन[6] के लिए बहुत अच्छा अनुष्ठान सिद्ध हुआ है।

1. Perturbation 2. Perihelion 3. Secular 4. Deviation 5. Sirius 6. Adaptation

पाँचवाँ परिच्छेद

भौतिक विज्ञान में क्वांटमों का प्रादुर्भाव

१. चिरप्रतिष्ठित भौतिकी और क्वांटम-भौतिकी

अब भौतिक विज्ञान में क्वांटमों के प्रादुर्भाव का विवरण देने का समय आ गया है, किन्तु इस प्रादुर्भाव की कहानी कहने से पहले यह लाभदायक होगा कि थोड़े-से शब्दों में उन विभिन्नताओं को बता दिया जाय जिनके द्वारा पिछले परिच्छेदों में वर्णित चिरप्रतिष्ठित प्राक्-क्वांटम भौतिक विज्ञान का उन क्वांटम सिद्धांतों से पार्थक्य प्रकट होता है जिन पर अब हमें विचार करना है। चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान के समस्त सिद्धांतों में प्रारम्भ से ही यह मान लिया गया था कि भौतिक जगत् की अवस्था का दिग्दर्शन ऐसे अवयवों से किया जा सकता है जिन्हें हम त्रि-विमितीय आकाश के संस्थान[1] में वितरित और काल प्रवाह में अनवरत रूप से प्रगामी समझ सकते हैं। इन भौतिक अवयवों की गति उनके कालानुवर्ती स्थान-परिवर्तनों के अनुक्रम के द्वारा निर्णीत होती है। इन उपर्युक्त धारणाओं में और आपेक्षिकीय धारणा में निश्चय ही कुछ गहरा भेद है। जिस आकाश में भौतिक घटनाएँ घटित होती हैं और समस्त कल्पना-संभव प्रेक्षकों द्वारा प्रेक्षित होती हैं उसे प्राग्-आपेक्षिकीय भौतिक विज्ञान में अचल संस्थान माना गया था और यह भी मान लिया गया था कि एक ही सार्वभौम निरपेक्ष काल उन सभी प्रेक्षकों को अपनी लय में बाँधे हुए है। इसके विपरीत आपेक्षिकता-वादी की दृष्टि में निरपेक्षता का लक्षण न तो आकाश में है और न काल में। यह लक्षण तो केवल उस चतुर्विमितीय सांतत्यक में है जो आकाश और काल के पारस्परिक विलयन के द्वारा निर्मित होता है और जो दिक्-काल[2] कहलाता है। इस दिक्-कालीय सांतत्यक को विभिन्न प्रकार से काटकर विभिन्न प्रेक्षक अपने-अपने निजी आकाश और काल प्राप्त कर लेते हैं। आकाश और काल की धारणाओं में ऐसा गंभीर परिवर्तन हो जाने

1. Framework 2. Space-time

पर भी आपेक्षिकतावादी इस बात को स्वीकार करने में अपने पूर्ववर्ती वैज्ञानिकों से सहमत हैं कि प्रत्येक प्रेक्षक भौतिक घटना-समुच्चय को आकाश और काल के ऐसे संस्थान में निर्दिष्ट कर सकता है जो स्वयं सुनिर्णीत है और जो उसमें निविष्ट सत्ताओं के गुण-धर्मों से पूर्णतः स्वतंत्र है। उदाहरण के लिए कोई भी विशिष्ट प्रेक्षक किसी भी कणिका के काल-प्रवाह में उत्तरोत्तरवर्ती आकाशीय स्थानों के सुनिर्णीत अनुक्रम के द्वारा उस कणिका के अस्तित्व को निर्दिष्ट कर सकता है और ऐसा करने में उस कणिका के भौतिक लक्षणों को—यथा उसके द्रव्यमान को—जानने की कुछ भी आवश्यकता नहीं होती। इसके अतिरिक्त आपेक्षिकतावादी और विगत युग का भौतिकज्ञ दोनों ही यह स्वीकार करते हैं कि घटनाओं की सम्पूर्ण परम्परा कुछ अवकल समीकरणों की अपरिहार्य लीला के द्वारा नियंत्रित होती है और ये समीकरण ही समस्त भविष्य को निश्चित कर देते हैं। दिक्-काल को स्वीकार करने से पूरे अनन्त भविष्य में घटनेवाली समस्त घटनाओं के समुच्चय का अस्तित्व भी आपेक्षिकतावादी स्वीकार कर लेता है और उसके दृष्टिकोण से मानव-बुद्धि की अपूर्णता के ही कारण प्रत्येक प्रेक्षक दिक्-काल में अवस्थित घटना-समुच्चय के केवल उत्तरोत्तरवर्ती खंडों का ही प्रेक्षण कर सकता है और केवल उसी अनुपात में कर सकता है जिसमें कि उसके नैज काल का प्रवाह होता है।

प्रत्येक प्रेक्षक के लिए घटनाओं को दिक्-काल में यथार्थतापूर्वक निर्दिष्ट कर सकने की और कालान्तराल को दिगन्तराल में परिणत कर सकने की संभावना को स्वीकार करके तथा दिक्-काल की धारणा में ही निहित समस्त वास्तविक संवर्तन[1] का निषेध करके आपेक्षिकता के सिद्धान्त ने पुराने भौतिक विज्ञान की आधारभूत धारणाओं के परिणामों को पराकाष्ठा तक तो पहुँचा दिया है, किन्तु उन धारणाओं का त्याग नहीं किया है। अतः यह कहा जा सकता है कि यद्यपि आइन्स्टाइन की धारणाएँ इतनी नयी और क्रान्तिकारी जान पड़ती हैं तथापि आपेक्षिकता का सिद्धान्त एक प्रकार से चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान का ही चरम रूप है।

किन्तु वर्तमान क्वांटम-सिद्धान्तों की व्यवस्था विलकुल दूसरे प्रकार की है। इन क्वांटम-सिद्धान्तों के कई महत्त्वपूर्ण लक्षण इस पुस्तक की भूमिका में ही वताये जा चुके हैं और हम कह चुके हैं कि क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व में ही यह बात निहित है कि आकाश और काल में किसी वस्तु के अवस्थापन में और उस वस्तु की गत्यात्मक

1. Becoming

अवस्था में किसी-न-किसी प्रकार का अन्योन्याश्रयत्व है। पूर्ववर्ती भौतिक विज्ञान में इस तथ्य की जरा-सी भी आशंका नहीं समझी गयी थी। और आपेक्षिकता के सिद्धान्त के द्वारा आकाश और काल के निर्देशांकों में जो सम्बन्ध स्थापित किया गया था उससे भी अधिक आश्चर्य-जनक परिणाम इसमें से प्रकट हुए हैं। किसी द्रव्य-विन्दु के स्थान और वेग के यौगपदिक मानों को नापने की असंभवता इसी अन्योन्याश्रयत्व का एक परिणाम है। हाइज़नबर्ग के अनिश्चितता के अनुबन्ध[1] इसी असंभवता को यथार्थता-पूर्वक प्रकट करते हैं। और इसका अर्थ यह है कि किसी भी प्रकार के प्रयोगों और प्रमापनों के द्वारा दिक्-कालीय अवस्थापन और उसी क्षण की गत्यात्मक अवस्था इन दोनों को निर्णीत करने में समान यथार्थता प्राप्त करना संभव नहीं है। इस निर्णायक प्रश्न पर सूक्ष्म विचार करने से हमें ज्ञात हो जाता है कि पूर्वगामी भौतिक विज्ञान में प्रयुक्त आकाश और काल का संस्थान (और आपेक्षिकीय भौतिक विज्ञान का दिक्-काल संस्थान भी) क्वांटमीय दृष्टि से एक सन्निकटन मात्र है जो केवल भारी वस्तुओं के लिए ही यथार्थ समझा जा सकता है। और भारी वस्तुओं से यहाँ हमारा मतलब उन वस्तुओं से है जिनमें बहु-संख्यक मूल-कणिकाएँ विद्यमान हों और इसलिए जिनका द्रव्यमान मूल-कणिका के द्रव्यमान की अपेक्षा बहुत ही बड़ा हो। हमारे साधारण अनुभव में प्रत्यक्षतः प्रेक्षित सभी वस्तुएँ अवश्य ही ऐसी भारी वस्तुओं की कोटि में आ जाती हैं। यही कारण है कि पूर्ववर्ती भौतिक विज्ञान जिसमें हमारे स्थूल स्तर पर घटनेवाली घटनाओं का ही अध्ययन किया जाता था, आकाश और काल के उक्त संस्थान से सन्तुष्ट था। किसी भौतिक वस्तु पर खींचे हुए निर्देशांकों और साधारण रीति से स्थापित घड़ी के द्वारा आकाश के और काल के ऐसे निर्देशांक निर्णीत किये जा सकते हैं जो पूर्ववर्ती भौतिक विज्ञान की स्वीकृत धारणाओं के अनुसार स्थूल-स्तरीय घटनाओं के लगभग पूर्णतः यथार्थ विवरण के लिए उपयोगी हो सकते हैं। किन्तु यदि सूक्ष्म-स्तरीय जगत् के विकास का विवरण अभीष्ट हो और हम उपर्युक्त रीति से निर्णीत आकाश और काल के निर्देशांकों के द्वारा मूल-कणिकाओं के इतिहास का वर्णन करना चाह तो हाइज़नबर्ग की अनिश्चितताओं से हमारी सीधी टक्कर हो जाती है तथा उन अनिश्चितताओं का अस्तित्व तुरन्त हमें इस बात की सूचना दे देता है कि पूर्ववर्ती भौतिक विज्ञान के जो आकाश और काल स्थूल स्तर के लिए सुनिर्णीत और पूर्णतः उपयोगी सिद्ध हुए थे वे अणुओं और परमाणुओं के स्तर पर भौतिक तथ्यों के वर्णन

1. Uncertainly relations

के लिए पूरी तरह उपयोगी नहीं हैं। किन्तु जितने भी स्थूल-स्तरीय भौतिकज्ञ हैं वे अवश्य ही यह चाहते हैं कि उन मूल-कणिकाओं के जगत् का वर्णन भी आकाश और काल के उसी संस्थान के द्वारा किया जाय जिसे हमारे अब तक के अनुभव ने प्रस्तुत किया है। यही उन कठिनाइयों का कारण है जो क्वांटम-सिद्धान्त में हमारे सामने उपस्थित होती हैं और यही कारण है कि क्रिया के क्वांटम की धारणा हमें इतनी रहस्यमय जान पड़ती है। शायद यह संभव हो कि इस कणिका-जगत् के लिए आकाश और काल के पूर्ववर्ती स्थूल-स्तरीय संस्थान की अपेक्षा किसी अधिक व्यापक, किन्तु कुछ कम दृढ़ संस्थान का निर्माण किया जा सके। यह नयी विचारधारा जिसमें क्रिया के क्वांटम का समावेश होना चाहिए और फलतः जिसमें ज्यामितीय और गत्यात्मक पक्षों की पृथक्ता भी पूर्ववर्ती विचारधारा की अपेक्षा कुछ कम होनी चाहिए, तभी संतोषजनक हो सकती है जब बहुसंख्यक कणिकाओं के निकाय के लिए अर्थात् भौतिक वस्तुओं के लिए हम आकाश और काल की अपनी प्राचीन चिर-अभ्यस्त धारणाओं को बनाये रख सकें। इस दिशा में जीन लुई डिस्टूशे[1] ने बड़े रोचक मार्ग का अनुसरण किया है। यह मार्ग ऐसा है जिस पर से हमारा ध्यान हटना नहीं चाहिए।

चिर-प्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान में भौतिक घटनाओं की नियति अथवा प्राक्-निर्णीतता[2] की धारणा का वास्तविक कारण यह था कि हमने आकाश और काल के सम्बन्ध में कुछ विशेप प्रकार की धारणाएँ बना रखी थीं। यद्यपि आपेक्षिकता के सिद्धान्त ने इन धारणाओं में बहुत गहरा परिवर्तन कर दिया था तथापि उसने इनका इतना आदर अवश्य किया था कि प्राक्-निर्णीतता की प्राचीन धारणा को उसने क्षति नहीं पहुँचायी। किन्तु यह बात क्वांटम सिद्धान्त के लिए सत्य नहीं है क्योंकि इसने किसी भी घटना के विकास को आकाश और काल के संस्थान में संतत रूप से निर्दिष्ट करने की असंभवता को स्वीकार करके हमें प्राक्निर्णीतता का पूर्ण रूप से त्याग करने के लिए या कम-से-कम उस धारणा में गम्भीर परिवर्तन करने के लिए बाध्य कर दिया है। स्थूल-स्तरीय जगत् के मूल-अवयवों के विन्यास और उनकी गत्यात्मक अवस्था के यौगपदिक ज्ञान की असंभवता (जो क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व का ही परिणाम है) का प्रभाव ऐसा होता है कि स्थूल-जगत् के जो प्रेक्षण हम उत्तरोत्तर कर सकते हैं उनके परिणामों में प्राचीन प्राक्-निर्णीतता के सिद्धान्त के अनुरूप पारस्परिक दृढ़ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए जितने अवयव आवश्यक हैं उन्हें हम कभी जान ही नहीं पाते।

1. Jean Louis Destouches 2. Determinism

वस्तुतः वर्तमान क्वांटम-सिद्धान्त से तो हमें केवल प्रायिकता[1] के ही नियम प्राप्त होते हैं और उनके द्वारा प्रथम प्रेक्षण का परिणाम मालूम होने पर हम इतना ही कह सकते हैं कि उसके बाद के किसी प्रेक्षण का कोई विशेष परिणाम निकलने की प्रायिकता कितनी है। सूक्ष्म-जगत् में दृढ़ नियमों के स्थान में प्रायिकता के नियमों का प्रतिस्थापन निश्चय ही इस बात से जड़ित है कि इस सूक्ष्म जगत् में आकाश और काल की पूर्ववर्ती धारणाएँ यथार्थ नहीं हैं, किन्तु स्थूल-स्तरीय जगत् की वस्तुओं के लिए आकाश और काल की ये धारणाएँ किसी अनन्त-स्पर्शी[2] विधान के अनुसार पुनः यथार्थता प्राप्त कर लेती हैं। और प्राक्-निर्णीतता का भी यही हाल होता है जिससे क्वांटमीय नियमों की प्रागुक्तियों[3] की प्रायिकता निश्चितता में परिणत हो जाती है।

जो कुछ हम यहाँ कह चुके हैं वह यह बताने के लिए काफ़ी होगा कि जिस दिन सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान ने क्रिया के क्वांटमों का उपयोग करने की आवश्यकता को स्वीकार किया था उस दिन उसने कितना बड़ा कदम उठाया था। अब यह बता देना उचित है कि पैंतीस वर्ष पहले यह बात किस प्रकार संभव हुई थी।

२. कृष्ण-वस्तु के विकिरण का सिद्धान्त और प्लांक का क्वांटम[4]

क्वांटम-सिद्धान्त का जन्म उन अनुसंधानों से हुआ था जो सन् १९०० ई० के लगभग मैक्स प्लांक[5] ने कृष्ण-वस्तु के विकिरण के सम्बन्ध में किये थे। जब इस सिद्धान्त का विकास उन विधियों से करने का प्रयत्न किया गया जो उस समय भौतिक विज्ञान में प्रचलित थीं, तब बड़ी कठिनाइयाँ उपस्थित हुईं। पहले इसी बात को स्पष्ट कर देना उचित है।

यदि हम किसी ऐसे निमीलित कोष्ठक[6] पर विचार करें जिसका टेम्परेचर स्थिर हो तो प्रकट है कि उस कोष्ठक के अन्दर रखी हुई भौतिक वस्तुएँ विकिरण का उत्सर्जन भी करेंगी और अवशोषण भी करेंगी और अन्त में ऐसा सन्तुलन उत्पन्न हो जायगा जिसमें द्रव्य और विकिरण के बीच में ऊर्जा के ये आदान और प्रदान बराबर हो जायँगे। ऊष्मा-गतिकी[7] के मूल नियमों के ही आधार पर किरचाफ़[8] ने सिद्ध कर दिया था कि यह सन्तुलित अवस्था अद्वितीय होती है और उस कोष्ठक में निबद्ध विकिरण का स्पैक्ट्रमीय वितरण पूर्णतः सुनिश्चित प्रकार का होता है। इसके अतिरिक्त विकिरण का यह

1. Probability 2. Assymptotic 3. Predictions 4. The Theory of Black-body Radiation and the Quantum of Planck 5. Max Planck 6. Enclosure 7. Thermodynamics 8. Kirchoff

वितरण केवल कोष्ठक के टेम्परेचर पर ही अवलम्बित होता है। उस पर कोष्ठक की आकृति और विस्तार का या उसमें उपस्थित भौतिक द्रव्यों के गुणों का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता और न इस बात का कोई असर होता है कि कोष्ठक की दीवारें किस द्रव्य की बनी हैं। प्रत्येक टेम्परेचर के लिए यह सन्तुलित विकिरण एक निश्चित रूप का होता है और बहुधा उसे उस टेम्परेचर के 'कृष्ण-वस्तु-विकिरण'[1] का अशुद्ध नाम दिया जाता है।

अतः सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान के लिए यह आवश्यक हो गया कि किसी भी नियत टेम्परेचर के कृष्ण-वस्तु-विकिरण के स्पैक्ट्रमीय वितरण की वह प्रागुक्ति कर सके। प्रारम्भ में तो इस समस्या को हल करने के लिए उन उपायों का उपयोग किया गया जो मुख्यतः ऊष्मा-गतिकी के सिद्धान्तों पर अवलम्बित थे और जिनमें इसी कारण संशय-हीनता बहुत अधिक थी। इस प्रकार पहले तो यह प्रमाणित हो गया कि कृष्ण-वस्तु-विकिरण का घनत्व[2] अर्थात् तापीय सन्तुलन-युक्त कोष्ठक के भीतर प्रत्येक मात्रक आयतन[3] में उपस्थित विकिरण-ऊर्जा का परिमाण परम मापक्रम[4] से नापे गये टेम्परेचर के चतुर्थ घात[5] का अनुपाती होता है। यह स्टीफ़न-बोल्ट्ज़मान का नियम[6] कहलाता है। इसके बाद अधिक संवर्धित तर्क के द्वारा वीन[7] ने प्रमाणित किया कि किसी विशेष स्पैक्ट्रमीय आवृत्ति[8] के कृष्ण-वस्तु-विकिरण का घनत्व उस आवृत्ति में टेम्परेचर का भाग देने से प्राप्त भजनफल के किसी एक फलन तथा उस आवृत्ति के घन (क्यूब) के गुणनफल का अनुपाती होना चाहिए। किन्तु दुर्भाग्यवश वह फलन वीन के ऊष्मा-गतिकीय तर्क के द्वारा निर्णीत नहीं किया जा सकता। स्टीफ़न और वीन के नियमों से विकिरण के संघटन और उसके टेम्परेचर-जनित परिवर्तनों के विषय में तो महत्त्वपूर्ण बातें ज्ञात हो गयीं और प्रयोगों के द्वारा उनका पूरी तरह सत्यापन भी हो गया, किन्तु उनके द्वारा स्पैक्ट्रमीय वितरण के नियम का रूप पूर्णतः निश्चित नहीं हो सका। और अन्त में तो यह भी मालूम हो गया कि केवल ऊष्मागतिकीय धारणाओं के आधार पर इससे अधिक प्रगति हो ही नहीं सकती और स्पैक्ट्रमीय वितरण के नियम के रूप को पूर्णतः निर्णीत करने के लिए यह आवश्यक होगा कि द्रव्य के द्वारा विकिरण के उत्सर्जन और अवशोषण के सम्बन्ध में कुछ परिकल्पनाएँ बनाकर उन्हें इस विवेचन में निविष्ट किया जाय। फलतः ऊष्मागतिकी की ठोस पृष्ठ भूमि को छोड़कर पारमाणविक परि-कल्पनाओं के क्षेत्र में प्रवेश करने का साहस करने की भी आवश्यकता होगी।

1. Black-body-radiation 2. Density 3. Unit volume 4. Absolute scale 5. Fourth power 6. Stefen-Boltzmann Law 7. Wien 8. Frequency

किन्तु इस कार्य में कुछ कठिनाई नहीं हुई क्योंकि विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त ने विशेषकर उसके लोरैन्ट्ज़-प्रणीत इलैक्ट्रानीय रूप ने द्रव्य के द्वारा विकिरण के उत्सर्जन और अवशोषण की क्रियाओं का ऐसा प्रतिरूप पहले ही प्रस्तुत कर दिया था जो बहुत कुछ संतोषजनक दिखाई देता था। वीन के विवेचन में जो फलन अनिर्णीत रह गया था वह इस सिद्धान्त के सूत्रों के उपयोग से तुरन्त ही प्राप्त हो गया। अतः कृष्ण-वस्तु-विकिरण का स्पैक्ट्रमीय वितरण भी पूर्णतः निर्णीत हो गया। किन्तु इस सिद्धान्त के परिणामों से बड़ी निराशा हुई। स्पैक्ट्रमीय वितरण का जो नियम प्राप्त हुआ (रेले का नियम[1])—उसका प्रयोगों से समर्थन नहीं हो सका। इस नियम के अनुसार तो आवृत्ति के साथ-साथ स्पैक्ट्रमीय घनत्व में एक-मुखी वृद्धि होनी चाहिए, किन्तु प्रयोगों से स्पष्ट प्रकट हो गया कि स्पैक्ट्रमीय घनत्व पहले तो बढ़ते-बढ़ते किसी विशेष आवृत्ति पर महत्तम मूल्य को प्राप्त कर लेता है, किन्तु इसके बाद आवृत्ति बढ़ने पर वह घटते-घटते अनन्ततः स्वल्प हो जाता है। इस तथ्य को ज्यामितीय भाषा में यों व्यक्त किया जा सकता है कि स्पैक्ट्रमीय घनत्व का निरूपक वक्र घंटाकार[2] होता है। रेले के नियमानुसार आवृत्ति की वृद्धि के कारण स्पैक्ट्रमीय घनत्व की वृद्धि अनन्त होनी चाहिए थी। इस बात से एक बिलकुल ही अनहोना परिणाम यह निकला कि प्रत्येक टेम्परेचर पर कृष्ण-वस्तु-विकिरण का पूर्ण-घनत्व[3] अनन्त होना चाहिए।

सैद्धान्तिक प्रागुक्तियों में और प्रायोगिक तथ्यों के इस विरोध से बड़ी विकट परिस्थिति उत्पन्न हो गयी क्योंकि भौतिकज्ञों ने जितना ही अधिक परिश्रम रेले के नियम के सैद्धान्तिक प्रमाणों पर किया उतना ही अधिक विश्वास उन्हें होता गया कि यह नियम प्राचीन सिद्धान्तों का अनिवार्य परिणाम है। जीन्स[4] ने जब विकिरण-पूर्ण कोष्ठक में जितनी अग्रगामी तरंगों[5] का अस्तित्व संभव हो सकता है उन सब की संख्या का चिर-प्रतिष्ठित व्यापक सांख्यिकीय नियमों के द्वारा हिसाब लगाया तब भी रेले का नियम ही प्राप्त हुआ। फलतः रेले के नियम के अतिरिक्त कृष्ण-वस्तु-विकिरण के लिए किसी दूसरे प्रयोग-संगत नियम के आविष्कार की कोई भी आशा नहीं रह गयी और यह स्पष्ट हो गया कि यह कार्य प्राकृतिक विज्ञान में सर्वथा नवीन दृष्टिकोण को अपनाये बिना संभव नहीं हो सकता। इस क्रान्ति को संभव बनाने का श्रेय मैक्स प्लांक को मिला।

1. Rayleigh's Law 2. Bell-shaped 3. Total density 4. Jeans 5. Stationary waves

प्लांक ने इस समस्या का पुनर्विवेचन करने का प्रारम्भ जिस परिकल्पना से किया वह यह थी—द्रव्य में अनेक इलैक्ट्रानिक दोलक[1] विद्यमान होते हैं अर्थात् ऐसे इलैक्ट्रान होते हैं जो किसी विस्थापनानुपाती बल के प्रभाव से अपने-अपने सन्तुलन-विन्दु के इधर-उधर दोलन कर सकते हैं। प्लांक ने समतापीय कोष्ठक के इन दोलकों में तथा उन पर पड़नेवाले विकिरण में ऊर्जाविनिमय के सन्तुलन का अध्ययन किया। और चूंकि इस सन्तुलन-विकिरण[2] का संघटन कोष्ठ में उपस्थित भौतिक वस्तुओं के गुण-धर्मों से स्वतंत्र होना चाहिए, इसलिए इस विधि के उपयोग से जो परिणाम निकलेंगे उनकी यथार्थता भी व्यापक होनी चाहिए। चिर प्रतिष्ठित विधियों से दोलकों और विकरण के ऊर्जा-विनिमयों का विश्लेषण करने पर प्लांक को स्वभावतः ही रेले का नियम पुनः प्राप्त हो गया। किन्तु इस विश्लेषण में उन्हें यह भी मालूम हो गया कि इस नियम की अयथार्थता का कारण यह है कि दोलकों और विकिरण के ऊर्जा-विनिमय के चिर-प्रतिष्ठित चित्र में उच्च आवृत्तिवाले दोलकों के प्रभाव को आवश्यकता से अधिक महत्त्व दिया गया है। वास्तव में सन्तुलन-विकिरण और उच्च आवृत्तिवाले भौतिक दोलकों के ऊर्जा-विनिमय के इस महत्त्व के ही कारण आवृत्ति के साथ-साथ स्पैक्ट्रमीय घनत्व की एक-मुखी वृद्धि प्रकट होती है और इसी से वे उपर्युक्त परिणाम निकलते हैं जो प्रयोगों द्वारा असत्य और तर्क द्वारा अविश्वसनीय प्रमाणित हुए हैं। तब प्लांक के मस्तिष्क में यह प्रतिभापूर्ण विचार उत्पन्न हुआ कि उस सिद्धान्त में चिरप्रतिष्ठित मान्यताओं से सर्वथा विपरीत किसी ऐसी धारणा को समाविष्ट करने की आवश्यकता है जो उन उच्च आवृत्तिवाले दोलकों के प्रभाव को नियंत्रित कर सके। अतः उन्होंने निम्नलिखित विख्यात अभिधारणा बनायी।

"द्रव्य में से विकिरण-ऊर्जा का उत्सर्जन केवल परिमित[3] मात्राओं में ही हो सकता है और ये मात्राएँ आवृत्ति की अनुपाती होती हैं।" इस अनुपात का गुणक एक सार्वत्रिक नियतांक[4] होता है जिसकी विमितीय[5] संरचना ठीक यांत्रिक क्रिया[6] की संरचना के समान होती है। यही प्लांक का सुविख्यात नियतांक h है।

इस अद्भुत तथा विरुद्धाभासी परिकल्पना का आश्रय लेकर प्लांक ने पुनः तापीय सन्तुलन की समस्या का अध्ययन प्रारम्भ किया और तब उन्हें कृष्ण-वस्तु-विकिरण के स्पैक्ट्रमीय वितरण के एक नवीन नियम का आविष्कार करने में सफलता मिली। इस नियम के साथ अब उनका नाम जुड़ गया है। प्लांक के तर्क के पूर्वपक्ष में कोई भी

1. Oscillators 2. Equilibrium radiation 3. Finite 4. Universal constant 5. Dimensional 6. Mechanical action

ऐसी बात नहीं है जो ऊष्मा-गतिकी के नियमों के विरुद्ध हो। अतः एक ओर तो प्लांक का सूत्र स्टीफ़न के तथा वीन के नियमों से असंगत नहीं है, दूसरी ओर उसका रेले के नियम से मेल केवल नीची आवृत्तियों में और ऊँचे टेम्परेचरों पर ही होता है। उच्च आवृत्तियों और नीचे टेम्परेचरों पर उसके परिणाम सर्वथा भिन्न प्रकार के हो जाते हैं। यह बात समझना कुछ कठिन नहीं। नीची आवृत्तियों में और ऊँचे टेम्परेचरों पर द्रव्य और विकिरण के ऊर्जा-विनिमयों में कुछ अतिसूक्ष्म "ऊर्जा-कण" भाग लेते हैं और उनकी संख्या बहुत अधिक होती है। अतः सब क्रियाएँ लगभग ऐसे ही होती हैं मानो यह विनिमय संतत[1] प्रकार का ही हो। इसलिए इस क्षेत्र में चिरप्रतिष्ठित विज्ञान के तर्कों से भी लगभग सही परिणाम ही निकल आते हैं। विपरीत इसके, उच्च आवृत्तियों और नीचे टेम्परेचरों पर ऊर्जा-विनिमय में भाग लेनेवाले ऊर्जा-कण बड़े-बड़े होते हैं और उनकी संख्या भी कम होती है। अतः पूर्ववर्ती तर्क उनके लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं। यही कारण है कि उच्च आवृत्तियों और नीचे टेम्परेचरों के लिए प्लांक का स्पैक्ट्रमीय वितरण का नियम रेले के नियम से सर्वथा भिन्न हो जाता है। तापीय सन्तुलन-युक्त कोष्ठ के लिए रेले का नियम तो यह कहता है कि प्रत्येक टेम्परेचर पर आवृत्ति की वृद्धि के साथ-साथ स्पैक्ट्रमीय घनत्व में एक-मुखी वृद्धि होती है और यह बात प्रयोग-विरुद्ध प्रमाणित हुई है। किन्तु प्लांक के नियम के अनुसार यह घनत्व पहले आवृत्ति के साथ बढ़कर एक उच्चतम मूल्य प्राप्त कर लेता है और उसके बाद घटते-घटते अति उच्च आवृत्तियों के लिए उसका मूल्य अनन्ततः छोटा हो जाता है। प्लांक के नियम के अनुसार इस घनत्व को आवृत्ति के फलन के द्वारा निरूपित करनेवाला वक्र घंटाकार होता है। फलतः यह समझ लेना भी आसान है कि कृष्ण-वस्तु-विकिरण के पूर्ण घनत्व का मूल्य परिमित ही रहेगा। चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त में जो बहुत बड़ी कठिनाई थी वह इस प्रकार दूर हो गयी।

स्पैक्ट्रमीय वितरण के इस नवीन नियम का उन प्रयोगों के संख्यात्मक परिणामों से मिलान करने पर, जिनकी संख्या और यथार्थता, जब से भौतिकज्ञों का ध्यान इस प्रश्न की तरफ आकर्षित हुआ था तभी से, बराबर बढ़ती जा रही थी, प्लांक को यह प्रमाणित करने में अच्छी सफलता मिली कि वास्तविक तथ्य उनके सिद्धान्त द्वारा प्रस्तुत सूत्र से बिलकुल ही मिल जाते हैं, यदि उनके नवीन नियतांक h का एक पूर्णतः सुनिर्णीत सांख्यिक मान मान लिया जाय। प्लांक के परिकलन के अनुसार साधारण

1. Continuous

मात्रकों में यह सांख्यिक मान बहुत ही छोटा निकला। यह सचमुच आश्चर्यजनक है कि नियतांक h का सांख्यिक मान पहले ही प्रयत्न में और केवल कृष्ण-वस्तु-विकिरण सम्बन्धी न्यासों के द्वारा ही इतनी अधिक यथार्थता के साथ निकल आया। इसके बाद तो यह नियतांक h सर्वथा विभिन्न प्रकार की बहुत-सी भौतिक घटनाओं के लिए आवश्यक पाया गया है। अतः इसे नापने की भी अनेक सर्वथा स्वतंत्र विधियाँ मालूम हो गयी हैं। इन उत्तरोत्तर अधिक यथार्थतापूर्ण विभिन्न मापनों से सदैव ऐसे ही मान प्राप्त हुए हैं, जिनमें और प्लांक द्वारा केवल एक ही घटना के द्वारा प्रारम्भ में ही प्राप्त किये हुए मान में बहुत ही कम अन्तर है।

संभवतः जिस समय प्लांक ने कृष्ण-वस्तु-विकिरण के सिद्धान्त पर अपने मूल लेख लिखे थे उस समय तत्कालीन भौतिकज्ञ तुरन्त ही इस नव-घटित क्रान्ति के महत्त्व को अच्छी तरह नहीं समझ पाये थे। निस्सन्देह उस समय उन्होंने प्लांक की परिकल्पना को केवल एक विशेष प्रकार की घटना के सिद्धान्त में सुधार करने की चतुर और रोचक युक्ति मात्र ही समझा होगा और उन्हें इस बात का ख़याल ही नहीं हुआ होगा कि यह चमत्कारी परिकल्पना आगे चलकर भौतिक विज्ञान की समस्त चिरप्रतिष्ठित मान्यताओं का कायापलट कर देगी। किन्तु धीरे-धीरे प्लांक की परिकल्पना का मौलिक महत्त्व प्रकट होता गया। सैद्धान्तिकों ने समझ लिया कि क्वांटमों की इस परिकल्पना द्वारा प्रस्तुत असंततता[1] का मेल उन व्यापक धारणाओं के साथ बैठ ही नहीं सकता जिन पर उस समय तक भौतिक विज्ञान आश्रित रहा था। अतः उन धारणाओं के आमूल संशोधन की आवश्यकता उन्हें प्रतीत हुई होगी। केवल एक ही भौतिक तथ्य के अध्ययन से पहली ही नज़र में प्रकृति के इस सबसे अधिक मौलिक तथा रहस्यमय नियम के आविष्कार के लिए प्लांक की प्रतिभा और अन्तर्ज्ञान की जितनी भी प्रशंसा की जाय वह थोड़ी है। इस अद्भुत आविष्कार को हुए चालीस वर्ष से अधिक बीत चुके हैं, किन्तु अब भी उसके प्रच्छन्न मर्म के पूर्ण दर्शन से हम बहुत दूर हैं और न हम अब तक उसके समस्त परिणामों को ही जान पाये हैं। मनुष्य की मानसिक प्रगति के इतिहास में प्लांक के नियतांक h की विजय-तिथि अवश्य ही चिरस्मरणीय रहेगी।

३. प्लांक की परिकल्पना का विकास तथा क्रिया का क्वांटम[2]

तापीय सन्तुलन युक्त विकिरण के सिद्धान्त में प्लांक के तर्क का आधार यह

1. Discontinuity 2. Development of the Hypothesis of Planck and the Quantum of Action

धारणा थी कि द्रव्य में अनेक इलैक्ट्रानिक दोलक विद्यमान रहते हैं और इन्हीं की मध्यस्थता के द्वारा द्रव्य में और उस पर पड़नेवाले विकिरणों में ऊर्जा का विनिमय होता है। किन्तु यदि दोलक ऐसा सरल यांत्रिक निकाय हो जिसमें किसी द्रव्य-विन्दु को सन्तुलन-विन्दु की ओर आकर्षित करनेवाला बल विस्थापन का अनुपाती हो तो उसमें बहुत ही खास गुण यह होता है कि उसके दोलनों की आवृत्ति आयाम[1] पर अवलम्बित नहीं होती। दूसरे शब्दों में प्रत्येक सरल-दोलक[2] की एक अद्वितीय आवृत्ति होती है और चाहे उसके दोलकों की गति का आयाम कितना ही अधिक क्यों न हो, यह आवृत्ति सदा उतनी ही रहती है। इसलिए प्लांक के मतानुसार प्रत्येक सरल-दोलक के लिए एक "ऊर्जा का क्वांटम" निर्दिष्ट किया जा सकता है जिसका परिमाण उस दोलक की आवृत्ति और नियतांक h के गुणनफल के बराबर माना जा सकता है। इस धारणा का अविकल्पतः निश्चित अर्थ यह है कि जब भी किसी सरल-दोलक और विकिरण में ऊर्जा का विनिमय होता है तब जितनी ऊर्जा को यह दोलक ग्रहण करता है या खो देता है उसका परिमाण परिमित होता है और उस दोलक के क्वांटम के बराबर होता है। किन्तु ऊर्जा के क्वांटम की इस परिकल्पना में असुविधा यह है कि यह केवल सरल-आवर्त[3] दोलकों के लिए ही उपयोगी है। यदि हम किसी भी असरल यांत्रिक निकाय पर विचार करें जो आवर्त गति से दोलन कर सकता हो तो साधारणतः उसकी आवृत्ति गति की तीव्रता पर भी अवलम्बित रहती है। अतः ऐसे दोलक के लिए कोई सुनिर्णीत ऊर्जा का क्वांटम हो ही नहीं सकता। इसलिए प्लांक ने क्वांटमों की परिकल्पना को ऐसे व्यापक रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता का अनुभव किया जो समस्त विभिन्न प्रकार के यांत्रिक निकायों के लिए उपयोगी हो सके और जिससे सरल-दोलक के लिए भी ऊर्जा के क्वांटम की उपर्युक्त परिभाषा प्राप्त हो सके। जब उन्होंने ऐसे व्यापक रूप को प्राप्त करने का प्रयत्न किया तब उन्होंने देखा कि नियतांक h की विमतियाँ[4] वही होती हैं जो क्रिया[5] की होती हैं (अर्थात् जो ऊर्जा और समय के गुणनफल के या संवेग और लम्बाई के गुणनफल की होती हैं) और वह क्रिया की मौलिक मात्रा[6] के समान ही काम करता है। अतः उसे एक प्रकार की क्रिया का परमाणु समझा जा सकता है। यदि कोई आवर्तगति ऐसी हो जो एक ही चर[7] राशि के द्वारा निर्णीत हो सके (यथा किसी कणिका की रैखिक गति) तो न्यूनतम क्रिया के सिद्धान्त में वर्णित मापरट्यूइस की क्रिया के अनुकल की गणना हम पूरे एक आवर्तकाल[8] के लिए कर

1. Amplitude 2. Harmonic oscillator. 3. Simple harmonic 4. Dimensions 5. Action 6. Elementary quantity 7. Variable 8. Period

सकते हैं। यह अनुकल उस आवर्त-गति का लाक्षणिक नियतांक[1] होगा। इस नियतांक को प्लांक के नियतांक h के किसी पूर्ण अपवर्त्य[2] के बराबर रख देने से हमें क्वांटम-परिकल्पना की एक नयी परिभाषा प्राप्त हो जाती है और इससे लाभ यह होता है कि यह परिभाषा एक ही चर राशि द्वारा निर्दिष्ट किसी भी आवर्त-गति के लिए उपयोगी होती है। और हम यह भी आसानी से प्रमाणित कर सकते हैं कि रैखिक दोलक के विशेष प्रसंग में इस नयी परिभाषा से प्लांक की पूर्ववर्ती परिभाषा भी पुनः प्राप्त हो जाती है। यह कहा जा सकता है कि अपने सिद्धान्त को व्यापक रूप देने के लिए प्लांक को ऊर्जा के क्वांटम की अपनी प्रारम्भिक कल्पना को त्याग देना पड़ा और उसके स्थान में क्रिया के क्वांटम की परिकल्पना को प्रतिस्थापित करना पड़ा।

क्वांटम-परिकल्पना की यथार्थ परिभाषा में क्रिया का प्रादुर्भाव युक्तिसंगत भी था और आश्चर्यजनक भी। युक्ति संगत तो यों था कि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी ने पहले ही हैमिल्टन के सिद्धान्त में तथा न्यूनतम क्रिया के सिद्धान्त में क्रिया का महत्त्व प्रकट कर दिया था और वैश्लेषिक यांत्रिकी के सिद्धान्तों ने जिनमें क्रिया का उपयोग होता है पहले ही क्वांटमीकरण के लिए उपयुक्त ढाँचे का निर्माण कर दिया था। इसके विपरीत यह आश्चर्यजनक भी था क्योंकि भौतिक विज्ञान की दृष्टि से यह समझ में आना बहुत कठिन है कि क्रिया के जैसी राशि का अमूर्तत्व इतना सुस्पष्ट होने पर भी और उस पर अविनाशित्व का कोई प्रमेय लागू नहीं होने पर भी उसमें एक प्रकार की परमाणुकता संभव हो सकती है। क्रिया सदा दो प्रकार की राशियों के गुणनफल के द्वारा व्यक्त की जाती है जिनमें से एक तो ज्यामितीय कोटि की होती है और दूसरी गत्यात्मक कोटि की। प्रत्येक पहली प्रकार की राशि दूसरी प्रकार की किसी एक राशि के साथ सम्बन्धित होती है और ये ही दोनों राशियाँ वैश्लेषिक यांत्रिकी की वैधानिकतः संयुग्मित[3] चर-राशियाँ होती हैं। इस प्रकार मापरट्यूइस की न्यूनतम क्रिया का अनुकल संवेग का गमनपथानुवर्ती रैखिक अनुकल[4] हो जाता है। नियतांक h की उपस्थिति के द्वारा व्यक्त क्रिया की परमाणुकता से तब यह प्रकट होता है कि आकाश और काल के संस्थान में और जिन गत्यात्मक घटनाओं को हम उस संस्थान में अवस्थापित करने का प्रयत्न करते हैं उनमें अन्योन्याश्रयत्व विद्यमान होता है। इस अन्योन्याश्रयत्व का स्वरूप बिलकुल नया है और यह चिर-प्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान की धारणाओं

1. Characteristic Constant 2. Whole multiple 3. Cannonically con jugate 4. Line-integral

से सर्वथा विपरीत है। यही उस परिकल्पना की परम क्रान्तिकारिता का कारण है जिसे प्लांक ने अपनी प्रतिभा के जोर से कृष्ण-वस्तु-विकिरण के सिद्धान्त का आधार बनाया था।

प्लांक ने सिद्धान्ततः यह धारणा बनायी थी कि द्रव्य में से विकिरण का उत्सर्जन सदा परिमित मात्राओं में अथवा कण-रूप में ही हो सकता है। किन्तु इसका यह अनिवार्य अर्थ नहीं है कि उत्सर्जित हो जाने के बाद भी विकिरण की संरचना असंतत ही रहती है क्योंकि इस सिद्धान्त का विकास दो भिन्न दिशाओं में किया जा सकता है और उनसे द्रव्य के द्वारा विकिरण के अवशोषण की प्रक्रिया के सम्बन्ध में दो परस्पर विरोधी धारणाएँ बन सकती हैं। पहली धारणा तो यह हो सकती है कि द्रव्य के मूल अवयव (यथा इलैक्ट्रानिक दोलक) गति की दृष्टि से केवल उन्हीं अवस्थाओं में विद्यमान रह सकते हैं जिनमें उनकी ऊर्जा क्वांटमित मान की होती है और इससे तुरन्त ही यह भी परिणाम निकलता है कि अवशोषण और उत्सर्जन दोनों ही प्रक्रियाओं में द्रव्य और विकिरण का ऊर्जा-विनिमय केवल क्वांटमों के द्वारा ही संभव होता है। यही धारणा सबसे अधिक सुस्पष्ट और निष्कपट मालूम होती है और अन्त में इसी की विजय भी हुई थी। किन्तु इसमें से यह परिणाम भी अनिवार्यतः निकलता है कि स्वयं विकिरण की संरचना भी असंतत होती है। अपनी विचारधारा के इस भीषण परिणाम से डरकर प्लांक दीर्घकाल तक इस बात का प्रवलतम प्रयत्न करते रहे कि क्वांटम-सिद्धांत को ऐसे दूसरे रूप में प्रस्तुत कर सकें जो इतना अधिक उन्मूलक न हो और जिसमें केवल उत्सर्जन ही असंतत माना जाय, किन्तु अवशोषण संतत ही बना रहे अर्थात् द्रव्य आपतित विकिरण ऊर्जा के कुछ अंश का संचय तो संतत रूप में ही कर सके, किन्तु उसमें से उत्सर्जन रुक-रुककर परिमित मात्रावाले अविभाज्य ऊर्जा-पुंजों के रूप में ही हो सके। प्लांक के इस प्रयत्न के उद्देश्य को हम आसानी से समझ सकते हैं। वे विकरण की संततता को अक्षुण्ण रखना चाहते थे क्योंकि जो तरंग-सिद्धांत असंख्य अत्यन्त यथार्थतापूर्ण प्रयोगों के द्वारा सत्यापित हो चुका था, उससे संगत विकिरण का केवल यही रूप हो सकता है। यद्यपि प्लांक ने क्वांटम-सिद्धांत के इस रूप को प्रस्फुटित करने में अपना समस्त बुद्धि-कौशल लगा दिया तथापि भौतिक विज्ञान की उत्तरकालीन प्रगति ने इस सिद्धांत की जड़ें ही उखाड़ फेंकीं, विशेपकर प्रकाश-वैद्युत प्रभाव[1] की व्याख्या ने और बोह्र के परमाणु की संरचना के सिद्धांत की सफलता ने। इनमें से पहली समस्या के सम्बन्ध

1 Photo-electric effect

में अब हम यह बतायेंगे कि प्रकाश-वैद्युत प्रभाव की क्वांटम-सिद्धांतसंगत व्याख्या देकर आइन्स्टाइन किस प्रकार पुनः प्रकाश के कणिका-सिद्धांत की ओर आकृष्ट हो गये।

४. प्रकाश-वैद्युत प्रभाव और प्रकाश की असंतत संरचना[1]

प्रकाश-वैद्युत प्रभाव का आविष्कार और उसका अध्ययन भौतिकज्ञों के लिए बहुत ही अधिक विस्मय का कारण हुआ। यह घटना इस प्रकार है। जब किसी द्रव्य पर काफ़ी छोटे तरंग-दैर्घ्य का विकिरण पड़ता है तो बहुधा उसमें से तीव्रगामी इलैक्ट्रान निकलने लगते हैं। इस घटना का मुख्य लक्षण यह है कि इन निष्कासित इलैक्ट्रानों की ऊर्जा केवल आपतित विकिरण की आवृत्ति पर ही अवलम्बित होती है। उस पर विकिरण की तीव्रता[2] का कुछ भी असर नहीं होता। उन इलैक्ट्रानों की केवल संख्या ही आपतित विकिरण की तीव्रता पर अवलम्बित होती है। इन्हीं प्रयोग-लब्ध सरल नियमों के कारण इन प्रकाशज इलैक्ट्रान[3] कहलानेवाले प्रकाश-वैद्युत इलैक्ट्रानों के उत्सर्जन[4] की मूल प्रक्रिया की व्याख्या अत्यन्त कठिन हो गयी क्योंकि सन् १९०० में प्रकाश के तरंग-सिद्धांत की जो मूल धारणाएँ अनिवार्य मालूम देती थीं उनके अनुसार यही परिणाम निकलता था कि विकिरण-ऊर्जा प्रकाश-तरंग की पूरी लम्बाई में समान-रूप से वितरित रहती है और जिस इलैक्ट्रान पर प्रकाश-तरंग पड़ती है वह उसकी विकिरण-ऊर्जा को संतत रूप से ही ग्रहण करता है। फलतः एक सेकंड में जितनी ऊर्जा उसमें प्रवेश करती है उसकी मात्रा आपतित तरंग की तीव्रता की अनुपाती होनी चाहिए और उसे तरंग-दैर्घ्य पर बिलकुल ही अवलम्बित नहीं होना चाहिए। इसी कारण प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के नियमों की व्याख्या देना इतना कठिन मालूम पड़ा था।

सन् १९०५ में आइन्स्टाइन के मन में इस विलक्षण विचार ने जन्म लिया कि प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के नियमों से ऐसा प्रकट होता है कि प्रकाश की संरचना भी असंतत है और क्वांटममयी है। प्लांक की परिकल्पना अपने प्रथम और प्रत्यक्षतम रूप में यह है कि द्रव्य के द्वारा विकिरण का अवशोषण केवल ऐसी परिमित मात्राओं में ही हो सकता है जो आवृत्ति की अनुपाती होती हैं और इस परिकल्पना का ठोस आधार प्लांक के कृष्ण-वस्तु-विकिरण के सिद्धांत की सफलता से प्रकट भी हो चुका था। किन्तु यदि यह परिकल्पना वास्तव में सत्य हो तो इस बात की भी सम्भावना बहुत अधिक दिखाई देगी कि विकिरण की जो कणमयी रचना उत्सर्जन और अवशोषण के क्षणों पर प्रकट होती है वही उस मध्यवर्ती

1. The photo-electric Effect and the Discontinuous Structure of Light
2. Intensity 3. Photo-electrons 4. Emission

काल में भी विद्यमान होनी चाहिए जब विकिरण का प्रचरण होता है। अतः आइन्स्टाइन ने यह धारणा बनायी कि समस्त एक-वर्ण[1] विकिरण ऐसे कणों में विभक्त रहता है जिनकी ऊर्जा की मात्रा आवृत्ति की अनुपाती होती है। और स्वभावतः प्लांक का नियतांक ही इस अनुपात का गुणांक होता है। इस धारणा से प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के नियमों को समझना आसान हो गया। जब द्रव्य में विद्यमान किसी इलैक्ट्रान पर प्रकाश का एक कण पड़ता है तब वह इलैक्ट्रान उस कण की ऊर्जा का अवशोषण करके द्रव्य के बन्धन से मुक्त हो जाता है। शर्त केवल यह है कि प्रकाश-कण की ऊर्जा की मात्रा उस इलैक्ट्रान को द्रव्य में से बाहर निकालने के लिए आवश्यक कार्य की मात्रा से अधिक हो। प्रकाश के प्रभाव से इस प्रकार निकाले हुए इलैक्ट्रान में जो गतिज ऊर्जा प्रकट होगी उसका मान अवशोषित प्रकाश-कण की ऊर्जा में से वह ऊर्जा बाकी निकाल देने पर प्राप्त होगा जो इलैक्ट्रान को द्रव्य में से बाहर निकाल देने के कार्य में खर्च हो गयी हो। अतः यह गतिज ऊर्जा आपतित विकिरण की आवृत्ति का रैखिक फलन होगी और उस ऊर्जा को आवृत्ति के फलन के रूप में निरूपित करनेवाली रेखा की प्रवणता[2] का सांख्यिक मान प्लांक के नियतांक के बराबर होगा। ये सब प्रागुक्तियाँ प्रयोगों से पूर्णतः मंगत निकली हैं। सबसे पहली प्रागुक्ति तो यह थी कि यदि आपतित प्रकाश की आवृत्ति में परिवर्तन किया जाय तो प्रकाश-वैद्युतिक प्रभाव केवल तब ही प्रकट होगा जब आवृत्ति किसी निर्दिष्ट मान से अधिक हो जाय। इस निर्दिष्ट मान को प्रकाश-वैद्युत देहली[3] कहते हैं। दूसरे आवृत्ति की जिस परिसीमा में यह प्रभाव प्रकट होता है उसमें प्रकाशज इलैक्ट्रानों की गतिज ऊर्जा का मान आपतित प्रकाश की आवृत्ति का रैखिक फलन होता है और यदि इस रैखिक आश्रितता को रेखा-चित्र में निरूपित करनेवाली रेखा खींची जाय तो उसकी प्रवणता-द्योतक संख्या प्लांक के नियतांक के बराबर निकलती है। स्पष्टतः ही प्रकाश की इस कणमयी धारणा में प्रकाश की तीव्रता के द्वारा उन ऊर्जा-कणों की संख्या की गणना होती है जो प्रदीप्त वस्तु के पृष्ठ पर प्रति सेकंड प्रति वर्ग सेण्टीमीटर पड़ते हैं। अतः उस वस्तु के भीतर प्रति सेकंड जितनी प्रकाश-वैद्युत क्रियाएँ सम्पन्न होती हैं उनकी संख्या भी तीव्रता की अनुपाती होना आवश्यक है।

यही प्रकाश-वैद्युत प्रभाव की वह व्याख्या है जो आइन्स्टाइन ने १९०५ में प्रस्तुत की थी। उन्होंने इसका नाम प्रकाश-क्वांटमों[4] का सिद्धांत रखा था। आज हम इसे

1. Monochromatic 2. Slope 3. Threshold. 2. Lightquanten

फ़ोटान-सिद्धांत[1] कहते हैं, क्योंकि प्रकाश के कणों का नाम अब फ़ोटान रख दिया गया है। पिछले तीस वर्षों में फ़ोटान के अस्तित्व के बहुत से प्रमाण मिले हैं। केवल इतना ही नहीं कि दृश्य प्रकाश के प्रकाश-वैद्युत प्रभाव का ही प्रयोगात्मक अध्ययन उत्तरोत्तर अधिक यथार्थता से किया गया हो, और इससे ही आइन्स्टाइन द्वारा आविष्कृत अनुबन्धों का समर्थन हुआ हो, किन्तु एक्स-किरणों तथा गामा-किरणों से उत्पन्न प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के अध्ययन ने तो फ़ोटान-सिद्धांत के सत्यापन को और भी अधिक यथार्थ और सुस्पष्ट कर दिया है। एक्स-किरणों और गामा-किरणों की आवृत्तियाँ दृश्य प्रकाश की आवृत्तियों की अपेक्षा बहुत बड़ी होती हैं। अतः इनके प्रत्येक फ़ोटान द्वारा संवाहित ऊर्जा की मात्रा भी बहुत बड़ी होती है। और विकिरण-प्रदीप्त पदार्थ में बहुत गहरे और मज़बूती से जमे हुए परमाणुओं में से भी ये फ़ोटान अपने प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के द्वारा इलैक्ट्रानों को खींच निकालने में समर्थ हो जाते हैं। और चूंकि एक्स-किरण के स्पैक्ट्रम के अध्ययन से हम किसी भी ज्ञात गुण-धर्मवाले परमाणु में से आभ्यन्तरिक[2] इक्लैट्रान को पृथक् करने के लिए आवश्यक कार्य का परिकलन बहुत अधिक यथार्थता-पूर्वक कर सकते हैं, इसलिए इन किरणों के द्वारा प्रकाश-वैद्युत इलैक्ट्रान के निष्कासन के लिए आवश्यक ऊर्जा का परिकलन भी दृश्य प्रकाश की अपेक्षा अधिक यथार्थता-पूर्वक हो सकता है। अतः एक्स-किरणों और गामा-किरणों के प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के अध्ययन के द्वारा हम आइन्स्टाइन के प्रकाश-वैद्युत समीकरण की यथार्थता की बहुत कड़ी परीक्षा कर सके हैं और इससे संख्यात्मक सत्यापन में पूर्णता प्राप्त हो गयी है और प्रकाश-कणो के सिद्धांत की अच्छी पुष्टि भी हुई है। (मारिस द ब्रोगली[3], एलिस[4], थीबो[5])

१९२३ में एक और घटना का आविष्कार हुआ था और इससे फ़ोटान के अस्तित्व का एक नया प्रमाण मिला है। यह काम्पटन-प्रभाव[6] है। अब हम इसके विषय में कुछ कहना चाहते हैं। यह तो विदित ही है कि जब विकिरण किसी भौतिक वस्तु पर पड़ता है तब सामान्यतः उसकी ऊर्जा का कुछ अंश प्रकीर्णित[7] विकिरण के रूप में सब दिशाओं में फैल जाता है। विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत के अनुसार इस प्रकीर्णन का कारण यह समझा जाता था कि आपतित तरंग के वैद्युत बल-क्षेत्र के प्रभाव से उस वस्तु में उपस्थित इलैक्ट्रानों के प्रणोदित दोलन[8] होने लगते हैं और तब इन इलैक्ट्रानों में से क्षीण द्वैतीयिक[9] गोलीय तरंगें उत्पन्न होती हैं। इन्हीं के द्वारा प्राथमिक[10] तरंग द्वारा

1. Photon Theory 2. Interior 3. Maurice de Broglie 4. Ellis 5. Thibaud 6. Compton Effect 7. Scattered 8. Forced oscillation 9. Secondary 10. Primary

लायी हुई ऊर्जा का कुछ अंश सब दिशाओं में प्रकीर्णित हो जाता है। इस व्याख्या के अनुसार किसी एक-वर्ण[1] प्राथमिक तरंग के प्रभाव से उत्पन्न प्रकीर्णित विकिरण की आवृत्ति ठीक उसी प्राथमिक तरंग की आवृत्ति के बराबर होनी चाहिए। बहुत दीर्घ काल तक तो प्रकीर्णन का यह विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत इन घटनाओं की व्याख्या के लिए पूर्णतः उपयुक्त ही प्रमाणित हुआ—पहले तो प्रकाश के सम्बन्ध में और फिर एक्स-किरणों के सम्बन्ध में भी। इस सिद्धांत की प्रागुक्तियों का यथार्थतापूर्ण सत्यापन भी हो गया। किन्तु जब द्रव्य के द्वारा एक्स-किरणों के प्रकीर्णन का अध्ययन अधिक सूक्ष्मता से किया गया तब मालूम हुआ कि विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त द्वारा प्रागुक्त अपरिवर्तित आवृत्ति के प्रकीर्णन के साथ ही साथ एक दूसरी प्रकार का प्रकीर्णन भी उत्पन्न होता है जिसकी आवृत्ति उससे कुछ कम होती है और जिसका अस्तित्व चिरप्रतिष्ठित तर्क के द्वारा समझ में आ ही नहीं सकता। इस नयी घटना की वास्तविकता को सुनिश्चित रूप से प्रमाणित करने का, उसके नियमों के सूक्ष्म अध्ययन का और उसकी व्याख्या प्रस्तुत करने का महत्त्वपूर्ण श्रेय अमेरिकन भौतिकज्ञ ए० एच० काम्पटन[2] को प्राप्त हुआ था। काम्पटन द्वारा प्रेक्षित महत्त्वपूर्ण तथ्य यह था कि कम आवृत्ति के प्रकीर्णित विकिरण की आवृत्ति प्रकीर्णन-कोण[3] के अनुसार तो परिवर्तित होती है, किन्तु प्रकीर्णक वस्तु की प्रकृति पर अवलम्बित नहीं होती। काम्पटन को और लगभग उसी समय डिबाई[4] को यह बात सूझी कि यदि इस परिवर्तित आवृत्ति के प्रकीर्णन को आपतित फ़ोटान और द्रव्य के अन्तःवर्ती इलैक्ट्रान—इन दोनों कणों की टक्कर मान लिया जाय तो इस घटना की संतोषजनक व्याख्या हो सकती है। टक्कर के क्षण पर फ़ोटान और इलैक्ट्रान के बीच में ऊर्जा का तथा संवेग का विनिमय होता है और चूंकि सामान्यतः फ़ोटान की तुलना में इलैक्ट्रान लगभग अचल समझा जा सकता है, इसलिए सदैव फ़ोटान की ही ऊर्जा घट जाती है और इलैक्ट्रान की बढ़ जाती है। किन्तु फ़ोटान की आवृत्ति उसकी ऊर्जा की अनुपाती होती है। अतः टक्कर के क्षण पर फ़ोटान की आवृत्ति भी घट जाती है। ऊर्जा के तथा संवेग के अविनाशित्व के प्रमेयों पर ही यह सिद्धान्त आधारित है और इसके द्वारा प्रकीर्णन-कोण के परिवर्तन के फलन के रूप में हम प्रकीर्णित फ़ोटानों की आवृत्तियों को यथार्थतापूर्वक मालूम कर सकते हैं। प्रयोगों के द्वारा ये ही परिकलित आवृत्तियाँ प्रेक्षित भी हुई थीं। प्रकीर्णक पदार्थ की प्रकृति से इस घटना की स्वतंत्रता—कम-से-कम जहाँ तक तरंग-

1. Mono-chromatic. 2. A. H. Compton 3. Angle of Scattering 4. Debye

दैर्घ्य के परिवर्तन का सम्बन्ध है—इस बात से स्पष्ट हो जाती है कि यह घटना केवल इलैक्ट्रानों के गुणों पर ही अवलम्बित होती हैं और ये इलैक्ट्रान समस्त भौतिक वस्तुओं में सर्वत्र विद्यमान होते हैं। इस काम्पटन-डिबाई सिद्धान्त ने काम्पटन-प्रभाव के सब आवश्यक लक्षणों की व्याख्या इतनी पूर्ण और सफल रीति से कर दी कि इसके द्वारा फ़ोटान-सिद्धान्त को भी आश्चर्यजनक समर्थन प्राप्त हो गया।

फ़ोटानों की धारणा के समर्थन में रामन-प्रभाव[1] का आविष्कार भी प्रस्तुत किया जा सकता है। यह आविष्कार काम्पटन प्रभाव के आविष्कार के थोड़े ही समय पश्चात् हुआ था। रामन-प्रभाव में भी परिवर्तित आवृत्ति का प्रकीर्णन होता है। किन्तु इसमें और काम्पटन-प्रभाव में बहुत गहरा भेद यह है कि इसमें प्रकीर्णन के क्षण पर होनेवाला आवृत्ति परिवर्तन मूलतः प्रकीर्णक वस्तु की प्रकृति पर अवलम्बित होता है। इसके अतिरिक्त बहुधा इसमें कुछ प्रकीर्णन ऐसा भी होता है जिसमें आवृत्ति बढ़ जाती है। किन्तु घटी हुई आवृत्तिवाले प्रकीर्णन की अपेक्षा बढ़ी हुई आवृत्तिवाले प्रकीर्णन की तीव्रता बहुत ही कम होती है। फ़ोटान-सिद्धान्त इस घटना के मूल लक्षणों की भी बहुत अच्छी व्याख्या कर देता है। विशेषकर घटी हुई आवृत्तिवाले रामन-प्रभाव की अधिकता का कारण तो इस सिद्धान्त से तुरन्त समझ में आ जाता है। चिरप्रतिष्ठित धारणाओं पर आधारित सिद्धान्त इस अधिकता का कारण नहीं बता सकते थे।

संक्षेप में जिस परिकल्पना में प्रकाश-ऊर्जा की संरचना कणिकामय मानी गयी है वह पिछले तीस वर्षों में बड़ी उपयोगी प्रमाणित हुई है और अब इसमें कोई सन्देह नहीं रह गया है कि इससे भौतिक वास्तविकता का एक आवश्यक पक्ष प्रकट हो गया है। किन्तु इसके कारण कुछ कठिनाइयाँ भी उत्पन्न हो गयी हैं और जब से इस विषय पर आइन्स्टाइन के प्रथम लेख प्रकाशित हुए थे तभी से इसके विरुद्ध आक्षेपों की भी कमी नहीं रही है। सबसे पहले तो जिस तरंग-सिद्धान्त का सत्यापन बहुसंख्यक भौतिक प्रकाश-वैज्ञानिक प्रयोगों के द्वारा अत्यन्त यथार्थतापूर्वक हो चुका है उसके साथ प्रकाश की संरचना की असंततता का सांगत्य कैसे स्थापित किया जा सकता है? जब व्यतिकरण[2] के प्रयोगों से यह प्रकट होता है कि कई मीटर लम्बी संतत तरंगावलि का अस्तित्व संभव है तब हम प्रकाश के अविभाज्य कणों के अस्तित्व की कल्पना कैसे कर सकते हैं? जैसा लोरैन्ट्ज़ ने प्रमाणित कर दिया है, प्रकाश-ऊर्जा को आकाश के विभिन्न विन्दुओं पर कण-रूपमें पुंजित मान लेने पर यह संभव नहीं है कि प्रकाशीय यंत्रों (यथा दूरबीनों)

1. Raman effect 2. Interference

की विभेदनशक्ति[1] सम्बन्धी नियमों का युक्ति-संगत अर्थ समझ में आ सके। और व्यतिकरण के तो अस्तित्व को ही हम कैसे समझ सकेंगे ? इसमें सन्देह नहीं कि यह कल्पना करना संभव है कि किसी विशेष प्रकार से संघटित व्यूह के रूप में प्रकाश-कणों की बहुत बड़ी संख्या के यौगपदिक आगमन के द्वारा और उनकी पारस्परिक प्रतिक्रिया के कारण वैसी ही आकृतियाँ प्रकट हो सकती हैं जैसी व्यतिकरण में दिखाई देती हैं। किन्तु उस दशा में व्यतिकरण की घटनाओं को प्रकाश की तीव्रता पर अवलम्बित होना चाहिए और यदि यह प्रकाश इतना मन्द हो जाय कि व्यतिकरणमापी[2] में औसत रूप से किसी भी समय एक फ़ोटान से अधिक विद्यमान न रहे तो व्यतिकरण का तो लोप ही हो जायगा। ऐसा प्रयोग सबसे पहले टेलर[3] ने किया था और उसका परिणाम यह निकला कि आपतित प्रकाश कितना ही मन्द क्यों न हो जाय व्यतिकरण की घटना में कोई परिवर्तन नहीं होता। किन्तु स्पष्टतः ही इसके लिए आवश्यक शर्त यह है कि फ़ोटो के प्लेट पर प्रकाश काफी लम्बी देर तक पड़ता रहे। इससे प्रमाणित हो जाता है कि प्रत्येक फ़ोटान अकेला ही व्यतिकरण की घटना को उत्पन्न कर सकता है। यदि फ़ोटान को एक ही विन्दु पर अवस्थित और अनन्यसंसक्त कण समझा जाय तो यह बात बिलकुल ही समझ में नहीं आ सकती।

और भी दूसरी आपत्तियाँ हैं जिनसे प्रकट हो जाता है कि विकिरण की विशुद्ध कणमूलक धारणा को स्वीकार करना कितना कठिन है। पहले तो प्रकाश के क्वांटम की जो परिभाषा आइन्स्टाइन ने दी है स्वयं उसी में एक अ-कणीय अवयव "आवृत्ति" विद्यमान है। विकिरण के विशुद्ध कणमय चित्रण में किसी आवर्तत्व और आवृत्ति का समावेश नहीं किया जा सकता और वास्तव में आइन्स्टाइन की परिभाषा में जिस आवृत्ति का कथन है वह तो तरंग-सिद्धान्त की ही आवृत्ति है जिसका मान व्यतिकरण और विवर्तन की घटनाओं के द्वारा ही प्राप्त किया जाता है। वह तो एक प्रकार का पुल है जिसके द्वारा प्रकाश के दोनों पक्ष जोड़ दिये गये हैं—एक तो फ़्रैनैल[4] के समय से सुपरिचित तरंग-पक्ष और दूसरा प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के आविष्कार से पुनरुज्जीवित कण-पक्ष। किन्तु यह कहना पूर्णतः यथार्थ नहीं होगा कि प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के आविष्कार से पहले कोई भी बात ऐसी नहीं थी जिसके कारण हमें प्रकाश की कणमूलक धारणा का ख़याल करना पड़ता। हम देख ही चुके हैं कि सरल-रेखात्मक गमन, दर्पणों से परावर्तन और सामान्यतः समस्त किरणमय ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान में

1. Resolving power 2. Interferometer 3. Taylor 4. Fresnel

कहाँ-कहाँ हमारा ध्यान अनायास ही कण-प्राक्षेपिक[1] सिद्धान्त की ओर आकृष्ट होता था। किन्तु जब फ़्रैनैल के सिद्धान्त ने इन समस्त घटनाओं की तरंगमूलक व्याख्या प्रस्तुत कर दी तब ऐसा जान पड़ा था कि कणमूलक धारणा का अब कोई भी उपयोग नहीं रह गया है। प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के आविष्कार से फिर प्रकाश की उस धारणा पर लौट आने की आवश्यकता प्रतीत हुई, किन्तु उसी समय आइन्स्टाइन के समीकरण के रूप से ही यह भी प्रकट हो गया कि अब तो कणमूलक और तरंगमूलक धारणाओं का ऐसा गठ-बन्धन करने की आवश्यकता है जिससे उस समीकरण के दोनों पदों का कुछ भौतिक अर्थ हो सके।

इस प्रसंग में एक और भी अधिक गूढ़ कठिनाई की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक है। चिरप्रतिष्ठित धारणाओं में किसी कण की ऊर्जा पूर्णतः निर्णीत मात्रावाली राशि समझी जाती थी। दूसरी ओर विकिरण के सिद्धान्त में विकिरण को हम कभी भी एक-वर्ण नहीं मान सकते। उसमें सदा ही ऐसे अवयव विद्यमान रहते हैं जिनकी आवृत्तियाँ एक छोटे स्पैक्ट्रमीय अन्तराल में व्याप्त रहती हैं। यह अन्तराल अत्यन्त छोटा तो हो सकता है, किन्तु उसका विस्तार बिलकुल शून्य नहीं हो सकता। प्लांक ने अपने विकिरण सिद्धान्त के विवेचन में इस तथ्य पर बहुत ज़ोर दिया था। इस लिए आइन्स्टाइन के समीकरण में प्रकाश-कण की ऊर्जा को चिर-प्रतिष्ठित तरंग की आवृत्ति और h के गुणनफल के बराबर मानने के कारण यह समीकरण कुछ विरुद्धाभासी हो गया है क्योंकि वह एक सुनिर्णीत राशि को ऐसी राशि के बराबर बना देता है जो स्वयं सुनिर्णीत नहीं है। बाद में तरंग-यांत्रिकी[2] के विकास से ही इस कठिनाई का वास्तविक अर्थ स्पष्ट हो सका है।

संक्षेप में यद्यपि प्रकाश-वैद्युत प्रभाव और काम्पटन-प्रभाव की व्याख्या के लिए फ़ोटानों की परिकल्पना की उपयोगिता चमत्कारी है तथापि उससे विकिरण का विशुद्ध कणिकामूलक सिद्धान्त नहीं बनाया जा सकता। इसके लिए किसी अधिक व्यापक सिद्धान्त की आवश्यकता है जो विकिरण को ऐसा स्वरूप दे सके जो कणिकामय भी हो और साथ ही साथ तरंगमय भी हो तथा जिससे इन दोनों लक्षणों का सम्बन्ध आइन्स्टाइन के समीकरण द्वारा व्यक्त हो सके। अब हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि तरंग-यांत्रिकी ने इन दोनों विरोधी लक्षणों में सांगत्य स्थापित करने का प्रयत्न कैसे किया है और इस कार्य में उसे कितनी सफलता मिली है।

1. Ballistic 2. Wave-mechanics

५. क्वांटम-परिकल्पना के प्रथम उपयोग[1]

प्लांक के कृष्ण-वस्तु-विकिरण के सिद्धान्त और आइन्स्टाइन के प्रकाश-वैद्युत सिद्धान्त की सफलता से जिस क्वांटम-परिकल्पना का प्रबल समर्थन हो गया था उसे विविध प्रकार के अनेक क्षेत्रों में अपनी उपयोगिता प्रमाणित करने में देर नहीं लगी। यहाँ हम इसके कई उदाहरण देंगे।

हम देख चुके हैं कि सांख्यिकीय यांत्रिकी का एक परिणाम ऊर्जा के सम-विभाजन[2] का प्रमेय है। इस प्रमेय का व्यापक रूप यह है कि "बहु-संख्यक अवयवोंवाले किसी यांत्रिक निकाय में जिसका टेम्परेचर सर्वत्र एक-सा हो और जिसमें तापीय सन्तुलन भी विद्यमान हो, तापीय संक्षोभ[3] की ऊर्जा स्वतंत्रता की विभिन्न कोटियों[4] में बराबर-बराबर विभाजित रहती है।" चिर-प्रतिष्ठित सांख्यिकीय यांत्रिकी के नियमों के कठोर अनु-प्रयोग से निगमित इस प्रमेय का प्रायोगिक सत्यापन अनेक बार बहुत अच्छी तरह हो चुका है। इससे गैस के अणुओं और परमाणुओं की मध्यमान गतिज ऊर्जाओं का यथार्थतापूर्ण निर्णय हो जाता है और उनकी विशिष्ट ऊष्मा[5] का भी सामान्यतः सही मान ज्ञात हो जाता है। फिर भी क्वांटम-सिद्धान्त के विकास से प्रकट हो गया है कि यह प्रमेय व्यापक रूप में सत्य नहीं है क्योंकि कृष्ण-वस्तु-विकिरण के स्पैक्ट्रमीय घनत्वसम्बन्धी रेले-जीन्स का अयथार्थ नियम इसी प्रमेय से प्राप्त किया गया था। प्लांक की क्वांटम परिकल्पना का वास्तविक उद्देश्य ही यह था कि ऊर्जा के सम-विभाजन के प्रमेय से छुटकारा मिले। अतः यदि प्लांक के विचार सही हों तो कृष्ण-वस्तु-विकिरण के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी चिर-प्रतिष्ठित नियमों से कुछ विपरीतता प्रकट होने की आशा की जा सकती है।

ठोस वस्तुओं के सिद्धान्त का ही उदाहरण लीजिए। समांगी ठोस वस्तु में समस्त परमाणुओं के अपने-अपने सन्तुलन-स्थान होते हैं जहाँ तापीय विक्षोभ के अभाव में वे अचल रहते हैं। किन्तु तापीय विक्षोभ के कारण ये परमाणु अपने सन्तुलन-विन्दुओं के इधर-उधर दोलन करते रहते हैं और ज्यों-ज्यों टेम्परेचर बढ़ता जाता है त्यों-त्यों इस दोलन का आयाम[6] भी बढ़ता जाता है। ऊर्जा के समविभाजन के सिद्धान्त के अनुसार ठोस वस्तु के सब परमाणुओं की औसत ऊर्जा बराबर होनी चाहिए। पूर्वकालीन

1. The First Applications of the Quantum Hypothesis 2. Equipartition 3. Thermal agitation 4. Degrees of Freedom 5. Specific heat 6. Amplitude

सांख्यिकीय यांत्रिकी के द्वारा इस औसत ऊर्जा का हिसाब लगाने से निम्नलिखित सरल, किन्तु व्यापक नियम प्राप्त हुआ था। "किसी भी ठोस वस्तु की विशिष्ट पारमाणविक ऊष्मा[1] अर्थात् उस वस्तु की एक ग्राम-परमाणु[2] मात्रा का टेम्परेचर एक डिगरी बढ़ाने के लिए आवश्यक ऊष्मा लगभग ६ कलारी होती है।" यही ड्यूलांग और पेटिट[3] का नियम है जिसका प्रायोगिक आविष्कार इन दोनों भौतिकज्ञों ने सैद्धान्तिक निगमन से पहले ही कर लिया था। साधारण टेम्परेचरों पर अधिकतर ठोस वस्तुओं के लिए यह नियम इतना यथार्थतापूर्ण प्रमाणित हुआ है कि इसकी सत्यता मानकर रसायनज्ञों ने बहुधा इसका उपयोग अणुभार[4] का निर्णय करने के लिए किया है। किन्तु यद्यपि ड्यूलांग और पेटिट का नियम बहुधा सत्य पाया गया था तथापि ऐसी बात नहीं है कि वह सदैव सत्य ही निकला हो। कुछ साधारणतः बहुत कठोर वस्तुओं (यथा हीरा)की विशिष्ट पारमाणविक ऊष्मा ६ से बहुत कम होती है और यदि टेम्परेचर कम कर दिया जाय तो सभी ठोस वस्तुओं की ऐसी अवस्था हो जाती है जिसमें ड्यूलांग और पेटिट का नियम सत्य नहीं रहता और पारमाणविक ऊष्मा इस नियम द्वारा प्रागुक्त मान से कम होती है। क्वांटम-सिद्धान्त इन सब अनियमितताओं के रहस्य का संतोषजनक रीति से उद्घाटन कर देता है। ठोस वस्तु के परमाणु वस्तुतः अपने सन्तुलन-विन्दुओं के इधर-उधर दोलन करते हैं और उन दोलनों की आवृत्ति उनके द्रव्यमान और प्रतिस्थापन-बल[5] की तीव्रता पर निर्भर होती है। क्वांटम-सिद्धान्त के अनुसार परमाणु की दोलन-ऊर्जा कम-से-कम उसकी आवृत्ति द्वारा निर्णीत एक क्वांटम की ऊर्जा के बराबर तो होनी ही चाहिए। यदि तापीय विक्षोभ इतना क्षीण हो कि वह परमाणु को दोलन के लिए आवश्यक क्वांटम कठिनाई से दे सके तो स्पष्ट है कि परमाणु स्थिर ही रहेगा और ऊर्जा का सम-विभाजन नहीं हो सकेगा। अधिकतर ठोस पदार्थों के परमाणुओं के लिए तो दोलनोपयोगी क्वांटम इतना छोटा होता है कि साधारण टेम्परेचरों के तापीय विक्षोभ से परमाणु को वह आसानी से मिल सकता है। अतः समविभाजन हो जाता है और ड्यूलांग और पेटिट के नियम का पालन हो जाता है। किन्तु हीरे के समान अत्यन्त कठोर पदार्थों के परमाणु अपने सन्तुलन-विन्दुओं पर इतनी दृढ़ता से जमे रहते हैं और इसलिए दोलन का क्वांटम इतना बड़ा होता है कि साधारण टेम्परेचरों पर सम-विभाजन संभव नहीं हो सकता। यही कारण है कि ड्यूलांग और पेटिट के नियम का व्याघात दिखाई पड़ता है। और टेम्परेचर को कम

1. Atomic heat 2. Gram-atom 3. Dulong and Petit 4. Molecular weight 5. Restoring force

करने पर अन्त में सभी ठोस वस्तुओं के लिए तापीय विक्षोभ इतना कम हो जायगा कि सब परमाणुओं को आवश्यक दोलन-क्वांटम प्राप्त नहीं हो सकेंगे। फलतः पारमाणविक ऊष्मा भी नियमित मान से कम हो जायगी।

विशिष्ट ऊष्मा का क्वांटम-सिद्धान्त पहले आइन्स्टाइन के द्वारा प्रस्तुत किया गया था तथा नर्न्स्ट और लिन्डमान[1] और बाद में डिबाई[2], बोर्न[3] तथा कारमान[4] के द्वारा विकसित किया गया था। यह क्वांटम की परिकल्पना पर अवलम्बित है और इसके द्वारा ड्यूलांग और पेटिट के नियम की सफलताओं और असफलताओं दोनों ही की समान-रूप से अच्छी व्याख्या हो जाती है और इन घटनाओं का सामान्य प्रवाह इससे अच्छी तरह समझ में आ जाता है। इसके अतिरिक्त विशिष्ट-ऊष्मा का क्वांटम-सिद्धान्त ज्यों-का-त्यों गैसों की विशिष्ट-ऊष्मा पर भी लगाया जा सकता है। विशेष कर वह यह भी समझा देता है कि गैस के जटिल अणुओं की आभ्यन्तरिक स्वतंत्रता की कोटियाँ नीचे टेम्परेचरों पर जकड़ क्यों जाती हैं[5]। चिर-प्रतिष्ठित सांख्यिकीय यांत्रिकी में यह तथ्य बोध-गम्य नहीं था।

पहले-पहल क्वांटम-परिकल्पना के जितने उपयोग किये गये थे उन सबसे उसे प्रबल समर्थन प्राप्त हुआ था। जब किसी अचर वेगवाले इलैक्ट्रानों की टक्कर किसी प्रति-कैथोड[6] से होती है तब जो एक्स-किरणें उसमें से निकलती हैं उनके संतत स्पैक्ट्रम की उच्च सीमा की आवृत्ति के परिकलन से भी इस सिद्धान्त को उतना ही समर्थन मिला था। इन सब उपयोगों में क्वांटम-परिकल्पना से जो सूत्र प्राप्त होते हैं उनमें नियतांक h इस प्रकार निविष्ट रहता है कि इन सूत्रों का मिलान प्रायोगिक परिणामों से करने पर h का मान नापा जा सकता है। इस प्रकार अत्यन्त ही विभिन्न प्रकार की घटनाओं के अध्ययन से h के जितने मान प्राप्त हुए हैं उन सबमें आश्चर्यजनक समानता है।

इस प्रकार १९१३ तक प्लांक की प्रतिभापूर्ण और अद्‌भुत धारणा अनेक तथ्यों के द्वारा पुष्ट हो गयी थी। इसी समय बोह्र[7] के परमाणु-सिद्धान्त का आविर्भाव हुआ और उससे इस धारणा को एक और नया तथा प्रबल समर्थन प्राप्त हुआ और यह भी प्रकट हो गया कि द्रव्य की संरचना भी क्वांटमों के ही द्वारा निर्णीत होती है।

1. Nernst and Linde-mann 2. Debye 3. Born 4. Karman 5. Ankylosed 6. Anticathode. 7. Bohr

छठा परिच्छेद

बोह्र का परमाणु[1]

१: स्पैक्ट्रम और स्पैक्ट्रमीय रेखाएँ

परमाणु के अभ्यन्तर प्रदेश का प्रेक्षण हम प्रत्यक्षतः नहीं कर सकते क्योंकि जिन राशियों का अनुभव हमारे लिए संभव हो सकता है उनके बहुत ही छोटे अंश के बराबर इस कल्पनातीत सूक्ष्म-जगत् की राशियाँ होती हैं। अतः परमाणु की संरचना का ज्ञान हमें केवल ऐसी घटनाओं से ही प्राप्त हो सकता है जो उस संरचना पर अवलम्बित भी हों और मानव-स्तर पर प्रक्षण-गम्य भी हों। ऐसी ही घटनाओं की गिनती में उन प्रकाश-किरणों के स्पैक्ट्रम हैं जो तापीय अथवा वैद्युत विक्षोभण के कारण तत्त्वों[2] के परमाणुओं में से विशेष स्थितियों में उत्सर्जित होते हैं। वस्तुतः ये उन उत्सर्जक परमाणुओं के लाक्षणिक[3] स्पैक्ट्रम होते हैं और जिन घटनाओं से ये उत्पन्न होते हैं उनका घटना-स्थल परमाणु का अभ्यन्तर ही होता है। अतः परमाणु की संरचना के सम्बन्ध में इनसे हमें बहुत कुछ सूचना मिल सकती है। इसी कारण इन स्पैक्ट्रमों का अध्ययन और वर्गीकरण भौतिक विज्ञान के लिए बहुत बड़े महत्त्व के कार्य समझे गये थे।

किन्तु यह काम बहुत आसान नहीं था क्योंकि प्रकाशीय स्पैक्ट्रम बहुत ही जटिल होते हैं और यदि उनके अध्ययन को दृश्य प्रकाश की सीमाओं से बढ़ाकर अवरक्त[4] और परा-बैंगनी[5] प्रदेशों तक विस्तारित करना अभीष्ट हो तो ऐसे विशेष प्रकार के प्रायोगिक साधनों और कार्य-विधियों का उपयोग आवश्यक होता है जो बहुत धीरे-धीरे उपलब्ध हुए थे। फिर भी इन स्पैक्ट्रमों की जटिलता में शनैः शनैः कुछ नियमितताओं को ढूंढ़ निकालना और कुछ प्रायोगिक नियमों का सत्यापन संभव हो गया था और इस कारण प्रयोग द्वारा प्रेक्षित घटनाओं के बहुत विस्तृत समुदाय में कुछ सुश्रृंखलता भी स्थापित हो गयी थी। सबसे पहले तो यह दिखाई पड़ा कि उन रेखाओं को

1. The Atom of Bohr 2. Chemical elements 3. Characteristic
4. Infra-red 5. Ultra-violet

विभिन्न अनुक्रमों में विभाजित किया जा सकता है। इन अनुक्रमों के लिए पारिभाषिक शब्द श्रेणी[1] है। विभिन्न तत्त्वों से सम्बन्धित इन श्रेणियों की संरचनाओं में बहुत बड़ी समानताएँ भी पायी गयी हैं। प्रत्येक श्रेणी की विभिन्न रेखाओं में ऐसा पारस्परिक सम्बन्ध होता है जो गणितीय सूत्र के द्वारा सरलता से व्यक्त किया जा सकता है। सबसे पहले १८८५ में पारमाणविक हाइड्रोजन के दृश्य स्पैक्ट्रम की समस्त रेखाओं की आवृत्तियों को व्यक्त करने के लिए एक गणितीय सूत्र का आविष्कार करने में बामर[2] को सफलता मिली थी। इस सूत्र में रेखाओं की आवृत्तियाँ एक पूर्णांक के फलन के रूप में प्रकट होती हैं और उस पूर्णांक का मान उत्तरोत्तरवर्ती रेखाओं के लिए बदलता जाता है। तभी से हाइड्रोजन की यह रेखा-श्रेणी बामर-श्रेणी कहलाती है। दृश्य सीमाओं से बाहर हाइड्रोजन के स्पैक्ट्रम के अध्ययन से एक परावैंगनी श्रेणी (लाइमान श्रेणी[3]) और कई अवरक्त श्रेणियों का (पाशन[4], ब्रैकेट[5] और फुंड[6] की श्रेणियों का) आविष्कार हुआ। इन श्रेणियों की रेखाएँ भी बामर के नियम के ही सदृश नियमों का पालन करती हैं। हाइड्रोजन से भिन्न अन्य तत्त्वों—विशेषकर क्षारीय तत्त्वों[7] के स्पैक्ट्रमों में भी इसी प्रकार की कुछ अधिक जटिल श्रेणियाँ पायी गयी हैं। प्रत्येक श्रेणी की रेखाओं की आवृत्तियाँ बामर के सूत्र से मिलते-जुलते सूत्रों के द्वारा निर्दिष्ट हो जाती हैं अर्थात् प्रत्येक आवृत्ति दो पदों[8] के अन्तर के बराबर होती है जिनमें से एक पद तो अपरिवर्ती होता है और उस श्रेणी का लाक्षणिक होता है और दूसरा पद रेखा की क्रम-संख्या के अनुसार बदलता जाता है। स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की आवृत्तियों के इस विशेष प्रकार के गणितीय व्यंजक के कारण बहुधा ऐसा भी होता है कि किसी एक स्पैक्ट्रमीय रेखा की आवृत्ति दो अन्य रेखाओं की आवृत्तियों के जोड़ के बराबर हो जाती है। विभिन्न तत्त्वों के स्पैक्ट्रमों के अध्ययन से स्थापित इन प्रायोगिक नियमों पर विचार करके रिट्ज़[9] ने अपने व्यापक नियम का प्रतिपादन किया। यही अब "संयोजन-नियम"[10] के नाम से प्रसिद्ध है और यही समस्त अर्वाचीन स्पैक्ट्रम-विज्ञान की आधार-शिला है।

संयोजन-नियम इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है। "प्रत्येक प्रकार के परमाणु के लिए एक अनुक्रम[11] ऐसी संख्याओं का मिल सकता है जिन्हें उस परमाणु के स्पैक्ट्रमीय पद[12] कहते हैं और उस परमाणु की प्रत्येक स्पैक्ट्रमीय रेखा की आवृत्ति इनमें से दो स्पैक्ट्रमीय पदों के अन्तर के बराबर होती है।" इस संयोजन-नियम को समझ लेने

1. Series 2. Balmer 3. Lyman Series 4. Paschen 5. Brackett 6. Pfund 7. Alkaline elements 8. Terms 9. Ritz 10. Principle of combination 11. Sequence 12. Spectral terms

पर बामर के नियम तथा उसी के सदृश अन्य नियमों का गणितीय रूप, आवृत्तियों में योगफलीय सम्बन्धों का अस्तित्व आदि सभी बातें तुरन्त समझ में आ जाती हैं। इस प्रकार संयोजन नियम की सत्यता असंख्य स्पैक्ट्रमीय तथ्यों के द्वारा असंदिग्ध रूप से प्रमाणित हो चुकी है। किन्तु इस नियम के अस्तित्व का कारण अवश्य ही परमाणु की संरचना में निहित है और उसे अच्छी तरह समझ लेने परह में अवश्य ही इस बात का भी आभास मिल सकता है कि इस संरचना के आभ्यन्तरिक परिवर्तन के द्वारा स्पैक्ट्रमीय रेखाओं का उत्सर्जन परमाणु में से किस प्रकार होता है। अतः सद्धान्तिक भौतिक विज्ञान के समक्ष रिट्ज़ के नियम के मूल कारण का पता लगाने और उसके द्वारा परमाणु की संरचना के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने के महत्त्वपूर्ण कार्य को अविलम्बतः सम्पादित करने की आवश्यकता उपस्थित हुई थी। किन्तु जिन स्पैक्ट्रमीय नियमों का प्रेक्षित तथ्यों में से आविष्कार करने में प्रयोगकर्त्ताओं को इतनी सफलता प्राप्त हो चुकी थी उनके स्पष्टीकरण के लिए दुर्भाग्यवश सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान विषयक पूर्व-प्रतिष्ठित धारणाएँ बिलकुल ही अक्षम प्रतीत हुईं। स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के उत्सर्जन की व्याख्या के लिए विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त ने वस्तुतः विकिरणोत्पादक द्रव्य में दोलनशील विद्युन्मयी कणिकाओं के अस्तित्व की कल्पना का सहारा लिया था। यथा उसमें यह कल्पना की गयी थी कि परमाणुओं के अन्दर इलैक्ट्रान विद्यमान रहते हैं और वे साधारणतः तो अपने सन्तुलन-विन्दु पर ही स्थिर रहते हैं, किन्तु किसी प्रकार की उत्तेजना के कारण वे उस विन्दु के इधर-उधर आवर्त दोलन करने लगते हैं। परन्तु इस कल्पना के आधार पर आवृत्तियों के मापक्रम में स्पैक्ट्रम–रेखाओं के वितरण के जिन नियमों का सैद्धान्तिक निगमन हुआ वे वास्तविक नियमों से बहुत ही भिन्न थे। चिरप्रतिष्ठित धारणाओं की इसी असफलता को देखकर आंरी प्वांकरे ने १९०५ में लिखा था कि "स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के वितरण को देखते ही हमारा ध्यान शब्द-विज्ञान के प्रसंवादियों[1] की ओर जाता है। किन्तु दोनों में बड़ा भारी भेद है। केवल यही नहीं कि तरंगांक[2] किसी एक ही संख्या के क्रमागत अपवर्त्य नहीं होते, किन्तु भौतिक गणित में बहुधा जो बीजातीत समीकरण[3] प्राप्त होते हैं (यथा किसी विशेष आकृति की वस्तु के प्रत्यास्थ-कम्पनों[4] का समीकरण या किसी विशेष आकृति के वैद्युत-दोलक द्वारा उत्पन्न हर्ट्ज़ीय दोलनों का समीकरण अथवा किसी ठोस वस्तु के शीतन[5] सम्बन्धी फ़ूरियर[6] का समीकरण)

1. Harmonics 2. Wave-number 3. Transcendental equations 4. Elastic vibrations 5. Cooling 6. Fourier

उनके समीकरण-मूलों[1] के सदृश भी हमें कोई चीज यहाँ नहीं मिलती। ये नियम सरलतर तो अवश्य हैं, किन्तु वे हैं सर्वथा भिन्न प्रकार के। इस बात पर हमने ध्यान नहीं दिया है, किन्तु मेरा विश्वास है कि इसी में प्रकृति का एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रहस्य छिपा हुआ है।"[2]

"और मेरा विश्वास है कि इसी में प्रकृति का एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रहस्य छिपा हुआ है" इस वाक्य में सचमुच ही भविष्य-दर्शन का आभास मालूम पड़ता है जब हम देखते हैं कि यह बोह्र के सिद्धान्त से दस वर्ष पहले लिखा गया था। क्योंकि बोह्र के सिद्धान्त के ही द्वारा तो स्पैक्ट्रमीय नियमों का वास्तविक अर्थ हमें मालूम हुआ है और उसी के द्वारा हम यह भी समझ सके हैं कि इन नियमों में भौतिक संरचनाओं का क्वांटमित स्वरूप किस प्रकार निहित है। इसी से यह स्पष्ट प्रकट हो गया है कि द्रव्य की समस्त आभ्यन्तरिक व्यवस्था और उस व्यवस्था का स्थायित्व क्वांटमों के अस्तित्व पर ही आश्रित है। क्वांटमों के बिना द्रव्य का अस्तित्व ही संभव नहीं है। यही वह रहस्य है जिसका जिकर प्वांकरे ने किया था।

२. बोह्र का सिद्धान्त

अब हम परमाणु के उस क्वांटम-सिद्धान्त का वर्णन करेंगे जिसका प्रतिपादन और परिपोषण बोह्र ने १९१३ में किया था। हम देख ही चुके हैं कि उस समय भौतिकज्ञों का झुकाव परमाणु के ऐसे सौर-मंडलीय प्रतिरूप की तरफ हो गया था जिसमें यह माना जाता था कि परमाणु में धन-विद्युत् से आविष्ट एक केन्द्रीय नाभिक[3] होता है जिसका द्रव्यमान लगभग परमाणु के पूरे द्रव्यमान के बराबर होता है और जिसके आकर्षण के कारण ग्रहीय इलैक्ट्रान उसकी परिक्रमा करते रहते हैं। इस प्रतिरूप की कल्पना सबसे पहले जीन पैरां[4] ने की थी और लार्ड रेले[5] और उनके सहयोगियों के प्रयोगों द्वारा इसे प्रबल समर्थन भी मिल चुका था। इन प्रयोगों से यह प्रमाणित हो गया था कि परमाणु के गर्भ में एक अत्यन्त छोटे विन्दु के बराबर आकारवाला नाभिक विद्यमान होता है और उसमें विद्युत् का आवेश भी होता है। किन्तु यद्यपि प्रयोग द्वारा इस प्रतिरूप का प्रवल समर्थन हुआ था तथापि दुर्भाग्यवश विकिरण के उत्सर्जन तथा आविष्ट कणिकाओं की गति के सम्बन्ध में जो चिरप्रतिष्ठित धारणाएँ थीं उनसे इसका बिलकुल ही मेल नहीं वैठा। वस्तुतः स्पैक्ट्रमों की रेखाएँ लगभग एक-वर्णीय[6] होती हैं और

1. Roots 2. La Valeur de la Science Page- 305 3. Nucleus 4. Jean Perrin 5. Lord Rayleigh 6. Monochromatic

उनकी आवृत्तियाँ अपरिवर्ती होती हैं। इस मौलिक तथ्य के कारण चिरप्रतिष्ठित धारणाओं से अभिभूत भौतिकज्ञों को यह मानना पड़ा था कि परमाणु के भीतर की आविष्ट कणिकाएँ—इलैक्ट्रान—साधारणतः ऐसे स्थान पर अवस्थित होती हैं जहाँ उनका सन्तुलन स्थायी होता है और यदि उन्हें उस स्थान से हटा दिया जाय तो वे पुनः वहीं लौट जाने का प्रयत्न करती हैं। यदि कोई इलैक्ट्रान किसी भी बाह्य-बल के द्वारा अपने सन्तुलन-विन्दु से विस्थापित कर दिया जाय तो वह अवश्य ही उस विन्दु से इधर-उधर निश्चित आवृत्ति से दोलन करने लगेगा। और उत्सर्जन के विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत के अनुसार उसमें से एक सुनिर्णीत आवृत्तिवाली विद्युत्-चुम्बकीय तरंग उत्पन्न होकर चारों ओर फैलने लगेगी। इससे उस इलैक्ट्रान की ऊर्जा धीरे-धीरे घटती जायगी। और अन्त में वह अपने सन्तुलन-विन्दु पर आकर स्थिर हो जायगा। इस प्रकार स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की एक-वर्णता और परमाणु संरचना का स्थायित्व इन दोनों ही बातों की समुचित व्याख्या हो जायगी। किन्तु परमाणु के सौर-मंडलीय प्रतिरूप के द्वारा ऐसी व्याख्या संभव नहीं हुई क्योंकि कैपलरीय[1] कक्षों पर परिभ्रमण करनेवाले इलैक्ट्रानों के परिभ्रमण की आवृत्ति उनकी ऊर्जा पर अवलम्बित होनी चाहिए। और इसी ऊर्जा के अनुसार परिवर्तित भी होनी चाहिए। अतः यदि विकिरण का चिरप्रतिष्ठित सिद्धांत परमाणु पर लागू हो तो इन ग्रहीय इलैक्ट्रानों की ऊर्जा उत्तरोत्तर घटती जानी चाहिए और उनमें से उत्सर्जित होनेवाले विकिरण की आवृत्ति संतत रूप से परिवर्तित होती जानी चाहिए तथा अन्त में उन इलैक्ट्रानों को नाभिक में गिरकर उसके वैद्युतिक आवेश को विलुप्त कर देना चाहिए। इस प्रकार चिरप्रतिष्ठित सिद्धांत का उपयोग परमाणु के सौर-मंडलीय प्रतिरूप में करने पर न तो स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के एकवर्णत्व की मीमांसा हो सकती है और न परमाणु के स्थायित्व की। नील्स बोह्र[2] ने जब अपने अनुसंधानों का प्रारम्भ किया था तब उन्हें इसी कठिनाई का सामना करना पड़ा था।

बोह्र को इस बात का बड़ा भारी श्रेय है कि उन्होंने परमाणु के सौरमंडलीय प्रतिरूप में क्वांटम-सिद्धांत की मूल धारणाओं को समाविष्ट करने की आवश्यकता को समझ लिया था। हम जानते हैं कि इन धारणाओं के अनुसार यह मानना पड़ता है कि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी द्वारा अनुमोदित असंख्य संभव गतियों में से केवल थोड़ी-सी ही क्वांटमित[3] गतियाँ स्थायी होती हैं और प्राकृतिक जगत् में केवल उन्हीं का अस्तित्व

1. Keplerian 2. Niels Bohr. 3. Quantised

संभव है। हम देख चुके हैं कि जिस वस्तु की आवर्तगति एक ही चर-राशि द्वारा निर्दिष्ट हो सकती हो उसकी क्वांटमित गतियों को निर्णीत करने के लिए प्लांक ने एक व्यापक नियम का आविष्कार किया था। जिस समय उन्होंने अपना पहला लेख लिखा था उस समय यह नहीं मालूम था कि जो आवर्त-गतियाँ एक से अधिक चर-राशियों द्वारा निर्दिष्ट होती हैं उन्हें क्वांटमित करने की विधि क्या है; किन्तु इस बात की बहुत संभावना दिखाई देने लगी थी कि ऐसी व्यापक अवस्था में भी क्वांटमित करने की विधि जल्दी ही ज्ञात हो जायगी। इसी कारण बोह्र के लिए परमाणु के आभ्यन्तरिक इलैक्ट्रानों की गति को क्वांटमित मानना संभव हो गया और वे इस परिणाम पर पहुँचे कि प्रत्येक परमाणु की कुछ स्थायी क्वांटमित अवस्थाएँ—स्थावर अवस्थाएँ[1] होती हैं और यह मान लिया जा सकता है कि परमाणु सदा इन्हीं में से किसी एक स्थावर अवस्था में विद्यमान रह सकता है। और चूँकि प्रत्येक अनन्य-संपर्कित परमाण स्थिरोर्ज निकाय[2] समझा जा सकता है, अतः प्रत्येक स्थावर अवस्था की ऊर्जा का एक नियत क्वांटमितमा न होगा और प्रत्येक परमाणु की विभिन्न संभव स्थावर अवस्थाओं की ऊर्जा के क्वांटमित मानों का भी एक अनुक्रम[3] होगा। इस प्रकार प्रत्येक तत्त्व के परमाणु के साथ संख्याओं का एक ऐसा अनुक्रम सम्बद्ध होगा जिससे उस परमाणु की विभिन्न संभव संरचनाओं की ऊर्जाएँ ज्ञात हो सकेंगी।

तर्क की प्रगति में इस स्थान पर पहुँचते ही यह स्पष्ट हो जाता है कि उपर्युक्त परिणाम में और संयोजन-नियम द्वारा प्राप्त स्पैक्ट्रमीय पदों के अस्तित्व में बहुत अच्छी समानता है। स्पैक्ट्रमीय पदों और रिट्ज़ के नियम की क्वांटमीय व्याख्या के लिए केवल इतना ही मान लेना काफ़ी है कि स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की आवृत्तियाँ उस परमाणु की ऊर्जा के दो क्वांटमित मानों के अन्तर की अनुपाती होती हैं। बोह्र के सामने परमाणु के क्वांटम-सिद्धान्त में यह परिकल्पना अत्यन्त स्वाभाविक रूप से ही प्रकट हो गयी। और चूंकि परमाणु की क्वांटमित अवस्थाएँ स्थायी होती हैं इसलिए जब परमाणु ऐसी अवस्था को प्राप्त कर लेता है तब उसमें से कोई विकिरण उत्सर्जित भी नहीं हो सकता। स्पष्टतः ही यह परिणाम विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त की प्रागुक्तियों के विरुद्ध है क्योंकि क्वांटमित अवस्था में भी इलैक्ट्रान-ग्रह संवृत[4] पथों पर परिक्रमण करते हैं और उनमें बराबर बहुत बड़े त्वरण मौजूद रहते हैं। किन्तु यह परिणाम क्वांटम-स्थायित्व की धारणा से संगत है। इससे यह भी प्रकट है कि स्पैक्ट्रमीय रेखा उस समय

1. Stationary States 2. Conservative System 3. Sequence 4. Closed

उत्पन्न होती है जब परमाणु एक क्वांटमित अवस्था से दूसरी में संक्रमण[1] करता है और उसकी ऊर्जा घटती है। इसी लिए बोह्र ने यह मान लिया कि प्रत्येक स्पैक्ट्रमीय उत्सर्जन का उद्‌गम वह आकस्मिक संक्रमण होता है जिसमें परमाणु एक स्थावर अवस्था से कूदकर दूसरी में पहुँच जाता है और तब ही उसमें से कुछ ऊर्जा विकिरण के रूप में निकल जाती है। इसके अतिरिक्त क्वांटम-सिद्धान्त में यह मानना तो स्वाभाविक ही है कि ऊर्जा क्वांटमों के रूप में—फ़ोटानों के रूप में—ही उत्सर्जित होती है। अतः संक्रमण के क्षण में विकिरण-ऊर्जा के एक क्वांटम का उत्सर्जन होता है और इसका परिमाण परमाणु की प्रारंभिक स्थावर और अंतिम स्थावर अवस्था की ऊर्जाओं के अन्तर के बराबर होता है। और इससे निम्नलिखित नियम तुरन्त प्राप्त हो जाता है जिसका प्रख्यात नाम "बोह्र का आवृत्ति-नियम[2]" है। "जब परमाणु किसी स्थावर अवस्था **क** से किसी दूसरी स्थावर अवस्था **ख** में संक्रमण करता है तब जो स्पैक्ट्रमीय रेखा उत्सर्जित होती है उसकी आवृत्ति **क** तथा **ख** अवस्थाओं की ऊर्जाओं के अन्तर में प्लांक के नियतांक h का भाग देने से प्राप्त भागफल के बराबर होती है।" इस आवृत्ति-नियम के अनुसार परमाणु के स्पैक्ट्रमीय पद उस परमाणु की स्थावर अवस्थाओं की ऊर्जाओं में h का भाग देने से प्राप्त संख्या के बराबर होते हैं और इस बात से संयोजन-नियम के रहस्य का उद्‌घाटन हो जाता है।

संक्षेप में ग्रहीय परमाणु के क्वांटम-सिद्धान्त को बोह्र ने निम्नलिखित दो आधारों पर खड़ा किया है। (i) प्रत्येक परमाणु की स्थावर अवस्थाओं का एक ऐसा अनुक्रम होता है जो उसकी क्वांटमित गतियों को निरूपित करता है और जिसका परिकलन गणना प्लांक की विधि से हो सकती है। परमाणु का भौतिक अस्तित्व केवल इन्हीं अवस्थाओं में संभव हो सकता है। (ii) परमाणु की स्पैक्ट्रमीय रेखाओं का उत्सर्जन उसी समय होता है जब परमाणु का एक स्थावर अवस्था से दूसरी में संक्रमण होता है और उन रेखाओं की आवृत्तियाँ आवृत्ति-नियम के द्वारा निर्णीत होती हैं।

इसके बाद जो काम करना आवश्यक था वह यह था कि विभिन्न परमाणुओं की स्थावर अवस्थाओं की ऊर्जाओं के मान परिकलन द्वारा प्राप्त किये जायँ। सरलतम उदाहरण हाइड्रोजन का है जिसका परमाणु-क्रमांक[3] १ है। इस परमाणु में केवल एक ही ग्रहीय इलैक्ट्रान होता है जो कैपलरीय पथ पर नाभिक की परिक्रमा करता रहता है। लेकिन इस सरल समस्या की भी पूर्ण मीमांसा करने में बोह्र को अपने

1. Transition 2. Bohr's Frequency Law 3. Atomic number

प्रथम प्रयास में सफलता नहीं मिल सकी। कैपलरीय गति को निर्णीत करने के लिए दो चर-राशियों की आवश्यकता होती है; यथा, सदिश त्रिज्या[1] और ग्रह का दिगंश[2]। उस समय तक एक चर-राशि द्वारा निर्णीत गति के अतिरिक्त अन्य गतियों के क्वांटमीकरण की विधि मालूम नहीं थी। इस कठिनाई को दूर करने के लिए बोह्र ने पहले केवल वृत्ताकार कैपलरीय गति पर ही विचार किया क्योंकि इसमें सदिश त्रिज्या अचर रहती है और अकेला दिगंश ही चर समझा जा सकता है। तब स्थावर वृत्ताकार पथों के लिए क्रिया के चक्रीय अनुकल[3] को नियतांक h के किसी पूर्ण अपवर्त्य के बराबर मानकर बोह्र ने इन स्थावर पथों की ऊर्जा को एक पूर्णांक के फलन के रूप में व्यक्त कर दिया जिसमें पूर्णांक का मान १ से अनन्ती[4] तक बदल सकता है। तब ऊर्जा के इन मानों में h का भाग देने से हाइड्रोजन के स्पक्ट्रमीय पद प्राप्त हो गये और उनसे विभिन्न स्पैक्ट्रम-श्रेणियों की आवृत्तियों को व्यक्त करनेवाला सूत्र भी प्राप्त हो गया। इस प्रकार बामर का सूत्र तथा उसके ही सदृश लाइमान, पाशन आदि के सूत्र भी अनायास ही अविकल रूप में प्राप्त हो गये। और यह भी नहीं कि इन सूत्रों का केवल रूप मात्र ही प्राप्त हुआ हो। उनके संख्यात्मक मान भी यथार्थ निकले। बामर-सूत्र में और तत्समान अन्य सूत्रों में भी एक नियतांक रहता है जिसका नाम स्पैक्ट्रम-वैज्ञानिकों ने रिडबर्ग-नियतांक[5] रख दिया है और दीर्घ काल पहले ही इसका मान अत्यन्त यथार्थतापूर्वक नाप लिया गया था। बोह्र के सिद्धान्त में इस नियतांक का मान इलैक्ट्रान के आवेश और द्रव्यमान तथा प्लांक के नियतांक इन तीन मौलिक नियतांकों के द्वारा व्यक्त हो जाता है। अतः बोह्र के सिद्धान्त के द्वारा रिडबर्ग नियतांक के मान का परिकलन प्रेक्षण से पहले ही[6] हो सकता है और इस गणना से ठीक वही मान प्राप्त होता है जिसे स्पैक्ट्रम-वैज्ञानिकों ने स्पैक्ट्रमीय रेखाओं को नापकर प्राप्त किया था। यह पारिमाणिक अनुरूपता बोह्र के परमाणु-सिद्धान्त की बहुत बड़ी सफलता है और इसने प्रमाणित कर दिया कि बोह्र द्वारा निर्दिष्ट मार्ग ही सही रास्ता है।

किन्तु बोह्र को इस विचक्षण प्रारंभिक सफलता से संतोष नहीं हुआ। उन्होंने अपने सिद्धान्त का उपयोग आयनित हीलियम[7] के लिए भी किया। मैन्डलीफ़[8] की जिस सारणी में सब तत्त्व वर्धमान परमाणु-भार के अनुक्रम से विन्यस्त हैं उसमें हीलियम का स्थान दूसरा है। उसका परमाणु-क्रमांक[9] २ है और ग्रहीय प्रतिरूप के अनुसार

1. Radius vector 2. Azimuth 3. Cyclic integral of action 4. Infinity 5. Rydberg constant 6. A priori 7. Ionised helium 8. Mendeleeff 9. Atomic number

हीलियम के परमाणु में प्रोटान से दो गुणे वैद्युत आवेशवाला एक नाभिक और दो ग्रहीय इलैक्ट्रान होते हैं। अतः हीलियम के परमाणु की क्वांटमित गतियों को निर्णीत करने की गणितीय समस्या बहुत जटिल है क्योंकि यह तीन वस्तुओं की यांत्रिक समस्या है। किन्तु यदि किसी बाह्य क्रिया के कारण हीलियम परमाणु में से एक इलैक्ट्रान निकल जाय तो समस्या सरल हो जाती है। तब हीलियम परमाणु आयनित हो जाता है और उसमें केवल एक ही इलैक्ट्रान रह जाता है और इसकी यांत्रिक समस्या हाइड्रोजन परमाणु की समस्या के समान ही हो जाती है। अन्तर केवल यह रह जाता है कि इसके नाभिक का वैद्युत आवेश दो गुणा बड़ा है। इस युक्ति से बोह्र ने सिद्ध किया कि आयनित हीलियम की स्पैक्ट्रमीय रेखाएँ भी बामर के नियम के समान ही नियमों का पालन करेंगी, किन्तु इन नियमों में रिडबर्ग-नियतांक को ४ से गुणा करना पड़ेगा। इससे बोह्र इस परिणाम पर भी पहुँचे कि जिस पिकरिंग-श्रेणी[1] का आविष्कार कई तारों के स्पैक्ट्रम में हुआ था और जिसका उद्गम ग़लती से हाइड्रोजन परमाणु समझा गया था उसका वास्तविक उद्गम आयनित हीलियम है। इसी प्रकार परमाणु के क्वांटम-सिद्धान्त के द्वारा ऐसे बहुत से स्पैक्ट्रमीय तथ्यों का स्पष्टीकरण हो गया है जिनकी व्याख्या पहले संदिग्ध समझी जाती थी।

इसके अतिरिक्त बोह्र को एक छोटे-से, किन्तु अत्यन्त विचित्र तथ्य के स्पष्टीकरण में भी सफलता प्राप्त हो गयी। प्रायोगिक प्रेक्षणों से प्रकट होता है कि आयनित हीलियम के लिए उपर्युक्त गुणक ४ के द्वारा संशोधित रिडबर्ग-नियतांक का मान ठीक उतना नहीं होता जितना कि हाइड्रोजन के स्पैक्ट्रम के लिए होता है। इस विभेद का कारण बोह्र ने यह बताया कि परमाणु के नाभिक पर भी ग्रहीय इलैक्ट्रानों की कुछ प्रतिक्रिया होती है और इसलिए वह पूर्णतः अचल नहीं रहता। मूल सिद्धान्त में नाभिक को अचल आकर्षण-केन्द्र माना गया था। अतः उस सिद्धान्त को केवल प्रथम सन्निकटीकरण ही समझना चाहिए। और परिकलन में नाभिक की इस गति के प्रभाव को भी सम्मिलित करना चाहिए। नाभिक जितना ही हलका होगा उतना ही अधिक महत्त्व इस संशोधन का होगा। जब परिकलन अधिक यथार्थतापूर्वक किया गया तो एक संशोधक पद[2] प्राप्त हुआ जिसका मान इलैक्ट्रान के तथा नाभिक के द्रव्यमानों के अनुपात पर अवलम्बित होता है। हीलियम का नाभिक हाइड्रोजन के नाभिक की अपेक्षा लगभग चार गुणा भारी होता है। इसलिए यद्यपि हाइड्रोजन और हीलियम दोनों के

1. Pickering series. 2. Correction term

ही लिए इस प्रकार परिकलित संशोधक पद छोटा होगा, फिर भी वह हीलियम की अपेक्षा हाइड्रोजन के लिए काफ़ी अधिक बड़ा होगा। इस बात से अच्छी तरह समझ में आ जाता है कि रिडबर्ग-नियतांक का मान इन दोनों पदार्थों के लिए बराबर क्यों नहीं है। बोह्र के परिकलन के अनुसार जितना अन्तर दोनों में होना चाहिए प्रयोग द्वारा भी ठीक उतना ही मिलता है।

बोह्र के परमाणु-सिद्धान्त के द्वारा हाइड्रोजन और हीलियम से भिन्न अन्य तत्त्वों के प्रकाशीय स्पैक्ट्रमों की संरचना भी स्थूल रूप से समझ में आ जाती है। इसमें सन्देह नहीं कि जब हम बोह्र की परिकलन विधि का उपयोग एक से अधिक इलैक्ट्रान-वाले परमाणुओं पर करना चाहते हैं तो अनिवार्यतः बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। एक ओर तो समस्या जटिल और असाध्य हो जाती है और दूसरी ओर क्वांटमीकरण के नियमों का उपयोग संशय-ग्रस्त हो जाता है। फिर भी समस्त तत्त्वों के स्पैक्ट्रमों में व्यापक समानता है और उन सब के ही श्रेणी-सूत्रों में रिडबर्ग-नियतांक भी विद्यमान रहता है। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि इन सब स्पैक्ट्रमों में गहरा पारस्परिक सम्बन्ध है और इसलिए यह विश्वास भी दृढ़ हो जाता है कि जो विधि हाइड्रोजन के सम्बन्ध में इतनी सफल प्रमाणित हुई है वही अन्य तत्त्वों के लिए भी उपयोगी होनी चाहिए। बोह्र के अनुसार हम निम्नलिखित व्यवस्था का उपयोग कर सकते हैं जो निःसन्देह बहुत ही अपरिष्कृत है। मान लीजिए कि परमाणु-क्रमांक Z वाले अनायनित[1] परमाणु के नाभिक को घेरे हुए एक केन्द्रीय प्रदेश है जिसमें $(Z-१)$ इलैक्ट्रान विचरण करते हैं और Z– वां इलैक्ट्रान इस "इलैक्ट्रानिक शव"[2] की परिक्रमा करता है। इसी Z– वें इलैक्ट्रान का एक स्थावर अवस्था से दूसरी में संक्रमण होने से उस परमाणु का स्पैक्ट्रम प्रकट होता है। नाभिक और इस शव का सम्मिलित प्रभाव प्रथम सन्निकटन तक कूलम्बीय बल-क्षेत्र के तुल्य ही रहता है और इसी से स्पैक्ट्रमीय पद भी हाइड्रोजन के पदों के अनुरूपी[3] हो जाते हैं। इस प्रकार सब प्रकाशीय स्पैक्ट्रमों की समानता की व्याख्या—अवश्य ही बहुत स्थूल व्याख्या—संभव हो जाती है।

इसी विचारधारा का अनुसरण करके हम एक्स-किरणों के स्पैक्ट्रमों के स्वरूप को भी समझ सकते हैं। इनमें भी मुख्यतः वही लक्षण दिखाई देते हैं जो प्रकाशीय स्पैक्ट्रमों में वर्तमान होते हैं। हम इस विषय के विस्तृत विवेचन में फँसना नहीं चाहते। इतना ही कह देना काफ़ी होगा कि बोह्र के विचारों की सहायता से एक्स-

1. Un-ionised 2. Electronic carcass 3. Corresponding

किरण-स्पैक्ट्रमों का महान नियम—मोसले का नियम[१] भी हमारी समझ में आ जाता है। प्रकाशीय स्पैक्ट्रम-रेखाओं के समान ही रंटजन-किरणों[२] के स्पैक्ट्रमों की रेखाएँ भी श्रेणियों में विभाजित होती हैं और इन श्रेणियों की सामान्य रचना सब तत्त्वों के लिए एक-सी ही होती है। जब १९१२ में लावे[३] फ़्रीडरिख और निपिंग[४] ने क्रिस्टल-संजात एक्स-किरण विवर्तन[५] का आविष्कार कर लिया और हम एक्स-किरणों का तरंग-दैर्घ्य यथार्थतापूर्वक नापने में सफल हो गये तब इंगलैंड के युवक वैज्ञानिक मोसले[६] का ध्यान इस बात पर गया कि यदि विभिन्न तत्त्वों के स्पैक्ट्रमों की समधर्मी[७] रेखाओं पर गौर किया जाय तो वे रेखाएँ विस्थापित[८] दिखाई देती हैं और हमें ज्ञात हो जाता है कि आवृत्तियों के मापक्रम में इन रेखाओं का विस्थापन लगभग परमाणु-क्रमांक के वर्ग का अनुपाती होता है। दूसरे शब्दों में यदि किसी तत्त्व का परमाणु-क्रमांक किसी अन्य तत्त्व से दो गुणा बड़ा हो तो प्रथम तत्त्व की किसी स्पैक्ट्रमीय रेखा का आवृत्ति-विस्थापन द्वितीय तत्त्व की उसी रेखा के आवृत्ति-विस्थापन से चार गुणा बड़ा होता है। बोह्र-सिद्धान्त के सूत्रों से यह परिणाम सहज में ही निकल आता ह कि एक्स-किरणों के क्षेत्र में समस्त स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की आवृत्तियाँ तत्त्वों के अनुक्रम में लगभग परमाणु-क्रमांक के वर्ग के अनुसार परिवर्तित होती हैं—कम से कम प्रथम और बहुत स्थूल सन्निकटन तक। इस प्रकार मोसले का नियम युक्ति-संगत सिद्ध हो जाता है और बोह्र के परमाणु-सिद्धान्त की आविष्कारक शक्ति का सभी स्पक्ट्रमीय क्षेत्रों में परिचय मिल जाता है।

३. बोह्र के सिद्धान्त का परिपाक और सामरफ़ेल्ड का सिद्धान्त[९]

गणितीय विकास की दृष्टि से बोह्र के सिद्धान्त में एक बड़ी कमी थी। हाइड्रोजन परमाणु के सरलतम प्रसंग में भी उससे केवल वृत्ताकार पथों की क्वांटमित ऊर्जाओं का परिकलन हो सकता है। दीर्घवृत्तीय पथों के लिए उसका उपयोग नहीं किया जा सकता। इस असमर्थता का कारण यह है कि उसमें क्वांटमीकरण की विधियों का पर्याप्त विकास नहीं हुआ था। प्लांक द्वारा निर्दिष्ट क्वांटमीकरण विधि तो केवल उन्हीं गतियों के लिए संप्रयोज्य है जिनके वर्णन के लिए केवल एक ही चर-राशि काफ़ी होती है। बोह्र के सिद्धान्त के विकास में पूर्णता लाने के लिए निम्नलिखित समस्या

1. Mosley's Law 2. Rontgen rays 3. Laue 4. Friedrich and Knipping 5. Diffraction 6. Mosley 7. Homologous 8. Displaced 9. Perfecting of the Theory of Bohr. The Theory of Sommerfeld

को हल करना अनिवार्य था। एक से अधिक स्वातंत्र्य-कोटि[1] वाले यांत्रिक निकायों के लिए उपयुक्त क्वांटमीकरण की विधि क्या है ?

इस समस्या को १९१६ में विलसन और सामरफ़ेल्ड[2] ने लगभग एक ही साथ हल कर लिया। उन्होंने यह देखा कि जिन यांत्रिक निकायों से क्वांटम-सिद्धान्त का सम्बन्ध है वे सब ऐसे आवर्त-कल्प[3] निकाय होते हैं जिनमें चरों का पृथक्करण[4] संभव हो जाता है। ऐसे निकायों के सब विविध चर आवर्ततः परिवर्तित तो होते हैं, किन्तु साधारणतः उनके आवर्तकाल भिन्न-भिन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त यदि चरों का वरण या निर्वाचन यथोचित हुआ हो तो क्रिया के अनुकल को ऐसे अलग-अलग अनुकलों में विभक्त किया जा सकता है जो केवल एक-एक चर पर ही अवलम्बित हों। प्रत्येक ऐसे अनुकल की सीमाओं का विस्तार करके तत्सम्बन्धी चर के पूरे आवर्तन-चक्र के लिए उसके मान का परिकलन करने से जो राशि प्राप्त होती है उसे "क्रिया के अनुकल का चाक्रिक आवर्तन"[5] कहते हैं। स्पष्टतः ही जितनी चरों की संख्या होती है उतनी ही संख्या इन आवर्तनों की भी होती है। तब उस निकाय की गतियों के क्वांटमीकरण के व्यापक नियम को प्राप्त करने के लिए इतना ही काफ़ी है कि प्रत्येक चाक्रिक आवर्तन को नियतांक h के किसी पूर्ण अपवर्त्य के बराबर रख दिया जाय। यदि चर एक ही हो तो इसी नियम से प्लांक का नियम भी प्राप्त हो जाता है।

जिस विलसन-सामरफ़ेल्ड क्वांटमीकरण विधि की स्थूल रूपरेखा हमने अभी बतायी है उससे उन सब समस्याओं की मीमांसा हो सकती है जो बोह्र के परमाणु-सिद्धान्त के सामने उपस्थित हो गयी थीं। यह सही है कि यदि परमाणु की जटिलता बहुत ही थोड़ी हो तब भी व्यवहारतः यांत्रिक समस्या की कठिनता से निस्तार नहीं मिलता और प्रगति रुक जाती है। किन्तु इस बाधा का कारण क्वांटमीकरण विधि की अपूर्णता नहीं है——गत्यात्मक समीकरणों के हल करने की असंभवता है।

परमाणु-सिद्धान्त की जिन विविध समस्याओं की मीमांसा करने में बोह्र असफल रहे, उन सबमें सामरफ़ेल्ड ने अपनी आविष्कृत क्वांटमीकरण विधि का उपयोग किया। पहले तो उन्होंने यह प्रमाणित किया कि दीर्घवृत्तीय कक्षाओं[6] के विवेचन से भी हाइड्रोजन परमाणु की क्वांटमित ऊर्जाओं के अनुक्रम में कोई नवीन मान नहीं प्राप्त होते। अतः बोह्र द्वारा जो परिणाम पहले ही प्राप्त हो चुके थे उनमें कोई

1. Degree of freedom 2. Wilson & Sommerfeld 3. Quasi-periodic 4. Separation of variables 5. Cyclic period of the integral of action 6. Elliptical orbits

परिवर्तन नहीं हुआ। और प्रकाशीय स्पैक्ट्रमों के सम्बन्ध में उन्होंने यह भी प्रमाणित कर दिया कि इलैक्ट्रान-कक्षाओं की पारस्परिक अतिव्याप्ति[1] का विचार करके बामर-नियम के प्रतिरूपी नियमों के स्थान में अन्य सूत्र प्राप्त किये जा सकते हैं जो उस समय तक केवल प्रेक्षणों के ही द्वारा प्राप्त हुए थे, जो स्पैक्ट्रम-विज्ञान में रिडबर्ग और रिट्ज़ के सूत्रों के नाम से विख्यात हैं और जिनके द्वारा आवृत्ति-अनुक्रम में प्रकाशीय रेखाओं का वितरण बामर-नियमानुरूपी सूत्रों की अपेक्षा अधिक यथार्थतापूर्वक निर्णीत हो जाता है।

किन्तु स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की सूक्ष्म-रचना (फाइन स्ट्रक्चर) का सिद्धान्त ही सामरफ़ेल्ड की सबसे बड़ी सफलता थी। जब उच्च विभेदन शक्ति[2] वाले स्पैक्ट्रम-दर्शी के द्वारा हाइड्रोजन के स्पैक्ट्रम का सूक्ष्मता से अध्ययन किया गया था तब यह मालूम हो गया था कि हाइड्रोजन स्पैक्ट्रम की कुछ रेखाएँ सरल अथवा एकक[3] नहीं होतीं किन्तु वास्तव में वे लगभग बराबर आवृत्तियोंवाली अनेक रेखाओं द्वारा संघटित होती हैं। बोह्र के सिद्धान्त से प्राप्त बामर-प्रतिरूपी सूत्र में इस सूक्ष्म-रचना पर विचार नहीं किया गया था। सामरफ़ेल्ड के मन में यह विचार आया कि पारमाणविक इलैक्ट्रानों के लिए प्रतिष्ठित न्यूटनीय यांत्रिकी के स्थान में आइन्स्टाइन की आपेक्षिकीय यांत्रिकी का उपयोग करने से शायद स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की जटिलता का स्पष्टीकरण संभव हो जाय। वास्तव में यदि बोह्र के सिद्धान्त के सूत्रों पर हम पुनः विचार करें तो हमें मालूम हो जायगा कि परमाणु की ग्रहीय व्यवस्था के अनुसार उन इलैक्ट्रानों के वेग इतने अधिक होते हैं कि आपेक्षिकीय संशोधनों का उपयोग अवश्य ही वांछनीय है। क्वांटमीकरण की विधि और आइन्स्टाइन की यांत्रिकी के द्वारा जब परिकलन फिर से किया गया तो सामरफ़ेल्ड ने देखा कि पूर्ववर्ती सिद्धान्त द्वारा निर्दिष्ट ऊर्जा के कुछ क्वांटमित मान विदलित[4] हो गये अर्थात् बोह्र द्वारा निर्दिष्ट हाइड्रोजन के कुछ स्पैक्ट्रमीय पद लगभग बराबर मानों के कई स्पैक्ट्रम पदों में विभक्त हो गये। स्पष्टतः ही यह बात सूक्ष्म-रचना की घटना की व्याख्या के लिए काफ़ी थी और बामर-श्रेणी की द्विक रेखाओं[5] के संघटकों की आवृत्तियों के अन्तर के जो मान सामरफ़ेल्ड के परिकलन द्वारा प्राप्त हुए थे उनका प्रायोगिक मानों से बहुत अच्छा सांगत्य पाया गया।

इस सफलता से उत्साहित होकर सामरफ़ेल्ड ने एक्स-किरण स्पैक्ट्रमों में प्रेक्षित सूक्ष्म-रचना की व्याख्या भी इसी उपाय से प्राप्त करने का प्रयत्न किया। एक्स-किरण-स्पैक्ट्रमों की सूक्ष्म-रचनाएँ प्रकाशीय स्पैक्ट्रमों की सूक्ष्म-रचनाओं की अपेक्षा बहुत

1. Overlapping 2. Resolving power 3. Singlet 4. Split. 5. Doublets

अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। वस्तुतः एक्स-किरण स्पैक्ट्रमों में तो ऐसी द्विक रेखाएँ पायी जाती हैं जिनके संघटकों का विभेदन बहुत आसान होता है और यह आसानी से देखा जा सकता है कि उनकी आवृत्तियों के अन्तर का मान तत्त्वों के पूरे अनुक्रम में किस प्रकार बदलता है। कुछ द्विक रेखाएँ जो नियमित द्विक[1] कहलाती हैं ऐसी होती हैं जिनमें आवृत्तियों का अन्तर तत्त्व के परमाणु-क्रमांक Z के अनुसार शीघ्रता से बदलता है—लगभग परमाणु-क्रमांक के चतुर्थघात के अनुपात में। आपेक्षिकीय यांत्रिकी और क्वांटमीकरण विधि के सम्मेलन से सामरफ़ेल्ड ने इन नियमित द्विकों के अस्तित्व की और उनके $Z^४$ के अनुसार होनेवाले परिवर्तन की व्याख्या करने में सफलता प्राप्त कर ली। विशेष कर L–श्रेणी के द्विक तो सामरफ़ेल्ड के सूत्र से बहुत ही अच्छी तरह निरूपित हो जाते हैं।

सामरफ़ेल्ड ने ये अत्यन्त सन्तोषजनक परिणाम १९१६ में प्रकाशित किये थे और तुरन्त ही ये क्वांटम-विधि तथा आपेक्षिकीय यांत्रिकी की अति महान् और निश्चित सफलता के प्रतीक बन गये। इनसे जो उत्साह उत्पन्न हुआ वह भी उचित ही था। किन्तु और भी अधिक सूक्ष्म विवेचन के द्वारा यह प्रकट होने में भी देर नहीं लगी कि अभी इस चित्र में कई अस्पष्ट भाग बाकी रह गये थे। पहली बात तो यह थी कि बोह्र और सामरफ़ेल्ड ने जिन धारणाओं और विधियों का उपयोग किया था और जिनसे पुराने क्वांटम-सिद्धान्त का निर्माण हुआ था उनमें कुछ सैद्धान्तिक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गयीं जिनका ज़िकर हम इस परिच्छेद के अन्तिम अनुच्छेद में करेंगे। इन व्यापक कठिनाइयों के अतिरिक्त सामरफ़ेल्ड के इन परिणामों के विरुद्ध कुछ अधिक विशिष्ट रूप की आपत्तियाँ भी उठ खड़ी हुईं। एक तो प्रकाशीय तथा एक्स-किरणीय स्पैक्ट्रमों की वास्तविक सूक्ष्म-रचना सामरफ़ेल्ड के सिद्धान्त द्वारा निर्दिष्ट सूक्ष्म-रचना से अधिक जटिल होती है। यद्यपि सामरफ़ेल्ड द्वारा निर्णीत स्पैक्ट्रमपदीय योजना बोह्र की योजना से अधिक पूर्ण थी तथापि वह अब भी इतनी प्रशस्त नहीं थी जितनी स्पैक्ट्रम-मापकीय[2] प्रयोगों द्वारा प्रमाणित हो चुकी थी। यह कठिनाई अत्यन्त भयावह थी क्योंकि सामरफ़ेल्ड की क्वांटम-विधि में प्रयोग द्वारा आविष्कृत अतिरिक्त[3] स्पैक्ट्रम-पदों को निविष्ट करने के लिए कोई स्थान नहीं है। वह विधि समांगी और सर्वांगपूर्ण है और उसका परिवर्धन संभव नहीं मालूम देता। सामरफ़ेल्ड ने "आभ्यन्तरिक क्वांटम संख्या"[4] नामक एक और परिपूरक[5] क्वांटम संख्या को निविष्ट करके इन अतिरिक्त स्पैक्ट्रमीय

1. Regular doublets 2. Spectrometric 3. Supernumerary 4. Internal quantum number 5. Supplementary

पदों का वर्गीकरण करने में तो सफलता प्राप्त कर ली,किन्तु उस सिद्धान्त के मूल आधारों में इस नये और विजातीय अंश को सम्मिलित करने के औचित्य का किसी भी युक्ति के द्वारा समर्थन नहीं किया जा सकता। इस आभ्यन्तरिक क्वांटम-संख्या के अस्तित्व की युक्तिसंगतता सिद्ध करने के लिए तो इलैक्ट्रान के चुम्बकीय गुण के अत्यन्त आधुनिक आविष्कार की आवश्यकता थी।

इस प्रकार सामरफ़ेल्ड का सिद्धान्त स्पैक्ट्रमों की सूक्ष्म-रचना की सर्वांगपूर्ण व्याख्या करने के लिए बहुत संकीर्ण प्रमाणित हुआ। उससे इतनी आशा तो थी ही कि कम-से-कम बामर-श्रेणी की तथा एक्स-किरण-स्पैक्ट्रमों के द्विकों की तो वह पूर्ण यथार्थतापूर्वक प्रागुक्ति कर सकेगा। किन्तु दुर्भाग्यवश स्पैक्ट्रमों की संरचना के परवर्ती अधिक सूक्ष्म अध्ययनों से इस आशा का भी समर्थन नहीं हुआ। इस अध्ययन से यह तो स्पष्ट हो गया कि परमाणु की प्रत्येक स्थावर अवस्था कई क्वांटम संख्याओं के एक विशिष्ट समुदाय के द्वारा निर्दिष्ट होती है और इन क्वांटम संख्याओं का वितरण भी सुनिश्चित होता है। यदि इन बातों को ध्यान में रखा जाय तो निम्नलिखित अद्भुत परिणाम निकलता है। सामरफ़ेल्ड का सिद्धान्त यह तो सही-सही बता देता है कि बामर-श्रेणी में और एक्स-किरण स्पैक्ट्रमों में द्विक-रेखाओं का अस्तित्व होना चाहिए, किन्तु जिन स्थानों पर वह इनका अस्तित्व निर्दिष्ट करता है ठीक वहीं ये द्विक वास्तव में नहीं होते। यह मानना संभव नहीं है कि सामरफ़ेल्ड के सूत्रों की जो सफलता दिखाई देती है वह केवल आकस्मिक है। किन्तु ऐसा बोध होता है कि उनके सैद्धान्तिक निर्माण में कोई-न-कोई वस्तु अभी तक यथास्थान स्थापित नहीं हुई है। डिरैक[1] के सिद्धान्त ने तरंग-यांत्रिकी और इलैक्ट्रान के चुम्बकीय गुण के सम्मेलन के द्वारा सभी वस्तुओं को यथास्थान स्थापित कर दिया है और सामरफ़ेल्ड के मूल परिणामों को भी अक्षुण्ण बनाये रखा है। इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि इस सुविख्यात भौतिकज्ञ की पथ-प्रदर्शक धारणाएँ तो सही थीं, किन्तु जिस समय उन्होंने अपने सिद्धान्त का निर्माण किया था उस समय न तो क्वांटमवाद और न हमारा इलैक्ट्रान सम्बन्धी ज्ञान ही इतना उन्नत हो पाया था कि उनका यह निर्माण-कार्य पूर्णतः संतोषजनक हो जाता।

४. बोह्र का सिद्धान्त और परमाणुओं की संरचना[2]

बोह्र के सिद्धान्त की मूल धारणा यह है कि परमाणु के भीतर इलैक्ट्रान केवल क्वांटमित ऊर्जावाली कुछ स्थावर अवस्थाओं में ही रह सकते हैं। अतः उसमें ऊर्जा

1. Dirac 2. The Theory of Bohr and the Structure of Atoms

के कई स्तर[1] होते हैं और उन्हीं में विभिन्न इलैक्ट्रान वितरित रहते हैं। हमें यह मालूम है कि तत्त्वों की संख्या ९२ है और इनके परमाणुओं में इलैक्ट्रानों की संख्या क्रमशः १ से ९२ तक नियमित रूप से बढ़ती जाती है। इसलिए यदि हम उत्तरोत्तर बढ़ते हुए परमाणु-क्रमांक के क्रम से सब तत्त्वों पर विचार करें तो हम देखेंगे कि एक-एक नये इलैक्ट्रान के आगमन से परमाणुओं की आभ्यन्तरिक इलैक्ट्रानिक व्यवस्था उत्तरोत्तर अधिक जटिल होती जाती है। तत्त्वों की इस आभ्यन्तरिक संरचना का अनुसरण करने से सिद्धान्ततः उनके रासायनिक तथा स्पैक्ट्रमीय गुणों और चुम्बकीय गुणों का भी कारण हम जान सकेंगे। क्वांटम-सिद्धान्त के जन्म से पहले रूसी रसायनज्ञ मैण्डलीफ़[2] ने उस समय के समस्त ज्ञात तत्त्वों की ऐसी सूची बनायी थी जिसमें उत्तरोत्तर परमाणु भार बढ़ता जाता था। परमाणुओं का यह क्रम लगभग पूर्णतः वर्धमान परमाणु-क्रमांकों का ही क्रम था। तब मालूम हुआ कि इस प्रकार अनुक्रमित तत्त्वों के रासायनिक गुणों में एक प्रकार का आवर्तत्व[3] विद्यमान है। अर्थात् इस सूची में नियमित अन्तरालों पर ऐसे तत्त्वों के नाम थे जिनके रासायनिक गुणों में समानता थी। वस्तुतः यह आवर्तत्व बहुत सरल प्रकार का नहीं है। मैण्डलीफ़ की सारणी के अन्त की अपेक्षा प्रारम्भ में ये आवर्तत्व के अन्तराल छोटे होते हैं और कहीं-कहीं ऐसी गड़बड़ भी दिखाई देती है जिससे नियमितता बिगड़ जाती है। फिर भी आवर्तत्व का अस्तित्व निर्विवाद है और उत्तम परमाणु-सिद्धान्त से इसका कारण स्पष्ट हो जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए बोह्र के सिद्धान्त ने जिस नियम का सिद्धान्ततः प्रतिपादन किया उसके गूढ़ अर्थ को हम आगे चलकर अधिक अच्छी तरह समझ सकेंगे। इस नियम में यह मान लिया गया कि प्रत्येक क्वांटमित स्तर में एक निश्चित महत्तम संख्या से अधिक इलैक्ट्रान नहीं रह सकते। दूसरे शब्दों में ये अन्तःपरमाणुक ऊर्जास्तर इलैक्ट्रानों से संतृप्त[4] हो जाते हैं। क्वांटमित संरचनाओं का यह गुण सचमुच ही बिलकुल नया तथा अप्रत्याशित था और ऐसे चुपके से स्वीकार कर लिया गया था कि किसी को उसके महत्त्व का पता भी न लगने पाया।

स्तरों की संतृप्ति की परिकल्पना को स्वीकार कर लेने पर और भौतिक विज्ञान के जिस नियम के अनुसार किसी भी निकाय की स्थायी अवस्था में ऊर्जा का मूल्य लघुतम होता है उसकी सहायता से मैण्डलीफ़ की सारणी में विद्यमान आवर्तत्व का रहस्य समझना आसान है। यदि स्तरों में संतृप्ति का गुण न होता तो साधारण स्थायी

1. Level 2. Mendeleef 3. Periodicity 4. Saturated

अवस्था में समस्त तत्त्वों के सभी इलैक्ट्रान न्यूनतम ऊर्जा के स्तर में ही अवस्थित होते। किन्तु स्तरों के संतृप्त हो जाने के कारण ऐसा नहीं होता। जब हम एक तत्त्व से आगे बढ़कर परवर्ती तत्त्व पर पहुँचते हैं तो सामान्य परमाणु की रचना में जो नया इलैक्ट्रान सम्मिलित होता है वह असंतृप्त स्तरों में से सबसे कम ऊर्जावाले स्तर में स्थान ग्रहण करता है। इसी बात को बहुधा यों कहते हैं कि जिस न्यूनतम ऊर्जावाले स्तर में उसे जगह खाली मिलती है वहीं वह जा बैठता है। जब किसी तत्त्व में निम्नतम ऊर्जा का स्तर इलैक्ट्रानों से संतृप्त हो जाता है तो परवर्ती तत्त्व के अतिरिक्त इलैक्ट्रान को वर्धमान ऊर्जाओं के क्रम में उस संतृप्त स्तर से अगले स्तर में जगह मिलती है। अतः यदि मैण्डलीफ़ सारणी के क्रम से परमाणुओं की संरचना के विकास का अनुसरण करें तो हम देखेंगे कि परमाणु के विविध निम्न ऊर्जा-स्तर उत्तरोत्तर संतृप्त होते जाते हैं। किन्तु यहीं यह महत्त्वपूर्ण बात भी कह देना उचित है कि सूक्ष्म-रचना के अस्तित्व से यह भी प्रकट होता है कि परमाणु के आभ्यन्तरिक इलैक्ट्रान की ऊर्जा के क्वांटमित स्तर कई पुंजों[1] के रूप में वितरित होते हैं और प्रत्येक पुंज के स्तरों की ऊर्जाओं में बहुत ही कम अन्तर होता है। हम यों भी कह सकते हैं कि जिन स्तरों की ऊर्जा लगभग बराबर होती है और जो एक ही पुंज में अवस्थित होते हैं उनके द्वारा नाभिक पर एक संपुट[2] सा बन जाता है। और विभिन्न तत्त्वों के परमाणुओं के आनुक्रमिक निर्माण पर ध्यान देने से हम देखेंगे कि स्तरों के उत्तरोत्तर संतृप्त होते जाने के कारण विविध संपुट भी उत्तरोत्तर बनते जाते हैं। किसी एक संपुट के निर्माण के विभिन्न पदों के अनुरूप ही विभिन्न परमाणुओं के सुनिर्दिष्ट रासायनिक तथा स्पैक्ट्रमीय गुणों का अनुक्रम होता है। और जब एक संपुट का बनना समाप्त हो जाता है और दूसरा संपुट बनना प्रारम्भ होता है तब फिर लगभग वैसे ही पदों की पुनरावृत्ति होती है। इससे तत्त्वों की सूची में परमाणुओं के गुणों के प्रेक्षित आवर्तत्व की सर्वथा स्वाभाविक व्याख्या हो जाती है। मैण्डलीफ़-सारणी के आवर्तत्व के अन्तरालों की लम्बाइयों में जो अन्तर है उसका भी स्पष्ट कारण यही है कि भिन्न-भिन्न संपुटों में स्तरों की संख्या बराबर नहीं होती और उन्हें संतृप्त करने के लिए आवश्यक इलैक्ट्रानों की संख्याएँ भी भिन्न-भिन्न होती हैं। यहाँ हम इन्हीं संक्षिप्त संकेतों को बनाकर संतोष करेंगे। तत्त्वों के गुणों में उत्तरोत्तर जो परिवर्तन होता है वह उनकी इलैक्ट्रानिक संरचना की क्रमशः बढ़ती हुई जटिलता का परिणाम है। इस व्याख्या का प्रतिपादन सबसे पहले कासैल[3] ने किया था। बाद में

1. Groups 2. Shell. 3. Kossel

बोह्र, स्टोनर[1] और मेनस्मिथ[2] के प्रयत्नों से विकसित होकर इसकी गहराई और भी बढ़ गयी और अब यह व्याख्या बहुत संतोषजनक समझी जाती है।

संपुटों और स्तरों में इलैक्ट्रानों के वितरण में और एक्स-किरण स्पैक्ट्रमों की संरचना में भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। बोह्र के सिद्धान्त के अनुसार एक्स-किरणों की उत्पत्ति का वास्तविक कारण यह ह कि यदि किसी बाह्य क्रिया के कारण परमाणु के किसी भीतरवाले संपुट में से एक इलैक्ट्रान खींच कर बाहर निकाल दिया जाय तो उस संपुट में एक स्थान रिक्त हो जाता है और तब किसी बहिर्वर्ती संपुट का कोई इलैक्ट्रान आकर उस स्थान को ग्रहण कर सकता है। इस संक्रमण में उसकी ऊर्जा कुछ घट जाती ह और इससे बोह्र की मूल धारणाओं के अनुसार विकिरण का एक क्वांटम उत्सर्जित हो जाता है। इस प्रकार उत्सर्जित विकिरण से ही एक्स-किरण स्पैक्ट्रम की रेखाओं की सृष्टि होती है। अतः अधिक गहराई में गये बिना ही यह समझ में आ सकता है कि एक्स-किरण क्षेत्र की स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के अध्ययन और वर्गीकरण के द्वारा परमाणुओं की अन्तरंग संरचना तथा स्तरों की संतृप्ति के सम्बन्ध में हमारी धारणाएँ अधिक परिष्कृत हो गयी हैं। अब हम कह सकते हैं कि स्तरों की संतृप्ति की घटना, जिसके महत्त्व पर हमने इतना ज़ोर दिया है, तत्त्वों की सारणी में एक्स-किरण स्पैक्ट्रमों की उत्तरोत्तरवर्ती प्रगति के द्वारा निर्विवादतः प्रमाणित हो गयी है।

परमाणुओं में क्वांटमित स्तरों के अस्तित्व तथा विविध परमाणुओं की संरचना के व्यवस्थात्मक चित्रों का प्रबल समर्थन संघट्ट-संभूत आयनीकरण[3] के प्रयोगों के द्वारा भी हो गया है। परमाणु में इलैक्ट्रान जितने ही अधिक नीचे स्तर में अवस्थित होगा उतनी ही अधिक ऊर्जा उसे परमाणु से विच्छिन्न करने में आवश्यक होगी। कल्पना कीजिए कि गस के परमाणुओं पर हम किसी निश्चित ऊर्जावाले कणों की बौछार करते हैं। जब इन कणों की टक्कर गैस के परमाणुओं से होगी तब उन परमाणुओं के भीतर से वे इलैक्ट्रान तो पृथक् होकर बाहर निकल जायेंगे जिनकी विच्छेदन-ऊर्जा[4] आपतित कणों की ऊर्जा से कम होगी। यदि इन आपतित कणों की ऊर्जा को क्रमशः बढ़ाया जाय तो हम देखेंगे कि जब-जब यह ऊर्जा आहत परमाणु के किसी स्तर में से इलैक्ट्रान को विच्छिन्न करने के लिए आवश्यक ऊर्जा से अधिक हो जायगी तब-तब एक नये प्रकार का विकिरण प्रकट होने लगेगा। इन नवीन प्रकार के विकिरणों की उत्तरोत्तर उत्पत्ति के प्रेक्षण से हमें उस गैस के परमाणुओं की स्तरीय व्यवस्था का पूरा

1. Stoner 2. Main Smith 3. Ionisation by collision 4. Energy of dissociation

ज्ञान (कम-से-कम सिद्धान्ततः) प्राप्त हो सकेगा। ऐसे प्रयोगों का प्रारम्भ फ़्रैन्क[1] और हर्ट्ज़[2] ने किया था, और उनसे न केवल एक्स-किरण-स्पैक्ट्रमों द्वारा निर्दिष्ट क्वांट-मित स्तरों का ही पूर्ण समर्थन हुआ है, किन्तु विभिन्न परमाणुओं में विभिन्न स्तरों के प्रत्याशित वितरण की भी पुष्टि हो गयी है।

५. बोह्र के सिद्धान्त की आलोचना

इस परिच्छेद में हमने जो कुछ लिखा है वह बोह्र के परमाणु-सिद्धान्त के महत्त्व को प्रकट करने के लिए पर्याप्त है। इस सिद्धान्त का जन्म अर्वाचीन भौतिक विज्ञान के इतिहास में बहुत महत्त्वपूर्ण कदम था। इसके द्वारा स्पैक्ट्रम-विज्ञान के अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र में ऐक्य स्थापित हो गया और उसमें काम करनेवाले नियमों का स्वरूप भी समझ में आने लगा। और उसके बाद तो क्वांटमीकरण के सुशृंखलित सिद्धान्त के व्यापक रूप में (जिसे अब हम पुराना क्वांटम-सिद्धान्त कहते हैं) उसे अनेक परमाणवीय घटनाओं की व्याख्याओं में और प्रागुक्ति में अच्छी सफलता प्राप्त हो चुकी है।

फिर भी बोह्र की धारणाओं पर आश्रित प्रशंसनीय सिद्धान्त-समुच्चय आलोचना से मुक्त नहीं हो सका। हमारा संकेत केवल उन थोड़ी-सी असफलताओं की ओर ही नहीं है जिनका उसे कहीं-कहीं सामना करना पड़ा था; यथा, सामरफ़ेल्ड के सूक्ष्म-रचना-सूत्रों में और स्पैक्ट्रमीय तथ्यों में सांगत्य स्थापन करने में उपस्थित कठिनाइयाँ जिनका जिक्र पहले किया जा चुका है अथवा वह प्रयोग-विरुद्ध सैद्धान्तिक मान जो अनाविष्ट[3] हीलियम परमाणु के आयनीकरण-विभव[4] के लिए पुराने क्वान्टम-सिद्धान्त की विधि से बड़े लम्बे परिकलन के द्वारा क्रामर्स[5] ने प्राप्त किया था। ये असफलताएँ तो उस सिद्धान्त के भविष्य के लिए अशुभ थीं ही, किन्तु बोह्र की मूल-धारणाओं के विरुद्ध भी कई अधिक व्यापक आपत्तियाँ उठ खड़ी हुईं, जिनसे ऐसा जान पड़ता था कि वे धारणाएँ सुसंगत और सर्वांग-पूर्ण नहीं समझी जा सकतीं और फलतः वे यथार्थतः संतोषजनक भी नहीं हो सकतीं। अब इन आपत्तियों के विषय में भी कुछ शब्द कह देना उचित है।

सबसे प्रथम तो बोह्र का सिद्धान्त क्वांटम-संक्रमणों में उत्सर्जित विकिरण के स्वरूप को पूर्ण यथार्थतापूर्वक निर्णीत करने के लिए बिलकुल अक्षम सिद्ध हुआ। इसमें सन्देह नहीं कि उस विकिरण की आवृत्ति के सैद्धान्तिक परिकलन का बिलकुल सही नियम प्राप्त हो गया था, किन्तु एक-वर्ण विकिरण के पूरे विवरण के लिए यह भी आवश्यक है

1. Frank 2. Hertz 3. Neutral 4. Ionisation potential 5. Kramers

कि हमें उसकी तीव्रता[1] और उसकी ध्रुवण-अवस्था[2] का भी ज्ञान हो। वोह्र स्वयं अपने सिद्धान्त के इस दोष से परिचित थे और इस दोष को दूर करने के लिए सबसे पहले उन्होंने ही अपने आनुरूप्य-नियम[3] का १९१६ में प्रतिपादन किया था। अगले परिच्छेद में इस महत्त्वपूर्ण विषय का ही विवेचन किया गया है। इसलिए यहाँ और अधिक कहना उचित नहीं है। किन्तु उत्सर्जित विकिरण सम्बन्धी ज्ञान की पूर्णता के अभाव के अतिरिक्त वोह्र के सिद्धान्त में और भी दूसरी कमजोरियाँ विद्यमान थीं। खास तौर से तो यह कि उसके मूल में एक ओर तो प्रतिष्ठित यांत्रिकी की धारणाओं और सूत्रों का तथा दूसरी ओर क्वांटम-विधियों का विचित्र सम्मिश्रण था। उसका प्रारम्भ तो यह मानकर किया जाता था कि अन्तःपरमाणुक इलैक्ट्रान चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी के द्रव्य-विन्दु के तुल्य है और वह कूलम्वीय बलों के प्रभाव से अपनी कक्षा पर नियमित रूप से गमन करता है जिससे परमाणु का प्रतिरूप एक असाधारणतः सूक्ष्म आकारवाले छोटे-से ग्रहीय निकाय के समान बन जाता है। किन्तु बाद में इस चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी से पूर्णतः संगत चित्रण में अनियमित रूप से बलात् क्वांटमीकरण के अनुबन्ध घुसा दिये जाते हैं और यह कह दिया जाता है कि प्रतिष्ठित यांत्रिकी द्वारा परिकलित अनन्त कक्षाओं में से केवल वे ही स्थायी और वास्तव में संभव होती हैं जो क्वांटमीकरण की शर्तों को पूरी करती हैं। फलतः परमाणु की अवस्था का परिवर्तन केवल ऐसे ही आकस्मिक संक्रमणों के द्वारा हो सकता है जिनमें ऊर्जा की हानि होती है और विकिरण का उत्सर्जन होता है। आकाश और काल के चिरप्रतिष्ठित संस्थान में इन आकस्मिक संक्रमणों को चित्रित करने का कोई भी संभव मार्ग दिखाई नहीं पड़ता। दो संक्रमणों के मध्यवर्ती काल में परमाणु की अवस्था स्थायी रहती है (वोह्र की स्थावर अवस्था) और ऐसा मालूम पड़ता है कि उस अवस्था में परमाणु का बाह्य-जगत् से किसी भी प्रकार का सम्पर्क नहीं रहता क्योंकि वह किसी भी विद्युत्-चुम्बकीय विकिरण का उत्सर्जन न करके विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त के सुनिर्णीत नियमों की पूर्ण अवहेलना करता है और फिर सहसा वह इस स्थावर अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुँच जाता है। और इस संक्रमण का न तो कोई विवरण दिया जा सकता है और न आकाश और काल में उसका निरूपण ही संभव है। यद्यपि हमने प्रारम्भ चिर-प्रतिष्ठित धारणाओं से किया था, किन्तु अन्त में हम उन धारणाओं से बहुत ही दूर जा पहुँचे हैं और जो सिद्धान्त अपनी प्रारम्भिक धारणाओं का अन्त में बिलकुल निषेध

1. Intensity 2. State of Polarisation 3. Principle of Correspondence

कर दे उसे सांगत्यपूर्ण कहना तो स्पष्टतः ही कठिन है। इस सिद्धान्त के प्रारम्भ में अवश्य ही गति-विज्ञानीय चित्रण का सहारा लिया गया था, विन्दु-तुल्य इलैक्ट्रान पूर्णतः परिकल्य आकृति की कक्षाओं में परिभ्रमण करते हुए माने गये थे और इन कक्षाओं के प्रत्येक विन्दु पर इलैक्ट्रान में सुनिर्णीत वेग और ऊर्जा की कल्पना की गयी थी। किन्तु इन सबका केवल इतना ही उपयोग था कि इनके द्वारा स्थावर अवस्थाओं की ऊर्जा का तथा स्पैक्ट्रमीय ऊर्जा के पदों का परिकलन संभव हो गया और सौभाग्यवश केवल इन्हीं परिणामों का स्पैक्ट्रमीय परिमापनों और संघट्ट-संभूत आयनीकरण के प्रयोगों के द्वारा सत्यापन संभव है। क्या इससे यह समझने का लोभ नहीं होता कि यह सब अति यथार्थ प्रतीत होनेवाला प्रतिरूप कृत्रिम है, इलैक्ट्रानों की कक्षाओं की आकृति तथा उनमें इलैक्ट्रानों के स्थान और वेग का किसी भी भौतिक वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं है और इस समस्त क्वांटमित खगोलीय यांत्रिकी द्वारा प्राप्त केवल स्थावर अवस्थाओं की ऊर्जाओं के मानों का ही वास्तव में कुछ भौतिक अर्थ है ?

जैसा बहुधा होता है परमाणु के क्वांटम-सिद्धांत के प्रतिभाशाली आविष्कारक ने ही सबसे पहले उसकी कमजोरियों को समझा था और उनके महत्त्व को स्वीकार किया था। उन्होंने ही सबसे पहले ग्रहीय प्रतिरूप की अवास्तविकता पर, स्थावर अवस्थाओं की धारणाओं के सर्वथा नये स्वरूप पर, इन धारणाओं को आकाश और काल के साधारण संस्थान में व्यवस्थित करने की असंभवता पर, तथा मूलतः नये मार्ग खोजने की आवश्यकता पर जोर दिया था। अपने आनुरूप्य-नियम के द्वारा उन्होंने ही एक अनुसरण योग्य दिशा का निर्देशन भी किया था और इन्हीं धारणाओं का आश्रय लेकर कई वर्षों के बाद उन्हीं के शिष्य वर्नर हाइज़नबर्ग[1] को नवीन क्वांटम-सिद्धांत के एक विशिष्ट रूप के अर्थात् क्वांटम-यांत्रिकी के निर्माण में सफलता प्राप्त हुई थी। इस आश्चर्यजनक और अत्यन्त मौलिक प्रयास का वर्णन हम आगे चलकर करेंगे।

1. Werner Heigenberg

सातवाँ परिच्छेद

आनुरूप्य-नियम[1]

१ क्वांटम-सिद्धान्त को विकिरण-सिद्धान्त में सम्मिलित करने में कठिनाई

विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत ने इलैक्ट्रान-परिकल्पना के द्वारा पूर्णता प्राप्त करके गतिशील वैद्युत आवेशों के द्वारा विकिरण के उत्सर्जन की प्रक्रिया का पूर्णतः स्पष्ट और विकल्पहीन चित्र प्रस्तुत कर दिया था। यदि वैद्युत आवेशों के किसी निकाय की व्यवस्था और गति ज्ञात हो तो इस सिद्धांत के द्वारा उत्सर्जित विकिरण की आवृत्तियाँ, तीव्रताएँ और ध्रुवण का परिकलन अत्यन्त यथार्थतापूर्वक हो सकता है। इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए उसने निम्नलिखित मार्ग का अनुसरण किया था। पहले तो समकोणिक अक्ष-तंत्र[2] में उस दिष्ट राशि[3] के संघटकों[4] का परिकलन किया गया जिसका नाम वैद्युत घूर्ण[5] है और जो प्रति क्षण उस निकाय के समस्त आवेशों के स्थानों के द्वारा निर्णीत होती है। ये संघटक समय के फलन[6] होते हैं जो फ़ूरियर[7] के श्रेणी-प्रसार[8] अथवा अनुकल-प्रसार[9] के गणितीय सिद्धांत के व्यापक प्रमेयों[10] के अनुसार सरल-आवर्त पदों[11] के परिमित अथवा अनन्त अनुक्रम[12] में प्रसारित किये जा सकते हैं। विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत के अनुसार उस निकाय में से उन सब आवृत्तियों के विकिरण उत्सर्जित होंगे जो उस फ़ूरियर-प्रसार में विद्यमान होंगी। इसके अतिरिक्त यदि किसी विशेष आवृत्तिवाले विकिरण का वैद्युत दिष्ट[13] समकोणिक अक्ष-तंत्र के किसी अक्ष से समान्तर हो, तो उस निकाय के वैद्युत घूर्ण के उसी अक्ष से समान्तर संघटक के फ़ूरियर-प्रसार[14] में उस आवृत्ति का जो सरल आवर्त पद होगा उसके गुणक

1. The Correspondence Principle 2. System of rectangular axes 3. Vectorial quantity 4. Components 5. Electric moment 6. Function 7. Fourier 8. Development in series 9. Development in integrals 10. Theorems 11. Harmonic terms 12. Sequence. 13. Electric Vector 14. Fourier expansion

के द्वारा उस विकिरण की तीव्रता का परिकलन तुरन्त हो सकता है। ये नियम उस निकाय द्वारा उत्सर्जित विभिन्न विकिरणों की आवृत्ति, तीव्रता तथा ध्रुवण को पूर्णतः निर्णीत करने के लिए पर्याप्त हैं।

अतः यदि विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत लोरैन्ट्ज प्रदत्त रूप में ही विद्युत् की मूल कणिकाओं के लिए भी संप्रयोज्य हो तो उसकी सहायता से रदरफ़ोर्ड-बोह्र प्रतिरूपी परमाणु द्वारा उत्सर्जित विकिरण का अविकल्पी परिकलन भी संभव होना चाहिए। हम पहले ही देख चुके हैं कि इस प्रकार प्रस्तुत प्रागुक्तियों में कितनी भीषण अयथार्थता होती। यदि किसी परमाणु में से विकिरण के रूप में ऊर्जा अनवरततः निकलती जाय तो निश्चय ही उसके सब इलैक्ट्रान शीघ्र ही नाभिक में गिरकर नष्ट हो जायेंगे और उत्सर्जित विकिरण की आवृत्ति भी बराबर संतत रूप से परिवर्तित होती रहेगी। ऐसा परमाणु अस्थायी होगा और सुनिर्णीत आवृत्तियों की स्पैक्ट्रमीय रेखाओं का अस्तित्व ही संभव नहीं हो सकेगा। ये परिणाम सर्वथा असंगत हैं। इस अनिवार्य आपत्ति से बचने के लिए हम देख चुके हैं कि बोह्र ने यह परिकल्पना बनायी थी कि स्थावर अवस्था में परमाणु विकिरण का उत्सर्जन नहीं करता। किन्तु इसका अर्थ तो यह स्वीकार करना है कि स्थावर अवस्था में इलैक्ट्रानों की कक्षीय गति के लिए विकिरण के विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत का उपयोग करना संभव ही नहीं है।

इस प्रकार विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत से समस्त सम्बन्धों का विच्छेद हो जाने पर क्वांटम-सिद्धांत के पास कोई भी ऐसा साधन नहीं रह गया जिससे वह स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के रूप में उत्सर्जित विकिरण के लक्षणों की प्रागुक्ति कर सके। किन्तु हम बता चुके हैं कि जहाँ तक स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की आवृत्तियों का सम्बन्ध था, बोह्र ने इस समस्या की मीमांसा करने के लिए यह परिकल्पना बनायी थी कि स्थावर अवस्थाओं के बीच में जो संक्रमण होते हैं उनमें विकिरण का केवल एक ही क्वांटम उत्सर्जित होता है। किन्तु इस आवृत्ति-नियम के अनुसार उत्सर्जित विकिरण बहुत ही अपूर्ण रूप में निर्णीत होता है क्योंकि वह हमें तीव्रता तथा ध्रुवण के विषय में कुछ भी नहीं बताता। १९१६ में एक अत्यन्त मौलिक, किन्तु थोड़ी विकट विधि से उन्होंने इस कमी को दूर करने में कम-से-कम आंशिक सफलता प्राप्त कर ली। इस विधि का सारांश यह था कि परमाणवीय क्षेत्र में चिर-प्रतिष्ठित विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त के असफल सिद्ध होने पर भी क्वांटम-घटनाओं में और विद्युत्-चुम्बकत्व के सूत्रों में ऐसा आनुरूप्य स्थापित करने का प्रयत्न किया जाय जिससे हम यह समझ सकें कि विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धांत के द्वारा स्थूल-मापदंडीय घटनाओं का अच्छा निरूपण क्यों हो जाता है। फलतः

बोह्र एक बहुत ही विचित्र आनुरूप्य नियम के व्यवस्थापन में सफल हो गये। इस नियम ने क्वांटम-सिद्धान्त के विकास में बहुत बड़ा और अत्यन्त उपयोगी काम किया है।

आनुरूप्य नियम का अध्ययन प्रारम्भ करने से पहले यह आवश्यक है कि जिस कठिन समस्या की मीमांसा करने का प्रयत्न बोह्र कर रहे थे उसको भली प्रकार सीमित कर दिया जाय। यह भी स्पष्टतापूर्वक समझ लेना आवश्यक है कि उत्सर्जन की घटना के जो निरूपण एक ओर तो चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त ने और दूसरी ओर क्वांटम-सिद्धान्त ने किये हैं उनमें कितनी अधिक विभिन्नता है। चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त में गतिशील पारमाणविक इलैक्ट्रान विकिरणों की एक पूरी संतत श्रेणी का उत्सर्जन करता है। अतः इन सब विकिरणों का उत्सर्जन संतत[1] भी होता है और यौगपदिक[2] भी। इसके विपरीत क्वांटम-सिद्धान्त में जब तक पारमाणविक इलैक्ट्रान किसी स्थावर अवस्था में रहता है तब तक वह उत्सर्जन नहीं करता और जब वह एक अवस्था से दूसरी अवस्था में संक्रमण करता है तब वह एक-वर्ण[3] विकिरण के केवल एक ही क्वांटम का उत्सर्जन करता है। इसलिए एक ही प्रकार के परमाणुओं के समूह में से जो विभिन्न एक-वर्ण विकिरण उत्सर्जित होते हैं (यथा किसी गैसीय तत्त्व में से उत्सर्जित स्पैक्ट्रमीय रेखाएँ) वे विभिन्न परमाणुओं के संक्रमणों से उत्पन्न होते हैं। दूसरे शब्दों में क्वांटम-सिद्धांत के अनुसार किसी तत्त्व की स्पैक्ट्रमीय रेखाओं का उत्सर्जन असंतत होता है और अलग-अलग असंलग्न क्रियाओं के कारण होता है। निश्चय ही चिरप्रतिष्ठित धारणाओं और क्वांटम-सिद्धांत की धारणाओं से अधिक विरोधी धारणाओं की कल्पना करना कठिन है और प्रारम्भ में ही यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि क्या इन दोनों में सम्पर्क स्थापित करने के लिए कोई पुल बनाना संभव है।

जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के उत्सर्जन के चिरप्रतिष्ठित चित्र के साथ क्वांटम-धारणाओं द्वारा प्रस्तुत सर्वथा भिन्न प्रकार के चित्र का आनुरूप्य किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है तब तुरन्त यह मालूम हो जाता है कि यदि यह आनुरूप्य कभी संभव होगा तो उसका स्वरूप केवल सांख्यिकीय ही हो सकता है। वस्तुतः यह तो प्रकट ही है कि चिरप्रतिष्ठित चित्र के साथ आनुरूप्य स्थापित करने के लिए समस्त स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के उत्सर्जन का एक साथ ही विचार करना पड़ेगा। किन्तु क्वांटमीय दृष्टि-कोण से एक-वर्ण विकिरण के प्रत्येक क्वांटम का उत्सर्जन अकेले एक ही परमाणु की क्रिया होने के कारण यह तभी संभव हो सकता है जब हम

1. Continuous 2. Simaltaneous 3. Monochromatic

ऐसे परमाणु-समुदाय का विचार करें जिसमें एक-समान प्रकृति के परमाणुओं की बहुत बड़ी संख्या विद्यमान हो और जिसमें अनेक प्रकार के पृथक्-पृथक् संक्रमण लगातार होने रहने के कारण उस तत्त्व की विभिन्न स्पैक्ट्रमीय रेखाओं का उत्सर्जन होता हो। दूसरी ओर विभिन्न रेखाओं की तीव्रता की अपरित्याज्य धारणा भी क्वांटम-सिद्धांत में सांख्यिकीय विचारधारा का अनुसरण करके ही निविष्ट हो सकती है। जब किसी क्वांटमित परमाणु का संक्रमण होता है तो वह केवल एक ही क्वांटम अथवा एक-वर्ण विकिरण की केवल एक ही इकाई का उत्सर्जन करता है। उत्सर्जन की ऐसी एकाकी[1] क्रिया में विकिरण की तीव्रता का प्रश्न ही नहीं उठ सकता। अतः तीव्रता निर्णीत करने के लिए भी फिर उसी तरह के बहुसंख्यक एक-से परमाणुओं के समुदाय का विचार करना आवश्यक होगा। ऐसे समुदाय में प्रति सेकंड होनेवाले संक्रमणों की संख्या बहुत अधिक होती है। और एक ही प्रकार के समस्त संक्रमणों का और उनके कारण उत्सर्जित एक ही आवृत्तिवाले विकिरण के क्वांटमों का विचार करके ही तीव्रता की यह सांख्यिकीय परिभाषा बनायी जा सकती है कि तीव्रता ऐसे क्वांटमों के मध्यमान आयतन-घनत्व[2] का नाम है। इसी प्रकार परिभाषित तीव्रता की ही तुलना चिर-प्रतिष्ठित सिद्धांत द्वारा परिकलित तीव्रता के साथ हो सकती है।

निस्सन्देह अब पाठकों की समझ में आने लगा होगा कि वांछित आनुरूप्य की स्थापना किस प्रकार संभव हो सकती है। एक तरफ तो ऐसे काल्पनिक परमाणुओं का समुदाय लीजिए जो चिर-प्रतिष्ठित विद्युत्-चुम्बकीय नियमों का पालन करते हों और दूसरी तरफ़ वास्तविक क्वांटमित परमाणुओं का समुदाय लीजिए। इन दोनों समुदायों के द्वारा उत्सर्जित विकिरणों की आवृत्तियों, तीव्रताओं और ध्रुवणों में हमें ऐसा सम्बन्ध स्थापित करना है कि पहले समुदाय के चिर-प्रतिष्ठित विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त की सुपरिचित विधि द्वारा परिकलित स्पैक्ट्रमीय उत्सर्जन दूसरे समुदाय के अर्थात् वास्तविक उत्सर्जनों के विषय में कुछ सूचना दे सकें। ऐसे सम्बन्ध का पूर्वतः[3] पता लगा लेना निश्चय ही आसान नहीं है। किन्तु बोह्र के विलक्षण रूप से प्रखर मस्तिष्क ने यह काम कर ही डाला और इस दुरूह समस्या की पूर्ण और निश्चित न सही, कम-से-कम ऐसी कार्यनिर्वाहक[4] मीमांसा तो कर ही ली जो अत्यन्त ही उपयोगी तथा गंभीर भौतिक तथ्य से पूर्ण प्रमाणित हुई है। अब उसकी रूप-रेखा बताने के लिए उपयुक्त समय आ गया है।

1. Individual 2. Volume-density 3. A priori 4. Provisional

२. बोह्र का आनुरूप्य-नियम

मान लीजिए कि हम चिर-प्रतिष्ठित नियमों का पालन करनेवाले बहुसंख्यक काल्पनिक परमाणुओं के समुदाय की तुलना उतनी ही संख्यावाले वास्तविक क्वांटमित परमाणुओं के समुदाय से करना चाहते हैं। यदि हमें पहले समुदाय के परमाणुओं के अन्तर्गत इलैक्ट्रानों की गति का ज्ञान हो तो हमें उत्सर्जित विकिरण की आवृत्तियाँ, तीव्रताएँ और ध्रुवण भी परिकलन के द्वारा ज्ञात हो जायेंगे। इन्हीं के द्वारा हम वास्तविक परमाणुओं के विकिरण की आवृत्तियों, तीव्रताओं और ध्रुवणों की प्रागुक्ति करना चाहते हैं। यदि इन वास्तविक राशियों के सम्बन्ध में हमें कुछ भी मालूम न हो तो इस समस्या को सुलझाने का हमारे पास कोई मार्ग ही न रह जाता। किन्तु सौभाग्य से बोह्र के आवृत्ति-नियम की कृपा से हमें इन क्वांटमित परमाणुओं द्वारा उत्सर्जित आवृत्तियाँ मालूम हैं। इसलिए पहला काम तो यही है कि इन आवृत्तियों की उन आवृत्तियों से तुलना करें जो चिर-प्रतिष्ठित सिद्धान्त के अनुसार उन काल्पनिक परमाणुओं में से उत्सर्जित होनी चाहिए। यदि ऐसी तुलना की जाय तो मालूम होगा कि इन दो प्रकार की आवृत्तियों में कोई भी सरल सम्बन्ध विद्यमान नहीं है। अतः हमारे उद्देश्य की पूर्ति के मार्ग में प्रगति होने का कोई भी उपाय दिखाई नहीं देता। इसी स्थान पर बोह्र की प्रतिभा निश्चित रूप में प्रकट हुई। बोह्र यह जानते थे कि स्थूल-स्तरीय घटनाओं के क्षेत्र में विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त सदैव अत्यन्त सन्निकटता पूर्वक यथार्थ प्रमाणित होता है। और क्वांटम-दृष्टि-कोण से स्थूल-स्तरीय घटनाएँ ऐसी होती हैं जिनमें अधिक ऊँची क्वांटम-संख्याओं की आवश्यकता होती है। अतः इस बात की बहुत अधिक संभावना है कि बड़ी क्वांटम-संख्याओं के क्षेत्र में क्वांटम-सिद्धान्त के परिणामों में और चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त के परिणामों में अनन्त-स्पर्शी[1] सम्बन्ध हो। इसलिए इसी क्षेत्र में दोनों सिद्धान्तों का संगम हो सकता है। और हमें चिरप्रतिष्ठित तथा क्वांटमित दोनों ही प्रकार की आवृत्तियों की परिकलन-विधियाँ मालूम हैं। इसलिए सबसे पहले तो यही देखना चाहिए कि ऊँची क्वांटम-संख्यावाली स्थावर अवस्थाओं के लिए इन आवृत्तियों में कितना अच्छा मेल हो जाता है।

अब क्वांटमित परमाणु की ऊँची क्वांटम-संख्यावाली बाह्यतम इलैक्ट्रानिक कक्षा का विचार कीजिए और साथ ही काल्पनिक चिर-प्रतिष्ठित परमाणु में भी उसी कक्षा का विचार कीजिए। चिर-प्रतिष्ठित परमाणुओं में तो वह इलैक्ट्रान विभिन्न

1. Assymptotic.

आवृत्तियों का एक पूरा अनुक्रम लगातार उत्सर्जित करता रहता है और ये आवृत्तियाँ कुछ ऐसी मूल आवृत्तियों की प्रसंवादी[1] होती हैं जिनका निर्णय इलैक्ट्रान-गति के फ़ूरियर-विश्लेषण[2] के द्वारा हो सकता है। क्वांटमित परमाणु में इलैक्ट्रान स्थावर अवस्था में तो उत्सर्जन नहीं करता, किन्तु उसकी अवस्था के संक्रमण हो सकते हैं और इनके कारण उसमें से जो उत्सर्जन होता है उसकी आवृत्ति बोह्र के आवृत्ति-नियम के द्वारा निश्चित रूप से निर्णीत हो जाती है। इन दोनों प्रकार की आवृत्तियों पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त द्वारा परिकलित काल्पनिक परमाणु की प्रत्येक आवृत्ति के साथ क्वांटमित परमाणु के किसी विशेष संक्रमण का आनुरूप्य है जिसके कारण उस क्वांटमित परमाणु में से भी ठीक उसी आवृत्ति का उत्सर्जन होता है। अतः ऊँची क्वांटम-संख्याओं के क्षेत्र में चिर-प्रतिष्ठित प्रक्रिया से उत्सर्जित आवृत्तियों में तथा क्वांटमित इलैक्ट्रान की संक्रमण-संभाव्य आवृत्तियों में बहुत अच्छा संपात या मेल है। चिरप्रतिष्ठित धारणा के अनुसार तो प्रत्येक परमाणु ये समस्त आवृत्तियाँ एक ही साथ और अनवरत रूप से उत्सर्जित करता है, परन्तु क्वांटमित परमाणु में से एक बार में केवल एक ही आवृत्ति का उत्सर्जन हो सकता है। दोनों प्रकार के उत्सर्जनों की प्रक्रियाओं में इतना गहरा भेद होने पर भी अंतिम परिणाम में कुछ भी फ़र्क नहीं पड़ता और जिन दोनों प्रकार के परमाणु-समुदायों पर हम विचार कर रहे हैं उन दोनों में से (बड़ी क्वांटम-संख्याओं के क्षेत्र में) ठीक वही स्पैक्ट्रमीय रेखाएँ उत्सर्जित होती हैं।

इस प्रकार बड़ी क्वांटम-संख्याओं के क्षेत्र में चिर-प्रतिष्ठित और क्वांटम-सिद्धान्तों की आवृत्ति सम्बन्धी प्रागुक्तियों की एकता का सत्यापन हो जाने पर बोह्र को यह विश्वास हो गया कि इस क्षेत्र में तीव्रताओं और ध्रुवणों के सम्बन्ध में भी चिर-प्रतिष्ठित सिद्धान्त जो प्रागुक्तियाँ हमारे काल्पनिक परमाणु-समुदाय के लिए करता है वे वास्तविक परमाणु-समुदाय के लिए भी निश्चय ही सत्य निकलेंगी। वास्तविक क्वांटमित परमाणुओं में एक-एक स्पैक्ट्रमीय रेखा का उत्सर्जन क्वांटमित अवस्थाओं के एक-एक संक्रमण के द्वारा होता है और जैसा हम पहले बता चुके हैं किसी भी स्पैक्ट्रमीय रेखा की तीव्रता इस बात पर अवलम्बित होती है कि औसत रूप से प्रति सेकंड उस रेखा को उत्पन्न कर सकनेवाला संक्रमण उस परमाणु-समुदाय के कितने अंश में होता है अर्थात् प्रत्येक क्वांटमित परमाणु के लिए प्रति सेकंड होनेवाले अभीष्ट संक्रमणों की प्रायिकता[3] कितनी है। अतः यदि बोह्र के मतानुसार यह मान लिया जाय कि वास्तविक परमाणुओं

1. Harmonies 2. Fourier Analysis 3. Probability.

के समुदाय द्वारा उत्सर्जित किसी भी स्पैक्ट्रमीय रेखा की तीव्रता काल्पनिक परमाणु-समुदाय द्वारा उत्सर्जित उसी स्पैक्ट्रमीय रेखा की चिरप्रतिष्ठित विधि से परिकलित तीव्रता के बराबर होना चाहिए, तो विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त के सूत्रों की सहायता से ही हम उस क्वांटम-संक्रमण की प्रायिकता का मान प्राप्त कर सकेंगे। इस प्रकार कम-से-कम बड़ी क्वांटम-संख्याओं के क्षेत्र में तो स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की तीव्रता की प्रागुक्ति करने की समस्या हल हो जाती है। इस प्रागुक्ति की दृष्टि से बोह्र के मूल सिद्धान्त में कमी यही थी कि क्वांटम-संक्रमणों की प्रायिकता का मान मालूम करने की विधि ज्ञात नहीं थी। प्रत्येक क्वांटम-संक्रमण में और चिरप्रतिष्ठित नियमानुकूल विकिरण के किसी एक सरल-आवर्त संघटक में आनुरूप्य स्थापित करने के विचार के द्वारा उपर्युक्त अनन्तस्पर्शी दशा की सीमाओं में संक्रमण की प्रायिकताओं का मान प्राप्त करने का एक सरल और दृढ़ नियम मालूम हो गया। इसी प्रकार ध्रुवण की समस्या का भी पूरा हल प्राप्त करने के लिए केवल यही मान लेना बिलकुल स्वाभाविक और काफ़ी था कि जो स्पैक्ट्रमीय रेखाएँ वास्तव में उत्सर्जित होती हैं उनके ध्रुवण भी ठीक वैसे ही होंगे जैसे कि चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त द्वारा प्रागुक्त होते हैं।

क्वांटम-सिद्धान्त की कमियों को पूरा करने के लिए इन असंधेय[1] प्रतिरूपों के संयोजन की जो विलक्षण योजना बनायी गयी थी दुर्भाग्यवश उसका प्रत्येक अंश केवल बड़ी क्वांटम-संख्याओं के क्षेत्र में ही तथ्यपूर्ण माना जा सकता था। किन्तु परमाणु के सिद्धान्त की दृष्टि से व्यवहारतः यह क्षेत्र सबसे कम चित्ताकर्षक है क्योंकि उत्तेजन की कुछ खास असाधारण अवस्थाओं को छोड़कर परमाणवीय इलैक्ट्रान सदा छोटी क्वांटम-संख्याओं से सम्बद्ध स्थावर अवस्थाओं में ही अवस्थित होते हैं और साधारण स्पैक्ट्रमीय रेखाएँ ऐसी ही अवस्थाओं में होनेवाले संक्रमणों के द्वारा उत्सर्जित होती हैं। फलतः वास्तविक क्वांटमीय आवृत्तियों में और परमाणु की संक्रमण से पहले की अथवा बाद की अवस्थाओं के लिए चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त द्वारा प्रागुक्त आवृत्तियों में कोई भी सरल सम्बन्ध नहीं है। फिर भी बोह्र ने अत्यन्त साहसपूर्वक यह मान लिया कि बड़ी क्वांटम-संख्याओं के लिए जो आनुरूप्य स्थापित हो गया है उसे छोटी क्वांटम संख्याओं के लिए भी बहिर्वेशित[2] करने से यह संभव हो जाना चाहिए कि चिरप्रतिष्ठित विधि से तीव्रता और ध्रुवण का जो मूल्यांकन हो जाय उसी की सहायता से वास्तविक तीव्रताओं और ध्रुवणों की भी प्रागुक्ति सन्निकटतः तो हो ही जाय। यहाँ बहुत विस्तार-

1. Irreconcilable 2. Extrapolate

पूर्वक यह नहीं समझाया जा सकता कि बोह्र ने इस आनुरूप्य-नियम का परिशुद्ध रूप किस प्रकार मालूम किया। हम केवल इतना ही कहेंगे कि उन्होंने किसी एक स्पैक्ट्रमीय रेखा से सम्बन्धित संक्रमण की प्रारम्भिक स्थावर अवस्था और अंतिम स्थावर अवस्था के मध्यवर्ती अस्थावर अवस्था-समूह के लिए चिरप्रतिष्ठित विधि से परिकलित राशियों का औसत मान मालूम किया। यद्यपि इस प्रकार निर्मित आनुरूप्य-नियम से बहुत रोचक और सामान्यतः यथार्थ परिणाम भी प्राप्त हुए हैं तथापि मन में ऐसी धारणा होती है कि इस नियम की परिभाषा बहुत कुछ कृत्रिम है और पुराने क्वांटम-सिद्धान्त के ढाँचे में उसका सुनिश्चित निरूपण नहीं हो सका है। किन्तु हम देखेंगे कि नवीन-यांत्रिकी के ढाँचे में उसकी परिभाषा को बहुत अधिक पूर्णता प्राप्त हो गयी है। जो भी हो, बाद में यह स्पष्ट हो गया कि बोह्र द्वारा प्रस्तुत धारणा का महत्त्व बहुत ही अधिक है। यह धारणा अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुई कि यद्यपि विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त कठोरतः सत्य नहीं है तथापि प्रारम्भिक क्वांटम-सिद्धान्त के यथार्थ नियमों के प्रगतिशील आविष्करण में उसने अत्यन्त बहुमूल्य पथ-प्रदर्शन किया है। आनुरूप्य की यथार्थ विधि इसी पर आश्रित है और इसी विधि के भरोसे पर और हाइज़नवर्ग के कथनानुसार कोपनहैगन की भावना[1] से पूर्ण होने के कारण ही बोह्र के शिष्यों को इस मार्ग से प्रगति करने में और जैसा कि हम शीघ्र ही बतायेंगे अनेक बहुमूल्य आविष्कार करने में सफलता मिली है।

३. आनुरूप्य-नियम के कुछ उपयोग

इस आनुरूप्य नियम से ही विविध स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की तीव्रता का परिकलन—कम-से-कम सन्निकट परिकलन—संभव हुआ है चाहे वे रेखाएँ सामान्य स्पैक्ट्रमों की हों, चाहे स्टार्क-प्रभाव[2] अथवा ज़ीमान-प्रभाव[3] द्वारा विकृत स्पैक्ट्रमों की हों। ऐसे परिगणनों के परिणामों में सामान्यतः प्रयोग के साथ संतोषजनक सांगत्य पाया गया है।

तीव्रता के ऐसे मूल्यांकनों का एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उपयोग ऐसी स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के सम्बन्ध में हुआ है जिनके उत्सर्जन की तीव्रता बोह्र के आवृत्ति-नियम के अनुसार शून्य होती है अर्थात् जो प्रेक्षित स्पैक्ट्रम से सर्वथा अनुपस्थित होती हैं। इस विषय को स्पष्ट कर देना लाभदायक होगा। जब किसी परमाणु की समस्त स्थावर अवस्थाएँ ज्ञात हों और इसलिए उसके सब स्पैक्ट्रमीय पद ज्ञात हों तो बोह्र के नियम के अनुसार दो-दो स्पैक्ट्रमीय पदों के संयोजन से हमें तुरन्त समस्त संभव स्पैक्ट्रमीय रेखाओं का ज्ञान

1. Copenhagen spirit 2. Stark effect 3. Zeman effect

हो जाता है। अब यदि इस प्रकार परिकलित रेखाओं की सूची का मिलान वास्तव में प्रेक्षित रेखाओं की सूची से किया जाय तो यह प्रकट होता है कि सभी प्रागुक्त रेखाओं का प्रेक्षणगम्य उत्सर्जन नहीं होता। दूसरे शब्दों में स्पैक्ट्रमीय पदों के संयोजनों के द्वारा समस्त वास्तविक रेखाओं की आवृत्तियाँ तो निर्दिष्ट हो जाती हैं, किन्तु इसका उलटा वक्तव्य सही नहीं निकलता क्योंकि स्पैक्ट्रमीय पदों के समस्त संयोजनों से प्राप्त आवृत्तियाँ वास्तविक स्पैक्ट्रम में सदा प्रकट नहीं होतीं। अतः सिद्धान्त से हमें ऐसे "वरण-नियम"[1] भी प्राप्त होने चाहिए जिनसे हम यह जान सकें कि स्पैक्ट्रमीय पदों के वे संयोजन कौन-से हैं जिनका सम्बन्ध वास्तव में प्रेक्षण-गम्य रेखाओं से होता है। इस कार्य के लिए पदों के संयोजनों द्वारा प्रागुक्त रेखाओं के अभाव का यह अर्थ समझा गया कि ये सिद्धान्ततः विद्यमान रेखाएँ साधारणतः शून्य तीव्रता के साथ उत्सर्जित होती हैं। इस मत का समर्थन इस बात से हो जाता है कि कुछ असाधारण परिस्थितियों में यथा विशेष रूप से प्रचंड वैद्युत बल के प्रभाव से कभी-कभी परमाणु में से ऐसी रेखाओं का भी उत्सर्जन हो जाता है जो सामान्यतः स्पैक्ट्रम में अनुपस्थित रहती हैं। अतः आनुरूप्य-नियम के अनुसार हम यह कह सकते हैं कि साधारण परिस्थितियों में कुछ विशेष प्रकार के संक्रमणों की आनुषंगिक रेखाओं की तीव्रता शून्य होती है और इसका अर्थ यह है कि उस परमाणु में ऐसे संक्रमण होने की प्रायिकता शून्य होती है। उदाहरण के लिए स्थायी इलैक्ट्रान-कक्षा को निर्दिष्ट करनेवाली क्वांटम-संख्याओं में से उस क्वांटम-संख्या को लीजिए जो "दिगंशीय क्वांटम-संख्या"[2] कहलाती है। आनुरूप्य-नियम यह बताता है कि सामान्य परिस्थितियों में उन्ही संक्रमणों की प्रायिकता शून्य नहीं होती जिनमें इस दिगंशीय क्वांटम-संख्या में वृद्धि या कमी केवल १ के बराबर होती है। इससे निम्नलिखित वरण-नियम प्राप्त होता है। "साधारण परिस्थितियों में उन सब स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की तीव्रता शून्य होती है अर्थात् वास्तव में वे ही रेखाएँ स्पैक्ट्रम में अनुपस्थित होती हैं जिनसे सम्बन्धित संक्रमणों में दिगंशीय क्वांटम-संख्या में वृद्धि या कमी १ के बराबर नहीं होती।" यह वरण-नियम जिसके साथ अन्य भी ऐसे ही नियम और जुड़ गये हैं, सभी प्रकाशीय तथा एक्स-किरणीय स्पैक्ट्रमों में बहुत अच्छी तरह सत्यापित हो चुका है और इसके द्वारा ऐसी रेखाओं के वर्गीकरण में भी बहुत सहायता मिलती है जिनकी पहचान न हो चुकी हो। आनुरूप्य-नियम ने इन वरण-नियमों के सैद्धान्तिक अर्थ को प्रकट करने में बहुमूल्य काम किया है यद्यपि इससे पहले

1. Selection principle 2. Azimuthal quantum number

भी अन्य युक्तियों से इन वरण-नियमों का सैद्धान्तिक समर्थन करने के कुछ प्रयास किये गये थे; यथा, रूबिनिविज़[1] द्वारा।

क्वांटम-सिद्धान्त से प्रकाश के वर्ण-विक्षेपण[2] की घटना की व्याख्या देना बहुत कठिन था। प्रयोगों से ज्ञात होता है कि वर्तनांक[3] का परिवर्तन वस्तुतः प्रकाश की आवृत्ति के एक फलन के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। कुछ क्रान्तिक आवृत्तियों[4] के निकट वर्तनांक के ये परिवर्तन बहुत ही बड़े हो जाते हैं। ये क्रान्तिक आवृत्तियाँ उस पदार्थ में से उत्सर्जित होनेवाली स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के बिलकुल बराबर होती हैं। पुराने सिद्धान्तों से भी इन परिवर्तनों की काफ़ी अच्छी व्याख्या हो जाती थी और वर्ण-विक्षेपण की घटना की संतोषजनक मीमांसा हो गयी थी। विशेपकर इलैक्ट्रान-सिद्धान्त में तो यह माना जाता था कि समस्त भौतिक परमाणुओं में ऐसे वैद्युत आवेश विद्यमान होते हैं जिनमें किसी सन्तुलन-विन्दु के इधर-उधर सरल-आवर्त दोलन करने की क्षमता होती है (इलैक्ट्रानिक दोलक) और ये आवेश अपने दोलनों के द्वारा विकिरण उत्पन्न करते हैं। अतः इन परमाणवीय दोलकों की आवृत्तियाँ उस परमाणु की स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की आवृत्तियों के बराबर ही होनी चाहिए। परमाणु पर पड़ने-वाला एक-वर्ण प्रकाश उसके आभ्यन्तरिक दोलकों में प्रणोदित दोलन[5] किस प्रकार उत्पन्न करता है और आपतित तरंग के प्रचरण पर इन परमाणु-गर्भीय दोलकों के प्रणोदित दोलनों की क्या प्रतिक्रिया होती है, इन प्रश्नों के अध्ययन के द्वारा इलैक्ट्रान-सिद्धान्त को आवृत्ति-फलन के अनुसारी वर्तनांक-परिवर्तन के लिए ऐसा वर्णविक्षे-पण-सूत्र प्राप्त करने में सफलता मिल गयी थी जो प्रयोग के सर्वथा अनुकूल था। इस सूत्र में विक्षेपण की क्रान्तिक आवृत्तियाँ इलैक्ट्रानिक दोलनों की नैज आवृत्तियों के बराबर थीं अर्थात् उस पदार्थ की स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की आवृत्तियों के बराबर थीं। और इस बात से वास्तविकता का सांगत्य भी था। किन्तु बोह्र के सिद्धान्त से वर्ण-विक्षेपण की व्याख्या करना और भी अधिक कठिन था। बोह्र के परमाणु में इलैक्ट्रानों के कक्षीय परिक्रमण की यांत्रिक आवृत्तियों से स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की प्रकाशीय आवृत्तियों का कोई भी सरल सम्बन्ध नहीं है। इन आवृत्तियों का सम्बन्ध तो संक्रमणों से है, न कि अवस्थाओं से। अतः यह समझना बहुत कठिन है कि परमाणु की यांत्रिक अवस्था में किसी बाह्य प्रकाश-तरंग द्वारा प्रेरित परिवर्तन

1. Rubinivicz 2. Dispersion 3. Index of refraction 4. Critical frequencies 5. Forced oscillation

वर्ण-विक्षेपण की घटना को कैसे उत्पन्न कर सकता है, क्योंकि यहाँ मुख्य काम स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की प्रकाशीय आवृत्तियों द्वारा सम्पन्न होता है, न कि परमाणु की यांत्रिक आवृत्तियों द्वारा। बोह्र और उनके अनुयायियों से यह कठिनाई छिपी हुई नहीं थी। आनुरूप्य-नियम का आविष्कार हो जाने पर उन्होंने इस समस्या की मीमांसा के लिए भी इस नवीन मार्ग का ही अनुसरण किया। १९२३ में बोह्र के दो शिष्य क्रामर्स और हाइज़नबर्ग[1] ने वर्ण-विक्षेपण का एक क्वांटम-सूत्र प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर ली। यह सूत्र चिर-प्रतिष्ठित सिद्धान्त के सूत्र से सर्वथा अभिन्न तो नहीं है, किन्तु प्रायोगिक परिणामों से पूर्णतः सुसंगत है। संभवतः क्रामर्स और हाइज़नबर्ग का तर्क सर्वथा निर्विवाद नहीं है, किन्तु आनुरूप्य-विधि की भावना ने ही उनको निरन्तर प्रेरणा दी थी और उनका पथ-प्रदर्शन किया था। हम कह चुके हैं कि इस विधि से प्राप्त सूत्र ठीक वही नहीं था जो पहले चिर-प्रतिष्ठित विधि से प्राप्त हो चुका था। उसमें कुछ अतिरिक्त पद भी विद्यमान थे जिनके वास्तविक अस्तित्व का प्रमाण बाद में लाडनबर्ग[2] के प्रयोगों से मिला था।

वर्ण-विक्षेपण-सूत्र के अनुसंधान में हाइज़नबर्ग को विश्वास हो गया था कि बोह्र के सिद्धान्त में से प्रत्यक्षतः अप्रेक्ष्य[3] अंशों को यथासंभव निकाल कर उनके स्थान में प्रेक्ष्य[4] तत्त्वों का अधिक उपयोग करना बहुत लाभदायक होगा। उदाहरण के लिए इलैक्ट्रानों की कक्षीय आवृत्तियों को तिरोहित करके उन स्पैक्ट्रमीय आवृत्तियों का उपयोग अधिक करना चाहिए जो बोह्र के नियम के द्वारा संक्रमणों से सम्बद्ध हैं। यह निश्चित है कि इस विश्वास ने ही इस युवक वैज्ञानिक को उस मार्ग का दिग्दर्शन कराया था जिस पर चलकर कुछ समय पश्चात् उन्होंने क्वांटम-यांत्रिकी[5] का आविष्कार किया।

वर्ण-विक्षेपण का क्वांटम-सिद्धान्त ही पुराने क्वांटम-सिद्धान्त की सर्वश्रेष्ठ सफलता थी और उसी में उन नियमों के बीज भी विद्यमान थे जो बाद में अंकुरित और प्रस्फुटित होकर नवीन तरंग-यांत्रिकी तथा क्वांटम-यांत्रिकी में बहुत प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं।

1. Kramers and Heisenberg 2. Ladenburg 3. Unobservable 4. Observable 5. Quantum Mechanics.

आठवाँ परिच्छेद

तरंग-यांत्रिकी[1]

१. तरंग-यांत्रिकी के उद्गम और मूल धारणाएँ

१९२३ के लगभग यह बहुत कुछ स्पष्ट हो गया था कि बोह्र का सिद्धान्त और पुराना क्वांटम-सिद्धान्त चिरप्रतिष्ठित धारणाओं के तथा कुछ अत्यन्त नवीन धारणाओं के बीच की मंज़िलों के समान ही थे और इन नवीन धारणाओं की सहायता के बिना हम क्वांटमीय घटनाओं के विश्लेषण में गहरे नहीं पैठ सकते। पुराने क्वांटम-सिद्धान्त में क्वांटमीकरण के प्रतिबन्ध[2] चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के परिणामों पर किसी-न-किसी प्रकार बाहर से चिपका दिये गये थे। क्वांटमीकरण की अनिवार्य असंततता में (जो सूत्रों में पूर्णांकी क्वांटम-संख्याओं के द्वारा व्यक्त होती है) और किसी भी पुरानी यांत्रिकी (न्यूटन की अथवा आइन्स्टाइन की) द्वारा निर्दिष्ट गतियों की संततता में विचित्र विपरीतता स्पष्ट है। समस्त प्रत्यक्ष प्रमाणों की सहायता से हमें तो ऐसी नयी यांत्रिकी के निर्माण में सफल होना अभीष्ट था जिसमें क्वांटम-धारणाओं का स्थान सिद्धान्त की आधार-शिला में ही विद्यमान हो और उन्हें पुराने क्वांटम-सिद्धान्त की तरह विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए पीछे से न जोड़ना पड़े। आश्चर्य है कि इस उद्देश्य की पूर्ति मूलतः भिन्न प्रवृत्तिवाले अनुसंधानकर्ताओं के प्रयास से लगभग एक ही साथ दो अत्यन्त भिन्न मार्गों से हुई थी। एक ओर तो तरंग-यांत्रिकी का जन्म हुआ और दूसरी ओर क्वांटम-यांत्रिकी का। और पहले-पहल तो इन दोनों सिद्धान्तों के स्वरूप और गणितीय पद्धतियाँ बिलकुल ही विपरीत जान पड़ीं। हम यह समझाने का प्रयत्न करेंगे कि इतने भिन्न दिखाई देनेवाले ये दोनों सिद्धान्त वास्तव में अभिन्न क्यों समझे जा सकते हैं और कैसे प्रत्येक सिद्धान्त दूसरे का किसी अन्य भाषा में गणितीय अनुवाद मात्र है। क्वांटम-धारणाओं पर आश्रित नवीन यांत्रिकी की स्थापना के ये दोनों प्रयास, जो प्रारम्भ में

1. Wave Mechanics 2. Conditions

इतने विरुद्धाभासी थे, अन्त में मिलकर एक हो गये हैं और उनके सम्मिलित रूप को ही नवीन क्वांटम-सिद्धान्त का नाम दिया जा सकता है ।

तरंग-यांत्रिकी का जन्म १९२३ में अर्थात् क्वांटम-यांत्रिकी के जन्म १९२५ से कुछ पहले हुआ था । इसके अतिरिक्त गणितीय प्रक्रियाओं की सहायता के बिना ही दूसरे की अपेक्षा पहले सिद्धान्त का विवेचन अधिक अच्छी तरह से किया जा सकता है । इसी कारण यहाँ भी पहले तरंग-यांत्रिकी का ही पर्यालोचन किया जायगा और क्वांटम-यांत्रिकी के विषय में तथा दोनों सिद्धान्तों के संश्लेषण के विषय में विचार अगले परिच्छेद में किया जायगा ।

सबसे पहले तो उन बातों पर विचार करना आवश्यक है जिनके कारण हमें १९२३-२४ में तरंग-यांत्रिकी की मूल-धारणाओं का प्रतिपादन करना पड़ा था । उस समय काम्पटन-प्रभाव के आविष्कार से तथा एक्स-किरणों के प्रकाश-वैद्युत प्रभाव के अध्ययन से आइन्स्टाइन की प्राकाशिक क्वांटम की धारणा को प्रबल समर्थन अभी मिला ही था । और अब विकिरण की असंतत रचना का और फ़ोटानों के अस्तित्व का विरोध अत्यन्त दुष्कर हो गया था और प्रकाश के सम्बन्ध में तरंगों और कणिकाओं के दुरूह विकल्प की प्रखरता बहुत बढ़ गयी थी । यह मान लेना अनिवार्य हो गया था कि विकिरण के गुणों का सम्पूर्ण विवरण देने के लिए तरंग-चित्र और कणिका-चित्र दोनों का ही उत्तरोत्तर उपयोग करने के लिए हम बाध्य हैं और आवृत्ति और ऊर्जा के जिस समीकरण को आइन्स्टाइन ने अपने फ़ोटान-सिद्धान्त के मूल में स्थापित किया था उससे ही यह भी प्रकट हो गया था कि क्वांटमों के अस्तित्व में और विकिरण के स्वरूप के इस द्वैत[1] में गहरा सम्बन्ध है । उसी समय से यह प्रश्न सर्वथा उचित समझा जाने लगा था कि क्या तरंगों और कणिकाओं का यह विचित्र द्वैत (जिसका प्रकाश इतना स्पष्ट, किन्तु चित्त को उद्विग्न करनेवाला उदाहरण है) क्वांटम के इस प्रच्छन्न, किन्तु गंभीर लक्षण को समस्त घटना-चक्र में ही निविष्ट नहीं कर देता और क्या हमें यह आशा नहीं करनी चाहिए कि जहाँ कहीं भी प्लांक के नियतांक का अस्तित्व प्रकट होगा वहीं सर्वत्र उसी प्रकार के द्वैत का भी अस्तित्व अवश्य पाया जायगा । किन्तु तब यह प्रश्न भी स्वयं ही उपस्थित हो जाता है कि जब परमाणु की स्थावर अवस्थाओं का अस्तित्व इलैक्ट्रान के गुणों में क्रिया के क्वांटम का प्रभाव प्रकट करता है तब यही क्यों न समझ लिया जाय कि प्रकाश के ही समान इलैक्ट्रान के गुणों में भी द्वैत है । पहले-

1. Duality

पहल तो यह धारणा बड़ी साहसिक मालूम हुई होगी क्योंकि उस समय तक इलैक्ट्रान सर्वदा ठीक ऐसे द्रव्य-विन्दु के समान ही प्रमाणित हुआ था जो चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी के नियमों का (और विशेष परिस्थितियों में आइन्स्टाइन के आपेक्षिकता सिद्धान्त द्वारा संशोधित नियमों का) पालन करता है। तब तक व्यतिकरण और विवर्तन की घटनाओं में प्रकट होनेवाले प्रकाश के गुणों के सदृश तरंगीय लक्षण इलैक्ट्रान में कभी भी स्पष्टतः दिखाई नहीं दिये थे। प्रायोगिक प्रमाण के पूर्ण अभाव के कारण इलैक्ट्रान में तरंगीय लक्षणों की धारणा केवल कपोल-कल्पित और सर्वथा अवैज्ञानिक ही समझी जा सकती थी। फिर भी ज्यों ही हमारे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि शायद इलैक्ट्रान में और अधिक व्यापक रूप से प्रत्येक भौतिक कणिका में भी तरंगीय लक्षणों का अस्तित्व स्वीकार करना उचित होगा, त्यों ही कई चित्त को उद्विग्न करनेवाली बातें याद आयीं। पहले परिच्छेद में हम बता चुके हैं कि याकोबी के सिद्धान्त की सहायता से चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी में द्रव्य-विन्दु के संभाव्य गमन-पथों का ऐसा वर्गीकरण संभव हो गया था जिससे प्रत्येक वर्ग के गमन-पथों की तुलना ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के अर्थ में किसी तरंग-प्रचरण की किरणों से हो सकती थी। इस अद्भुत समानता के ही कारण न्यूनतम-क्रिया के नियम को एक तरह से फ़रमा के न्यूनतम समय के नियम का अनुवाद मात्र ही समझना संभव हो गया था। यह निश्चित है कि प्रकाश-विज्ञान और गति-विज्ञान के इस विशेष प्रकार के निरूपण की एक-रूपता हैमिल्टन के समान तीक्ष्ण बुद्धिवाले गणितज्ञों की दृष्टि से छिपी नहीं रही होगी; किन्तु ऐसा नहीं मालूम होता कि उन्होंने इसका कोई भौतिक अर्थ खोजने का प्रयत्न किया हो। इसके अतिरिक्त बहुत-सी बातें ऐसी भी थीं जिन्होंने इस प्रयत्न का विरोध किया होगा। सबसे पहली और प्रमुख बात तो यह थी कि याकोबी के सिद्धान्त ने तो तरंग-प्रचरण में और किसी विशेष कणिका के संभाव्य गमन-पथों के वर्ग में ही आनुषंग स्थापित किया था। किन्तु चिरप्रतिष्ठित धारणाओं के अनुसार प्रत्येक भौतिकतः वास्तविक अवस्था में कणिका का गमन-पथ पूर्णतः सुनिर्णीत होता है और संभाव्य गमन-पथों के समुदाय की धारणा ऐसी अमूर्त है जिसकी कल्पना करने का गणितज्ञों को तो पूरा अधिकार है, किन्तु ऐसा नहीं मालूम होता कि भौतिकज्ञ उसमें कोई वास्तविकता स्वीकार कर सकें। दूसरे दोनों के गणितीय स्वरूप में भी कुछ ऐसी विभिन्नता विद्यमान थी जिससे प्रकट होता था कि भौतिक दृष्टि से कणिका की गति की तुलना तरंग-प्रचरण से नहीं की जा सकती। जैसे यदि हम चाहें कि कणिका के वेग को तरंग के वेग के बराबर समझ लें तो बाधा यह उपस्थित होती है कि ये दोनों वेग एक ओर मापरट्यूइस के नियम में और दूसरी ओर फ़रमा के

नियम में एक ही प्रकार निविष्ट नहीं हैं। इन सुपरिचित कठिनाइयों के होते हुए भी यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि चिरप्रतिष्ठित वैश्लेषिक यांत्रिकी में इन गमन-पथों और तरंग-प्रचरण की किरणों का वैधानिक सादृश्य क्रिया के ही माध्यम के द्वारा स्थापित हुआ था अर्थात् ठीक उसी राशि के द्वारा जिस पर क्वांटम आश्रित है। वस्तुतः क्या इस बात से उस मत का समर्थन नहीं हो गया कि क्रिया का क्वांटम ही द्रव्य-विन्दुओं के कणिकामय और तरंग-मय स्वरूपों के बीच में बन्धन का काम करता है।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य बातों का भी संकेत इसी ओर था। यदि यह सत्य हो कि स्थूल-स्तरीय घटनाओं में सदा ही इलैक्ट्रान को सरल कणिका के समान समझा गया है तो परमाणु-गर्भ में उसका अस्तित्व व्यक्त करने के लिए क्या यह अनिवार्य नहीं है कि उस पर क्वांटमीकरण की ऐसी विचित्र शर्तें लगायी जायँ जिनमें पूर्णांकों का प्रादुर्भाव हो? चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी का उपयोग इलैक्ट्रान पर करने के लिए इस प्रकार के प्रतिबन्ध लगाने की आवश्यकता से उसकी असम्पूर्णता ही प्रकट होती है और यह भी स्पष्ट हो जाता है कि इलैक्ट्रान में सरल कणिका के गुण सदैव विद्यमान नहीं रहते। गौर करने पर पारमाणविक इलैक्ट्रानों की स्थावर अवस्थाओं को निर्दिष्ट करने के लिए पूर्णांकों का उपयोग भी तो ठीक इसी बात का संकेत करता है। सच तो यह है कि पूर्णांकों का उपयोग बहुधा भौतिक विज्ञान की उन सब शाखाओं में किया जाता है जिनमें तरंगों का अस्तित्व माना जाता है यथा प्रत्यास्थता में, शब्द-विज्ञान में, प्रकाश विज्ञान में। ये अप्रगामी तरंगों[1] की, व्यतिकरण की, और अनुनाद[2] की घटनाओं में भी प्रकट होते हैं। अतः यह सोचना अनुचित नहीं था कि क्वांटमीकरण के प्रतिबन्धों का ठीक-ठीक अर्थ समझने के लिए परमाणु-गर्भीय इलैक्ट्रानों में भी तरंग के लक्षणों का अस्तित्व स्वीकार करना पड़ेगा। इसी लिए इलैक्ट्रान में और व्यापकतः सभी कणिकाओं में फ़ोटान के ही समान द्वैत-भाव निविष्ट करने का और उसमें क्रिया के क्वांटम के द्वारा अनुबन्धित तरंग-रूप तथा कणिका-रूप दोनों की ही स्थापना करने का प्रयत्न अत्यन्त आवश्यक और लाभकारी समझा गया था।

२. कणिका और उसकी आनुषंगिक तरंग[3]

मुख्यतः समस्या क्या थी? वास्तव में समस्या यही थी कि किसी कणिका की गति के साथ किसी ऐसी तरंग के प्रचरण का ऐसा सम्बन्ध किस प्रकार स्थापित किया जाय

1. Stationary waves 2. Resonance 3. The Corpuscle and its Associated wave

कि जिससे तरंग को निर्णीत करनेवाली राशियों के तथा कणिका की गत्यात्मक राशियों के बीच में ऐसे समीकरण प्राप्त हो सकें जिनमें नियतांक h विद्यमान हो। और यह सम्बन्ध ऐसा भी होना चाहिए कि तरंग और कणिका के सम्बन्ध को व्यक्त करनेवाले व्यापक नियमों का उपयोग फ़ोटान पर करने से वही सुपरिचित और सुसत्यापित समीकरण प्राप्त हो जायँ जो प्रकाश-तरंगों का और फ़ोटानों का सम्बन्ध प्रकट करने के लिए आइन्स्टाइन द्वारा स्थापित किये गये थे।

इस प्रकार प्रस्तुत समस्या की मीमांसा के लिए यह स्वाभाविक ही था कि पहले उस सरलतम समस्या पर ध्यान दिया जाय जिसमें कणिका की गति सरल-रेखात्मक हो, उसका वेग अचर रहे तथा उसकी ऊर्जा और संवेग भी अपरिवर्ती हों। संमिति[1] के विचार से स्पष्ट है कि इसके साथ ऐसी ही तरंग को सम्बद्ध किया जा सकता है जो कणिका की गति की ही दिशा में चल रही हो। अब मालूम यह करना है कि इस तरंग की आवृत्ति और तरंग-दैर्घ्य में और उससे सम्बन्धित कणिका की गत्यात्मक राशियों में क्या सम्बन्ध है। आपेक्षिकता के सिद्धांत के व्यापक नियमों से ये परिणाम निकले कि कणिका की ऊर्जा तथा प्लांक के नियतांक के गुणनफल के बराबर ही आनुषंगिक तरंग की आवृत्ति होगी और प्लांक के नियतांक में कणिका के संवेग का भाग देने से जो भागफल प्राप्त होगा वह उस तरंग के तरंग-दैर्घ्य के बराबर होगा। कणिका तथा आनुषंगिक तरंग का यह सम्बन्ध ठीक वही था जिसका आइन्स्टाइन ने फ़ोटान और उसकी आनुषंगिक तरंग के लिए उपयोग किया था। इस तरह से एक महत्त्वपूर्ण संश्लेपण संभव हो गया क्योंकि इसके द्वारा प्रकाश और द्रव्य कणिकाओं में बिलकुल एक ही प्रकार के द्वैत की स्थापना हो गयी।

इसके अतिरिक्त एक अन्य मार्ग से भी कणिका और उसकी आनुषंगिक तरंग का सम्बन्ध निर्दिष्ट करने की वही विधि प्राप्त हो गयी। हम कह चुके हैं कि याकोबी के सिद्धांत ने कणिका के गमन-पथ और तरंग-प्रचरण की किरण की एकता को व्यक्त करने का यह उपाय बताया था कि कणिका के क्रिया-अनुकल को फ़रमा के तरंग-अनुकल से अभिन्न मान लिया जाय ताकि न्यूनतम क्रिया के नियम और न्यूनतम समय के नियम में कोई फ़र्क न रहे। इस उपाय से पुनः एक ओर तो ऊर्जा और आवृत्ति का तथा दूसरी ओर संवेग और तरंग दैर्घ्य के व्युत्क्रम का अनुपातत्व तुरन्त ही प्रकट हो जाता है। इसके बाद आपेक्षिकीय विधि से पूर्व-स्थापित आनुषंगिकता को पुनः प्राप्त करने के लिए

1. Symmetry.

केवल इतना ही काफ़ी है कि इस अनुपातत्व के नियतांक को h के बराबर रख दिया जाय। ऐसा करना स्वाभाविक भी है और द्वैत के दोनों पदों को क्रिया के क्वांटम के द्वारा सम्बद्ध करने के उद्देश्य से सुसंगत भी है। तर्क की इस नयी परम्परा में आपेक्षिकीय धारणाओं का कोई प्रकट उल्लेख नहीं है। अतः न्यूटनीय यांत्रिकी की परिसीमा में ही इसका विकास संभव है।

इन मूल बातों से ही आनुषंगिक तरंग में और कणिका के वेग में जो सम्बन्ध है उसके विषय में एक महत्त्वपूर्ण परिणाम और भी आसानी से निकल आता है। तरंग सिद्धान्त में किसी विशेष आवृत्ति की एक-वर्ण तरंग के साथ-साथ कुछ सीमित तरंग-संघों[1] के अस्तित्व की भी धारणा आवश्यक होती है जो विविध एक-वर्ण तरंगों के अध्यारोपण के द्वारा निर्मित होते हैं। इनमें से उन तरंग-संघों पर ध्यान देना अधिक महत्त्वपूर्ण है जो ऐसी एक-वर्ण तरंगों के द्वारा निर्मित हों जिनकी आवृत्तियाँ किसी विशेष माध्य आवृत्ति के आसपास के अत्यन्त छोटे से स्पैक्ट्रमीय क्षेत्र में सीमित हों। हम पहले भी कह चुके हैं कि वास्तव में विशुद्ध एक-वर्ण तरंग केवल कल्पना मात्र है जिसके भौतिक अस्तित्व का कोई प्रायोगिक प्रमाण नहीं है। प्रयोगों में जिसे हम एक-वर्ण तरंग कहते हैं वह सदैव ऐसा ही तरंग-संघ होता है जिसकी संघटक तरंगें अत्यल्प स्पैक्ट्रमीय क्षेत्र में सीमित होती हैं। अब यदि किसी तरंग-संघ के प्रचरण का ऐसी परिस्थिति में अध्ययन किया जाय जिसमें प्रत्येक एक-वर्ण तरंग का वेग उसकी आवृत्ति का फलन हो तो यह ज्ञात हो जाता है कि सम्पूर्ण तरंग-संघ का वेग उसकी संघटक तरंगों के वेग से भिन्न होता है। यह संघ-वेग[2] संघ की माध्य आवृत्ति के फलन के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है और संघटक तरंगों के वेग के आवृत्ति-अनुचारी परिवर्तन पर भी अवलम्बित होता है। इसका मान जिस सूत्र के द्वारा मालूम किया जा सकता है वह "रेले का सूत्र"[3] कहलाता है क्योंकि सबसे पहले विख्यात अंग्रेज़ भौतिकज्ञ लार्ड रेले ने ही इसका आविष्कार किया था। हम संघ-वेग के इस सिद्धान्त का कणिका की आनुषंगिक तरंग के लिए उपयोग करने का प्रयत्न कर सकते हैं और तब हम किसी कणिका की किसी विशेष ऊर्जायुक्त सरल-रैखिक और अचर-वेगीय गति में तथा उसी दिशा में प्रचरण-शील ऐसे तरंग-संघ में आनुरूप्य स्थापित कर सकते हैं जिसकी आवृत्ति उस ऊर्जा में h का भाग देने से प्राप्त भागफल के बराबर हो। इस प्रकार रेले के सूत्र का उपयोग करने पर इस तरंग-संघ का वेग चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी द्वारा निर्दिष्ट कणिका-वेग के बराबर

1. Wave-groups 2. Group velocity 3. Rayleigh's formula

निकलता है। यह आश्चर्यजनक मेल बहुत संतोषजनक है क्योंकि इसका अर्थ यह होता है कि ऐसी गति में कणिका अपने आनुषंगिक तरंग-संघ के साथ बराबर जुड़ी रहती है। इसके अतिरिक्त साधारण तरंग-सिद्धान्त से हमें यह भी मालूम है कि यह संघ-वेग तरंगों की ऊर्जा के परिवहन[1] के वेग के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। और चूंकि हमारी द्वैत-धारणा के अनुसार ऊर्जा का निवास कणिका में भी रहता है अतः आनुषंगिक तरंगों का संघ-वेग कणिका के वेग के बराबर होना ही चाहिए।

इन संतोषजनक प्रथम परिणामों में अपूर्णता थी क्योंकि वे केवल बल-क्षेत्र के अभाव में होनेवाली कणिका की सरल रैखिक अचर-वेगीय गति के ही लिए प्राप्त किये गये थे। किन्तु इनको अधिक व्यापक बनाने में कठिनाई ज्यादा नहीं थी। उदाहरण के लिए किसी अपरिवर्ती बल-क्षेत्र में कणिका की गति पर विचार कीजिए। याकोबी के सिद्धान्त के अनुसार कणिका के गमन-पथ को हम किसी विशेष तरंग-प्रचरण की किरण समझ सकते हैं और न्यूनतम-क्रिया-नियम तथा फ़रमा के नियम की एकात्मता के कारण कणिका तथा उसकी तरंग का सम्बन्ध प्रकट करनेवाले समीकरण हमें पुनः प्राप्त हो जाते हैं जिनके अनुसार कणिका की अपरिवर्ती ऊर्जा तरंग की आवृत्ति और h के गुणनफल के बराबर होती है और कणिका का संवेग (जो बल-क्षेत्र में विन्दु-विन्दु पर बदलता जाता है) और आनुषंगिक तरंग के तरंग-दैर्घ्य के भागफल के बराबर होता है। यह तरंग-दैर्घ्य भी विन्दु-विन्दु पर बदलता रहता है। और भी अधिक व्यापकता के लिए ऐसे बल-क्षेत्रों पर विचार कीजिए जो समय के साथ बदलते भी रहते हैं। अब भी सर्वत्र हमें कणिका की गत्यात्मक राशियों में और आनुषंगिक तरंग की आवृत्ति तथा तरंग-दैर्घ्य जैसी राशियों में उसी रूपवाले समीकरण प्राप्त हो जाते हैं।

कणिका और उसकी आनुषंगिक तरंग के आनुरूप्य के इस व्यापकीकरण का निम्नलिखित उपयोग यह स्पष्ट प्रकट करता है कि हम ठीक रास्ते पर हैं। यदि हम इस बात की विवेचना करें कि तरंग-सिद्धान्त के अनुसार इलैक्ट्रान की आनुषंगिक तरंगें बोह्र के परमाणु के अन्दर किस प्रकार आचरण करती हैं तो हमें क्वांटमीकरण के प्रतिबन्धों का वास्तविक अर्थ समझ में आ जायगा। ये प्रतिबन्ध इस बात को प्रकट करते हैं कि इलैक्ट्रान के गमन-पथ की लम्बाई उसकी आनुषंगिक तरंग के दैर्घ्य की अनुनादी होती है। दूसरे शब्दों में पारमाणविक इलैक्ट्रान की स्थावर अवस्था में आनुषंगिक तरंग स्वयं भी तरंग-सिद्धान्तीय अप्रगामी तरंग[2] होती है।

1. Transport 2. Stationary wave

इस परिणाम का वास्तविक महत्त्व समझने के लिए यह याद दिलाना आवश्यक है कि अप्रगामी तरंग कैसी होती है। जिस माध्यम में तरंग-प्रचरण हो सके यदि वह सीमित हो तो उस माध्यम में अप्रगामी तरंग उत्पन्न हो सकती है अर्थात् उसमें ऐसे कम्पन (वाइब्रेशन्स) उत्पन्न हो सकते हैं जिनका आकाशीय रूप काल-प्रवाह के कारण बदलता नहीं। इन कम्पनों का रूप तरंग-समीकरण के स्वरूप के द्वारा, माध्यम की सीमाओं की आकृति के द्वारा तथा इन सीमाओं पर विद्यमान परिस्थितियों के द्वारा निर्णीत होता है। जैसे बहुधा ऐसा होता है कि माध्यम की सीमाओं पर उपस्थित परिस्थितियाँ वहाँ पर कम्पनों के आयाम[1] को शून्य बना देती हैं (यथा दोनों सिरों पर आबद्ध[2] कम्पनशील तार, दोनों सिरों पर विलागित[3] रेडियो का एरियल) ऐसी अवस्था में हमें तरंग-समीकरण के ऐसे हल चाहिए जो काल की अपेक्षा आवर्तत्व युक्त हों, जिनके आयाम माध्यम में सर्वत्र परिमित[4], एकमानीय[5] तथा संतत[6] हों और माध्यम की सीमाओं पर शून्य के बराबर हों। यह समस्या आकाश के किसी सीमित क्षेत्र के लिए तथा उसकी सीमाओं की विशेष परिस्थितियों के लिए व्युत्पन्नों[7] अथवा आंशिक अवकलों[8] के समीकरणों के इष्ट-मान[9] मालूम करने की गणितीय समस्या ही है। इसके बहुत से सरल उदाहरणों से सभी भौतिकज्ञ परिचित हैं, यथा अप्रगामी प्रत्यास्थ-तरंगें[10] जो अचल सिरोंवाले कम्पनशील तार में उत्पन्न होती हैं और जिनकी आवृत्तियाँ किसी मूल-आवृत्ति के पूर्णांकी अपवर्त्यों के बराबर होती हैं और अप्रगामी विद्युत्-चुम्बकीय तरंगें जो रेडियो के ऐसे एरियल[11] में पैदा होती हैं जिसका एक सिरा तो विलागित हो और दूसरा भूसंपृक्त हो और जिनके तरंग-दैर्घ्य एरियल की लम्बाई से चार गुनी लम्बाई में क्रमागत[12] विषम पूर्णांकों[13] का भाग देने से प्राप्त होते हैं।

जिस तरंग-यांत्रिकी का हम ज़िकर कर चुके हैं उसकी विचारधारा का उपयोग परमाणु के लिए करने पर हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि बोह्र की स्थावर अवस्थाएँ वे ही होती हैं जिनमें पारमाणविक इलैक्ट्रानों की आनुषंगिक तरंगें अप्रगामी होती हैं। इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि यह व्याख्या क्वांटमीय प्रतिबन्धों के वास्तविक अर्थ पर बहुत प्रकाश डालती है और जिन मूल धारणाओं की रूपरेखा ऊपर बतायी गयी है उनकी तथा उनके द्वारा कणिकाओं के साथ तरंगों की आनुषंगिकता स्थापित करने की विधि की यथार्थता को अत्यन्त प्रायिक[14] बना देती है। फिर भी

1. Amplitude 2. Fixed 3. Insulated 4. Finite 5. Single-valued 6. Continuous 7. Derivatives 8. Partial differentials 9. Proper values 10. Elastic waves 11. Antenna 12. Successive 13. Odd integers 14. Probable

दो कठिनाइयाँ अधिक स्पष्टता से हमारे सामने उपस्थित होती हैं जिनको यहाँ बता देना उचित है क्योंकि आगे जिन विषयों का विवेचन किया गया है उन्हें अच्छी तरह समझने के लिए इन कठिनाइयों का अध्ययन बहुत ही जरूरी है।

पहली कठिनाई का कारण तो यह है कि परमाणु की स्थावर अवस्था की आनुषंगिक तरंगों की अप्रगामिता का निदर्शन करने के लिए हमने ऐसे सूत्रों का उपयोग किया है जिनसे कणिका की गति की आनुषंगिकता ऐसी तरंग से स्थापित होती है जिसका प्रचरण ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान द्वारा निर्दिष्ट विधि से होता है। जो धारणाएँ वैश्लेषिक यांत्रिकी में सुपरिचित हैं वस्तुतः उन्हीं को क्वांटमीय भाषा में रूपान्तरित करके चिरप्रतिष्ठित पद्धति से निर्दिष्ट कणिका के गमन-पथों में और तरंग-प्रचरण की किरणों में आनुरूप्य स्थापित किया गया है। हम परिच्छेद २ के खंड २ में बता चुके हैं कि तरंग-सिद्धान्त के व्यापक दृष्टि-कोण से ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान केवल प्रथम सन्निकटन मात्र है और वह तभी तक मान्य हो सकता है जब तक कि प्रचरण स्वच्छंद हो तथा उसके मार्ग में कोई रुकावट[1] उपस्थित न हो और साथ ही प्रचरण का वेग एक विन्दु से परवर्ती पार्श्वस्थ विन्दु तक पहुँचने में बहुत शीघ्रता से न बदले। किन्तु यह समझना आसान है कि पारमाणविक इलैक्ट्रान की आनुषंगिक तरंग के सम्बन्ध में दूसरी शर्त पूरी नहीं होती। अतः परमाणु की क्वांटमित अवस्था की आनुषंगिक तरंग की अप्रगामिता को प्रमाणित करने के लिए जिस विधि का उपयोग किया गया था वह कठोरतः नियमानुकूल नहीं समझी जा सकती। समस्या को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करने के लिए पहले तो यह आवश्यक है कि इलैक्ट्रान की आनुषंगिक तरंग का प्रचरण-समीकरण स्थापित किया जाय और तब उस समीकरण द्वारा नियंत्रित परमाणु-गर्भीय तरंगों के इष्ट-मानों की जो समस्या उपस्थित हो उसका हल निकाला जाय। अगले अनुच्छेद में हम देखेंगे कि इस समस्या को कैसे हल किया गया था और किस प्रकार उस हल के परिणाम प्रारम्भिक सन्निकटित निगमनों से अविरोधी निकले। किन्तु यहाँ उस व्यापक धारणा पर जोर देना आवश्यक है जो उपर्युक्त विवेचन में निहित है। वह महत्त्वपूर्ण धारणा यह है। चूंकि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान केवल एक सन्निकटन[2] मात्र है जो कुछ विशेष परिस्थितियों में ही मान्य है और चूंकि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में और ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान की विधि से निर्णीत तरंग-प्रचरण में आनुरूप्य स्थापित हो गया है, इसलिए ऐसा मालूम पड़ता है कि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी भी

1. Obstacle. 2. Approximation

निस्सन्देह केवल एक सन्निकटन है जिसकी उपयोगिता की परिसीमाएँ भी वे ही हैं जो ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान की हैं और जो एक प्रकार से उसी का भाषान्तर है। जिन सब परिस्थितियों में कणिका की आनुषंगिक तरंग का प्रचरण ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के नियमों के अनुसार नहीं होता (और हम अभी बता चुके हैं कि क्वांटमित पारमाणविक निकाय के इलैक्ट्रान की आनुषंगिक तरंग का प्रचरण इसी प्रकार का होता है) उन परिस्थितियों में कणिका का गत्यात्मक विकास चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के नियमों और मान्यताओं के द्वारा व्यक्त नहीं हो सकता। अतः यह आवश्यक हो गया कि अब न्यूटन की यांत्रिकी को और आइन्स्टाइन की यांत्रिकी को भी "प्राचीन यांत्रिकी" समझा जाय और एक ऐसी नवीन यांत्रिकी का निर्माण किया जाय जिसकी व्यवस्था में प्राचीन यांत्रिकी प्रथम सन्निकटन के रूप में प्रकट हो सके और कुछ विशेष परिस्थितियों में ही मान्य समझी जाय। संक्षेप में हमारे पूर्व कथनानुसार यह आवश्यक हो गया कि एक नवीन यांत्रिकी ऐसी निर्माण की जाय जो तरंग-मूलक हो और जिसका प्राचीन यांत्रिकी से वही सम्बन्ध हो जो तरंग-मय प्रकाश-विज्ञान का ज्यामितीय प्रकाश विज्ञान से है। अब हम शीघ्र ही देखेंगे कि यह विचार श्रोडिंगर[1] के चिरस्मरणीय अनुसंधानों के द्वारा किस प्रकार सुनिश्चित और सुनिर्णीत बन गया।

अब भी उपर्युक्त दूसरी कठिनाई का विवेचन बाकी है। उसके मूलतत्त्व को समझने के लिए अप्रगामी तरंगों के उत्पन्न करनेवाले निकाय के सरल उदाहरण (दोनों अचल सिरोंवाले कम्पनशील तार) को लीजिए। ऐसे तार में अप्रगामी तरंगों की अनन्त श्रेणी उत्पन्न हो सकती है। इसकी वह दशा स्पष्टतः असाधारण है जब तार में केवल एक ही अप्रगामी कम्पन उत्पन्न हो अर्थात् जब तार में यथार्थतः ज्या-गति[2] विद्यमान हो। साधारणतः किसी प्रकार के भी प्रारम्भिक विकार के कारण उस तार की गति दोनों अचल सिरों को छोड़कर सर्वत्र ही जटिल होती है। केवल इन सिरों पर गति का अभाव रहता है। किन्तु फ़ूरियर श्रेणी[3] के गणितीय सिद्धान्त से प्रकट होता है कि तार की गति कैसी भी क्यों न हो वह अनेक अप्रगामी तरंगों के सम्मेलन के रूप में विघटित हो सकती है। इसी परिणाम का दूसरे शब्दों में वर्णन यों किया जा सकता है। अप्रगामी तरंगों को निरूपित करनेवाले ज्या-फलनों[4] से लम्बकोणिक फलनों[5] का एक पूरा संघ बन जाता है। दो अचल सिरोंवाले प्रत्यास्थ तार की अपेक्षा कम सरल दोलनशील निकायों के लिए भी इस परिणाम का व्यापकीकरण हो सकता है

1. Schroedinger 2. Sine-motion 3. Fourier series 4. Sine-functions 5. Orthogonal functions

और यह प्रमाणित किया जा सकता है कि यदि आकाश के किसी प्रदेश में अप्रगामी कम्पन संभव हों तो चाहे कैसा ही कम्पन क्यों न हो वह अनेक परिमित अथवा अनन्त-संख्यक कम्पनों का अध्यारोपण समझा जा सकता है। इन व्यापक धारणाओं का उपयोग क्वांटमित परमाणु-निकायों के लिए करने पर उपर्युक्त कठिनाई तुरन्त प्रत्यक्ष हो जाती है। बोह्र की प्रारम्भिक धारणाओं के अनुसार यह आवश्यक था कि परमाणु सर्वदा किसी-न-किसी स्थावर अवस्था में रहे। यदि क्वांटमों में निहित असंततता को पहले से ही मान लिया जाय तो परमाणु की अवस्था के चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकीय चित्र के विरुद्ध कोई भी बात नहीं उठायी जा सकती। किन्तु यदि यह मान लिया जाय कि स्थावर अवस्थाओं में और अप्रगामी कम्पनों में आनुरूप्य होता है तो ऊपर बताया हुआ व्यापक सिद्धान्त हमें यह कहने के लिए बाध्य करेगा कि यह बात बड़ी असाधारण होगी कि किसी परमाणु की तत्क्षणिक अवस्था अकेली एक ही स्थावर अवस्था का रूप ले ले। साधारणतः वह अनेक स्थावर अवस्थाओं के अध्यारोपण का परिणाम होती है। चिरप्रतिष्ठित धारणाओं के अनुसार तो यही कहना पड़ेगा कि यह कथन अर्थहीन है क्योंकि इस बात की कल्पना ही नहीं हो सकती कि कोई भी परमाणु एक ही समय में अनेक विभिन्न अवस्थाओं में रह सके। इस कठिनाई से यह स्पष्ट हो जाता है कि नवीन यांत्रिकी के विकास के लिए चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान की मूल धारणाओं में गंभीर परिवर्तन करना आवश्यक होगा। जैसा हम पहले ही कह चुके हैं इस परिवर्तन की आवश्यकता बीजरूप से क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व में ही विद्यमान है। हम शीघ्र ही देखेंगे कि अनेक अवस्थाओं के अध्यारोपण को नवीन यांत्रिकी के प्रायिकता-मूलक निर्वचन[1] के ही द्वारा सार्थकता प्राप्त हो सकती है।

३. श्रोडिंगर की गवेषणा[2]

तरंग-यांत्रिकी के तरंग-समीकरण को सबसे पहले १९२६ में प्रकाशित लेखों में स्पष्ट रूप से लिखने का और उसके द्वारा क्वांटमीकरण की समस्याओं के अध्ययन की कठोरतः यथार्थ विधि के आविष्कार का श्रेय अरविन श्रोडिंगर[3] को ही प्राप्त हुआ था। तरंग-यांत्रिकी में कणिका की आनुषंगिक तरंग का समीकरण लिखने का प्रारम्भ हम इसी धारणा से कर सकते हैं कि नवीन सिद्धान्त की दृष्टि में प्राचीन यांत्रिकी भी ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के ही समान एक सन्निकटन मात्र है। याकोबी

1. Probability interpretation 2. The work of Schrödinger 3. Erwin Schrödinger

के सिद्धान्त में कणिका के गमन-पथ उस तरंग-प्रचरण की किरणों के समान समझे जाते हैं जिसके तरंग-पृष्ठ याकोबी के समीकरण के नाम से प्रख्यात प्रथम वर्ण[1] और द्वितीय घात[2] के आंशिक अवकल समीकरण[3] के द्वारा निर्णीत होते हैं। हम परिच्छेद २ खंड २ में पहले ही बता चुके हैं कि याकोबी के समीकरण का रूप ठीक वैसा ही है जैसा कि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के मूल समीकरण का और वस्तुतः यही कारण है कि याकोबी के सिद्धान्त में और तरंग-प्रचरण के सिद्धान्त के ज्यामितीय सन्निकटन में इतना सादृश्य है। अतः तरंग-यांत्रिकी के तरंग-समीकरण का चयन ऐसा होना चाहिए कि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के अनुरूपी समीकरण का जिसकी सत्यता के लिए आवश्यक प्रतिबन्धों को हम पहले ही निश्चित कर चुके हैं, याकोबी के समीकरण से तादात्म्य हो जाय। इस शर्त को पूरा करनेवाले तरंग-समीकरण के निर्माण के लिए श्रोडिंगर ने जिस मार्ग का अनुसरण किया वह निम्नलिखित है। पहले तो ऐसी पद-संहति[4] प्राप्त की जाती है जिसमें प्रस्तुत समस्या के निकाय की ऊर्जा को चिर प्रतिष्ठित यांत्रिकी की विधि से कणिका के निर्देशांकों और उसके संवेग के संघटकों के फलन के रूप में व्यक्त किया गया हो। फिर इस व्यंजक में (जिसे यांत्रिकी में हैमिल्टोनियन[5] कहते हैं) संवेग के प्रत्येक समकोणिक संघटक के स्थान में तत्संगत निर्देशांक-सापेक्ष-अवकलन संकेत[6] और प्लांक के नियतांक h के किसी अपवर्त्य के गुणनफल को प्रतिस्थापित कर दिया जाता है। इस प्रकार हैमिल्टोनियन एक प्रकार की प्रक्रिया[7] के संकेत में परिणत हो जाता है जिसे हैमिल्टनीय कारक[8] कहते हैं। इसके बाद निकाय के तरंग-फलन[9] पर (जो सदैव ग्रीक अक्षर ψ के द्वारा व्यक्त किया जाता है) यह कारक आरोपित कर दिया जाता है और इस कारक की प्रक्रिया के परिणाम को तरंग-फलन के काल-सापेक्ष अवकल और उपर्युक्त नियतांक के गुणनफल के बराबर रखकर समीकरण बना लिया जाता है। इस प्रकार प्राप्त किये हुए समीकरण को हम कणिका का तरंग-समीकरण समझ सकते हैं क्योंकि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के सन्निकटन में यह ठीक उसी याकोबी-समीकरण में परिणत हो जाता है जो प्रस्तुत समस्या के लिए चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के द्वारा प्राप्त होता है।

कणिका की आनुषंगिक तरंग के प्रचरण के लिए इस प्रकार प्राप्त समीकरण के

1. First order　2. Second degree　3. Partial differential equation
4. Expression　5. Hamiltonian　6. Symbol of differentiation　7. Operation
8. Hamiltonian operator　9. Wave-function

सम्बन्ध में यहाँ कुछ बात कहना आवश्यक है। पहली बात तो यह है कि इस समीकरण में तरंग-फलन अदिष्ट[1] माना गया है—दिष्ट[2] नहीं। प्रकाश-तरंग में और कणिका की इस आनुषंगिक तरंग में यह बड़ा महत्त्वपूर्ण भेद है। किन्तु यह विदित है कि प्रकाश के तरंग-सिद्धान्त के प्रारम्भ में भी प्रकाश को अदिष्ट राशि ही माना गया था (प्रकाशीय चर[3]) और आज भी विवर्तन और व्यतिकरण की बहुत-सी घटनाओं की व्याख्या के लिए यही दृष्टि-कोण ग्रहण किया जा सकता है। केवल ध्रुवण की व्याख्या के ही लिए तरंग-फलन में दिष्टता के गुण की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार यह आशा की जा सकती है कि अदिष्ट तरंग-फलन भी किसी दिन सिद्धान्त के और अधिक विकसित होने पर अनेक संघटकोंवाले दिष्ट-फलन में परिणत हो जायगा। आगे चलकर इस प्रागुक्ति का समर्थन डिरैक के चुम्बकीय इलैक्ट्रान[4] के सिद्धान्त के द्वारा प्रमाणित होगा, किन्तु फिर भी हम देखेंगे कि इससे इलैक्ट्रान और फ़ोटान के सिद्धान्तों में पूर्ण समानता स्थापित नहीं हो सकेगी।

तरंग-प्रचरण के इस समीकरण के सम्बन्ध में दूसरी बात यह है कि यह सम्मिश्र[5] है अर्थात् उसके सभी गुणांक[6] वास्तविक संख्याएँ नहीं हैं और उसमें $\sqrt{-1}$ की कल्पित राशि[7] का समावेश है। पहले-पहल यह बात बड़ी विचित्र मालूम पड़ती है, किन्तु इससे प्रकट हो जाता है कि चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान की तरंगों में जिन भौतिक गुणों का अस्तित्व माना गया था वे ही गुण तरंग-यांत्रिकी की ψ–तरंगों में भी मानने में कितनी बड़ी कठिनाई है। चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान में तरंगें जिन राशियों का प्रचरण करती हैं वे ऐसे माध्यम के कम्पनों से उत्पन्न होती हैं जिसका अस्तित्व या तो असंदिग्ध है या उसकी कल्पना कर ली गयी है (जैसे प्रकाश के चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त में ईथर की कल्पना की गयी है) और चूँकि वे तरंगें वास्तविक घटना का निदर्शन करती हैं इसलिए यह आवश्यक है कि वे वास्तविक फलन[8] के ही द्वारा व्यक्त हों। जैसा कि बहुधा प्रकाश-वैज्ञानिक परिकलन में होता है। कभी-कभी इन वास्तविक संख्याओं के स्थान में ऐसी सम्मिश्र संख्याओं का प्रतिस्थापन लाभदायक समझा जाता है जिनका वास्तविक भाग इन संख्याओं के बराबर होता है। किन्तु यह तो केवल परिकलन की युक्ति मात्र है जिसका इच्छानुसार सर्वदा ही परित्याग किया जा सकता है। किन्तु इसके विपरीत तरंग-यांत्रिकी के तरंग-समीकरण में ही काल्पनिक गुणकों

1. Scalar 2. Vector 3. Light—variable 4. Magnetic electron 5. Complex 6. Coefficients 7. Imaginary quantity. 8. Real function

के अस्तित्व के कारण ψ–तरंग के फलन का काल्पनिक लक्षण अनिवार्य है और तरंग-यांत्रिकी की तरंग में किसी माध्यम के कम्पनों के समान भौतिक वास्तविकता समझने के सब प्रयत्न विफल हो जाते हैं। नवीन यांत्रिकी के विकास से अब यह राशि केवल ऐसी माध्यमिक[1] राशि समझी जाती है जिसका ज्ञान प्राप्त कर लेने पर हम कुछ अन्य राशियों का परिकलन कर सकते हैं। ये दूसरी राशियाँ ही वास्तविक होती हैं और इन्हीं का कुछ भौतिक अर्थ होता है जो अधिकतर सांख्यिकीय प्रकार का होता है। इस विषय का विवेचन आगे फिर किया जायगा, किन्तु इस समय इस बात पर जोर देना आवश्यक था कि तरंग-यांत्रिकी में प्रचरण का समीकरण कैसे अपने रूप के कारण ही आनुषंगिक तरंग में भौतिकता की धारणा का परित्याग करने के लिए हमें बाध्य करता है।

अभी हमने समझाया है कि कणिका की आनुषंगिक ψ–तरंग के प्रचरण के समीकरण को व्यापक रूप से उपयोगी बनाने में श्रोडिंगर को सफलता कैसे मिली थी। किन्तु इस खोज का प्रारम्भ उन्होंने न्यूटनीय यांत्रिकी के सूत्रों से किया था। अतः यह तरंग-समीकरण आपेक्षिकता-सिद्धान्त की शर्तों को पूरी नहीं करता। इसलिए यह समझना स्वाभाविक ही है कि यह समीकरण केवल बहुत कम वेगवाली कणिकाओं के लिए अर्थात् ऐसी तरंगों के लिए ही सत्य हो सकता है जिनकी आवृत्ति बहुत अधिक न हो। अतः अब यह समस्या उपस्थित होती है कि ऐसा आपेक्षिकीय तरंग-समीकरण कैसे प्राप्त किया जाय जिसका सन्निकटित रूप नीची आवृत्तियों के लिए श्रोडिंगर का समीकरण हो। अनेक वैज्ञानिकों ने प्रायः एक ही साथ इस प्रकार का एक समीकरण प्रस्तुत किया जिसका सूझना बहुत-कुछ स्वाभाविक ही था। किन्तु यह आपेक्षिकीय तरंग-समीकरण काल की अपेक्षा द्वितीय वर्ण[2] का था और इसके द्वारा कई कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गयीं। पहलेवाले तरंग-प्रचरण के समीकरण का यथार्थ आपेक्षिकीय व्यापकीकरण तो डिरैक[3] ने दूसरी ही विधि से प्रस्तुत किया था।

श्रोडिंगर ने आपेक्षिकता-हीन प्रचरण-समीकरण को ऐसे रूप में भी प्राप्त किया था जो कणिका-निकाय के लिए अर्थात् अन्योन्य-प्रभावक कणिकाओं के समूह के लिए उपयोगी है। किन्तु चूंकि इसमें जो नयी धारणाएँ निविष्ट हुई हैं उनके विशिष्ट अध्ययन की आवश्यकता होगी, इसलिए कणिका-निकायों की तरंग-यांत्रिकी के विवेचन को हम किसी आगे के परिच्छेद (परिच्छेद १२) के लिए स्थगित रखेंगे।

1. Intermediate 2. Second order 3. Dirac

सन्निकटित सिद्धान्त के संकेतानुसार आनुषंगिक तरंगों के अग्रगामी रूपों से स्थावर अवस्थाओं का आनुरूप्य स्वीकार कर लेने से और अपने समीकरण की सहायता से श्रोडिंगर को क्वांटमित निकाय की स्थावर अवस्थाओं को निर्णीत करने की समस्या की यथार्थतापूर्ण मीमांसा करने में सफलता मिल गयी। हाइड्रोजन परमाणु के सदृश क्वांटमित निकाय को ही लीजिए। इस निकाय में हमें आनुषंगिक तरंग के प्रचरण का समीकरण ज्ञात है और यह धारणा भी स्वाभाविक ही है कि आकाश के स्वल्प प्रदेश में ही इस निकाय के अवस्थित होने के कारण ज्यों-ज्यों निकाय के केन्द्र से दूरी बढ़ती जायगी त्यों-त्यों ψ-फंक्शन का मान भी शून्य की ओर प्रवृत्त होता जायगा। और यदि गणितीय भौतिक विज्ञान की साधारण परिपाटी के अनुसार हम यह मान लें कि यह ψ -फलन सर्वत्र संतत[1] और एक-मानीय[2] होना चाहिए तो अग्रगामी तरंगों के परिकलन के लिए प्रचरण-समीकरण के ऐसे एक-वर्ण हल प्राप्त करने होंगे जो समस्त आकाश में परिमित तथा एक-मानीय हों और अनन्ती (इनफिनिटी) पर जिनका मान शून्य हो जाय। श्रोडिंगर ने अनेक प्रकार के क्वांटमित निकायों के लिए वैश्लेषिक गणित के ज्ञात साधनों के ही द्वारा इस समस्या को बड़ी तेजस्विता से हल कर लिया। और इससे यह ज्ञात हुआ कि निविष्ट प्रतिबन्धों के अनुकूल एक-वर्ण हल आवृत्ति के केवल कुछ विशिष्ट मानों के ही लिए प्राप्त हो सकते हैं। ये हल ही तरंग के आंशिक अवकल-समीकरण के इष्ट-मान[3] होते हैं। और उनमें सीमांत प्रतिबन्ध[4] यह होता है कि अनन्ती पर ψ का मान शून्य हो जाता है। तरंग और कणिका के व्यापक सम्बन्ध के अनुसार उसकी इष्ट-आवृत्तियों[5] को h से गुणा करने से कणिका की क्वांटमित ऊर्जा का मान प्राप्त हो जाता है। अतः अधीत समस्याओं में श्रोडिंगर के परिकलन के द्वारा क्वांटमित ऊर्जाओं के मान और फलतः स्पैक्ट्रमीय पद ज्ञात हो जाते हैं। इस प्रकार बहु-संख्यक दशाओं में तो ठीक वही परिणाम निकलता है जो प्राचीन क्वांटम-सिद्धान्त द्वारा निकलता था। उदाहरण के लिए हाइड्रोजन परमाणु के सम्बन्ध में ठीक बोह्र के ही परिणाम पुनः प्राप्त हो जाते हैं। किन्तु कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण दशाओं में ऐसे परिणाम निकलते हैं जो प्राचीन क्वांटम-सिद्धान्त के परिणामों से भिन्न होते हैं और इन नवीन परिणामों में प्रयोग-लब्ध इंगितों से अधिक सांगत्य पाया जाता है। इसका उत्कृष्ट उदाहरण रैखिक दोलक[6] है। यह स्मरण होगा कि प्लांक को विकिरण-सिद्धान्त में रैखिक दोलक के जिस क्वांटमीकरण की आवश्यकता हुई थी उसी से क्वांटम-सिद्धान्त के समस्त

1. Continuous **2.** Single-valued **3.** Proper values **4.** Boundary condition **5.** Proper frequencies **6.** Linear oscillator

विकास का प्रारम्भ हुआ था। इस क्वांटमीकरण की पुरानी विधि में यह मान लिया गया था कि रैखिक दोलक की क्वांटमित ऊर्जा के मान ऊर्जा के क्वांटम के पूर्णांकी अपवर्त्य होते हैं। और वे रैखिक दोलक के यांत्रिक दोलन की वास्तविक आवृत्ति को h से गुणा करने से प्राप्त हो जाते हैं। किन्तु कुछ भौतिक घटनाएँ ऐसी भी हैं जिनमें रैखिक दोलक के क्वांटमीकरण की तो आवश्यकता होती है (यथा द्वि-परमाणुक अणु के सपट्ट स्पैक्ट्रम[1] में) किन्तु जिनमें ऐसा मालूम होता है कि दोलक की क्वांटमित ऊर्जा उसकी ऊर्जा के क्वांटम और किसी पूर्णांक के गुणनफल के बराबर नहीं होती वरन उस क्वांटम और किसी अर्ध-पूर्णांक[2] के अर्थात् $\frac{१}{२}, \frac{३}{२}, \frac{५}{२} \ldots\ldots \frac{२n+१}{२}$ श्रेणी की किसी संख्या के गुणनफल के बराबर होती है। प्राचीन क्वांटम-सिद्धान्त के विरुद्ध क्वांटमीकरण की नवीन विधि ने इसी अर्ध-पूर्णांकी[3] क्वांटमीकरण की प्रागुक्ति की थी। इस प्रकार श्रोडिंगर ने प्राचीन सिद्धान्त के यथार्थ परिणामों को भी प्राप्त कर लिया और असत्य परिणामों को शुद्ध भी कर लिया। उनकी सफलता में कुछ भी कमी नहीं रह गयी।

इसके बाद एक विचित्र संयोग ने श्रोडिंगर को प्रभावित किया और उन्हें ऐसा रास्ता सुझाया जिससे वे एक अत्यन्त उपयोगी परिणाम पर पहुँच सके। हाइज़नबर्ग की क्वांटम-यांत्रिकी का विकास उस समय से कुछ पहले ही हो चुका था। यह नयी विधि तरंग-यांत्रिकी से सर्वथा भिन्न दिखाई देती थी, किन्तु इसके द्वारा भी परमाणवीय निकायों की क्वांटमित ऊर्जाओं के मान ठीक वही निकले जो श्रोडिंगर की विधि से निकले थे और प्राचीन क्वांटम-सिद्धान्त के परिणामों का इस विधि से भी उतना ही समर्थन या संशोधन हुआ। इससे श्रोडिंगर के मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि दोनों विधियों की यह अभिन्नता आकस्मिक नहीं हो सकती और उनकी कुशाग्र बुद्धि ने यह भी प्रमाणित कर दिया कि क्वांटम-यांत्रिकी देखने में सर्वथा भिन्न होने पर भी है केवल तरंग-यांत्रिकी का गणितीय रूपान्तरण मात्र। इसका अधिक विवरण तो अगले परिच्छेद में दिया जायगा। यहाँ हम श्रोडिंगर की इस उत्कृष्ट कृति की ओर केवल पाठकों का ध्यान ही आकर्षित करना चाहते हैं।

ज़ीमान-प्रभाव[4] और उसी के वैद्युत समकक्ष स्टार्क-प्रभाव[5] का महत्त्व सुविदित है। श्रोडिंगर इन घटनाओं की समस्या की मीमांसा तरंग-यांत्रिकी के द्वारा करना

1. Band spectrum 2. Half-integer 3. Half integral 4. Zeeman effect 5. Stark effect

चाहते थे। इस कार्य के लिए उन्होंने संक्षोभण[1] की एक अच्छी विधि का विकास कर लिया। यह विधि खगोलीय यांत्रिकी[2] की चिरप्रतिष्ठित विधि का ही तरंगात्मक रूपान्तरण है। जो चुम्बकीय या वैद्युत बल-क्षेत्र हम कृत्रिम रीति से उत्पन्न कर सकते हैं वे वस्तुतः परमाणवीय निकायों के आभ्यन्तर बल-क्षेत्रों की अपेक्षा अत्यन्त ही दुर्बल होते हैं। इसलिए ज़ीमान-प्रभाव या स्टार्क-प्रभाव को उत्पन्न करने के लिए परमाणु पर जो समांगी[3] चुम्बकीय या वैद्युत बल-क्षेत्र लगाया जाता है उसे हम परमाणवीय निकाय के भीतरवाले प्राकृतिक बल-क्षेत्र का अत्यल्प संक्षोभण मात्र ही समझ सकते हैं। यदि इस बाह्य बल-क्षेत्र की अनुपस्थिति में ऊर्जा के क्वांटमित मानों का परिकलन हम पहले ही कर चुके हों तो इन क्वांटमित मानों में संक्षोभक बल-क्षेत्र के कारण जो थोड़ा-सा परिवर्तन होता है केवल उसी के परिकलन की आवश्यकता पड़ेगी। श्रोडिंगर की संक्षोभण-विधि से ही इस समस्या का हल प्राप्त हो गया और इसके द्वारा वे ज़ीमान-प्रभाव तथा स्टार्क-प्रभाव की विस्तृत प्रागुक्ति प्रस्तुत करने में सफल हो गये। इन नवीन परिणामों से स्टार्क-प्रभाव के सम्बन्ध में प्राचीन क्वांटम-सिद्धान्त के परिणामों का केवल समर्थन ही नहीं हुआ, किन्तु कई बातों में ये नवीन परिणाम अधिक यथार्थ भी पाये गये। और ज़ीमान-प्रभाव में भी प्राचीन क्वांटम-सिद्धान्त से सुसंगत लोरैन्ट्ज़[4] की चिरप्रतिष्ठित प्रागुक्तियाँ ही पुनः प्राप्त हो गयीं। यह बात संतोषजनक है क्योंकि वास्तव में इस प्रभाव में स्थूलतः ठीक वही घटनाएँ होती हैं जिनकी प्रागुक्ति लोरैन्ट्ज़ ने की थी (सामान्य ज़ीमान-प्रभाव[5])। किन्तु लोरैन्ट्ज़ की प्रागुक्ति से सुसंगत सामान्य ज़ीमान-प्रभाव के अतिरिक्त बहुत-सी दशाओं में अन्य अत्यन्त जटिल[6] तथा असंगताभासी[7] प्रभाव भी प्रेक्षित होते हैं। ये जटिल प्रभाव न तो चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त के द्वारा और न प्राचीन क्वांटम-सिद्धान्त के ही द्वारा समझ में आ सकते थे। और इन्हें समझने में श्रोडिंगर को तरंग-यांत्रिकी के द्वारा भी सफलता नहीं मिली। ज़ीमान-प्रभाव की विचित्रताओं की व्याख्या करने के लिए उस सिद्धान्त में एक नवीन अवयव को निविष्ट करना पड़ा जिसे इलैक्ट्रान का नर्तन[8] कहते हैं। इसके विषय में हम किसी आगे के परिच्छेद में लिखेंगे।

और प्रकाश के उत्सर्जन और वर्ण-विक्षेपण सम्बन्धी श्रोडिंगर के अनुसंधानों का अध्ययन भी अगले परिच्छेद के लिए स्थगित रखेंगे।

1. Perturbation 2. Celestial mechanics 3. Uniform 4. Lorentz 5. Normal Zeeman effect 6. Complex 7. Anomalous 8. Spin

४. इलैक्ट्रानों का विवर्तन[1]

हम अभी यह बता चुके हैं कि कणिकाओं और तरंगों की आनुषंगिकता के सम्बन्ध में तथा तरंगात्मक नवीन यांत्रिकी के निर्माण की आवश्यकता के सम्बन्ध में इस पुस्तक के लेखक द्वारा प्रतिपादित विचारों ने श्रोडिंगर के प्रशंसनीय लेखों में १९२६ तक कितनी असाधारण सम्पूर्णता और परिशुद्धता प्राप्त कर ली थी। किन्तु इन सामान्य विचारों में तथा मूल विधियों में चाहे कितनी ही सुन्दरता क्यों न रही हो और परमाणवीय घटनाओं की सही प्रागुक्ति के द्वारा उनका सत्यापन कितना ही यथार्थतापूर्ण क्यों न हो गया हो, फिर भी इन धारणाओं का प्रत्यक्ष प्रायोगिक सत्यापन अभी तक नहीं हुआ था। १९२७ में डेविसन और गर्मर[2] द्वारा इलैक्ट्रान-विवर्तन की घटना के आविष्कार से यह कमी भी पूरी हो गयी।

कणिकाओं की गति में और तरंग के प्रचरण में घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण यह विचार उठना स्वाभाविक था कि शायद भौतिक कणिकाओं से (यथा इलैक्ट्रानों से) भी व्यतिकरण और विवर्तन की वैसी ही घटनाओं की उत्पत्ति संभव हो जैसी कि प्रेक्षण द्वारा फ़ोटानों में देखी गयी हैं और जिनका अध्ययन भौतिक प्रकाश-विज्ञान का विषय है। यह मालूम करने के लिए कि कौन-सी घटनाओं का प्रेक्षण वास्तव में संभव हो सकता है, सबसे पहले आवश्यक यह जानना था कि जिन इलैक्ट्रानों का हम साधारणतः उपयोग कर सकते हैं उनकी आनुषंगिक तरंगों का तरंग-दैर्घ्य कितना है। तरंग-यांत्रिकी के सूत्रों से इस प्रश्न का तुरन्त ही यथार्थतापूर्ण उत्तर प्राप्त हो जाता है। साधारण परिस्थितियों में इलैक्ट्रान की आनुषंगिक तरंग का दैर्घ्य सदैव अत्यन्त छोटा होता है— एक्स-किरणों के तरंग-दैर्घ्य की कोटि का। अतः उनके द्वारा हम केवल उन्हीं घटनाओं का प्रेक्षण करने की आशा कर सकते हैं जो एक्स-किरणों के द्वारा उत्पन्न की जा सकती हैं। यह विदित है कि एक्स-किरण-विज्ञान की मूल-घटना क्रिस्टलों[3] के द्वारा इन किरणों का विवर्तन है। एक्स-किरणों का तरंग-दैर्घ्य अत्यन्त लघु होने के कारण यह लगभग असंभव था कि मनुष्य द्वारा निर्मित किसी भी साधन से इन किरणों के विवर्तन का प्रेक्षण हो सके। सौभाग्यवश प्रकृति ने ही हमें ऐसी ग्रेटिंग[4] दे दी है जो इस विवर्तन के लिए बहुत उपयुक्त है। क्रिस्टल ही ऐसी ग्रेटिंग है। क्रिस्टलों में सचमुच ही अणु और परमाणु इस प्रकार नियमित रूप से व्यवस्थित होते हैं कि उनसे त्रिविमितीय[5]

1. Diffraction of Electrons 2. Davisson and Germer 3. Crystals
4. Grating 5. Three-dimensional

ग्रेटिंग बन जाती है और यह भी हमें ज्ञात है कि पूरे क्रिस्टल में ये भौतिक कणिकाएँ इस प्रकार वितरित रहती हैं कि उनके बीच की दूरी सदा एक्स-किरण के तरंग-दैर्घ्य की कोटि के परिमाण की ही होती है। अतः किसी क्रिस्टल में होकर एक्स-किरणों को चलाने से ठीक वैसी ही विवर्तन-घटना उत्पन्न होनी चाहिए जैसी कि प्रकाश के साथ त्रिविमितीय विन्दु-ग्रेटिंग[1] के व्यवहार से उत्पन्न होती है। यह सर्वविदित है कि क्रिस्टलों के द्वारा एक्स-किरणों के विवर्तन की घटना का आविष्कार १९१२ में लावे[2] फ़्रीडरिख़[3] और निपिंग[4] ने किया था और आजकल के एक्स-किरण-स्पैक्ट्रम-विज्ञान के विस्तृत विकास का आधार यही आविष्कार है। जो कुछ ऊपर लिखा जा चुका है उसके अनुसार हम यह आशा कर सकते हैं कि इलैक्ट्रानों के द्वारा भी ठीक वैसी ही घटना का प्रेक्षण हो सकेगा। किसी ज्ञात गतिज ऊर्जावाले इलैक्ट्रान की किरणावली के उपयोग से हमें ठीक वैसी ही विवर्तन घटना प्राप्त होनी चाहिए जैसी कि एक्स-किरणों के द्वारा उत्पन्न होती है। ऐसे प्रयोगों में जिन विविध क्रिस्टलों का व्यवहार होता है उनकी संरचना अनेक विधियों से ज्ञात हो ही चुकी है, मुख्यतः एक्स-किरण स्पैक्ट्रम की सहायता से। अतः इस प्रकार उपलब्ध विवर्तन-आकृतियों[5] के द्वारा उन इलैक्ट्रानों की आनुषंगिक तरंगों का तरंग-दैर्घ्य मालूम किया जा सकता है। फलतः कणिका की गति और उसकी आनुषंगिक तरंग के तरंग-दैर्घ्य के बीच में जो सम्बन्ध तरंग-यांत्रिकी द्वारा प्रतिपादित किया गया है उसका सत्यापन भी यथार्थतापूर्वक हो सकता है।

क्रिस्टलों के द्वारा इलैक्ट्रानों के विवर्तन के आविष्कार का श्रेय डेविसन और गर्मर[6] को है जो न्यूयार्क में बैल-टेलीफ़ोन[7] की प्रयोगशाला में काम करते थे। निकल के क्रिस्टल पर एक समान गतिज ऊर्जावाले इलैक्ट्रानों की बौछार करके उन्होंने देखा कि उन इलैक्ट्रानों का बिलकुल वैसा ही विवर्तन होता है जैसा कि किसी नियत तरंग-दैर्घ्यवाली तरंग का होना चाहिए और उन्होंने यह भी प्रमाणित कर दिया कि यह तरंग-दैर्घ्य ठीक उतना ही निकलता है जितना कि तरंग-यांत्रिकी के सूत्रों द्वारा प्रागुक्त होता है। इस प्रकार इस सूक्ष्म घटना का अस्तित्व प्रमाणित हो गया। यदि कुछ वर्षों पहले कोई इस घटना का ज़िकर करता तो अवश्य ही भौतिकज्ञों के मन में केवल आश्चर्य और अविश्वास ही उत्पन्न होता।

लगभग उसी समय इंगलैण्ड में सर जे० जे० टामसन के सुपुत्र जी० पी० टामसन को

1. Point-grating 2. Von Laue 3. Friedrich 4. Knipping 5. Diffraction pattern 6. Davisson and Germer 7. Bell Telephone

भी इलैक्ट्रान-विवर्तन के प्रयोग में थोड़ी-सी भिन्न विधि से सफलता मिल गयी और इसके बाद तो शीघ्र ही सर्वत्र उसकी पुनरावृत्ति होने लगी। परिस्थितियों को तथा प्रायोगिक व्यवस्थाओं को बदल-बदल कर फ्रांस में पांटे[1], जरमनी में रूप[2], जापान म किकूची[3] और अन्य अनेक विद्वानों ने इस घटना का अध्ययन किया और शीघ्र ही उसकी समस्त सूक्ष्म बातें भी ज्ञात हो गयीं। प्रारम्भ में जो बातें समझ में नहीं आयी थीं शीघ्र ही उनका भी स्पष्टीकरण हो गया, मुख्यतः यह मालूम हो जाने पर कि इलैक्ट्रानों की इन आनुषंगिक तरंगों के लिए क्रिस्टल के आभ्यन्तरिक प्रदेश में वर्तनांक का मान १ से भिन्न होता है। और सीधी-सी साधारण ग्रेटिंग पर लगभग स्पर्श-रेखीय आपतन[4] के द्वारा भी इलैक्ट्रान-विवर्तन सफलता-पूर्वक प्राप्त कर लिया गया (रूप[5] द्वारा) ठीक वैसे ही जैसे कि पहले एक्स-किरणों का विवर्तन कामटन[6], थीबो[7] आदि ने प्राप्त किया था। इस प्रकार इलैक्ट्रान के तरंग-दैर्घ्य की तुलना धातु-पृष्ठ पर यांत्रिक उपाय से खींची हुई रेखाओं की दूरी से भी की जा सकती है।*

प्रारम्भ में तो इलैक्ट्रान-विवर्तन की घटना का प्रेक्षण अत्यन्त कठिन जान पड़ता था और इसके प्रेक्षण में सफलता प्राप्त करने के लिए प्रयोगकर्ताओं में बड़े कौशल की आवश्यकता थी। किन्तु अब यह काम अपेक्षाकृत बहुत सरल हो गया है और प्रति दिन ही होता रहता है। इसको उत्पन्न करने के प्राविधिक अथवा तकनीकी[8] साधन भी इतने उत्कृष्ट हो गये हैं कि अब तो विद्यार्थियों को यह घटना व्याख्यान-कक्ष में भी दिखाई जा सकती है। इसके अतिरिक्त परिस्थितियों को इतनी विस्तृत परास[9] में बदल-बदलकर इन प्रयोगों में सफलता प्राप्त कर ली गयी है कि अब थोड़े से इलैक्ट्रान-वोल्ट[10] से लेकर दस-लाख इलैक्ट्रान-वोल्ट तक के अत्यन्त विशाल ऊर्जा-अन्तराल[11] में सर्वत्र कणिका और तरंग के सम्बन्ध को व्यक्त करनेवाले सूत्रों की सत्यता का प्रतिपादन दृढ़तापूर्वक किया जा सकता है। इन सूत्रों के सत्यापन में जब ऊर्जा के मान बहुत बड़े होते हैं तो स्वभावतः ही आपेक्षिकीय संशोधनवाले पदों का उन सूत्रों में

1. Ponte, 2. Rupp 3. Kikuchi 4. Tangential incidence 5. Rupp 6. Compton 7. Thibaud

*नोट जो १९४६ में जोड़ा गया—१९४० में बोर्श (Börsch) को किसी पर्दे की कोर द्वारा उत्पन्न इलैक्ट्रान-विवर्तन के प्रेक्षण में भी सफलता मिल गयी। यह घटना उसी घटना के सदृश है जो प्रकाश के सम्बन्ध में फ्रैनेल के समय से ही ज्ञात थी।

8. Technical 9. Range 10. Electron-volt 11. Energy interval

उपयोग करना जरूरी होता है। अतः इससे आपेक्षिकीय धारणाओं का भी परोक्षतः समर्थन हो जाता है।

जिन सूत्रों से कणिका की आनुषंगिक तरंगों का दैर्घ्य मालूम किया जाता है उनकी सत्यता इतनी अच्छी तरह प्रमाणित हो चुकी है कि आज इलैक्ट्रान-विवर्तन की घटना का उपयोग इन सूत्रों के सत्यापन के लिए नहीं किया जाता, किन्तु उन्हें सत्य मानकर क्रिस्टलित या अंशतः अनुन्यस्त[1] माध्यमों की संरचना का अध्ययन किया जाता है। किन्तु ये बातें बहुत कुछ प्राविधिक हैं और इस पुस्तक के क्षेत्र से बाहर की हैं। हम यहाँ केवल इतना ही कहना काफ़ी समझते हैं कि इलैक्ट्रान विवर्तन के प्रयोगों से कणिका और तरंग की आनुषंगिकता की जिन धारणाओं से नवीन यांत्रिकी का प्रारम्भ हुआ था उनका चमत्कारी रूप से प्रत्यक्ष समर्थन हो गया है।

इस खंड को समाप्त करने से पहले यह भी बता देना उचित होगा कि इलैक्ट्रानों के अतिरिक्त अन्य भौतिक कणिकाओं के विवर्तन का भी प्रेक्षण हो चुका है। प्रोटानों और द्रव्य-परमाणुओं का भी विवर्तन इलैक्ट्रानों के ही समान होता है। इस विषय के प्रयोग अधिक कठिन होते हैं और अभी तक उनकी संख्या भी अधिक नहीं है। किन्तु यह निश्चित है कि यहाँ भी तरंग-यांत्रिकी के सूत्र सही निकले हैं। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि तरंगों और कणिकाओं की आनुषंगिकता प्रकृति का एक महत्त्वपूर्ण नियम है और क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व और उसकी प्रकृति से यह द्वैत सम्बन्धित है। कोई कारण नहीं है कि उसे केवल इलैक्ट्रानों तक ही सीमित समझा जाय। अतः यदि वह समस्त भौतिक सत्ताओं में प्रकट होता है तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है।

५. तरंग-यांत्रिकी का भौतिकीय निर्वचन[2]

अब हमें यह जानने का प्रयत्न करना चाहिए कि किसी निकाय के तरंग-फलन[3] के ज्ञान का क्या उपयोग हो सकता है। प्राचीन यांत्रिकी तो ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के समान सन्निकटन मात्र ही थी। अतः इस सन्निकटन की सीमा के बाहर उस यांत्रिकी का और उसमें व्यवहृत समस्त धारणाओं और प्रतिरूपों का हमें परित्याग करना होगा। इसलिए हम स्थान, वेग और गमन-पथ की धारणाओं का उपयोग नहीं कर सकते—कम-से-कम बिना सावधानी के तो हरगिज नहीं। हमें इस विषय की

1. Oriented 2. Physical Interpretatson of Wave-mechanics 3. Wave-function

विवेचना पुनः करनी चाहिए और यह पता लगाना चाहिए कि हमारे तरंग-फलन-सम्बन्धी ज्ञान के द्वारा कणिकाओं से सम्बन्धित प्रेक्ष्य घटनाओं के विषय में किस प्रकार की प्रागुक्तियाँ प्राप्त हो सकती हैं। इस सम्बन्ध में मूल-कल्पनाएँ ऐसी होनी चाहिए जो यह आवश्यक शर्त पूरी करें कि जब कभी ψ–तरंग ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के नियम पालन करती हों तभी उनसे प्राचीन यांत्रिकी की धारणाएँ और परिणाम पुनः प्राप्त हो जायँ। हम देखेंगे कि नवीन यांत्रिकी का निर्वचन प्रायिकत्व पर अवलम्बित है, किन्तु इस प्रायिकत्वीय निर्वचन की विशद विवेचना हम परिच्छेद १० में करेंगे। इस समय तो हम इस प्रश्न के सम्बन्ध में स्थूल दृष्टि से केवल इतना ही बतायेंगे कि तरंग-यांत्रिकी के समीकरणों का उपयोग करने के लिए भौतिकज्ञों को किन बातों को मूल कल्पनाओं के रूप में स्वीकार कर लेना पड़ा था।

सबसे पहली बात तो यह है कि हमारे पूर्व कथनानुसार ψ–फलन किसी भौतिक कम्पन को व्यक्त नहीं कर सकता क्योंकि वह सम्मिश्र[1] फलन है। किन्तु हम इस बात का प्रयत्न कर सकते हैं कि इस ψ–फलन से हम कुछ ऐसे वास्तविक व्यंजक प्राप्त कर लें जिनका कोई भौतिक अर्थ भी हो। जो व्यंजक स्वभावतः ही सबसे पहले हमारे ध्यान में आता है वह है सम्मिश्र राशि ψ–के मापांक[2] का वर्ग[3]। यह वर्ग तरंग-फलन को उसकी संयुग्मी सम्मिश्र राशि[4] से गुणा करने से प्राप्त होता है। इस राशि को ψ–तरंग के आयाम[5] का वर्ग समझा जा सकता है। अर्थात् तरंग-सिद्धान्त के साधारण अर्थ में इसे तरंग की तीव्रता[6] समझा जा सकता है। इस महत्त्वपूर्ण राशि का क्या मतलब है यह बात समझने के लिए हमें प्रकाश के सिद्धान्त की शरण लेनी पड़ेगी जिसने पहले भी अनेक बार हमारा पथ-प्रदर्शन किया है और यह मालूम करना पड़ेगा कि फ़ोटानों का अस्तित्व स्वीकार करने पर प्रकाश-तरंग की तीव्रता का क्या अर्थ होता है। प्रकाश-विज्ञान में विवर्तन और व्यतिकरण के चिरप्रतिष्ठित प्रयोगों में से किसी एक पर विचार कीजिए। प्रत्येक विन्दु पर प्रकाश-तरंग की तीव्रता का परिकलन करके और यह मानकर कि प्रकाश-ऊर्जा का आकाशीय वितरण तरंग की तीव्रता का अनुपाती होता है, तरंग-सिद्धान्त दीप्त[7] और अदीप्त[8] फ्रिंजों[9] के स्थान निर्णीत कर देता है और हम जानते हैं कि यह कार्य कितनी उत्कृष्ट यथार्थता से सम्पन्न होता है। व्यतिकरण के नियम की यह परिकल्पना जिसकी सत्यता प्रकाश के विविध प्रत्यास्थी अथवा विद्युत्-चुम्बकीय

1. Complex 2. Modulus 3. Square 4. Conjugate Complex quantity 5. Amplitude 6. Intensity 7. Bright 8. Dark 9. Fringes

सिद्धान्तों में अनेक युक्तियों से सिद्ध हो चुकी है, तरंग-यांत्रिकी में भी मूल संकल्पना[1] समझी जा सकती है।

अब इसमें फ़ोटान की धारणा को निविष्ट कीजिए। तब प्रकाश की किरणावली को हम फ़ोटानों का प्रवाह समझ सकते हैं और इस दृष्टि से व्यतिकरण अथवा विवर्तन का प्रयोग यह प्रकट करता है कि उसमें व्यवहृत उपकरण[2] के कारण फ़ोटानों का आकाशीय वितरण एक-समान नहीं रहता और वे अदीप्त फ़्रिंजों से हटकर दीप्त फ़्रिंजों में एकत्र हो जाते हैं। और चूँकि इन प्रयोगों से तरंग-सिद्धान्त की प्रागुक्तियों का सत्यापन यथार्थतापूर्वक हो जाता है इसलिए हमें यह मानना पड़ता है कि उस सिद्धान्त द्वारा परिकलित तरंग-तीव्रता प्रत्येक विन्दु पर फ़ोटानों के घनत्व की अनुपाती होती है। किन्तु परिच्छेद ५ खंड ४ में हम पहले ही उन विचित्र प्रयोगों की चर्चा कर चुके हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि प्रकाश की अत्यन्त क्षीण किरणावली से भी व्यतिकरण संभव है। इन प्रयोगों में यदि व्यतिकरण के उपकरण में फ़ोटान उत्तरोत्तर पहुँचें तब भी व्यतिकरण उत्पन्न हो जाता है। अतः दीर्घ-कालीन प्रदीपन[3] के बाद भी सामान्य व्यतिकरण-चित्रों की उत्पत्ति की व्याख्या करने के लिए यह मानना आवश्यक हो जाता है कि प्रत्येक फ़ोटान की आनुषंगिक तरंग की तीव्रता उस स्थान पर फ़ोटान के पहुँचने की प्रायिकता को निर्दिष्ट करती है। इस प्रकार हमारा दृष्टिकोण सांख्यिकीय से बदलकर प्रायिकत्वीय हो जाता है और व्यतिकरण का नियम फ़ोटान के आकाशीय अवस्थापन की प्रायिकता का नियम बन जाता है। किन्तु अब यदि हम द्रव्य के सिद्धान्त पर पुनः विचार करें तो हमें मालूम हो जाता है कि यहाँ भी ठीक इसी तरह के नियम को स्वीकार करना पड़ेगा क्योंकि क्रिस्टल से इलैक्ट्रानों का विवर्तन बिलकुल उसी तरह का होता है जैसा कि उतने ही तरंग-दैर्घ्य के फ़ोटानों का होता है। अतः यहाँ भी इलैक्ट्रानों की आनुषंगिक तरंग की तीव्रता ही उनके आकाशीय अवस्थापन की प्रायिकता को निर्दिष्ट करती है। इस प्रकार हम निम्नलिखित नियम का प्रतिपादन कर सकते हैं। "ψ–फलन के मापांक का वर्ग प्रत्येक विन्दु पर और प्रत्येक क्षण पर यह व्यक्त करता है कि उस विन्दु और उस क्षण पर उस तरंग की आनुषंगिक कणिका के प्रेक्षण की प्रायिकता कितनी है।" ऐसा नियम हमारी पूर्ववर्ती धारणाओं में कितना अधिक परिवर्तन कर देता है इस बात की ओर से हमें आँख नहीं मूंद लेनी चाहिए। सामान्यतः ψ–तरंग आकाश के किसी नियत क्षेत्र में ही व्याप्त रहती है, अतः आनुषंगिक कणिका भी इसी

1. Postulate 2. Apparatus 3. Illumination

प्रदेश में किसी भी स्थान पर पायी जा सकती है। किसी भी क्षण पर उस कण का कोई निश्चित स्थान निर्णीत नहीं हो सकता, किन्तु यह बताया जा सकता है कि अमुक स्थान पर उसकी उपस्थिति की प्रायिकता कितनी है। और सुनिर्णीत स्थान के साथ-साथ वेग और गमन-पथ की धारणाएँ भी नष्ट हो जाती हैं—कम-से-कम अस्पष्ट तो हो ही जाती हैं। पुरानी यांत्रिकी की निश्चितता का स्थान सर्वत्र ही प्रायिकता ले लेती है। इससे हमें घटनाओं के निरूपण की और प्रागुक्ति की वैज्ञानिक विधि में महत्त्व-पूर्ण परिवर्तन होने का आभास मिलता है और इस परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण दार्शनिक परिणाम भी निहित हैं।

इन प्रश्नों के अध्ययन को आगे के लिए स्थगित करके अब हम उस दूसरे नियम का उल्लेख करेंगे जिसे तरंग-यांत्रिकी के भौतिक निर्वचन के लिए भौतिकज्ञों को स्वीकार करना पड़ा था। हमारा विश्वास है कि कणिकाओं की टक्करों[1] की समस्याओं के उत्कृष्ट तरंग-यांत्रिकीय अध्ययन के प्रारम्भ में बोर्न[2] ने ही इस दूसरे नियम का प्रतिपादन सबसे पहले किया था। इस नियम को "स्पैक्ट्रमीय विघटन-नियम"[3] नाम दिया जा सकता है। इस नवीन नियम का मर्म समझने के लिए बल-क्षेत्र के अभाव में गतिशील कणिका की सरल समस्या पर विचार कीजिए। यदि इस कणिका की आनु-षंगिक तरंग एक-वर्ण समतल तरंग[4] हो तो हमें विदित है कि कणिका की ऊर्जा का मान सुनिर्णीत होता है और वह तरंग की आवृत्ति और h के गुणनफल के बराबर होता है। किन्तु तरंग-सिद्धान्तीय दृष्टि से हम ψ—तरंग को एक-वर्ण मानने के लिए बाध्य नहीं हैं। इस तरंग को अनेक एक-वर्ण समतल तरंगों के अध्यारोपण द्वारा निर्मित तरंग-संघ[5] मानना भी उतना ही युक्ति-संगत है। तरंग-प्रचरण के रैखिक समीकरण की सन्तुष्टि में भी इससे कोई बाधा उपस्थित नहीं होती। किन्तु तब आनुषंगिक कणिका की ऊर्जा कितनी होगी? यह प्रश्न बड़ा विकट है क्योंकि इस ψ—तरंग में अनेक आवृत्तियों का समावेश है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए बोर्न ने फिर प्रायिकता का सहारा लिया। उनके मतानुसार कणिका की ऊर्जा पूर्णतः निर्णीत नहीं होती। तरंग की अनेक आवृत्तियों में से किसी भी एक आवृत्ति के अनुरूप उसकी ऊर्जा का मान हो सकता है। इसका अधिक यथार्थता-पूर्ण अर्थ यह है कि यदि उस कणिका की ऊर्जा को नापा जाय तो उसका मान इन्हीं मानों में से किसी एक के बराबर निकलेगा, किन्तु हम पूर्वतः यह नहीं कह सकते कि वह कौन-सा होगा। किन्तु बोर्न द्वारा प्रति-

1. Collisions 2. Born 3. Principle of Spectral decomposition 4. Plane monochromatic wave 5. Wave-group

पादित इस नवीन नियम के अनुसार हम पूर्वतः ही यह अवश्य कह सकते हैं कि ऊर्जा के विविध संभाव्य मानों के प्रेक्षण की प्रायिकताएँ कितनी-कितनी हैं। कणिका की आनुषंगिक तरंग अनेक एक-वर्ण समतल तरंगों के अध्यारोपण के द्वारा निर्मित है ऐसा कहने का अर्थ यह है कि गणितीय दृष्टि से ψ–फलन वास्तव में अनेक एक-वर्ण तरंगों का निरूपण करनेवाले पदों का जोड़ होता है, प्रत्येक पद के साथ एक-एक गुणक लगा रहता है जिसे हम उस ψ–तरंग के स्पैक्ट्रमीय विघटन के उसी एक-वर्ण संघटक का आंशिक आयाम कह सकते हैं और इस आयाम के मापांक का वर्ग तत्संगत आंशिक तीव्रता के बराबर होता है। अतः बोर्न द्वारा प्रतिपादित नियम यह बताता है कि कणिका की ऊर्जा के नापने से उस ψ–तरंग के किसी एक-वर्ण संघटक के अनुरूप मान प्राप्त करने की प्रायिकता उस तरंग के स्पैक्ट्रमीय विघटन से प्राप्त तत्संगत आंशिक तीव्रता के बराबर होती है। यह नियम बिलकुल वैसा ही है जैसा कि प्रकाश-विज्ञान के अनुसार होना चाहिए।

यदि प्रकाश की कोई असरल तरंग किसी प्रिज़्म या ग्रेटिंग पर पड़े तो उस उपकरण में से निकलने पर उस तरंग के विभिन्न एक-वर्ण संघटक पृथक् हो जाते हैं। इसलिए स्पष्टतः हमें यह कहना चाहिए कि प्रारम्भ की अविच्छिन्न रश्मि का फ़ोटान अन्त में अमुक विघटित रश्मि में जायगा इस बात की प्रायिकता उस आपतित तरंग के तत्संगत स्पैक्ट्रमीय एक-वर्ण संघटक की तीव्रता की अनुपाती होती है। इसके अतिरिक्त हमें इस प्रश्न पर अधिक व्यापक दृष्टिकोण से विचार करना चाहिए। स्पैक्ट्रमीय विघटन के नियम को क्वांटमित परमाणु-निकायों पर लगाने से हमें उस कठिनाई की कुंजी मिल जाती है जिसकी चर्चा हम पहले कर चुके हैं। क्वांटमित परमाणु में क्वांटमित ऊर्जाओं-वाली स्थावर अवस्थाओं के अनुरूपी आवृत्तियों की एक श्रेणी विद्यमान रहती है। किन्तु ऐसे निकाय में कम्पनशील तार के ही समान यह समझा जा सकता है कि कोई भी विशिष्ट अवस्था अनेक स्थावर अवस्थाओं के अध्यारोपण के द्वारा उत्पन्न होती है क्योंकि अनेक उपयुक्त कम्पनों के जोड़ को ही ψ–फलन मानकर भी तरंग-प्रचरण के समीकरण का हल प्राप्त किया जा सकता है, क्योंकि वह समीकरण रैखिक होता है। किन्तु इस ψ–फलन द्वारा निरूपित अवस्था में यह नहीं कहा जा सकता कि परमाणु अपनी किसी एक ही स्थावर अवस्था में है। किसी-न-किसी प्रकार वह एक ही क्षण पर एक ही साथ अनेक स्थावर अवस्थाओं में विद्यमान है। स्पष्ट है कि चिर-प्रतिष्ठित धारणाओं के अनुसार यह बात किसी तरह भी समझ में नहीं आ सकती। किन्तु स्पैक्ट्रमीय विघटन के नियम से यह कठिनाई अनपेक्षित ढंग से दूर हो जाती है। अपनी ψ–तरंग

के स्पैक्ट्रमीय प्रसार में निरूपित ऊर्जा के अनेक क्वांटमित मानों में से परमाणु की ऊर्जा का केवल एक ही मान संभव हो सकता है और इसकी प्रायिकता तत्संगत स्पैक्ट्रमीय संघटक की तीव्रता की अनुपाती होती है। यहाँ भी इसका अर्थ यही है कि यदि किसी प्रयोग के द्वारा परमाणु की ऊर्जा का मान नापा जाय तो यह मान स्पैक्ट्रमीय विघटन में उपस्थित ऊर्जा के मानों में से ही किसी एक के बराबर होगा। जिस सर्वथा नवीन दिशा में भौतिक सिद्धान्त अब अग्रसर होने को है उसका एक और पूर्व-संकेत हमें इन निर्वचनों के प्रायिकत्वीय लक्षण से मिल जाता है।

उपर्युक्त दोनों नियमों की तुलना करने पर हमें वे अनिश्चितता के अनुबन्ध[1] प्राप्त होते हैं जिनके साथ हाइज़नबर्ग का नाम संलग्न है। किन्तु इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न के अध्ययन के लिए अधिक उपयुक्त स्थान वह परिच्छेद होगा जिसमें हम नवीन यांत्रिकी का प्रायिकत्वीय विवेचन करेंगे। अतः यहाँ इस विषय में और अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है।

६. गैमो का सिद्धान्त[2]

तरंग-यांत्रिकी का गैमो ने जो अत्यन्त मनोरंजक उपयोग किया है उसका अब हम कुछ वर्णन करना चाहते हैं। इस उपयोग का जो अन्वेषणात्मक[3] महत्त्व स्वोत्सर्जिता[4] के क्षेत्र में है उसके अतिरिक्त इसकी रोचकता का कारण यह है कि इसके द्वारा यह प्रकट हो जाता है कि प्राचीन यांत्रिकी के स्थान में नवीन यांत्रिकी का सहारा लेने पर कई समस्याओं का रूप किस प्रकार बदल जाता है।

उदाहरण के लिए एक ऐसी कणिका को लीजिए जिस पर ऐसा बल-क्षेत्र लग रहा है जो उसकी गति को रोकता है और मान लीजिए कि यह बल-क्षेत्र स्थैतिक[5] है। यह संभव है कि किसी विन्दु पर इस बल-क्षेत्र का मान शून्य हो जाय और वहाँ इसकी दिशा का परिवर्तन हो जाता हो। तब जिस विभव-फलन[6] से यह व्युत्पन्न हुआ हो वह पहले बढ़ता-बढ़ता महत्तम मान प्राप्त कर लेता है और तब घटने लगता है। इस बात को आलंकारिक भाषा में हम यों कह सकते हैं कि उस स्थान पर एक विभव-पर्वत[7] विद्यमान है। जो कणिका इस पर्वत पर आरोहण करना प्रारम्भ करती है वह क्या चोटी पर चढ़कर दूसरी ओर पहुँचने में सफल हो जायगी? इस प्रश्न का चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी ने निम्नलिखित उत्तर दिया था। हाँ, यदि उस कणिका में चोटी

1. Uncertainty relation 2. The Theory of Gamow 3. Heuristic 4. Rapio-activity 5. Static 6. Potential function 7. Mountain of potential

पर चढ़ने के लिए और दूसरी ओर उतर सकने के लिए पर्याप्त ऊर्जा हो तो वह इस पर्वत को लाँघ सकती है। किन्तु यदि कणिका में चोटी पर पहुँच सकने लायक ऊर्जा नहीं है तो वह उस पर्वत को कभी नहीं लाँघ सकती क्योंकि चोटी पर पहुँचने से पहले ही उसकी समस्त ऊर्जा खर्च हो जायगी और वह पर्वत के इसी ओर के ढाल पर रुक जायगी तथा अन्त में पुनः नीचे की ओर लौट जायगी।

किन्तु तरंग-यांत्रिकी में यह घटना बिलकुल दूसरी ही तरह घटती है। वहाँ तो हमें कणिका की आनुषंगिक तरंग का चित्रण करना पड़ता है। यह प्रमाणित किया जा सकता है कि जब तक विभव का मान कणिका की उपयोज्य[1] ऊर्जा से कम हो तब तक तो उस तरंग के लिए विभव-पर्वत वर्तक माध्यम[2] के समान होता है। यदि विभव-पर्वत की चोटी से कणिका की ऊर्जा अधिक हो तो कणिका आसानी से दूसरी ओर जा पहुँचेगी। यहाँ तक तो प्राचीन सिद्धान्त से कोई अन्तर नहीं है। किन्तु यदि कणिका की ऊर्जा पर्वत की चोटी से कम हो तो पर्वत का वह समस्त भाग जहाँ का विभव कणिका की ऊर्जा से अधिक है, आनुषंगिक तरंग के लिए उग्र अवशोपक अथवा क्षयकारी माध्यम[3] का काम करता है। तरंग-सिद्धान्त के अनुसार जब कोई तरंग अवशोपक माध्यम पर आपतित होती है तो वह उस माध्यम में थोड़ी दूर तक घुस तो जाती है, किन्तु अत्यन्त अवमन्दित[4] रूप में। यदि अवशोषक माध्यम की मोटाई काफ़ी कम हो तो उस तरंग का कुछ अंश—साधारणतः अत्यन्त अल्पांश—उस माध्यम को पार करके दूसरी ओर पहुँच सकता है। प्रकाश-विज्ञान में यह तथ्य पूर्णतः सत्यापित हो चुका है। यदि तरंग-यांत्रिकी में भी यही नियम लगाया जाय तो जिस कणिका की ऊर्जा विभव-पर्वत की चोटी पर पहुँचने के लिए आवश्यक ऊर्जा से बहुत कम हो वह भी उस विभव-पर्वत को लाँघ सकती है यदि पर्वत काफ़ी पतला हो। अधिक यथार्थतापूर्वक यों कह सकते हैं कि विभव-पर्वत की चोटी पर पहुँचने के लिए अपर्याप्त ऊर्जावाली कणिका के लिए भी उस पर्वत के पार पहुँच जाने की कुछ-न-कुछ प्रायिकता विद्यमान रहती है। यह प्रायिकता निःसन्देह बहुत ही कम होती है; किन्तु बिलकुल शून्य नहीं होती। यह घटना आनुषंगिक तरंग के प्रायिकत्वीय निर्वचन का तथा व्यतिकरण नियम का परिणाम है। अतः यह तरंग-यांत्रिकी की ही विशेषता है और बहुधा सुरंग-प्रभाव[5] के चित्रमय नाम के द्वारा इसका वर्णन किया जाता है।

1. Available 2. Refracting medium 3. Extinguishing medium 4. Demped 5. Tunnel effect

अब मान लीजिए कि कोई कणिका ऐसे स्थान में अवस्थित है जो सभी दिशाओं में इतने ऊँचे विभव-पर्वतों से घिरा है कि वह ऊपर चढ़कर उन्हें लाँघ नहीं सकती। चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के अनुसार तो वह कणिका सदा के लिए इस विभव-उपत्यका[1] में बन्दी रहेगी। किन्तु इसके विपरीत तरंग-यांत्रिकी के अनुसार इस कणिका के लिए भी उपत्यका में से बाहर निकल जाने की कुछ अत्यन्त थोड़ी-सी संभावना है। और एक मात्रक समय में इसके निकल भागने की जितनी प्रायिकता है उसका परिकलन नवीन यांत्रिकी के सूत्रों के द्वारा हो सकती है।

और अब हम उपर्युक्त विचारधारा के उस उपयोग पर आते हैं जो गैमो ने और लगभग उसी समय कान्डन तथा गुरने[2] ने स्वोत्सर्जी पदार्थों के विघटन[3] की समस्या के सम्बन्ध में किया था। यह विदित है कि बहुत बड़ी संख्या ऐसे स्वोत्सर्जी तत्त्वों की है जो आलफ़ा-किरणों का उत्सर्जन करके अन्य तत्त्वों में परिणत हो जाते हैं। यह कल्पना हो सकती है कि ये α–किरणें इन तत्त्वान्तरणशील[4] परमाणुओं के नाभिक में पहले से ही विद्यमान रहती हैं और विभव-पर्वतों से घिरी हुई उपत्यका में कैद रहती हैं। इन विभव-पर्वतों के बाह्य ढाल का रूप तो हमें मालूम है क्योंकि कूलम्ब का नियम नाभिक के समीपवर्ती प्रदेश में नाभिक के अत्यन्त निकट तक सत्यापित हो चुका है। किन्तु इस बात की प्रायिकता अधिकतम है कि अन्त में नाभिक के निकट किसी विशेष दूरी पर पहुँचने पर कूलम्ब का नियम यथार्थतापूर्ण नहीं रहता। अतः महत्तम मान को प्राप्त करके विभव पुनः घटने लगेगा। किन्तु विभव-पर्वत के अन्दर की तरफ के ढाल का रूप सर्वथा अज्ञात है। परन्तु एक तथ्य ऐसा है जिसने भौतिकज्ञों को बहुत चकित कर दिया था। जो α–कणिकाएँ इन तत्त्वान्तरणशील नाभिकों में से निकलती हैं उनकी ऊर्जा इतनी कम होती है कि वह नाभिक के परि-रक्षक विभव-पर्वत को पार करने के लिए पर्याप्त हो ही नहीं सकती। इस पर्वत के बाह्य ढाल का प्रेक्षण हम जितनी दूर तक कर सकते हैं वही वस्तुतः यह प्रकट करने के लिए काफ़ी है कि पर्वत की चोटी कम-से-कम अमुक ऊँचाई से तो अधिक है ही। किन्तु नाभिक में से जो α–कणिकाएँ निकलती हैं उनमें इतनी ऊर्जा नहीं होती कि हम यह समझ सकें कि वे उस चोटी पर पहुँच सकी थीं। इस प्रकार चिर-प्रतिष्ठित धारणाओं के अनुसार तो हमारे सामने दुर्लंघ्य बाधा उपस्थित हो जाती है। किन्तु सुरंग-प्रभाव के द्वारा सब बातें स्पष्ट हो जाती हैं। यह ठीक है कि तत्त्वान्तरणशील पदार्थ के नाभिक में α–कणिका ऐसी उपत्यका में

1. Potential-valley 2. Condon and Gurney 3. Disintegration 4. Transmutable.

अवस्थित है जो विभव-पर्वतों से घिरी है और इन पर्वतों की चोटियाँ इतनी ऊँची हैं कि वह कणिका वहाँ नहीं चढ़ सकती। फिर भी प्रत्येक मात्रक समय में इस बात की कुछ-न-कुछ प्रायिकता रहती ही है कि वह उस उपत्यका में से बाहर निकल सके। स्पष्टतः ही यह प्रायिकता उस स्वोत्सर्जी पदार्थ के विघटनांक[1] के बराबर होती है। इसलिए यदि हमें नाभिक को बन्दी रखनेवाले विभव-पर्वत के रूप का ठीक-ठीक ज्ञान हो तो तरंग-यांत्रिकी की विधि से हम स्वोत्सर्जी पदार्थों के विघटनांक की गणना α–कणिकाओं के द्वारा कर सकते हैं। विभव-पर्वत के रूप के सम्बन्ध में कुछ सत्याभासी परिकल्पनाएँ बनाकर गैमो ने सिद्ध कर दिया है कि सिद्धान्ततः ऐसे परिणाम प्राप्त हो जाते हैं जिनमें वास्तविकता से बहुत ही थोड़ा अन्तर होता है।

गैमो के सिद्धान्त की एक प्रमुख सफलता यह है कि उससे गाइगर-नटाल[2] नियम की व्याख्या हो जाती है। इस नियम के अनुसार दीर्घ अर्धायु[3]वाले तत्त्वों की अपेक्षा छोटी अर्धायुवाले तत्त्वों के लिए α–किरणों का उत्सर्जन-वेग[4] अधिक होता है। गणितीय भाषा में यह नियम विघटनांक के तथा तत्त्वान्तरण में उत्सर्जित α–कणिका की ऊर्जा के पारस्परिक सम्बन्ध के द्वारा व्यक्त किया जाता है और उससे यह प्रकट होता है कि α–कणिकाओं की ऊर्जा के किसी फलन के अनुसार विघटनांक बड़ी शीघ्रता से परिवर्तित होता है। गैमो ने प्रमाणित कर दिया है कि उनका सिद्धान्त इस नियम का कारण अत्यन्त सूक्ष्मतापूर्वक बता देता है। इस सांगत्य का कारण समझना आसान है। स्पष्ट है कि उपत्यका में बन्दी कणिका की ऊर्जा पर्वत की चोटी पर पहुँचने के लिए आवश्यक ऊर्जा से जितनी ही कम होगी उतनी ही उसके बाहर निकल सकने की प्रायिकता भी कम होगी। और यह प्रायिकता बन्दी कणिका की ऊर्जा के साथ-साथ बड़ी शीघ्रता से घटती है। चूंकि यह प्रायिकता विघटनांक के बराबर होती है और सुरंग-प्रभाव के द्वारा बाहर निकलने के कारण कणिका में उतनी ही ऊर्जा विद्यमान रहती है जितनी कि निकलने से पहले थी, अतः विघटनांक में और तत्त्वान्तरण (ट्रांसम्यूटेशन) में उत्सर्जित α–कणिका की ऊर्जा में एक सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। इस प्रकार निगमित नियम का रूप वही निकलता है जो प्रयोग द्वारा प्राप्त नियम का होता है। और नाभिकीय विभव-पर्वत के ढाल के सम्बन्ध में कुछ सत्याभासी परिकल्पनाओं के द्वारा इन दोनों में संख्यात्मक एकता भी संभव हो जाती है।

1. Disintegration constant 2. Geiger-Nuttall 3. Half-life 4. Emission-velocity

गैमो का सिद्धान्त निःसन्देह बहुत ही अपूर्ण है क्योंकि भारी स्वोत्सर्जी तत्त्वों का नाभिक अवश्य ही कुछ अधिक जटिल होता है और उसे केवल α—कणिका-युक्त विभव-उपत्यका का सरल रूप नहीं दिया जा सकता। फिर भी बहुत से तथ्यों के स्पष्टीकरण में गैमो के सिद्धान्त को जो सफलता मिली है उससे तरंग-यांत्रिकी की नवीन धारणाओं का महत्त्व भी प्रकट होता है और प्रयोगलब्ध तथ्यों के द्वारा जो अनिवार्य कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं उनको दूर करने के लिए प्रायिकतामूलक विचारधारा की आवश्यकता भी स्पष्ट हो जाती है।

नवाँ परिच्छेद

हाइज़नबर्ग की क्वांटम-यांत्रिकी

१. हाइज़नबर्ग के पथ-प्रदर्शक विचार[1]

हाइज़नबर्ग का क्वांटम-यांत्रिकी सम्बन्धी प्रथम लेख १९२५ में प्रकाशित हुआ था अर्थात् तरंग-यांत्रिकी के मौलिक विचारों के और श्रोडिंगर के लेखों के प्रकाशित होने के बीच के समय में। किन्तु इन वैज्ञानिकों के उद्देश्य से हाइज़नबर्ग का उद्देश्य सर्वथा भिन्न था। वास्तव में जिन विचारों से तरंग-यांत्रिकी का सर्व-प्रथम जन्म हुआ था उनमें और जिन विचारों ने हाइज़नबर्ग का पथ-प्रदर्शन किया था उनमें कोई भी प्रकट सम्बन्ध नहीं था और जिस वैधानिक पद्धति से क्वांटम-यांत्रिकी का निर्माण किया गया था वह भी बहुत ही विशेष प्रकार की थी। सबसे पहले हम हाइज़नबर्ग के उन पथ-प्रदर्शक विचारों का ही अध्ययन करेंगे।

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं हाइज़नबर्ग उस कोपनहैगेन संप्रदाय[2] के वैज्ञानिक थे जो बोह्र के नेतृत्व में स्थापित और परिवर्धित हुआ था और उनके प्रथम प्रयासों का उद्देश्य आनुरूप्य-विधि[3] का उपयोग ही था। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि इस विधि की अत्यन्त मौलिक और अत्यन्त गम्भीर भावना उनकी विचारधारा में व्याप्त हो जाय। और आनुरूप्य-नियम[4] के अध्ययन से जो सारभूत धारणाएँ उत्पन्न हुई थीं उनमें से एक यह थी। चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त तो क्वांटमित निकाय से सम्बन्धित राशियों को फूरियर श्रेणी के रूप में व्यक्त करता है और इस श्रेणी का प्रत्येक पद विकिरण के संतत[5] और यौगपदिक[6] उत्सर्जन का द्योतक होता है, किन्तु क्वांटम-सिद्धान्त उन्हीं राशियों को ऐसे अवयवों में विघटित कर देता है जो उस परमाणु के लिए संभाव्य

1. The Guiding Ideas of Heisenberg 2. Copenhagen School 3. Method of correspondence 4. Correspondence principle 5. Continuous 6. Simultaneous

विभिन्न क्वांटम-संक्रमणों से सम्बन्धित होते हैं और इनमें से प्रत्येक अवयव विकिरण के उत्सर्जन की एक असंतत[1] और एकाकी[2] प्रक्रिया से सम्बन्धित होता है। यह पहले बताया जा चुका है कि बोह्र के विख्यात नियम का उद्देश्य इन दो असदृश निरूपणों में अनुरूपता—कम-से-कम अनन्त-स्पर्शी[3] अनुरूपता—स्थापित करना था। ऐसा जान पड़ता है कि जिस बात ने हाइज़नबर्ग को प्रभावित किया वह यह थी कि चिरप्रतिष्ठित दृष्टिकोण से हटकर क्वांटम दृष्टिकोण पर पहुँचने के लिए यह आवश्यक है कि समस्त भौतिक राशियों को विघटित करके उन्हें क्वांटमित परमाणु के विभिन्न संभाव्य संक्रमणों के अनुरूपी पृथक्-पृथक् अवयवों का चूर्ण बना दिया जाय। इसी से किसी भी निकाय से सम्बन्धित प्रत्येक भौतिक राशि को विशेष प्रकार की अंक-सारणी[4] के द्वारा व्यक्त करने का विचार उत्पन्न हुआ जो प्रारम्भ में अत्यन्त क्षोभकारी प्रतीत होता था। यह अंक-सारणी उसी सारणी के समान थी जिसे गणितज्ञ मैट्रिक्स[5] कहते हैं। चिरप्रतिष्ठित निरूपण की फ़ूरियर श्रेणी न जाने किस प्रकार चूर्णित होकर अनन्त असंलग्न अवयवों में विभक्त हो जाती है और इन अवयवों का समुदाय तब भी उस राशि का निरूपण करता रहता है। निश्चय ही यह आवश्यक है कि इन अवयवों पर कुछ ऐसे नियमों का नियंत्रण रहे जिनके कारण विभिन्न संक्रमणों के और चिर-प्रतिष्ठित फ़ूरियर श्रेणी के पदों के बीच में बोह्र द्वारा निर्दिष्ट विधि से अनुरूपता स्थापित करके बड़ी क्वांटम-संख्याओं के लिए हम अनन्त-स्पर्शी एकता प्राप्त कर सकें।

राशियों को मैट्रिक्स-अवयवों के समुदाय द्वारा निरूपित करने की इस नवीन विधि को स्वीकार करने में हाइज़नबर्ग को एक और भी लाभ दिखाई दिया। इस निरूपण में उन सब अप्रेक्ष्य[6] राशियों से छुटकारा मिल जाता है जिनसे पूर्ववर्ती सभी क्वांटम-सिद्धान्त आक्रान्त थे। दर्शनशास्त्रीय भाषा के दुरूह शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि उन्होंने शुद्धतः प्रेक्ष्य-घटनामूलक[7] दृष्टिकोण को अपनाया और उन्हें यही वांछनीय मालूम हुआ कि भौतिक-सिद्धान्त में से वे सब बातें निकाल देनी चाहिए जिनका प्रेक्षण संभव नहीं है। पारमाणविक सिद्धान्तों में परमाणु के आभ्यन्तरिक इलैक्ट्रानों के स्थान, वेग और कक्षाओं को निविष्ट करने से क्या लाभ; जब कि इन अवयवों का प्रेक्षण अथवा माप संभव ही नहीं है। परमाणु के सम्बन्ध में जो कुछ हम जानते हैं वह केवल उसकी स्थावर अवस्थाएँ, स्थावर अवस्थागत संक्रमण, और इन संक्रमणों से सम्बन्धित

1. Discontinuous 2. Individual 3. Assymptotic 4. Table of numbers 5. Matrix. 6. Unobservable 7. Phenomenological

विकिरण। अत: हमें अपने परिकलनों में भी वे ही अवयव सम्मिलित करने चाहिए जो इन प्रेक्ष्य वास्तविकताओं से संबद्ध हों। हाइज़नबर्ग इसी कार्यक्रम को पूरा करना चाहते थे। उनकी मैट्रिक्सों में य अवयव पंक्तियों[1] और स्तंभों[2] में विन्यस्त होते हैं और प्रत्येक अवयव दो ऐसे संकेतांकों[3] द्वारा निर्दिष्ट होता है जिनसे पंक्ति तथा स्तम्भ की क्रमिक संख्याएँ व्यक्त होती हैं। विकर्णी अवयव[4] (अर्थात् वे अवयव जिनके संकेतांक बराबर होते हैं) स्थावर अवस्थाओं के द्योतक होते हैं और अविकर्णी अवयव[5], जिनके संकेतांक बराबर नहीं होते, इन संकेतांकों द्वारा निर्णीत स्थावर अवस्थाओं के बीच में होनेवाले संक्रमणों को व्यक्त करते हैं। और इन अवयवों के मान आनुरूप्य-नियम के सूत्रों के द्वारा उन राशियों से सम्बद्ध हैं जो उन संक्रमणों में उत्सर्जित विकिरणों को परिलक्षित करती हैं। इस प्रकार यह निरूपण ऐसा बन गया है जिसमें सब कुछ प्रेक्ष्य घटनाओं पर ही आधारित रहता है।

स्पष्टत: यह विचारणीय है कि क्या सचमुच ही हाइज़नबर्ग समस्त अप्रेक्ष्य राशियों के निरसन[6] में सफल हो गये। उनकी क्वांटम-यांत्रिकी की वैधानिक प्रक्रियाओं में पारमाणविक इलैक्ट्रानों के निर्देशांकों और संवेगों का निरूपण करनेवाले मैट्रिक्सों के अस्तित्व से तो इस विषय में कुछ सन्देह हो सकता है। किन्तु यद्यपि हाइज़नबर्ग के दृढ़-संकल्पी प्रयास से भी उनका दार्शनिक कार्यक्रम पूर्णत: सफल नहीं हो सका, फिर भी उससे एक अत्यन्त विचित्र प्रकार की नवीन यांत्रिकी का प्रादुर्भाव तो हो ही गया और अनेक आश्चर्यजनक परिणाम भी निकल आये। नवीन क्वांटम-सिद्धान्तों के विकास में यह अवश्य ही एक आवश्यक कदम था।

२. क्वांटम-यांत्रिकी[7]

गणितीय प्रक्रियाओं के उपयोग के बिना क्वांटम-यांत्रिकी की रूप-रेखा को सरसरी तौर से भी प्रस्तुत करना अत्यन्त ही कठिन काम है क्योंकि यह कहना अनुचित नहीं है कि इस नवीन यांत्रिकी का सार वास्तव में उसके प्रक्रिया-तंत्र में ही निविष्ट है। फिर भी हम स्थूल रूप से यह बताने का प्रयत्न करेंगे कि यह क्वांटम-यांत्रिकी अथवा मैट्रिक्स-यांत्रिकी[8] क्या है जिसको हाइज़नबर्ग ने जन्म दिया और जिसके विकास का श्रेय उनके साथ-साथ बोर्न[9] और जोरडन[10] को भी है।

1. Rows 2. Columns 3. Indices 4. Diagonal elements 5. Non-diagonal elements 6. Elimination 7. Quantum Mechanics 8. Matrix Mechanics 9. Born 10. Jordon

परमाणु-सिद्धान्त में साधारणतः प्रयुक्त भौतिक राशियों के स्थान में अंक-सारणियों अथवा मैट्रिक्सों का उपयोग करने के विचार से हाइज़नबर्ग ने इस यांत्रिकी का प्रारम्भ किया था। प्रत्येक मैट्रिक्स को एक अविभक्त गणितीय सत्ता समझकर आनुरूप्य-विधि की सहायता से पहले उन्होंने इन विभिन्न मैट्रिक्सों को जोड़ने और गुणा करने के नियम स्थापित करने का प्रयत्न किया। तब उन्हें पता लगा कि ये जोड़ और गुणा के नियम बिलकुल वैसे ही थे जैसे कि उन मैट्रिक्सों के होते हैं जिनका व्यवहार गणितज्ञ बीजीय समीकरणों[1] के अथवा रैखिक प्रतिस्थापन[2] के सिद्धान्तों में पहले से करते रहे थे। यद्यपि यह परिणाम स्वतः स्पष्ट नहीं है तथापि इससे समस्या बहुत कुछ सरल हो गयी क्योंकि बीजीय मट्रिक्सों के गुण-धर्म बहुत पहले से ही ज्ञात थे। इन मैट्रिक्सों में एक विचित्र गुण यह है कि इनका गुणा व्यत्ययशील[3] नहीं होता। गुणनफल गुणनखंडों के क्रम पर भी अवलम्बित होता है। प्रथम मैट्रिक्स को द्वितीय मैट्रिक्स से गुणा करने पर गुणनफल उतना नहीं होता जितना कि द्वितीय को प्रथम से गुणा करने पर प्राप्त होता है। अतएव हाइज़नबर्ग ने भौतिक राशियों को ऐसी संख्याओं के द्वारा व्यक्त किया जिनके गुणन में व्यत्ययशीलता का गुण नहीं होता। यही तथ्य क्वांटम-यांत्रिकी का मूल आधार समझा जा सकता है और डिरैक[4] की गवेषणा के प्रारम्भ में यही दृष्टिकोण अपनाया गया था। उन्होंने अपनी धारणा यह बनायी कि चिर-प्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान से क्वांटम-भौतिक विज्ञान में संक्रमण अत्यन्त सरलतापूर्वक हो सकता है यदि भौतिक राशियों को साधारण संख्याओं के स्थान में ऐसी क्वांटम-संख्याओं के द्वारा निरूपित किया जाय जिनका गुणन व्यत्ययशील नहीं होता। उस समय अनेक भौतिकज्ञों को यह परिवर्तन सरल नहीं प्रतीत हुआ। हाइज़नबर्ग के लिए यह भी आवश्यक था कि वे किसी ऐसी युक्ति का आविष्कार करें जिससे उनके सिद्धान्त में क्रिया का क्वांटम निविष्ट हो जाय। इसके लिए भी उन्होंने उसी उपाय का अवलम्बन किया जिससे कि पुराने क्वांटम-सिद्धान्त के चिर-प्रतिष्ठित समीकरणों में नियतांक h निविष्ट किया गया था। और उन्होंने आनुरूप्य-विधि की सहायता से h के इस निवेषण को अपनी नवीन यांत्रिकी में सम्मिलित कर लिया। यह विधि अत्यन्त सुनिश्चित थी, किन्तु प्रारम्भ में बड़ी आश्चर्यजनक जान पड़ी। उन्हें यह परिकल्पना बनानी पड़ी कि किसी निर्देशांक से सम्बद्ध मैट्रिक्स को जब उसके संयुग्मी संवेग[5] के संघटक

1. Algebraical equations 2. Linear substitution 3. Commutative 4. Dirac 5. Conjugate momentum

से सम्बद्ध मैट्रिक्स से गुणा किया जाता है तो इन गुणनखंडों का क्रम अर्थहीन नहीं होता और इन गुणनखंडों के एक क्रम से प्राप्त गुणनफल में और विपरीत क्रम से प्राप्त गुणनफल में जो अन्तर होता है वह प्लांक के नियतांक h और किसी संख्यात्मक नियतांक के गुणनफल के बराबर होता है। क्वांटम-यांत्रिकी के अन्य सब वैधानिक चर[1] व्यत्ययशील होते हैं अर्थात् उनके गुणनफल गुणनखंडों के क्रम पर अवलम्बित नहीं होते। केवल जब दो ऐसी राशियों के गुणनफल का विचार किया जाता है जो वैश्लेषिक यांत्रिकी के दृष्टिकोण से वैधानिकतः संयुग्मित[2] हों तभी व्यत्ययशीलता की कमी प्रकट होती है और इस कमी का माप h के द्वारा होता है। स्थूल-स्तरीय घटनाओं में h उपेक्षणीय होता है। अतः सब यांत्रिकीय राशियाँ व्यत्ययशील समझी जा सकती हैं और हम पुनः चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी पर लौट आते हैं। यही होना आवश्यक भी है। यद्यपि इस प्रकार व्यत्यय-हीनतावाले समीकरणों के द्वारा प्लांक के नियतांक का निवेषण हाइज़नबर्ग के दृष्टिकोण से स्वाभाविक ही है तथापि यह कुछ विचित्र-सा मालूम पड़ता है। आगे चलकर हम यह बतायेंगे कि तरंग-यांत्रिकी के द्वारा इस रहस्य का उद्घाटन कैसे होता है।

इस प्रकार भौतिक राशियों के निरूपण में प्रयुक्त मैट्रिक्सों के गुण-धर्मों में यथार्थता स्थापित करने के बाद हाइज़नबर्ग के लिए इन मैट्रिक्सों के समयानुसारी परिवर्तन को व्यक्त करने वाले समीकरणों का निर्माण करने की आवश्यकता हुई। अर्थात् उन्हें अब अपने गति-विज्ञान का निर्माण करना था। इसके लिए उन्होंने साहसपूर्वक यह मान लिया कि ये मैट्रिक्स जिन समीकरणों का पालन करते हैं उनका रूप भी ठीक चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के ही समीकरणों के समान होता है। इस परिकल्पना के अनुसार इन मैट्रिक्सों के लिए भी हैमिल्टन के वैधानिक समीकरण[3] लिखे जा सकते हैं। किन्तु गति-वैज्ञानिक समीकरणों की यह एक-रूपता बहुत कुछ आभासी ही है—वास्तविक नहीं। इसका कारण यह है कि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के समीकरणों में प्रयुक्त राशियाँ तो साधारण संख्याएँ ही होती हैं, किन्तु हाइज़नबर्ग की यांत्रिकी में वे मैट्रिक्सरूपी होती हैं। इस बात से दोनों में महत्त्वपूर्ण अन्तर उत्पन्न हो जाता है। जो भी हो, यह प्रमाणित किया जा सकता है कि क्वांटम-यांत्रिकी के वैधानिक समीकरणों से ऊर्जा की अविनाशिता का नियम पुनः प्राप्त हो जाता है और इन समीकरणों में ओर बोह्र के आवृत्ति

1. Canonical variables 2. Canonically Conjugate. 3. Canonical equations

सम्बन्धी नियम में भी सांगत्य है। इसके अतिरिक्त पारमाणविक निकायों के लिए ये समीकरण ऊर्जा के कुछ विशिष्ट मानों के द्वारा ही सन्तुष्ट हो सकते हैं। इस बात के कारणों का विवेचन यहाँ नहीं किया जा सकता। इस प्रकार क्वांटमित ऊर्जायुक्त स्थावर अवस्थाओं का अस्तित्व पुनः प्रमाणित हो जाता है और इन ऊर्जाओं के परिकलन की विधि भी हमें मालूम हो जाती है। अधिकतः चिरप्रतिष्ठित प्रकार के क्वांटमित निकायों के लिए इस विधि का उपयोग करके हाइज़नबर्ग और उनके शिष्यों ने रैखिक दोलक[1], हाइड्रोजन परमाणु आदि की क्वांटमित ऊर्जाओं का परिकलन किया। जो परिणाम निकले वे अधिकतर तो पुराने क्वांटम-सिद्धान्त से सुसंगत ही थे, किन्तु कुछ बातों में सर्वथा भिन्न भी निकले। यथा, रैखिक दोलक के लिए प्लांक के पूर्णांकी क्वांटम-नियम के स्थान में उन्हें अर्ध-क्वांटम-नियम[2] प्राप्त हुआ। यह पहले बताया जा चुका है कि यही नियम वास्तविक तथ्य से अधिक संगत है।

क्वांटम-यांत्रिकी के इन अत्यन्त चित्ताकर्षक परिणामों से और उसके वैधानिक प्रक्रिया-तंत्र की परिच्छिन्नता और दृढ़-नियमितता से उत्साहित होकर अनेक सैद्धान्तिकों ने हाइज़नबर्ग के ही मार्ग का अनुसरण किया और बहुत-सी नवीन और महत्त्वपूर्ण बातों से उनकी सहायता की। इसी समय श्रोडिंगर ने भी अपने लेख प्रकाशित किये और उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि तरंग-यांत्रिकी की क्वांटमीकरण विधि से भी वही परिणाम प्राप्त हुए थे जो सर्वथा भिन्न धारणाओं पर आश्रित क्वांटम-यांत्रिकी से प्राप्त होते हैं। उनके अन्तर्ज्ञान ने कहा कि यह बात दैवयोग से नहीं हो सकती और एक उत्कृष्ट लेख में उन्होंने इस रहस्य के स्पष्टीकरण में सफलता भी प्राप्त कर ली। अब हम उसी लेख का विश्लेपण करेंगे।

३. क्वांटम-यांत्रिकी तथा तरंग-यांत्रिकी की एकात्मकता[3]

इस काम में जिस धारणा ने श्रोडिंगर को प्रेरित किया वह यह थी कि तरंग-यांत्रिकी के तरंग-फलनों के ही द्वारा ऐसी राशियों का निर्माण संभव हो जाना चाहिए जिनमें क्वांटम-यांत्रिकी के मैट्रिक्सों के गुण विद्यमान हों। ऐसा हो जाने पर क्वांटम-यांत्रिकी उन राशियों के परिकलन का तथा उन पर गणितीय प्रक्रियाएँ करने का एक संविधान मात्र हो जायगी और तब तरंग-फलन को स्पष्टतः मध्यवर्ती बनाने की कोई

1. Linear oscillator 2. Law of half-quanta 3. Identity of Quantum Mechanics and Wave-Mechanics

आवश्यकता नहीं रहेगी। और इस प्रकार नवीन यांत्रिकी के दोनों रूपों की एकात्मकता प्रमाणित हो जायगी।

तरंग-यांत्रिकी में जब किसी क्वांटमीकरण की समस्या उपस्थित होती है तब पहले तो विचाराधीन निकाय की विभिन्न अप्रगामी तरंगें निर्णीत की जाती हैं और तब उनके आनुषंगिक तरंग-फलनों का परिकलन किया जाता है। ये फलन उस निकाय के "इष्ट-फलन"[1] कहलाते हैं। इन इष्ट-फलनों का एक अनुक्रम[2] होता है जिसे हम यहाँ असंतत ही मान लेंगे क्योंकि अनेक महत्त्वपूर्ण दशाओं में वह वास्तव में ऐसा ही होता है। अब इन फलनों में से दो-दो को लेकर बनाये हुए समस्त युग्मोंपर विचार कीजिए। ये युग्म दो प्रकार के बनेंगे। एक प्रकार के युग्म तो वे होंगे जो किसी इष्ट-फलन को उसी इष्ट-फलन से युग्मित करने से प्राप्त होते हैं और दूसरे प्रकार के युग्म वे होंगे जो किसी एक इष्ट-फलन को किसी अन्य इष्ट-फलन से युग्मित करने से प्राप्त होते हैं। पहले प्रकार का युग्म तो केवल एक ही स्थावर अवस्था से संलग्न[3] होगा। किन्तु दूसरे प्रकार का युग्म दो विभिन्न स्थावर अवस्थाओं से संलग्न होगा। अतः उसे हम उन दो स्थावर अवस्थाओं के पारस्परिक संक्रमण से संलग्न समझ सकते हैं। इस प्रकार दो-दो इष्ट-फलनों के युग्मन से हमें ऐसे अवयवों का एक अनुक्रम प्राप्त हो जायगा और इन अवयवों में से एक-एक अवयव का हाइज़नबर्ग-मैट्रिक्स के एक-एक अवयव से आनुरूप्य स्थापित किया जा सकता है। किन्तु हाइज़नबर्ग के मतानुसार प्रत्येक राशि को व्यक्त करनेवाले मैट्रिक्स भिन्न-भिन्न होते हैं। अतः यह आवश्यक है कि प्रत्येक राशि के लिए इष्ट-फलनों का युग्मन भी भिन्न-भिन्न तरह से किया जाय।

यहीं एक सारगर्भित विचार उत्पन्न होता है जिसका महत्त्व अगले परिच्छेद में और भी अच्छी तरह प्रकट होगा। वह सारगर्भित विचार यह है कि प्रत्येक भौतिक राशि के लिए एक प्रक्रिया-संकेत[4] (कारक[5]) नियत करना आवश्यक है। हम पहले ही देख चुके हैं कि किसी कणिका की आनुषंगिक तरंग के प्रचरण-समीकरण का किसी स्वतः प्रेरित प्रक्रिया द्वारा निर्माण करने के लिए श्रोडिंगर को इस उपाय का आश्रय लेना पड़ा था कि संवेग के संघटकों के स्थान में ऐसे कारकों को प्रतिस्थापित कर दिया जो संयुग्मी निर्देशांक-सापेक्ष व्युत्पन्नों के अनुपाती होते हैं और जिनके अनुपात-गुणांक में नियतांक h निविष्ट रहता है। यह मान लेना भी स्वाभाविक है कि प्रत्येक

1. Proper functions 2. Sequence 3. Attached 4. Symbol of operation 5. Operator

निर्देशांक के साथ "उस निर्देशांक से गुणन" की प्रक्रिया भी लगी हुई है। चूंकि किसी भी कणिका से सम्बन्धित समस्त यांत्रिक राशियाँ उसके निर्देशांकों तथा उसके संवेग के संघटकों (लाग्रांज के संयुग्मी संवेगों) के द्वारा व्यक्त हो सकती हैं इसलिए उपर्युक्त दोनों नियमों की सहायता से उस कणिका से सम्बद्ध किसी भी यांत्रिक राशि का आनुषंगिक कारक हम मालूम कर सकते हैं। यदि ऊर्जा का आनुषंगिक कारक इस प्रकार निर्णीत किया जाय तो हमें वही हैमिल्टनीय कारक प्राप्त हो जाता है जिसकी सहायता से तरंग का प्रचरण-समीकरण स्थापित किया जाता था। इस आनुरूप्य को व्यापक रूप देने पर हम इस परिणाम पर पहुँच जाते हैं कि समस्त भौतिक राशियों का एक-एक आनुषंगिक कारक होता है और यही नियम नवीन यांत्रिकी का एक मूल आधार बन गया है।

अब हम यह समझ सकते हैं कि श्रोडिंगर ने वे मैट्रिक्स कैसे बनाये जिनका क्वांटम-यांत्रिकी के मैट्रिक्सों से तादात्म्य स्थापित करना उन्हें अभीष्ट था। मान लीजिए कि कणिका सम्बन्धी कोई राशि है और उसके आनुषंगिक कारक के निर्माण की विधि हमें मालूम है। तब विचाराधीन निकाय के इष्ट-फलनों के प्रत्येक युग्म के साथ हम एक ऐसी राशि को अनुबद्ध कर सकते हैं जो निम्न प्रकार निर्मित होती है। उस युग्म के एक फलन पर उस कारक की क्रिया का जो फल होता है उसे दूसरे फलन के सम्मिश्र संयुग्मी मान[1] से गुणा किया जाता है और तब उसका संपूर्ण आकाश-व्यापी अनुकलन[2] किया जाता है। यही क्रिया समस्त इष्ट-फलन-युग्मों पर की जाती है जिससे हमें अवयवों का ऐसा व्यूह प्राप्त हो जाता है जिसमें कुछ अवयव तो एक ही एक स्थावर अवस्था से संलग्न होते हैं और कुछ अवयव दो-दो स्थावर अवस्थाओं से अर्थात् एक-एक संक्रमण से संलग्न होते हैं। इन अवयवों से एक मैट्रिक्स बना लिया जाता है जिसमें पहले प्रकार के अवयव विकर्ण[3] पर लिखे जाते हैं (विकर्णी अवयव)। इस प्रकार प्रत्येक यांत्रिक राशि से एक-एक मैट्रिक्स प्राप्त हो जाता है और अब प्रश्न यह रह जाता है कि क्या इस तरंग-यांत्रिकी द्वारा प्राप्त मैट्रिक्सों का क्वांटम-यांत्रिकी के मैट्रिक्सों से तादात्म्य स्थापित किया जा सकता है।

इस प्रश्न का उत्तर स्वीकृति-सूचक है। सबसे पहले तो श्रोडिंगर ने यह प्रमाणित किया कि हाइज़नबर्ग के मैट्रिक्सों की ही तरह उपर्युक्त विधि से प्राप्त मैट्रिक्स भी जोड़ और गुणन के उन्हीं नियमों का पालन करते हैं जिनका बीजीय मैट्रिक्स करते हैं। इसके अतिरिक्त जो प्लांक का नियतांक क्वांटम-यांत्रिकी में एक विचित्र रीति

1. Complex Conjugate value 2. Integration 3. Diagonal

से निविष्ट हुआ था उसका स्पष्टीकरण श्रोडिंगर के धारणानुसार तुरन्त हो जाता है। बात यह है कि साधारणतः दो कारकों का गुणनफल व्यत्ययशील नहीं होता। उसका मान कारक-क्रियाओं के क्रम पर निर्भर होता है। फिर भी अधिकतर दशाओं में यांत्रिक राशियों के आनुषंगिक दोनों कारक व्यत्ययशील होते हैं। किन्तु इस नियम का एक अपवाद है। जब एक राशि तो निर्देशांक हो और दूसरी राशि संयुग्मी संवेग का संघटक हो तब गुणनफल व्यत्ययशील नहीं होता। कारण यह है कि द्वितीय राशि का आनुषंगिक कारक संयुग्मी निर्देशांक-सापेक्ष अवकलज का अनुपाती होता है और यह आसानी से समझ में आ सकता है कि किसी चर के सापेक्ष अवकलन की क्रिया और उसी चर से गुणा करने की क्रिया का व्यत्यय नहीं हो सकता। इसी से हाइज़नबर्ग-प्रणीत व्यत्ययहीनता के नियम[1] प्राप्त हो जाते हैं। इसके बाद तादात्म्यीकरण के पूर्ण होने में इसके सिवाय और कुछ शेष नहीं रह जाता कि यह भी प्रमाणित कर दिया जाय कि तरंग-फलनों द्वारा निर्मित मैट्रिक्स भी क्वांटम-यांत्रिकी के वैधानिक समीकरणों को संतुष्ट करते हैं। यह कार्य निम्नलिखित रीति से संपन्न हो जाता है। जैसा कि श्रोडिंगर ने प्रमाणित कर दिया था, ये वैधानिक समीकरण यथार्थतः यही बताते हैं कि जिन तरंग-फलनों के द्वारा ये मैट्रिक्स निर्मित होते हैं वे तरंग-यांत्रिकी के प्रचरण-समीकरणों को सन्तुष्ट करते हैं। संक्षेप में, क्वांटम-यांत्रिकी के वैधानिक-समीकरण वास्तव में तरंग-यांत्रिकी के तरंग प्रचरण के समीकरणों के ही तुल्य-रूपी हैं।

इस प्रकार नवीन यांत्रिकी के दोनों ही रूप परस्पर रूपान्तरणशील प्रमाणित हो जाते हैं। तब इस बात में क्या आश्चर्य है कि क्वांटमीकरण की समस्याओं के जो हल दोनों विधियों से निकलते हैं उनमें कुछ भी फ़र्क नहीं होता। क्वांटम-यांत्रिकी की विधि में तरंग-फलनों की मध्यस्थता के बिना गणित की क्रिया सीधी मैट्रिक्सों पर ही संपन्न होती है। इसलिए यह विधि अधिक संक्षिप्त होती है और बहुधा वांछित परिणाम इसके द्वारा अधिक शीघ्रता से प्राप्त हो जाते हैं। किन्तु भौतिकज्ञों के अन्तर्मन से अधिक सुसंगत और उनकी विचार-शैली के अधिक अनुकूल होने के कारण तरंग-यांत्रिकी की विधि प्रारम्भ में अधिक स्वाभाविक और व्यवहार में अधिक सरल प्रतीत होती है। वस्तुतः अधिकतर भौतिकज्ञ तरंग-विधि का ही उपयोग करते हैं और अपने परि-कलन तरंग-फलनों के स्पष्ट उपयोग के द्वारा ही करते हैं।

1. Non-commutation rules

४. नवीन यांत्रिकी में आनुरूप्य-नियम

नवीन यांत्रिकी के द्वारा आनुरूप्य-नियम को अब अधिक परिच्छिन्न रूप प्राप्त हो गया है और पुराने क्वांटम-सिद्धान्त में उसके विरुद्ध जो आलोचनाएँ हो सकती थीं उनके लिए अब उतना अवसर नहीं है। हम देख चुके हैं कि किस प्रकार बोह्र ने किसी क्वांटम-संक्रमण की प्रारंभिक और अंतिम अवस्थाओं के चिर-प्रतिष्ठित चित्र में प्रयुक्त वैद्युत-घूर्ण के फूरियर-श्रेणीय प्रसार का उपयोग करके उस संक्रमण-जनित विकिरण की तीव्रता तथा उसके ध्रुवण की प्रागुक्ति करने का प्रयत्न किया था। बड़ी क्वांटम-संख्याओं के क्षेत्र में तो यह विधि संतोषजनक और संशयहीन प्रमाणित हुई। किन्तु मध्यम अथवा छोटी क्वांटम संख्याओं का जो क्षेत्र वास्तव में महत्त्वपूर्ण है उसमें अनेक कठिनाइयाँ और द्विविधाएँ उपस्थित हो गयीं। इसके विपरीत नवीन यांत्रिकी में आनुरूप्य-नियम के उपयोग की विधि तुरन्त ही पूर्णतः सुनिश्चित हो गयी। वास्तव में वैद्युत-घूर्ण के प्रत्येक संघटक के लिए एक आनुषंगिक मैट्रिक्स होता है और प्रत्येक संक्रमण से इस मैट्रिक्स के केवल एक ही अवयव का सम्बन्ध होता है। किसी संक्रमण से सम्बद्ध मैट्रिक्स के अवयव को यदि उस संक्रमण के लिए वैद्युत-घूर्ण के संघटक का आयाम मान लिया जाय तो चिरप्रतिष्ठित सूत्रों के ही अनुरूपी सूत्रों के द्वारा उस संक्रमण-जनित विकिरण की पूर्णतः परिच्छिन्न और असंदिग्ध प्रागुक्ति हो सकती है। यह सत्य है कि इस विधि में भी थोड़ा-सा परिकल्पित अंश बाकी रह गया है और वह है तीव्रता के परिकलन में चिर-प्रतिष्ठित रूपवाले सूत्रों के उपयोग की संभावना। किन्तु यही तो अनुरूपता की विधि का मूल आधार है। यदि इस परिकल्पना को स्वीकार कर लिया जाय तो फिर अनुरूपता के नियम के अनुप्रयोग में कुछ भी अनिश्चितता या यदृच्छता[1] नहीं रह जाती।

हाइज़नबर्ग ने अपने मैट्रिक्स-यांत्रिकी के अध्ययन के द्वारा ही आनुरूप्य-नियम को ऐसा परिष्कृत रूप दिया था और श्रोडिंगर ने उसी का रूपान्तरण तरंग-यांत्रिकी की भाषा में कर दिया। इस सुप्रसिद्ध भौतिकज्ञ ने तो विकिरण के परिकलन में मैट्रिक्स के अवयवों के कार्य के स्पष्टीकरण के लिए एक मूर्त चित्र भी प्रस्तुत कर दिया है। अब परमाणु में इलैक्ट्रान को प्रत्येक क्षण पर किसी एक विन्दु पर अवस्थित नहीं समझना चाहिए। किसी विशेष विन्दु पर उसके विद्यमान होने की कुछ प्रायिकता अवश्य होती है और व्यतिकरण-नियम के अनुसार यह प्रायिकता तरंग-फलन के मापांक[2] के वर्ग की

1. Arbitrariness 2. Modulus

अनुपाती होती हैं। इसके कारण इलैक्ट्रान को हम परमाणु में एक प्रकार से फैला हुआ समझ सकते हैं और औसत-रूप से उसके वैद्युत आवेश को संततत: वितरित समझ सकते हैं। श्रोडिंगर के मतानुसार आनुरूप्य-नियम का अनुप्रयोग (ऐप्लिकेशन) हम यह मानकर कर सकते हैं कि घटना इस प्रकार घटित होती है मानो विद्युत् का यह समय-सापेक्ष-परिवर्तनशील औसत वितरण चिर-प्रतिष्ठित नियमों के ही अनुसार विकिरण का उत्सर्जन करता है। स्थूल दृष्टि से तो यह चित्रण बहुत संतोषजनक मालूम पड़ता है क्योंकि इसके द्वारा बोह्र के आवृत्ति-नियम की पुनरुक्ति हो जाती है, किन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से इसकी परीक्षा की जाय तो मालूम पड़ेगा कि इसके द्वारा भीषण कठिनाइयाँ भी उत्पन्न हो जाती हैं। अत: इसका परित्याग अनिवार्य है। वास्तव में क्वांटम-संक्रमण जनित उत्सर्जन की क्रिया मूलत: इतनी असंतत है कि विद्युत् के किसी भी प्रकार के वितरण के द्वारा—यहाँ तक कि सर्वथा कल्पित वितरण के द्वारा भी—चिर-प्रतिष्ठित नियमानुवर्ती उत्सर्जन के रूप में उसका यथार्थता-पूर्ण चित्रण हो ही नहीं सकता। आनुरूप्य-नियम सम्बन्धी जो विचार हम ऊपर प्रकट कर चुके हैं उनके अनुसार मैट्रिक्स के अवयवों का सही अर्थ समझने के लिए हमें यह कहना पड़ेगा कि मैट्रिक्स के अवयवों का काम यह है कि इनके द्वारा हम किसी एक स्थावर अवस्था का कोई विशेष क्वांटम-संक्रमण के एक मात्रक समय में सम्पन्न होने की प्रायिकता का परिकलन कर सकते हैं।

नवीन यांत्रिकी के आनुरूप्य-नियम के द्वारा हमें स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की तीव्रताएँ और उनके ध्रुवणों का परिकलन करने की और विशेष कर वरण-नियमों[1] के निगमन की क्षमता प्राप्त हो गयी है। इसके द्वारा द्रव्य और विकिरण की पारस्परिक क्रिया सम्बन्धी अनेक समस्याओं का अध्ययन भी संभव हो गया है। यथा प्रकाश के परिक्षेपण[2] तथा वर्ण-विक्षेपण की समस्याएँ। जो क्रामर्स-हाइज़नबर्ग[3] का सूत्र पहले आनुरूप्य के विवेचन के द्वारा सन्निकटन के रूप में प्राप्त हुआ था उसे अब हम यथातथ रूप में प्राप्त कर सके हैं।

द्रव्य और विकिरण की पारस्परिक क्रिया के अध्ययन में आनुरूप्य-विधि के उपयोग से बड़े संतोषजनक परिणाम निकले हैं और यह निश्चित है कि उसमें सत्य का अंश बहुत बड़ी मात्रा में निविष्ट है। फिर भी यह संभव नहीं है कि इस बात की ओर ध्यान न दिलाया जाय कि विद्युत्-चुम्बकीय सूत्रों के समुचित रूपान्तरों के नियमित

1. Selection principles 2. Scattering 3. Kramers-Heisenberg

उपयोग के कारण यह विधि प्रकाश की कणिका-मय संरचना की सदैव उपेक्षा ही करती है। वास्तव में प्रकाश के परिक्षेपण (विकीर्णन) की समस्या को परमाणु और फ़ोटान की टक्कर के रूप में ही समझना चाहिए और इस टक्कर का अध्ययन तरंगयांत्रिकीय विधि से ही होना चाहिए। इस दृष्टिकोण से इस समस्या के स्पष्टीकरण में सफलता प्राप्त करने के लिए विद्युत्-चुम्बकीय तरंग में फ़ोटानों का निवेषण तथा (अधिक व्यापक रूप में) विद्युत्-चुम्बकीय क्षेत्र का क्वांटमीकरण आवश्यक है। इस दिशा में जो प्रयत्न किये गये हैं उनका वर्णन हमें आगे फिर करना पड़ेगा।

दसवाँ परिच्छेद

नवीन यांत्रिकी का प्रायिकता-मूलक निर्वचन[1]

१. सामान्य धारणाएँ और मूल सिद्धान्त[2]

हम देख चुके हैं कि प्रायिकता-मूलक विचारधारा ने तरंग-यांत्रिकी के भौतिक रहस्य को समझने के प्रारम्भिक प्रयत्न में बड़ा काम किया था। उस समय ऐसा मालूम होता था कि अब ऐसे व्यापक सिद्धान्त का आविष्कार हो रहा है जो नवीन यांत्रिकी की समस्त प्रागुक्तियों में प्रायिकता के लक्षण आरोपित कर देगा। इस सिद्धान्त ने, जिसका दृष्टिकोण बिलकुल नया है और जिसने अनेक चिर-प्रतिष्ठित धारणाओं का मूलोच्छेदन कर दिया है, धीरे-धीरे भौतिकज्ञों को अपनी ओर ध्यान देने के लिए विवश कर दिया। आज तो हम कह सकते हैं कि अब इसे सभी लोगों ने स्वीकार कर लिया है—ऐसे लोगों ने भी जो इसे अस्थायी तथा अन्तःकालीन मानते हैं और जिन्होंने अभी तक यह आशा नहीं छोड़ी है कि कभी-न-कभी पुनः चिर-प्रतिष्ठित धारणाओं पर हम लौट सकेंगे। इस परिच्छेद में इसी विषय का विवेचन किया जायगा।

इस विवेचन का प्रारम्भ हम इस साधारण दिखाई देनेवाली धारणा से करेंगे कि किसी भौतिक राशि का बिलकुल ठीक मान जानने के लिए उसको नापना आवश्यक है और उसे नापने के लिए ऐसे उपकरण की आवश्यकता है जो किसी-न-किसी प्रकार उस राशि के मान को किसी निर्दिष्ट यथार्थता से नाप सके। चिर-प्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान में यह बात स्वतः मान्य समझी जाती थी कि समुचित पूर्वविधानों[3] के द्वारा यह सदैव संभव है कि नापने की क्रिया इस प्रकार संपन्न हो जाय कि नापने से पूर्ववर्ती अवस्था में कोई प्रेक्षणगम्य विकार पैदा न हो। ऐसी

1. The Probability Interpretation of the New Mechanics 2. General Ideas and Fundamental Principles 3. Precautions

दशा में नाप केवल वर्तमान अवस्था का ज्ञान प्राप्त करने का ही काम करेगा। नाप के कारण उस अवस्था में किसी नवीनता का समावेश नहीं होगा। यह नियम चिर-प्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान में निर्विवादतः मान लिया गया था और स्थूल-स्तरीय क्षेत्र में यह बिलकुल सत्य भी है। इस क्षेत्र में कुशल प्रयोगकर्ता प्रेक्षण-गम्य विकार उत्पन्न करने के बिना ही घटनाओं का पारिमाणिक अध्ययन सदैव कर सकता है। इसका कारण यह है कि नापने की क्रिया से जो विकार उत्पन्न होते हैं उन्हें इतना घटाया जा सकता है कि माप्य राशियों की अपेक्षा उन विकारों को उपेक्षणीय समझ सकते हैं। इसके विपरीत सूक्ष्म-स्तरीय क्षेत्र में क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व का यह परिणाम होता है कि नापने की क्रिया से उत्पन्न विकार अनन्ततः नहीं घटाये जा सकते। अतः जिस घटना का अध्ययन किया जाता है वह नापने की प्रत्येक क्रिया से वस्तुतः विकृत हो जाती है। इन विचारों का सूक्ष्म विवेचन हम थोड़ी देर बाद करेंगे जब हम उन उदाहरणों का अध्ययन करेंगे जो अनिश्चितता के अनुबन्धों[1] के समर्थन में मुख्यतः बोह्र और हाइज़नबर्ग के द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं। इस समय इतना ही कह देना पर्याप्त होगा कि यह बात किसी भी तरह प्रत्यक्षतः मान्य नहीं है कि नापने की क्रिया से हमें पूर्ववर्ती अवस्था का शुद्ध और निर्विकार ज्ञान प्राप्त हो सकता है। अधिकतर तो ऐसी ही संभावना है कि नापने की क्रिया पूर्ववर्ती अवस्था में निहित किसी संभाव्यता को प्रकट करके एक नवीन अवस्था का निर्माण कर देती है। और अब हम सूक्ष्मतापूर्वक यह बताने का प्रयत्न करेंगे कि इस नवीन दृष्टिकोण के अनुसार नापने की क्रिया वास्तव में क्या करती है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भौतिक प्रकाश-विज्ञान सम्बन्धी कुछ पुराने प्रयोगों के विषय में थोड़ा विचार कर लेना लाभकारी होगा और यहाँ भी यदि हम फोटानों और प्रकाश-तरंगों के द्वैत से प्रारम्भ करें तो रहस्य का उद्घाटन कर सकने की संभावना अधिक है। इसलिए प्रिज़्म या ग्रेटिंग द्वारा किसी मिश्र प्रकाश-रश्मि के स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण के अत्यन्त साधारण प्रयोग पर ही विचार कीजिए। न्यूटन के समय से ही हमें ज्ञात है कि इसमें जिस उपकरण का व्यवहार किया जाता है उसका काम है आपतित प्रकाश के विभिन्न एक-वर्ण संघटकों का पृथक्-करण। १९वीं शताब्दी में इस समस्या पर बहुत विवाद हुआ था कि क्या प्रिज़्म द्वारा पृथक्कृत एक-वर्ण संघटक आपतित प्रकाश में पहले से ही विद्यमान रहते हैं या उनका प्रिज़्म

1. Uncertainty relations

के प्रभाव से नया निर्माण होता है। इस प्रश्न का कोई भी बहुत संतोषजनक उत्तर प्राप्त नहीं हो सका था, किन्तु अन्त में अधिक विवेकपूर्ण यही माना गया कि आपतित प्रकाश में समस्त एक-वर्ण संघटक आभासी रूप से प्रच्छन्न अवस्था में किसी-न-किसी प्रकार विद्यमान रहते हैं। हम शीघ्र ही देखेंगे कि इस मत का समर्थन उन क्वांटम-मूलक विश्लेपणों के द्वारा हो जाता है जिनका वर्णन हम आगे करेंगे। वास्तव में हम प्रिज़्मघटित वर्ण-विक्षेपण की व्याख्या में फ़ोटानों की धारणा निविष्ट करने का प्रयत्न करेंगे। इस दृष्टिकोण से हम यों कहेंगे कि प्रिज़्म की क्रिया के कारण आपतित फ़ोटान पृथक्-पृथक् सु-निर्णीत वर्ण-समुदायों में विभाजित हो जाते हैं। अर्थात् प्रिज़्म आपतित रश्मि में से लाल, पीले और नीले फ़ोटानों को छाँटकर अलग-अलग कर देता है। हम यह भी कल्पना कर सकते हैं कि इस प्रयोग में आपतित प्रकाश-रश्मि इतनी दुर्बल है कि प्रिज़्म पर एक-एक फ़ोटान उत्तरोत्तर पहुँचता है। किन्तु प्रत्येक फ़ोटान का सम्बन्ध उस आपतित प्रकाश-तरंग से है जो हमारी परिकल्पना के अनुसार एक-वर्ण नहीं है। अतः आपतित फ़ोटान की कोई सुनिर्णीत आवृत्ति नहीं मानी जा सकती। और आइन्स्टाइनीय समीकरण द्वारा सुनिर्णीत ऊर्जा भी उसमें नहीं हो सकती। किसी-न-किसी प्रकार उस आपतित फ़ोटान में वे सब संभव आवृत्तियाँ युगपत् विद्यमान हैं जो उसकी आनुषंगिक प्रकाश-तरंग के स्पैक्ट्रमीय विश्लेपण में प्रकट हो जाती हैं। किन्तु प्रिज़्म में से बाहर निकलने पर वही आपतित फ़ोटान प्रिज़्म द्वारा विक्षेपित विभिन्न एक-वर्ण रश्मियों में से किसी एक में अवश्य ही विद्यमान होना चाहिए। अतः अब उसकी आवृत्ति अवश्य ही सुनिर्णीत होगी। इसलिए हम प्रिज़्म को ऐसा यंत्र समझ सकते हैं जिसके द्वारा फ़ोटान की आवृत्ति (या ऊर्जा) नापी जा सकती है। इस उपकरण का काम इतना ही है कि पूर्ववर्ती अवस्था में जितनी संभावनाएँ निहित हैं उनमें से यह किसी एक को छाँटकर निकाल लेता है। अतः हमें तो इस बात को जानने का प्रयत्न करना चाहिए कि प्रिज़्म की क्रिया फ़ोटान को किसी पूर्व-निश्चत रंग को ग्रहण करने के लिए विवश कर देगी इसकी प्रायिकता कितनी है। तरंग-सिद्धान्त के द्वारा इस प्रश्न का पारिमाणिक उत्तर तुरन्त ही मिल गया। आपतित तरंग का निरूपण एक फ़रियर प्रसार के द्वारा किया जा सकता है जिसमें प्रत्येक एक-वर्ण संघटक का एक सुनिश्चित आयाम होगा। प्रिज्म की क्रिया इन एक-वर्ण संघटकों को पृथक् तो कर देगी, किन्तु उनके आयाम ज्यों के त्यों बने रहेंगे तथा प्रिज़्म में से निर्गत होने पर विभिन्न निर्गत रश्मियों में आपतित प्रकाश-ऊर्जा का वितरण इन आयामों के वर्गों के अनुपात में

अर्थात् विभिन्न फ़ूरियर संघटकों की तीव्रता के अनुपात में होगा। अतएव हमें यह कहना चाहिए कि प्रिज़्म में से निर्गत होने पर फ़ोटान की कोई निश्चित आवृत्ति होने की प्रायिकता आपतित प्रकाश-तरंग के फ़ूरियर-प्रसार में उसी आवृत्ति की आंशिक तरंग की तीव्रता की अनुपाती होगी।

उपर्युक्त विचारधारा का यदि तरंग-यांत्रिकी की भाषा में रूपान्तरण कर दिया जाय और यदि उसे अधिक व्यापक बना दिया जाय तो हम उस व्यापक प्रायिकता-सिद्धान्त के उद्गम को भी समझ सकेंगे जिसके विकास का वर्णन अब हम करेंगे।

हम ऊपर किसी अनुच्छेद में देख चुके हैं कि नवीन यांत्रिकी में प्रत्येक यांत्रिक राशि के आनुषंगिक एक-एक कारक का निर्माण किया जाता है और यह कारक सभी दशाओं में बन सकता है। ये सब कारक रैखिक हर्मिटीय[1] कारकों की जाति के होते हैं। इष्ट-मानों के जिस गणितीय सिद्धान्त का उल्लेख पहले किया जा चुका है उसके द्वारा इष्ट-मानों और इष्ट-फलनों की तथा इन कारकों की आनुषंगिकता स्थापित की जा सकती है। और कारकों के हर्मिटीय होने के कारण इष्ट-मान वास्तविक नियतांक[2] होते हैं जिनसे संतत, असंतत अथवा मिश्र अनुक्रम बन जाता है और इन्हीं से उस कारक के "स्पैक्ट्रम" की सृष्टि होती है। इन इष्ट-फलनों के द्वारा लम्ब-कोणिक फलनों[3] का एक पूरा संघ बन जाता है अर्थात् किसी भी संतत फलन का प्रसार इन इष्ट-फलनों की श्रेणी के रूप में किया जा सकता है। श्रोडिंगर की क्वांटमीकरण विधि में हैमिल्टनीय कारक के इष्ट-मानों और इष्ट-फलनों के सम्बन्ध में पहले भी इष्ट-मानों और इष्ट-फलनों के इन गुणों का परिचय हमें मिल चुका है। जैसा हम देख चुके हैं, इस विधि में यह मान लिया जाता है कि किसी भी क्वांटमित निकाय की ऊर्जा के सम्भव मान केवल उसकी ऊर्जा के आनुषंगिक हैमिल्टनीय कारक के इष्ट-मान ही हो सकते हैं। इसी धारणा का व्यापकीकरण करने से तरंग-यांत्रिकी के व्यापक प्रायिकता-सिद्धान्त में से यह मूल अधिमान्य नियम[4] प्राप्त होता है जिसे हम "क्वांटमीकरण का नियम"[5] कह सकते हैं। "यथार्थ नाप से किसी यांत्रिक राशि का जो मान प्राप्त हो सकता है वह केवल उस राशि के आनुषंगिक कारक के इष्ट-मानों में से ही कोई एक होता है।"

1. Hermitian 2. Real Constants 3. Orthogonal functions 4. Postulate 5. Principle of quantisation

प्रत्येक दशा में यह अधिमान्य नियम किसी भी यांत्रिक राशि के मान को निश्चित कर देता है। किन्तु यह भी स्पष्ट है कि इस नियम का सम्पूरक एक अधिमान्य नियम और होना चाहिए जिसके द्वारा हम यह जान सकें कि यदि किसी कणिका की नापने से पूर्ववर्ती अवस्था ज्ञात हो तो उसकी विभिन्न परवर्ती संभव अवस्थाओं की प्रायिकता कितनी-कितनी है अर्थात् नापने के विभिन्न परिणामों की प्रायिकता कितनी-कितनी है। किन्तु कणिका की नापने से पूर्ववर्ती जो अवस्था ज्ञात समझी जाती है वह तरंग-यांत्रिकी में किसी ψ—तरंग के द्वारा निरूपित होती है। मापक यंत्र पर यही ψ—तरंग आकर पड़ती है। प्रिज़्म द्वारा स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण से तुलना करने से ही वांछित द्वितीय अधिमान्य नियम प्रकट हो जाता है। वस्तुतः जिस भौतिक राशि को नापना हो उसी के आनुषंगिक इष्ट-फलनों की श्रेणी के रूप में वह तरंग विश्लिष्ट हो सकती है। तब बिलकुल स्वाभाविक रूप से ही हम यह सोचने के लिए बाध्य हो जाते हैं कि इस स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण के संघटकों के आयामों के वर्गों के ही द्वारा विभिन्न संभव मानों की आपेक्षिक प्रायिकताओं का नाप हो जायगा। अतः अब हम द्वितीय मूल अधिमान्य नियम को जिसका नाम "स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण का व्यापकीकृत नियम"[1] रखा जा सकता है यों लिख सकते हैं—

"किसी कणिका से संलग्न जिस यांत्रिक राशि की ψ—तरंग ज्ञात हो उस राशि के विभिन्न संभव मानों की प्रायिकताएँ उस राशि के इष्ट-मानों में उस ψ—तरंग का स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण करने से प्राप्त संघटनों के तत्संगत आयामों (अधिक यथार्थता-पूर्वक मापांकों) के वर्गों की अनुपाती होती हैं।"

यह भी स्पष्टतम है कि इसी द्वितीय नियम का एक विशिष्ट रूप बोर्न[2] का वह स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण-नियम है जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है और जिसका उपयोग "ऊर्जा" राशि के लिए किया जाता है। किन्तु यह बात बहुत कम स्पष्ट है कि जिस नियम को हमने व्यतिकरण नियम का नाम दिया था वह भी इसी का एक विशिष्ट रूप है। तथापि एक तर्क के द्वारा जिसे यहाँ उद्धृत नहीं किया जा सकता यह प्रमाणित हो जाता है कि "कणिका के निर्देशांक" कहलाने-वाली राशियों पर स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण के व्यापक नियम का उपयोग करने से व्यतिकरण नियम भी प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार आठवें परिच्छेद में तरंग-यांत्रिकी के भौतिकीय मर्म को स्पष्ट करने के लिए जिन दो नियमों को प्रस्तुत

1. Generalised principle of spectral resolution 2. Born

किया गया था वे दोनों इस व्यापक सिद्धान्त के द्वितीय मूल अधिमान्य नियम के ही विशिष्ट रूप प्रमाणित हो जाते हैं। अतः इस अनुच्छेद में जिन दो मूल अधिमान्य नियमों की परिभाषा दी गयी है वे ही नवीन यांत्रिकी के प्रायिकता-मूलक निर्वचन के पूर्ण तथा सुसंगत स्पष्टीकरण के लिए पर्याप्त हैं। यह जाहिर है कि कुछ छोटी-छोटी गौण बातें और भी हैं जिनका विवेचन यहाँ उचित नहीं है। यथा प्रायिकताओं का निरपेक्ष मान मालूम करने के लिए इष्ट-फलनों के और ψ—फलनों का सामान्यीकरण[1] करने की भी आवश्यकता होती है तथा जिन अपकृष्ट[2] दशाओं में इष्ट-मान बहुमानी[3] होते हैं उनके लिए द्वितीय अधिमान्य नियम की परिभाषा का विस्तार भी करना पड़ता है। किन्तु ये सूक्ष्म बातें हैं और यह कहने में कोई संकोच नहीं हो सकता कि सिद्धान्त की मुख्य-मुख्य बातें तो संतोषजनक और तर्क-संगत रीति से प्रमाणित हो ही गयी हैं।

और अब हम उस आपत्ति पर विचार करना चाहते हैं जो अनेक पाठकों के मन में उपस्थित हुई होगी। निःसन्देह कई लोग यह कहेंगे कि नवीन यांत्रिकी का यह प्रायिकतामूलक निर्वचन संभवतः बहुत अच्छा और अत्यन्त सुसंगत तो है, किन्तु क्या यह थोड़ा-सा उच्छृंखल या मनमाना[4] नहीं है? चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी की परिपाटी को छोड़कर उससे इतनी विपरीत और जटिल धारणाओं का निर्माण क्यों किया जाय? इसका उत्तर हमारे पास यही है कि जिस प्रायिकता-मूलक निर्वचन की रूपरेखा हमने यहाँ दिखायी है उसके अतिरिक्त आज कोई अन्य प्रकार का निर्वचन संभव ही नहीं है। इससे हमारा तात्पर्य यह है कि इस समय हमारे पास केवल यही उपाय ऐसा ह जिससे प्रयोग द्वारा आरोपित तरंग-यांत्रिकी की पृष्ठ-भूमि में समस्त क्वांटम-घटनाओं की व्याख्या हो सकती है। अन्य दिशाओं में किया हुआ कोई भी प्रयत्न अभी तक सफल नहीं हो सका है। इस पुस्तक का लेखक इस बात को दूसरों से अधिक अच्छी तरह जानता है क्योंकि उसने इस प्रकार के प्रयास किये हैं जिन्हें विकट कठिनाइयों के कारण अन्त में छोड़ देना पड़ा था।

उपसंहार में हम कह सकते हैं कि समस्त प्रायोगिक तथ्यों से सुसंगत सिद्धान्त को इन नियमों के आधार पर निर्माण कर सकने की संभावना से तथा इन गुणों से युक्त किसी अन्य उपाय के आविष्कार की असंभवता से ही उपर्युक्त मूल-

1. Normalisation 2. Degenerate 3. Multi-valued 4. Arbitrary

अधिमान्य नियमों का औचित्य प्रकट है। वास्तव में सभी भौतिक सिद्धान्तों का औचित्य ऐसे ही तर्कों पर निर्भर रहता है क्योंकि प्रत्येक भौतिक सिद्धान्त के मूल में कुछ मनमाने अधिमान्य नियमों का अस्तित्व रहता है और इन नियमों की सफलता ही उनके उपयोग को उचित बना देती है।

नीचे के अनुच्छेदों में हम उन गंभीर विभिन्नताओं का सूक्ष्म विवेचन करेंगे जिनके कारण नवीन यांत्रिकी का प्रायिकतामूलक निर्वचन और चिर-प्रतिष्ठित सिद्धान्त इतने असमान हो गये हैं। यहाँ केवल इतना ही कहेंगे कि जिन नियमों का इस अनुच्छेद में अध्ययन किया गया है उनका रूप डिरैक[1] और जार्डन[2] जैसे वैज्ञानिकों की कृतियों में और भी अधिक अमूर्त और व्यापक हो गया है और इस नवीन रूप में इस सिद्धान्त का नाम रूपान्तरण सिद्धान्त[3] है। यह विकास इतनी कठिन गणितीय प्रक्रियाओं के द्वारा हुआ है कि उसका विवेचन यहाँ नहीं किया जा सकता।

२. अनिश्चितता के अनुबन्ध[4]

नवीन यांत्रिकी के भौतिक निर्वचन से कुछ अत्यन्त रोचक और महत्वपूर्ण परिणाम निकलते हैं जिनकी ओर सबसे पहले हाइज़नबर्ग ने हमारा ध्यान आकर्षित किया था। गणितीय भाषा में ये उन असमताओं[5] के द्वारा व्यक्त होते हैं जो आज अनिश्चितता के अनुबन्धों के नाम से प्रसिद्ध हैं। हाइज़नबर्ग ने इन असमताओं को अपनी नवीन क्वांटम-यांत्रिकी के व्यत्ययहीनता[6] के अनुबन्धों की सहायता से प्रमाणित किया था। उनका मर्म समझाने के लिए हम उस प्रतिरूप का सहारा लेंगे जो तरंग-यांत्रिकी प्रस्तुत करती है। हम यह प्रमाणित करेंगे कि यदि यह मान लिया जाय कि किसी भी कणिका की अवस्था सदैव एक ψ—तरंग के द्वारा निरूपित हो सकती है तो इस यांत्रिकी का जो भौतिक निर्वचन पहले स्वीकार किया जा चुका है उसी से ये असमताएँ अनिवार्यतः प्राप्त हो जाती हैं।

सबसे पहले किसी स्वतन्त्र कणिका की आनुषंगिक एक-वर्ण समतल तरंग को लीजिए। हमें विदित है कि इस तरंग द्वारा एक पूर्णतः निर्णीत गत्यात्मक अवस्था निर्दिष्ट होती है। अतएव इससे एक सुपरिभाषित दिष्ट राशि "संवेग" भी निर्दिष्ट होती है। यही बात हम यह कहकर व्यक्त करते हैं कि विचाराधीन अवस्था संवेग

1. Dirac 2. Jordon 3. Theory of transformations 4. The Uncertainty Relations 5. Inequalities 6. Non-commutation

की दृष्टि से और फलतः ऊर्जा की दृष्टि से भी 'शुद्ध' अवस्था है। किन्तु एक-वर्ण समतल तरंग का आयाम सर्वत्र एक-समान होता है। अतः व्यतिकरण नियम हमें यह कहने के लिए बाध्य करता है कि उस कणिका का स्थान बिलकुल अनिर्णीत है और आकाश के किसी भी विन्दु पर उसके विद्यमान होने की प्रायिकता सर्वत्र एक-समान है। अतः हमें कहना पड़ता है कि किसी कणिका की गत्यात्मक अवस्था के पूर्णतः निर्णीत होने में ही उसके आकाशीय स्थान की पूर्ण अनिर्णीतता[1] भी गर्भित है। किन्तु जिस अवस्था में स्वतन्त्र कणिका की आनुषंगिक तरंग एक-वर्ण और समतल होती है वह स्पष्टतः समतल तरंगों के अध्यारोपण[2] द्वारा निर्मित तरंग-गुच्छ[3] के ही रूप में विद्यमान रहेगी और तब इस तरंग-गुच्छ का विस्तार कुछ निश्चित सीमाओं में ही निर्धारित किया जा सकेगा। अतः कणिका का स्थान भी अधिक अच्छी तरह निर्णीत हो जायगा क्योंकि अनिवार्यतः उसका अस्तित्व उस तरंग-गुच्छ द्वारा अधिष्ठित प्रदेश में ही संभव है और केवल इसी प्रदेश में आयाम का मान शून्य से भिन्न होगा। किन्तु तरंग-गुच्छ का गणितीय निरूपण फ़ूरियर-अनुकलों[4] के जिस प्रसार द्वारा हो सकता है उसमें यह गुण ह कि तरंग-गुच्छ का विस्तार जितना ही छोटा होगा उतना ही अधिक विस्तृत उसके फ़ूरियर-विश्लेषण के संघटकों द्वारा अधिष्ठित स्पैक्ट्रमीय अन्तराल[5] होगा। इसी बात को हम अधिक अर्थ-सूचक शब्दों में यों कह सकते हैं कि तरंग-गुच्छ का विस्तार जितना ही कम होगा उसमें एक-वर्णता भी उतनी ही कम होगी। तब व्यतिकरण और स्पैक्ट्रमीय विश्लेषण के दोनों नियमों के अनुप्रयोग से यह स्पष्ट हो जाता है कि जब किसी कणिका का स्थान अधिक सुनिश्चित होता है तब उसकी गत्यात्मक अवस्था उतनी ही अधिक अनिश्चित होती है। जितना एक तरफ लाभ होता है उतनी ही दूसरी तरफ हानि हो जाती है। अन्त में उस सीमान्त दशा[6] को लीजिए जो एक-वर्ण समतल तरंग से बिलकुल विपरीत है। इसके लिए हम यह कल्पना करेंगे कि ψ–तरंग-गुच्छ का विस्तार अनन्ततः स्वल्प है। तब आनुषंगिक कणिका का स्थान यथा-तथतः ज्ञात है अर्थात् हमारे सामने जो अवस्था है वह स्थान की दृष्टि से "शुद्ध" है। किन्तु इस सीमान्त दशा में तरंग-गुच्छ का निरूपण फ़ूरियर-अनुकलों के ऐसे प्रसार द्वारा होगा जिसमें समस्त संभव एक-वर्ण समतल तरंगें सम्मिलित होंगी।

1. Indeterminacy 2. Super-position 3. Wave-packet 4. Fourier integrals 5. Spectral interval 6. Limiting case

अतः हमारे मूल नियम हमें यह कहने के लिए बाध्य करेंगे कि इस दशा में गति की अवस्था पूर्णतः अनिर्णीत है। अर्थात् स्थान के यथातथ ज्ञान में ही गत्यात्मक अवस्था-सम्बन्धी ज्ञान का पूर्ण अभाव भी गर्भित है। इसलिए व्यापक परिणाम यह निकलता है कि तरंग-यांत्रिकी के भौतिक निर्वचन में जिन मूल अधिमान्य नियमों का आश्रय लिया गया है उनमें और तरंग-गुच्छ को एक-वर्ण तरंगों के अध्यारोपण के द्वारा निरूपित करने की विधि में ही यह बात निहित है कि किसी क्षण पर कणिका के स्थान को और उसी क्षण पर उसकी गति की अवस्था को एक-साथ यथातथ जान लेना असंभव है।

जिस तर्क के द्वारा हाइज़नबर्ग के अनिश्चितता के अनुबन्ध प्राप्त होते हैं उनको हमने यहाँ बहुत कुछ गुणात्मक[1] रूप में ही प्रस्तुत किया है ताकि विषय कुछ सरलता से समझ में आ जाय। यदि उनके तर्क को अधिक दृढ़तापूर्वक प्रस्फुटित किया जाय तो निम्नलिखित परिणाम निकलता है। किसी निर्देशांक की अनिश्चितता[2] और संवेग के तत्संगत संघटक की अनिश्चितता का गुणनफल सदैव कम-से-कम प्लांक के नियतांक h के परिमाण की कोटि[3] का होता है। इस प्रकार पूर्व-कथित अनिश्चितता के अनुबन्ध प्राप्त हो जाते हैं। इनसे प्रकट होता है कि किसी कणिका का कोई निर्देशांक और उसके संवेग का तत्संगत संघटक दोनों एक-साथ यथार्थतापूर्वक नहीं जाने जा सकते और यदि इन दोनों संयुग्मी[4] राशियों में से एक की अनिश्चितता बहुत कम हो तो दूसरी की बहुत अधिक होती है।

हम यह बात पुनः कह देना चाहते हैं कि अनिश्चितता के अनुबन्ध एक ओर तो कणिका की अवस्था का किसी तरंग से सांगत्य स्थापित करने की संभावना के नियमों के तथा दूसरी ओर प्रायिकतामूलक निर्वचन के व्यापक नियमों के अनिवार्य परिणाम हैं। किन्तु इन तर्कों को प्रस्तुत कर देने पर भी यह प्रमाणित करना आवश्यक प्रतीत होता है कि कभी भी और किसी भी प्रकार के नाप के द्वारा स्थान और संवेग का ज्ञान अनिश्चितता के अनुबन्धों द्वारा निर्दिष्ट सीमाओं से अधिक यथार्थतापूर्वक प्राप्त नहीं किया जा सकता। यदि यह बात सही न हो तो कणिका की अवस्था को सदैव किसी आनुषंगिक तरंग द्वारा निरूपित करना असंभव प्रमाणित होगा। हाइज़नबर्ग तथा बोह्र ने नापने की प्रक्रिया का सूक्ष्म और गहन विश्लेषण करके यह सिद्ध कर दिया है कि किसी भी नाप के परिणाम अनिश्चितता के अनुबन्धों के

1. Qualitative 2. Uncertainty 3. Order of magnitude 4. Conjugate

प्रतिकूल नहीं निकल सकते। और हम देखेंगे कि यह बात निम्नलिखित दो मूल असंततताओं के अस्तित्व पर आश्रित है जिनमें कुछ पारस्परिक सम्बन्ध विद्यमान होने की भी अत्यधिक संभावना है। एक ओर तो है क्रिया का क्वांटम और दूसरी ओर है द्रव्य और विकिरण की असंतत संरचना।

नापने के प्रयोग में अनिश्चितता के अनुबन्ध जितनी यथार्थता की अनुमति देते हैं उससे अधिक यथार्थता क्यों नहीं प्राप्त हो सकती, इसे समझने के लिए मान लीजिए कि हम किसी कणिका के स्थान को यथातथतः निर्णीत करने का प्रयत्न कर रहे हैं। आकाश के अत्यन्त सूक्ष्म भाग का अन्वेषण करने के लिए सबसे अधिक सुग्राही विधि यह है कि छोटे तरंग-दैर्घ्य के विकिरण का उपयोग किया जाय। यह विधि किसी भी यांत्रिक विधि की अपेक्षा बहुत अधिक सुग्राही है और इसके द्वारा हम आकाश के ऐसे दो विन्दुओं में विभेद कर सकते हैं जिनका अन्तराल कम-से-कम उस तरंग-दैर्घ्य के बराबर हो। कणिका का स्थान निर्णीत करने में जितनी ही अधिक यथार्थता हमें अभीष्ट होगी अन्वेषक विकिरण का तरंगदैर्घ्य भी उतना ही छोटा आवश्यक होगा। किन्तु यहाँ क्रिया के क्वांटम का अस्तित्व विकिरण के क्वांटम के रूप में प्रकट होता है। अन्वेषक विकिरण का तरंग-दैर्घ्य हम जितना ही घटायेंगे उतनी ही उसकी आवृत्ति बढ़ेगी। फलतः उतनी ही उसके फ़ोटानों की ऊर्जा भी बढ़ जायगी। और ये फोटान विचाराधीन कणिका को उतना ही अधिक संवेग प्रदान कर सकेंगे। स्थान का यथातथ नाप करने के लिए प्रयुक्त उपकरण हमें यह नहीं बता सकेगा कि नापने की क्रिया से कणिका के संवेग में कितना परिवर्तन हो गया है। अतः नाप पूरा हो चुकने के बाद कणिका का स्थान जितनी ही अधिक यथार्थतापूर्वक ज्ञात हो जायगा उतनी ही अधिक अनिश्चितता कणिका की गत्यात्मक अवस्था में आ जायगी। इसी विवेचन को पारिमाणिक रूप देने से फिर वही अनिश्चितता के अनुबन्ध प्राप्त हो जाते हैं। विपरीततः किसी इलैक्ट्रान के वेग का नाप उसके द्वारा परिक्षिप्त प्रकाश में उत्पन्न डापलर प्रभाव[1] के अध्ययन से हो सकता है। पुनः हम उसी परिणाम पर पहुँचते हैं कि नापने का यंत्र जितनी ही अधिक यथार्थता से किसी कणिका की गत्यात्मक अवस्था को निर्णीत करता है उतनी ही अधिक अनिश्चितता नाप के बाद उस कणिका के स्थान के सम्बन्ध में पैदा हो जायगी। अनिश्चितता के अनुबन्ध इसी तथ्य

1. Doppler effect

का गणितीय भाषान्तर मात्र हैं। बोह्र, हाइज़नबर्ग तथा अन्य वैज्ञानिकों ने इस बात के जो अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये हैं उनका विस्तृत वर्णन यहाँ नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसके लिए चित्रों और गणितीय सूत्रों की आवश्यकता होगी। ये उदाहरण विश्वासोत्पादक हैं और आज तो प्रायः सब ही भौतिकज्ञ ऐसे मापन-यंत्र के आविष्कार की असंभवता को स्वीकार करते हैं जो हाइज़नवर्ग की असमताओं में निहित मर्यादाओं का उल्लंघन कर सकें।

पिछले दो अनुच्छेदों में वर्णित परिणामों के कुछ दार्शनिक पहलुओं पर विचार करने से पहले हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि अनिश्चितता के प्रतिबन्ध तथा अधिक व्यापक रूप से उपर्युक्त प्रायिकता-मूलक निर्वचन के व्यापक नियम क्यों पुरानी यांत्रिकी की सत्यापित प्रागुक्तियों के विरोधी नहीं हैं और क्यों वे इन प्रागुक्तियों को प्रथम सन्निकटनों के रूप में सत्य माने जा सकते हैं।

३. पुरानी यांत्रिकी से सांगत्य[1]

क्वांटम सिद्धान्त के विकास के प्रारम्भ से ही यह बात स्पष्ट थी कि यदि चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी में उत्कृष्ट याथातथ्य नहीं है तो इसका उत्तरदायित्व क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व पर है। दूसरे शब्दों में यदि प्लांक के नियतांक का मान शून्य होता तो चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी भी पूर्णतः यथार्थ होती। पुराने क्वांटम-सिद्धान्त की सभी शाखाओं में प्लांक के कृष्ण-वस्तु-विकिरण-सिद्धान्त से लेकर वोह्र तथा सामरफ़ेल्ड की धारणाओं के विकास की पराकाष्ठा तक सर्वत्र हम यही देखते हैं कि h के मान को शून्य की ओर प्रवृत्त करने से क्वांटम-सूत्र चिर-प्रतिष्ठित सूत्रों से अभिन्नता प्राप्त कर लेते हैं।

यही मूल धारणा नवीन यांत्रिकी में भी पुनः प्रकट होती है। यदि हम क्वांटम-यांत्रिकी के दृष्टिकोण से विचार करें तो पुरानी और नवीन यांत्रिकी की समस्त विभिन्नताएँ निर्देशांक-निरूपक मैट्रिक्स और उस निर्देशांक के संयुग्मी लाग्रांजीय संवेग का निरूपण करनेवाले मैट्रिक्स की व्यत्ययहीनता के ही कारण उत्पन्न हुई हैं और यदि h का मान शून्य हो तो यह व्यत्ययशीलता की कमी h की अनुपाती होने के कारण लुप्त हो जायगी। यदि हम तरंग-यांत्रिकी का दृष्टिकोण पसंद करें तो यह प्रकट होता है कि जब h शून्य के बराबर हो तो h का अनुपाती होने के कारण ψ—तरंगों

1. The Accord with the Old Mechanics

का तरंग-दैर्घ्य भी शून्य हो जायगा। तब ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान सदैव ही सत्य रहेगा क्योंकि यह समझना कठिन नहीं कि जब तरंग-दैर्घ्य अनन्ततः छोटा हो तब ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान सर्वदा अनुप्रयोज्य होता है। इसलिए जब h शून्य की ओर प्रवृत्त होता है तब ψ—तरंग के प्रचरण-समीकरण के स्थान में ज्यामितीय प्रकाश का समीकरण अर्थात् याकोबी का समीकरण सदा ही प्रतिस्थापित हो सकता है और इस प्रकार पुरानी और नवीन यांत्रिकी की अनन्तस्पर्शी एकात्मता सिद्ध हो जाती है।

अतएव यह समझना भी आसान है कि बड़े परिमाण की घटनाओं—स्थूल-स्तरीय घटनाओं—के लिए चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी साधारण व्यवहार में क्यों सदैव पूर्णतः सत्य प्रमाणित होती है। इन घटनाओं में भौतिक राशियों के मान इतने बड़े होते हैं कि उनमें क्रिया का क्वांटम सर्वथा उपेक्षणीय समझा जा सकता है और उसके अस्तित्व का प्रभाव भौतिक मापन में यथार्थता की अनिवार्य कमी के कारण पूर्णतः छिप जाता है। संख्यात्मक उदाहरणों से इस बात को स्पष्ट करना सरल है। यथा, यदि हम एक मिलीग्राम के दशमांश के भारवाली गोली के लिए हाइज़नबर्ग की असमताओं का सत्यापन करना चाहें तो उसके वेग का मान एक मिलीमीटर प्रति सेकंड तक सही ज्ञात होने पर भी उसके गुरुत्व-केन्द्र के स्थान को इतनी यथार्थतापूर्वक नापने की आवश्यकता पड़ेगी कि उसमें भूल $१०^{-२०}$ सेंटीमीटर से भी कम हो! और गोली का भार अत्यन्त स्वल्प होने के कारण यह तो असाधारण रूप से अनुकूल उदाहरण है। किन्तु पुरानी और नवीन यांत्रिकी के अविरोध को और भी अच्छी तरह समझने के लिए हम एक विशिष्ट दशा का अधिक सूक्ष्म अध्ययन करेंगे।

मान लीजिए कि हम किसी कणिका की स्थूल-मापदंडीय गति का अध्ययन कर रहे हैं, यथा किसी चुम्बकीय क्षेत्र में इलैक्ट्रान की गति का। हमें विदित है कि चिर-प्रतिष्ठित धारणाओं के द्वारा इस गति का बिलकुल सही विवरण दिया जा सकता है। इस बात का अनिश्चितता के अनुबन्धों से मेल कैसे है? इसके स्पष्टीकरण के लिए सबसे पहले हमें यह कहना है कि इस स्थूल-स्तरीय प्रयोग की परिस्थिति में हम जितनी लम्बाई को प्रत्यक्षतः नाप सकेंगे वह विचाराधीन स्वल्प कणिका की आनुषंगिक तरंग के तरंग-दैर्घ्य की अपेक्षा बहुत ही बड़ी है। फलतः ऐसे तरंग-गुच्छ का अस्तित्व संभव है जिसकी लम्बाई प्रत्यक्षतः नापी जा सकनेवाली लम्बाई से बहुत छोटी हो, किन्तु फिर भी वह लगभग बराबर तरंग-दैर्घ्यवाली तरंगों से निर्मित हुआ हो। इसलिए सु-अनुष्ठित तथा यथार्थतापूर्ण प्रयोग में

कणिका का नाप सम्पन्न हो जाने के बाद की अवस्था का निरूपण हाइज़नबर्ग-अनुबन्धों का प्रतिषेध[1] किये बिना ही एक तरंग-संघ[2] के द्वारा हो सकेगा। और चूंकि यह तरंग-संघ हमारे लिए व्यवहारतः विन्दु-कल्प और प्रायः एक-वर्ण ही है इसलिए इस स्थूल-स्तरीय माप की यथार्थता की सीमाओं में हम उस कणिका के लिए एक सुनिर्णीत स्थान और एक सुनिर्णीत वेग निर्धारित कर सकेंगे। इसके अतिरिक्त तरंग-यांत्रिकी के प्रारम्भ में ही प्राप्त एक मौलिक परिणाम के अनुसार प्रतिक्षण ψ—तरंगों के संघ[3] का विस्थापन-वेग ठीक उतना ही होता है जितन कि चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी उसकी आनुषंगिक कणिका के लिए निर्धारित करती। अतएव हमारा विन्दु-कल्प तरंग-गुच्छ[4] ठीक चिर-प्रतिष्ठित कणिका के ही समान गमन करेगा और चूंकि व्यतिकरण नियम के अनुसार वास्तविक कणिका सदैव उस तरंग-गुच्छ के भीतर ही अवस्थित रहेगी, इसलिए सब कुछ ठीक उसी तरह घटित होगा मानो वास्तविक कणिका चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी के नियमों का ही पालन करती हो। इस उदाहरण से हम यह अच्छी तरह समझ सकते हैं कि क्वांटम-जनित अनिश्चितता के गुप्त रहने का कारण केवल यही है कि हमारे स्थूलस्तरीय मापन में यथार्थता की कमी है।

इसलिए नवीन और पुरानी यांत्रिकी की विरोध-हीनता के विषय में कोई गंभीर कठिनाई नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि क्वांटम-भौतिकी के भवन का निर्माण चिर-प्रतिष्ठित भौतिकी के ही चारों ओर किया गया है जिससे चिर-प्रतिष्ठित भौतिकी नष्ट तो हुई नहीं, किन्तु एक अधिक विशाल भवन में समाविष्ट हो गयी है। विज्ञान के लम्बे इतिहास में सर्वदा ही प्रगति इसी प्रकार उत्तरोत्तरवर्ती सन्निकटनों के द्वारा होती रही है।

४. नवीन यांत्रिकी में अनिर्णीतता[5]

जब किसी प्रारम्भिक क्षण पर किसी निकाय के सब अंशों के स्थान और गत्यात्मक अवस्थाएँ ज्ञात हों तो चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी के समीकरण उस निकाय की गति को पूर्णतः निर्णीत कर देते हैं। यथा किसी कणिका की चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकीय गति की प्रागुक्ति पूर्ण रूप से संभव है यदि किसी आदि-क्षण पर उसका स्थान तथा वेग ज्ञात हों। किसी यांत्रिक निकाय की वर्तमान अवस्था के सम्बन्ध में

1. Contradiction 2. Wave-group 3. Group. 4. Point-like Wave-packet 5. Indeterminism in the New Mechanics

कुछ बातें ज्ञात होने पर उसके अनिवार्य भविष्य की प्रागुक्ति की संभावना ही चिर-प्रतिष्ठित यांत्रि की का नियतिवाद[1] है। इस यांत्रिकी को जो आश्चर्यजनक सफलताएँ मिली थीं, विशेषकर गणित-ज्योतिष में, उन्हीं के कारण समस्त भौतिकज्ञों का प्रयत्न यही था कि सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान का निर्माण भी ऐसा होना चाहिए जिसमें यह नियतिवाद सर्वदा सत्य प्रमाणित हो सके। अतः जितनी भी स्थूल-स्तरीय घटनाओं का अध्ययन किया गया उन सबमें इस माँग की पूर्ति अभीष्ट समझी गयी और समस्त चिर-प्रतिष्ठित सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान अवकलजों[2] तथा आंशिक अवकलजों[3] के समीकरणों पर आश्रित किया गया ताकि आदि अवस्था सम्बन्धी कुछ न्यासों[4] से प्रारम्भ करके किसी भी भौतिक निकाय के उत्तरोत्तर विकास का प्रकृष्ट परि-कलन[5] हो सके। भौतिक विज्ञान की जिन शाखाओं में प्रायिकता-कलन[6] निविष्ट किया गया था उनमें भी यही मान लिया जाता था कि मूल घटनाएँ तो सदैव नियति के कठोर नियमों का ही पालन करती हैं, किन्तु जो स्थूल घटना अध्ययन का विषय होती है उसमें समाविष्ट इन मौलिक घटनाओं की यदृच्छता[7] के तथा उनकी बहुत बड़ी संख्या के कारण ही इन घटनाओं की समष्टि के लिए सांख्यिकीय विधियों का तथा प्रायिकता की धारणा का उपयोग उचित समझा जा सकता है। बहुत कुछ अनजाने ही भौतिक घटनाओं की आन्तरिक नियति अर्थात् कम-से-कम सिद्धान्ततः उनकी पूर्ण प्रागुक्ति की संभावना ने एक प्रकार के वैज्ञानिक आगम[8] का रूप ले लिया था। हम देखेंगे कि नवीन क्वांटम-सिद्धान्तों के विकास ने इस स्थिति में गहन परिवर्तन कर दिया है।

इस दृष्टि मे पुरानी और नवीन यांत्रिकी में जो अन्तर है उसको हृदयंगम करने के लिए हमें स्मरण रखना चाहिए कि किसी निकाय के परिवर्तनों की प्रकृष्ट प्रागुक्ति के लिए चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी में आदि अवस्था सम्बन्धी जिन मूल बातों का यौग-पदिक ज्ञान आवश्यक था वे ठीक वही हैं जिनका यौगपदिक निर्णयन अनिश्चितता के अनुबन्धों के अनुसार असंभव है। हम पहले भी बता चुके हैं कि किसी निकाय के चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकीय गति-समीकरणों का प्रकृष्ट हल निकालने के लिए किसी ज्ञात क्षण पर उस निकाय के अवयवों का विन्यास (कानफिगरेशन) और उनकी गत्यात्मक अवस्था का जानना जरूरी है। किन्तु आधुनिक भौतिक विज्ञान की दृष्टि में

1. Determinism 2. Derivatives 3. Partial Derivatives 4. Data 5. Rigorous calculation 6. Calcules of probablities 7. Randomness 8. Dagma

प्रत्येक निकाय अंतिम विश्लेषण में केवल अनक कणिकाओं का समुदाय मात्र समझा जा सकता है। अतः किसी एक ही क्षण पर इन सब विभिन्न कणिकाओं के निर्देशांक और वेग (अथवा संवेग) मालूम करना आवश्यक होगा। किन्तु अनिश्चितता के अनुबन्धों का वास्तविक अर्थ यही है कि इन बातों का यथार्थतापूर्ण तथा यौगपदिक ज्ञान असंभव है। इसमें सन्देह नहीं कि जो नियतांक h हमारे साधारण मात्रकों की अपेक्षा अत्यन्त ही स्वल्प है उसकी पारिमाणिक कोटि के कारण क्वांटमीय अनिश्चितताएँ साधारण मापदंडीय भौतिक घटनाओं के लिए उपेक्षणीय हो जाती हैं। अतः नियतिवाद भी प्रकृष्टतः सत्य दिखाई देने लगता है। किन्तु भौतिक घटनाओं के सूक्ष्म-स्तरीय अध्ययन में इन अनिश्चितताओं का महत्त्व बहुत अधिक होगा और उस क्षेत्र में ये अनिश्चितताएँ इतनी बढ़ जायंगी कि घटना-क्रम का नियतिवाद-समर्थक विवरण संभव ही न रहेगा।

क्वांटम भौतिक विज्ञान में से नियतिवाद के तिरोहित हो जाने से—कम-से-कम उसके शिथिल हो जाने से—जो कमी हुई थी, वह पूरी हुई है प्रायिकता के नियमों के प्रादुर्भाव से। किन्तु सांख्यिकीय यांत्रिकी के प्रसंग में प्रायिकता के उपयोग का जो अर्थ था वह यहाँ नहीं है। यहाँ प्रायिकता को निविप्ट करने का उद्देश्य सर्वथा भिन्न है। जिन चिर-प्रतिष्ठित सिद्धान्तों में प्रायिकता का उपयोग किया जाता है उनमें भी यह बात तो मान ही ली जाती थी कि मूल प्रक्रियाएँ दृढ़ नियमों के ही अधीन रहती हैं। और प्रायिकता का सहारा केवल ऐसी स्थूल-स्तरीय घटना के सम्बन्ध में लिया जाता है जिसमें मौलिक घटनाओं की बहुत बड़ी संख्या समाविष्ट हो। इसके विपरीत क्वांटम-भौतिकी में प्रायिकता का उपयोग मौलिक घटनाक्रम के ही विवरण के लिए प्रत्यक्षतः किया जाता है। यह समस्या किस रूप में उपस्थित होती है इसको अधिक अच्छी तरह समझने के लिए हमें यह बताना पड़ेगा कि यह नवीन यांत्रिकी मौलिक घटनाक्रम को तरंगों के द्वारा किस प्रकार निरूपित करती है।

पहले हम अकेली एक कणिका के ही आधार पर अपना तर्क प्रस्तुत करेंगे। परिच्छेद १२ में बतायी हुई विधि से इसी विचार-धारा का उपयोग अनेक कणिकाओं के निकाय के लिए भी हो सकता है।

थोड़े से प्रेक्षणों या प्रयोगों के परिणाम ज्ञात होने पर अन्य प्रेक्षणों अथवा भविष्य में होनेवाले प्रयोगों के परिणामों की प्रागुक्ति कर देना ही सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान का उद्देश्य है। चिर-प्रतिष्ठित भौतिकी में यह मान लिया जाता है कि किसी कणिका के निर्देशांक और उसके तत्क्षणिक वेग दोनों का ही यौगपदिक नाप संभव है। अतः चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी के समीकरणों के द्वारा हम सिद्धान्ततः उसी कणिका पर किसी

आगामी क्षण में किये गये प्रेक्षण अथवा माप के परिणाम की असंदिग्ध प्रागुक्ति कर सकते हैं। किन्तु इसके विपरीत नवीन यांत्रिकी में हम प्रारम्भ में ही यह मान लेते हैं कि उस कणिका के निर्देशांकों का तथा संवेग का यौगपदिक एवं प्रकृष्टतः यथार्थ नाप असंभव है। अधिकतम प्रयोग-संभव यथार्थतापूर्वक किये जाने पर भी इन राशियों के नाप में हाइज़नबर्ग के अनिश्चितता के अनुबन्धों द्वारा निर्धारित परिमाण से कम अनिश्चितता प्राप्त करना संभव नहीं हो सकता। माप के पश्चात् कणिका की जो अवस्था ज्ञात होगी वह जिस आनुषंगिक तरंग-गुच्छ के द्वारा निरूपित होगी वह कभी भी ऐसा नहीं हो सकता जो विन्दु-कल्प भी हो और एक-वर्ण भी हो। या तो आकाश में या आवृत्तियों के परास में और सामान्यतः दोनों में सदैव उसका कुछ-न-कुछ विस्तार होगा ही। तब ψ–तरंग के आदि-रूप से प्रारम्भ करके प्रचरण-समीकरण के द्वारा हम उस तरंग के उस समय तक के समस्त विकास का यथातथ परिकलन कर सकेंगे जब तक कि उसका कोई नवीन प्रेक्षण अथवा माप न किया जाय। फलतः हम यह भी बता सकेंगे कि कणिका-सम्बन्धी अमुक राशि का अमुक मान प्राप्त करने की प्रायिकता उस क्षण पर कितनी होगी जिस क्षण पर उस राशि का नाप फिर किया जायगा। जब यह नवीन माप संपन्न हो चुकेगा तब हमें उस कणिका की अवस्था के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त हो जायगा और इससे प्रायिकता-सम्बन्धी स्थिति बिलकुल बदल जायगी, ठीक उसी तरह जिस तरह कि किसी घटना-सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त हो जाने पर उस घटना की प्रायिकता-सम्बन्धी स्थिति बदल जाती है। अतः इस नवीन माप के बाद एक ऐसी नयी तरंग का निर्माण करना पड़ेगा जो उस कणिका-सम्बन्धी हमारे ज्ञान की नवीन स्थिति को निरूपित कर सके। इस परिच्छेद के प्रारम्भ में जिस विचार का विवेचन किया गया था, उसके अनुसार हम कहेंगे कि क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व के कारण प्रत्येक प्रयोग कणिका की अवस्था में कुछ ऐसे विकार उत्पन्न कर देता है जिनका नियंत्रण नहीं किया जा सकता। इसका फल यह होता है कि पूर्ववर्ती अवस्था और परवर्ती अवस्था में कोई कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता। यह विकार क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व से सम्बद्ध है जैसा कि हम पहले—विशेषकर पिछले अनुच्छेद में—देख चुके हैं और माप की प्रक्रिया सम्बन्धी अनिश्चितता के कारणों को असीमतः घटाने में यही बाधक होता है। दो मापों के मध्यवर्ती समय में ψ–तरंग का विकास उसके आदि-रूप के और प्रचरण-समीकरण के द्वारा पूर्णतः निर्णीत हो जाता है। अतः यह तो प्रकृष्ट नियति के नियमों का पालन करता है। किन्तु इससे यह परिणाम किसी भी तरह नहीं निकाला जा सकता कि प्रेक्ष्य और माप्य घटनाओं में भी प्रकृष्ट नियति विद्यमान है क्योंकि

प्रत्येक नवीन प्रेक्षण और माप का प्रभाव यह होता है कि उस घटनाक्रम में कुछ नवीन अवयव जुड़ जाते हैं और ψ—तरंग का नियमित विकास बिगड़ जाता है ।

हाइज़नबर्ग ने उपर्युक्त विचारधारा के उपयोग का एक उदाहरण दिया है। उन्होंने किसी कणिका के स्थान के उत्तरोत्तरवर्ती दो मापों को निम्न प्रकार चित्रित किया है। प्रथम माप से कणिका आकाश के किसी छोटे से क्षेत्र में अवस्थित[1] जान पड़ेगी। अतः इस प्रथम माप के अन्त में आनुषंगिक तरंग-गुच्छ आकाश के इसी छोटे क्षेत्र में सीमित रहेगा। यदि ऐसा न होता तो व्यतिकरण नियम का उल्लंघन हो जाता। इस तरंग-गुच्छ में एक-वर्णता की मात्रा अनिवार्यतः अत्यन्त कम होगी और जैसा कि प्रचरण-समीकरण से प्रकट होता है प्रचरण के साथ-साथ इस गुच्छ का विस्तार बढ़ता जायगा। इसके बाद किसी परवर्ती क्षण पर जो द्वितीय नाप किया जायगा उससे वह कणिका आकाश के किसी नवीन क्षेत्र में अवस्थित मालूम पड़ेगी। यह क्षेत्र निश्चित रूप से उस क्षेत्र के अन्तर्गत होगा जिसमें इस समय आनुषंगिक तरंग-गुच्छ सीमित होगा और सामान्यतः उसमे बहुत छोटा भी होगा। दूसरे शब्दों में तरंग-प्रचरण का परिणाम तो यह होता है कि कणिका के संभव स्थानों का क्षेत्र शीघ्रतापूर्वक बढ़ता जाता है, किन्तु द्वितीय माप का प्रभाव यह होगा कि वह क्षेत्र सहसा घट जायगा। द्वितीय माप के पश्चात् जो ψ—तरंग-गुच्छ निर्मित होगा उसका विस्तार प्रथम तरंग-गुच्छ के अंतिम विस्तार की अपेक्षा बहुत छोटा होगा। स्वभावतः ही अब ψ—तरंग-गुच्छ के इस नवीन रूप से प्रायिकताओं का भी सर्वथा नवीन विकास-क्रम प्रारम्भ हो जायगा।

अब हम समझ सकेंगे कि नवीन क्वांटम भौतिक विज्ञान की धारणाओं ने किस प्रकार प्राचीन नियतिवाद की मान्यताओं को छिन्न-भिन्न कर दिया। प्रत्यक्षतः अब भी ऐसी बहुत-सी दशाएँ हैं जिनमें किसी राशि के मापने से प्राप्त मान की प्रागुक्ति निश्चित रूप से हो सकती है। ऐसा तब होता है जब नापने से पहले की अवस्था उस राशि की 'शुद्ध' दशा हो अथवा दूसरे शब्दों में जब उस राशि के ψ—फलन के इष्ट-फलन-प्रसार में केवल एक ही पद हो। एक-वर्ण समतल तरंग की आनुषंगिक कणिका की ऊर्जा के या उसके संवेग के नाप में यही होता है। किन्तु ऐसी दशा तो अपवाद रूप होती है जिनके लिए यह भी कहा जा सकता है कि उनकी प्रायिकता वास्तव में शून्य ही है।

पिछले वर्षों में नवीन यांत्रिकी द्वारा नियति के निषेध की समस्या के सम्बन्ध में बहुत विवाद हुआ है। अब भी अनेक भौतिकज्ञ ऐसे हैं जिनके लिए यह अत्यन्त

1. Localised

अरुचिकर है कि आधुनिक क्वांटम भौतिकी के लिए अनिवार्य होने पर भी वे प्रकृष्ट नियतिवाद के परित्याग को अंतिम रूप में स्वीकार कर लें। वे तो यहाँ तक कहते हैं कि नियति-शून्य विज्ञान की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। इस मत को हम तो अतिशयोक्ति ही समझते हैं क्योंकि क्वांटम-भौतिकी का अस्तित्व तो है ही और वह नियतिशून्य भी है। किन्तु यह विचार भी हमें पूर्णतः अनुचित नहीं जान पड़ता कि किसी-न-किसी दिन भौतिक विज्ञान पुनः नियतिवाद के पथ पर लौट आयगा और तब इस विज्ञान की वर्तमान अवस्था को हम ऐसी समझने लगेंगे मानो क्षण भर के लिए रास्ता भूलकर हम चक्कर में पड़ गये थे और हमारी धारणाओं की अपर्याप्तता ने हमें विवश कर दिया था कि पारमाणविक क्षेत्र में हम ठीक नियतिवाद के पथ पर चलना थोड़े समय के लिए तो छोड़ ही दें। यह संभव है कि सूक्ष्म-स्तरीय जगत् में कार्य-कारण के नियम का अनुसरण करने की हमारी वर्तमान अक्षमता का कारण यही है कि हम कणिका, आकाश, काल आदि धारणाओं का उपयोग करते हैं। ये धारणाएँ हमने अपने वर्तमान स्थूल-स्तरीय अनुभव के आधार पर बनायी हैं और इन्हीं का हम सूक्ष्मस्तरीय विवरण में भी उपयोग करना चाहते हैं। किन्तु कोई भी बात ऐसी नहीं है जो हमें विश्वास दिला सके कि इस क्षेत्र में वास्तविकता का निरूपण करने के योग्य क्षमता इन धारणाओं में है। वस्तुतः तथ्य इससे विपरीत ही मालूम पड़ता है। यद्यपि हम यह मानते हैं कि अभी क्वांटम-भौतिकी को स्पष्टतः समझ सकने के लिए अनेक मौलिक संशोधनों की आवश्यकता है, तब भी व्यक्तिगत रूप से मुझे यह अधिक संभव नहीं मालूम देता कि हम पूर्व-कालीन नियतिवाद को पूर्ण रूप से पुनः प्रतिष्ठित कर सकें। नवीन यांत्रिकी के विकास से उसे जो आघात लगे हैं वे इतने गहरे हैं कि उन्हें मिटा देना संभव नहीं है। निःसन्देह बुद्धिमानी यही कहने में है कि इस समय तो क्वांटम-जनित घटनाओं का भौतिक-विज्ञान नियतिवादी नहीं है।*

५. परिपूरकता, आदर्शीकरण, आकाश और काल[1]

नवीन यांत्रिकी की धारणाओं ने जो मौलिक रूप ग्रहण किया है उसके गूढ़ार्थ को स्पष्ट करने में बोह्र ने, जिनका कार्य आधुनिक भौतिकी के विकास में आदि से

* न्यूमान (J. Von Neumann) ने प्रमाणित कर दिया है कि नवीन यांत्रिकी के प्रायिकता-मय नियम किसी भी प्रकार की प्रच्छन्न नियति के अस्तित्व से असंगत हैं। अतः यह अत्यन्त दुर्घटनीय है कि भविष्य में पारमाणविक भौतिकी में नियतिवाद की प्रतिष्ठा पुनः हो सके।

1. Complementarity, Idealisation, Space and Time

अन्त तक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है, अपने सदैव गहन और बहुधा विलक्षण अध्ययनों से बहुत बड़ी सहायता प्रदान की है। विशेषतः परिपूरकता की धारणा, जो दार्शनिक दृष्टिकोण से इतनी विचित्र है, उन्हीं की देन है।

इलैक्ट्रानों जैसी किसी भी सत्ता के विवरण में कणिकात्मक चित्र की जितनी आवश्यकता होती है उतनी ही तरंगात्मक चित्र की भी। इसी तथ्य को लेकर प्रारम्भ में बोह्र के सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ था कि जो दोनों चित्र इतने भिन्न हैं और जिन्हें परस्पर-विरोधी भी कहा जा सकता है उनका उपयोग एक ही समय में कैसे किया जा सकता है। तब उन्होंने सिद्ध किया कि क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व के कारण जिन अनिश्चितता के अनुबन्धों का प्रादुर्भाव हुआ है वे इन दोनों चित्रों को कभी भी प्रत्यक्षतः विरोधी रूप में उपस्थित नहीं होने देते। प्रेक्षणों के द्वारा किसी एक चित्र को जितना ही अधिक स्पष्ट किया जाता है उतना ही अधिक अस्पष्ट दूसरा चित्र हो जाता है। जब इलैक्ट्रान का तरंग-दैर्घ्य इतना सुनिर्णीत होता है कि वह स्वयं अपने ही आप से व्यतिकरण कर सके तब उस इलैक्ट्रान के स्थान का ठीक-ठीक पता ही नहीं लग सकता और कणिकात्मक चित्र से उसकी ज़रा भी समानता नहीं रहती। और इसके विपरीत जब इलैक्ट्रान का स्थान यथार्थतः निर्णीत होता है तब उसके व्यतिकरण गुण का लोप हो जाता है और तरंगात्मक चित्र से उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं दिखाई देता। कणिकात्मक गुण और तरंगात्मक गुण का प्रत्यक्ष विरोध कभी नहीं होता क्योंकि एक ही समय दोनों का अस्तित्व कभी नहीं रहता। हम कणिका और तरंग के युद्ध की बराबर प्रतीक्षा करते रहते हैं, किन्तु वह युद्ध कभी होता ही नहीं क्योंकि सदैव दोनों में से केवल एक ही प्रतिपक्षी उपस्थित रहता है। इलैक्ट्रान तथा भौतिक विज्ञान की अन्य मौलिक सत्ताएँ सब ऐसी होती हैं कि जिनके दो रूप होते हैं जो परस्पर-विरोधी तथा असंधेय होते हैं, फिर भी उनके समस्त गुणों की व्याख्या के लिए दोनों ही रूपों का उत्तरोत्तर उपयोग करना आवश्यक होता है। इनकी तुलना किसी वस्तु के दो पहलुओं से की जा सकती है जिन्हें एक-साथ देखना तो सम्भव नहीं होता, किन्तु उस वस्तु का पूरा विवरण देने के लिए उत्तरोत्तर दोनों ही पहलुओं का निरीक्षण ज़रूरी होता है। बोह्र ने इन दोनों रूपों का नाम "परिपूरक रूप" रखा है जिसका अर्थ यह है कि ये रूप एक ओर तो परस्पर विरोधी हैं और दूसरी ओर प्रत्येक रूप दूसरे रूप की कमी पूरी करता है और ऐसा जान पड़ता है कि परिपूरकता की इस धारणा के सार-भाग ने अब एक सच्चे दार्शनिक सिद्धान्त का महत्त्व प्राप्त कर लिया है।

वास्तव में यह बात किसी प्रकार भी सुस्पष्ट नहीं है कि किसी भी भौतिक सत्ता का वर्णन अकेले एक ही चित्र के द्वारा या हमारी बुद्धि की किसी एक ही धारणा के द्वारा हो सकता है। हम अपने दैनिक अनुभवों के आधार पर अपने मानस चित्रों और धारणाओं का निर्माण करते हैं। इस अनुभव में से ही हम कुछ आकृतियों को छाँट लेते हैं और वहाँ से प्रारम्भ करके सरलीकरण और अपकर्षण[1] के द्वारा कुछ सरल चित्र, कुछ स्पष्ट प्रतीत होनेवाली धारणाएँ बना लेते हैं और अन्त में इन्हीं के द्वारा घटनाओं का मर्म समझने का प्रयत्न करते हैं। सुनिर्णीत स्थान में अवस्थित कणिका की तथा यथार्थतः एक-वर्ण तरंग की धारणाएँ भी इसी प्रकार के आदर्श चित्र हैं। किन्तु यह संभव है कि जो आदर्श चित्र हमारे मन में अत्यन्त सरलीकृत तथा अत्यन्त दृढ़ रूप में उत्पन्न हुए हैं और जिन्हें बोह्र आदर्शीकरण[2] कहते हैं उनके द्वारा वास्तविकता का यथार्थतापूर्वक निरूपण कभी भी नहीं किया जा सकता। अतः वास्तविकता की जटिलता का वर्णन करने के लिए यह आवश्यक हो सकता है कि एक ही सत्ता के लिए दो या अनेक आदर्श-चित्रों का उत्तरोत्तर उपयोग करना पड़े। कभी एक चित्र अधिक उपयुक्त होगा और कभी दूसरा। कभी-कभी पिछले अनुच्छेद की 'शुद्ध' दशा में विचाराधीन सत्ता के वर्णन के लिए दोनों चित्रों में से केवल एक ही यथार्थतः उपयोगी होगा। किन्तु ऐसी दशाएँ असाधारणतः विरल ही होंगी। सामान्यतः तो हमें दो आदर्श चित्रों का सहारा लेना ही पड़ेगा।

यदि हम बोह्र की जटिल विचारधारा को ठीक-ठीक समझ सके हों तो ये ही उन वस्तुतः मौलिक विचारों में से कुछ हैं जो इस प्रतिभापूर्ण भौतिकज्ञ के मस्तिष्क में क्वांटम-भौतिकी द्वारा प्रेरित हुए थे। संभवतः इन दार्शनिक विचारों के उपयोग का क्षेत्र भौतिक-विज्ञान की सीमाओं से बाहर भी विस्तारित करने का प्रयत्न किया जा सकता है। उदाहरण के लिए स्वयं बोह्र का अनुसरण करके हम यह जानने का प्रयत्न कर सकते हैं कि क्या परिपूरकता की धारणा के महत्त्वपूर्ण उपयोग जीव-विज्ञान[3] में नहीं हो सकते और क्या उससे हमें जीवन सम्बन्धी घटनाओं के भौतिक-रासायनिक पहलुओं के तथा विशिष्टतः जैव[4] पहलुओं के द्वैत को समझने में सहायता नहीं मिल सकती ? दूसरे विचार-क्षेत्र में हम इस बात की विवेचना भी कर सकते हैं कि क्या सभी आदर्शीकरण ऐसे नहीं होते कि जितनी ही अधिक पूर्णता उनमें

1. Abstraction 2. Idealisations. 3. Biology 4. Vital

होती है वास्तविकता के लिए वे उतने ही कम उपयोगी हो जाते हैं। यद्यपि हमारी रुचि विरोधाभास[1] की ओर बिलकुल नहीं है तथापि देकार्ते[2] के मत के प्रतिकूल हम यह मत भी प्रकट कर सकते हैं कि स्पष्ट और परिच्छिन्न धारणा से अधिक भ्रान्ति-जनक और कोई चीज नहीं हो सकती। किन्तु इस भयंकर स्थान पर रुक जाने में और भौतिक विज्ञान पर लौट आने में ही बुद्धिमानी है।

किन्तु इससे भी अधिक निश्चित बात यह है कि आकाश और काल सम्बन्धी हमारी प्रचलित मान्यताएँ, आपेक्षिकता के सिद्धान्त द्वारा गंभीर परिवर्तन हो जाने पर भी, पारमाणविक घटनाओं के वर्णन के लिए यथार्थतः उपयुक्त नहीं हैं। हम पहले ही देख चुके हैं—मुख्यतः भूमिका में ही—कि क्रिया के क्वांटम के अस्तित्व में ही ज्यामिति का गति-विज्ञान के साथ एक पूर्णतः अनपेक्षित सम्बन्ध निहित है। भौतिक सत्ताओं का आकाश और काल के ज्यामितीय ढाँचे में अवस्थापन[3] उन सत्ताओं की गत्यात्मक अवस्था से स्वतन्त्र प्रमाणित नहीं होता। इसमें सन्देह नहीं कि व्यापक आपेक्षिकता के सिद्धान्त ने हमें यह बता दिया है कि दिक्-काल के स्थानीय लक्षण विश्व में द्रव्य के वितरण[4] पर अवलम्बित होते हैं। किन्तु क्वांटमों के अस्तित्व के कारण दिक्-काल में जिस परिवर्तन की आवश्यकता है वह और भी अधिक गंभीर है और अब हम न तो किसी भौतिक वस्तु की गति को दिक्-काल में एक रेखा (विश्व-रेखा[5]) के द्वारा निरूपित ही कर सकते हैं और न हम काल-प्रवाह में उत्तरोत्तरवर्ती आकाशीय अवस्थापनों को निरूपित करनेवाले वक्र के द्वारा उसकी गत्यात्मक अवस्था को ही निर्दिष्ट कर सकते हैं। अब तो हम गत्यात्मक अवस्था को दिक्कालीय अवस्थापनों से व्युत्पन्न भी नहीं समझ सकते। उसे तो अब भौतिक वास्तविकता का एक स्वतंत्र और परिपूरक पहलू समझने के लिए हमें विवश होना पड़ा है।

सच तो यह है कि हमारे दैनिक अनुभव से आकाश और काल सम्बन्धी जिन धारणाओं का जन्म हुआ था वे केवल स्थूल-मापदंडीय घटनाओं के ही लिए सत्यता-पूर्ण हैं। अब उनके स्थान में अन्य मौलिक धारणाओं को प्रतिस्थापित करना आवश्यक हो गया है जो सूक्ष्म-स्तरीय भौतिक-विज्ञान के क्षेत्र में सत्यतापूर्ण प्रमाणित हों और जो ऐसी भी हों कि जब हम इन मौलिक घटनाओं से साधारण मापदंडवाली प्रेक्षणीय घटनाओं में संक्रमण करें तब अनन्तस्पर्शी रूप से वे पुनः हमारी आकाश और काल

1. Paradox 2. Descartes 3. Localisation 4. Distribution of matter 5. World-line

सम्बन्धी साधारण धारणाओं में परिणत हो जायँ। क्या यह भी कहने की आवश्यकता है कि यह काम अत्यन्त कठिन है? हमें तो इसमें बहुत सन्देह है कि कभी भी ऐसा संभव हो सकेगा कि जो हमारे नित्यप्रति के जीवन का मुख्य आधार है उसी को हम इस प्रसंग में से निकाल फेंकने में सफलता प्राप्त कर सकें। किन्तु विज्ञान का इतिहास मानव-बुद्धि की उत्कृष्ट सर्जन-शक्ति का साक्षी है। अतः निराश होने का कोई कारण नहीं है। किन्तु जब तक हम निर्दिष्ट दिशा में अपनी धारणाओं का प्रसार करने में सफलता प्राप्त नहीं कर लेते तब तक तो हमें यही प्रयत्न करते रहना होगा कि सूक्ष्म-स्तरीय घटनाओं को भी हम आकाश और काल के ढाँचे में ही निरूपित कर सकें, चाहे परिणाम कितना ही अशोभन क्यों न हो और चाहे हमें भी वैसी ही कष्टकर भावना का अनुभव करना पड़े जो उस कारीगर के मन में पैदा होती है जिसे किसी रत्न को ऐसे ज़ेवर में जड़ना पड़े जिसमें दूसरे ही किसी बड़े या छोटे नग को बैठाने का स्थान पहले से बना हुआ हो।

६. क्या क्वांटम-भौतिकी अनियतिवादी ही रहेगी[1] ?

मेरे "तरंग-यांत्रिकी के प्रारम्भ काल के व्यक्तिगत संस्मरण" शीर्षक लेख में, जो "रेवू दे मेताफिजीक ए दे मोराल"[2] नामक पत्र में प्रकाशित हुआ था और जो बाद में मेरी पुस्तक "भौतिकी तथा सूक्ष्म-भौतिकी"[3] में भी छाप दिया गया था, मैंने तरंग-यांत्रिकी के निर्वचन के सम्बन्ध में उन मानसिक अवस्थाओं का वर्णन किया था, जिनका १९२३ से १९२८ तक मुझे अनुभव हुआ था। उसमें मैंने यह स्पष्ट कर दिया था कि यद्यपि मैंने तरंग-यांत्रिकी के ऐसे रूप का विकास करने का बहुत प्रयत्न किया जो मूर्त और नियतिवादी हो और जिसका कम-से-कम स्थूल रूप से तो भौतिक-विज्ञान की सनातन[4] धारणाओं से सांगत्य बना रहे। किन्तु जिन कठिनाइयों का मुझे सामना करना पड़ा था और जो आपत्तियाँ उसके विरुद्ध उठायी गयी थीं उनके कारण अन्त में मुझे भी बोह्र और हाइज़नबर्ग के अनियतिवादी तथा प्रायिकतामूलक दृष्टिकोण को ही स्वीकार करना पड़ा। लगभग २५ वर्षों से बराबर उसी दृष्टिकोण पर मेरी श्रद्धा रही है और अपने अध्यापन में, अपने व्याख्यानों में और अपनी पुस्तकों में, मैं उसी पर दृढ़ रहा हूँ। इसके अतिरिक्त अब तो लगभग सभी सैद्धान्तिक भौतिकज्ञों ने भी इसी दृष्टिकोण को स्वीकार कर

1. Will Quantum Physics Remain Indeterministic ? 2. Revue de Metaphysique et de Morale 3. Physique et Micro-physique 4. Traditional

लिया है। १९५१ में मुझे अमेरिका के युवा भौतिकज्ञ श्री डेविड बोह्म[1] का एक मैत्रीपूर्ण व्यक्तिगत पत्र मिला जिससे मुझे उनके उस लेख का पता लगा जो फ़िज़िकल रिव्यू[2] के १५ जनवरी, १९५२ के अंक में प्रकाशित हुआ था। इस लेख में श्री बोह्म ने मेरी १९२७ की धारणाओं को—कम-से-कम मेरे ही दिये हुए एक विशिष्ट रूप में—पूर्णतः स्वीकार कर लिया था और उनमें जो कमी, कई बातों के सम्बन्ध में थी, उसे रोचक ढंग से पूरा कर दिया था। इसके बाद जे० पी० विजियर[3] ने मेरा ध्यान उन दोनों उपपत्तियों[4] की समानता की ओर आकर्षित किया—एक तो वह जो आइन्स्टाइन ने व्यापक आपेक्षिकतावाद में, कणों की गति के सम्बन्ध में, प्रस्तुत की थी और दूसरी वह जो मैंने १९२७ में अपनी द्वि-साधन-सिद्धान्त[5] नामक परिकल्पना में सर्वथा स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत की थी। इन सब बातों के कारण मेरा ध्यान इन समस्याओं की ओर फिर से आकर्षित हुआ है और यद्यपि अब भी मैं यह कहने को राज़ी नहीं हूँ कि मेरी उस समय की धारणाओं के आधार पर तरंग-यांत्रिकी में नियतिवाद को फिर से प्रतिष्ठित कर देना संभव है तथापि मैं समझता हूँ कि यह प्रश्न पुनः विचार करने योग्य है। किन्तु हमें समस्त पूर्वतः कल्पित दार्शनिक धारणाओं से सतर्क रहना चाहिए और केवल इतना ही जानने का प्रयत्न करना चाहिए कि क्या इस मार्ग से भी सुनिर्णीत तथ्यों का कोई पूर्वापर विरोधहीन निर्वचन प्राप्त हो सकता है।

१९२० के लगभग जब मैं लम्बी युद्ध-सेवा के बाद पुनः वैज्ञानिक अनुसंधान में प्रवृत्त हुआ उस समय स्थिति निम्नलिखित प्रकार की थी। एक ओर तो फ़ोटानों का अस्तित्व निश्चित ही जान पड़ता था और काम्पटन प्रभाव[6] तथा रामन-प्रभाव[7] के आविष्कारों के द्वारा इसको नवीन समर्थन भी मिलने ही वाला था। किन्तु फ़ोटान की परिभाषा में उपस्थित आवृत्ति को निविष्ट करने के लिए तथा व्यतिकरण तथा विवर्तन की समस्त घटनाओं की व्याख्या करने के लिए तरंग-सिद्धान्त की आवश्यकता ने यह भी प्रमाणित कर दिया था कि प्रकाश के तरंग-कणिका-द्वैत को प्रकट करनेवाला संश्लेषात्मक[8] दृष्टिकोण भी अनिवार्य है। दूसरी ओर सूक्ष्म-मापदंडीय क्षेत्र में कणिकाओं की क्वांटमित गति के अस्तित्व से इलैक्ट्रानों तथा अन्य द्रव्य-कणिकाओं के लिए भी तरंग-कणिका-द्वैत की धारणा

1. David Bohm 2. Physical Review 3. J. P. Vigier 4. Demonstrations 5. Theory of Double Solution 6. Compton effect 7. Raman effect 8. Synthetic

का प्रादुर्भाव होता है। अतः मुझे तो स्पष्टतः किसी ऐसे संश्लेषण की आवश्यकता प्रतीत हुई जो द्रव्य तथा प्रकाश दोनों के ही लिए अनुप्रयोज्य हो और जिसमें अविभेद्यतः ग्रथित तरंगमय और कणिकामय पक्ष ऐसे सूत्रों के द्वारा संबद्ध हों जिनमें प्लांक का नियतांक आवश्यक रूप से विद्यमान रहे।

यह वही संश्लेषण है जिसका बीज मैंने उन टिप्पणियों में प्रस्तुत किया था जो १९२३ की शरद् ऋतु के प्रारम्भ में एकेडमी आफ साइन्सेज़[1] की 'कोंत रांदी'[2] नामक पत्रिका में प्रकट हुई थीं और जिनका अधिक पूर्ण रूप मैंने डाक्टर की उपाधि के लिए नवम्बर १९२४ में निवेदित अपने अनुसंधान-प्रबन्ध[3] में सम्मिलित कर दिया था। आपेक्षिकीय विचारधारा की तथा गत शताब्दी में हैमिल्टन द्वारा विकसित विचारधारा की अनुप्रेरणा से मुझे कणिका की गति के साथ ऐसी तरंग के प्रचरण का सम्बन्ध स्थापित करने में सफलता मिल गयी थी जिसकी आवृत्ति और तरंग-दैर्घ्य के साथ उस कणिका के ऊर्जा और संवेग का सम्बन्ध व्यक्त करनेवाले सूत्रों में नियतांक h निविष्ट था (देखिए परिच्छेद ८, खण्ड २) और मैंने यह सिद्ध कर दिया कि इस उपाय से हम पारमाणविक इलैक्ट्रानों की क्वांटमित गति के अस्तित्व का कारण समझ सकते हैं। विशेष विस्तार में प्रवेश न करके मैं केवल निम्नलिखित बात पर ही ज़ोर देना चाहता हूँ। किसी बल-क्षेत्र के अभाव में कणिका की सरल-रेखात्मक और अचर वेगवाली गति का सम्बन्ध मैंने एक ऐसी समतल एक-वर्ण तरंग के प्रचरण के साथ स्थापित कर दिया जो कणिका की गति की ही दिशा में प्रगामी हो, जिसका आयाम अपरिवर्ती हो और जिसकी कला x, y, z, t के एकघाती व्यंजक द्वारा व्यक्त हो सके। और चूंकि कणिका की ऊर्जा और संवेग का सम्बन्ध तरंग के आवृत्ति तथा तरंग-दैर्घ्य के साथ स्थापित किया गया था इसलिए मैंने कणिका की गति की अवस्था को तरंग की कला[4] से सम्बद्ध कर दिया। किन्तु अब प्रश्न यह था कि तरंग में इस तथ्य का सम्बन्ध किस बात से जोड़ा जाय कि आकाश में कणिका का स्थान पूर्णतः निश्चित होता है। इस समस्या का समाधान कठिन है क्योंकि जिस एक-वर्ण समतल तरंग का आयाम आकाश में सर्वत्र बराबर हो उसमें किसी ऐसे विशेष-गुण-सम्पन्न विन्दु की कल्पना नहीं हो सकती जिस पर कणिका प्रतिक्षण अवस्थित समझी जा सके। इस कठिनाई ने तथा अन्य कई आपेक्षिकीय आपत्तियों ने, जिनका वर्णन यहाँ आवश्यक नहीं है, मुझे यह विचारने

1. Academy of Sciences 2. Comptes Rendus 3. Thesis 4. Phase

के लिए विवश कर दिया कि एक-वर्ण समतल तरंग की कला का तो कोई भौतिक अर्थ हो सकता है, किन्तु इस तरंग के अपरिवर्ती आयाम का वैसा अर्थ नहीं हो सकता, क्योंकि आकाश में आयाम का मान सर्वत्र बराबर होने से तो बिना प्रमाण के ही यह प्रत्यक्ष हो जायगा कि कणिका के पाये जाने की प्रायिकता आकाश के सभी विन्दुओं के लिए बराबर है। उस समय मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं था कि प्रतिक्षण कणिका का कोई-न-कोई निश्चित स्थान तो होता ही है, अतः मेरे विचार से आयाम का अर्थ केवल प्रायिकता-मूलक ही हो सकता है और कणिका का यथार्थ स्थान आयाम के द्वारा निरूपित नहीं हो सकता। इसी लिए जिस तरंग की मैंने कल्पना की थी उसका नाम मैंने कला-तरंग[1] रखा था ताकि यह बात स्पष्ट हो जाय कि मेरे विचार में वस्तुतः इस तरंग की कला का ही कुछ भौतिक अर्थ हो सकता है। नवम्बर १९२४ में जब मैंने अपना अनुसंधान-प्रबन्ध निवेदित किया था, तब से लेकर भौतिक विज्ञान की पाँचवीं सालवे कांग्रेस[2] की बैठक के समय (अक्टूबर १९२७) तक स्वभावतः ही मैं तरंग-यांत्रिकी के विकास की सभी उत्तरोत्तरवर्ती स्थितियों का अत्यन्त मनोनिवेशपूर्वक अध्ययन करता रहा था। किन्तु इस नवीन सिद्धान्त की वैधानिक प्रक्रियाओं[3] के भौतिक अर्थ की तथा तरंग-कणिकामय द्वैत के वास्तविक मर्म की समस्या मुझे बराबर उद्विग्न करती रही। जहाँ तक मुझे ज्ञात है, इस द्वैत समस्या के तीन संभव समाधान प्रस्तुत किये गये हैं। जिस समाधान की तरफ श्रोडिंगर का झुकाव सदैव रहा वह तो यह था कि कणिकाओं के अस्तित्व का ही निषेध करके द्वैत की वास्तविकता ही नष्ट कर दी जाय। तब केवल तरंग का ही कुछ भौतिक अर्थ रह जायगा जो चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त की तरंग के सदृश ही होगा। कुछ विशेष दशाओं में तरंगों के प्रचरण से ही कणिकाओं-जैसा रूप दिखाई देगा। किन्तु वह केवल आभास मात्र ही होगा। प्रारम्भ में तो श्रोडिंगर ने अपने विचारों में सुनिश्चितता लाने के लिए कणिका की तुलना छोटी-सी तरंग-माला[4] से करना चाहा। किन्तु यह तुलना ठीक नहीं बैठती क्योंकि तरंग-माला की प्रवृत्ति ऐसी होती है कि उसकी लम्बाई निरन्तर शीघ्रतापूर्वक बढ़ती जाती है। अतः उसके द्वारा चिरस्थायी कणिका का निरूपण नहीं हो सकता। यद्यपि ऐसा जान पड़ता है कि कुछ इसी प्रकार के निर्वचन में श्रोडिंगर का विश्वास अब भी है, किन्तु मैं तो इसे स्वीकार करने के योग्य नहीं समझता। और मेरा विश्वास तो यही है कि तरंग-कणिकामय

1. Phase wave 2. 5th Solway Congress 3. Formalism 4. Wave-train

द्वैत को भौतिक तथ्य के रूप में मानना ही पड़ेगा। जिन दो अन्य समाधानों का मैंने ऊपर ज़िकर किया था वे दोनों ही इस द्वैत को वास्तविक मानते हैं, किन्तु दोनों के दृष्टिकोण सर्वथा भिन्न हैं।

इन समाधानों में से प्रथम में मेरा विश्वास १९२८ तक बना रहा। इसमें तरंग-कणिकामय द्वैत को भौतिक विज्ञान की सनातन धारणाओं से सुसंगत तथा मूर्तरूप देने के लिए यह धारणा बनायी गयी कि दीर्घ-विस्तृत तरंग के बीच में उपस्थित किसी प्रकार की विचित्रता[1] का ही नाम 'कणिका' है और इस विचित्रता के स्थान को ही उस कणिका का स्थान समझना चाहिए। यहाँ कठिनाई यह समझने में है कि प्रकाश के चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त में जैसी संतत तरंगों का उपयोग होता था, उसी प्रकार की विचित्रताहीन संतत तरंगों का उपयोग तरंग-यांत्रिकी में क्यों किया जाता है। मैं अभी थोड़ी देर में बताऊँगा कि इस दृष्टिकोण का विकास मैंने किस रूप में किया था।

तरंग-कणिकामय द्वैत का द्वितीय समाधान यह है कि कणिका की और संतत तरंग की धारणाओं को "वास्तविकता के दो परिपूरक पार्श्व"[2] ही मान लेना चाहिए—उसी अर्थ में जिसमें बोह्र ने इन शब्दों का व्यवहार किया था (देखिए परिच्छेद १०, खंड १ और ४)।

१९२४ में अपना अनुसंधान-प्रबन्ध निवेदित करने से पहले मैं चिरप्रतिष्ठित भौतिकी की धारणाओं से पूर्णतः अभिरंजित था और मैंने अपने नवीन विचारों के निर्वचन को उन्हीं धारणाओं के ढाँचे में अर्थात् स्थान-विन्यासों[3] और गतियों[4] के द्वारा घटनाओं के निरूपण के कार्तीय[5] ढाँचे में ढालना चाहा था। मुझे यह बात असंदिग्ध जान पड़ती थी कि प्रतिक्षण कणिका का आकाश में कोई-न-कोई निश्चित स्थान और कुछ-न-कुछ निश्चित वेग अवश्य ही होता है और इस कारण काल के प्रवाह में उसका कोई-न-कोई निश्चित गमन-पथ भी अवश्य ही होता है। किन्तु साथ ही मेरा यह भी दृढ़ विश्वास था कि इसका सम्बन्ध किसी ऐसी आवर्त तथा तरंगमय घटना से भी अवश्य है जिसके आवृत्ति और तरंग-दैर्घ्य निर्धारित किये जा सकते हैं। अतः यह बिलकुल स्वाभाविक था कि मेरे मन में इस कल्पना का जन्म होता कि दीर्घ-विस्तृत-तरंगमय घटना के बीच में कणिका एक प्रकार की विचित्रता मात्र है और इन दोनों के सम्मेलन

1. Singularity 2. Complementary sides of reality 3. Configurations 4. Motions 5. Cartesian

से ही भौतिक वास्तविकता का निर्माण होता है। जिस तरंगमय घटना के केन्द्र में यह विचित्रता अवस्थित होती है उसी के परिणमन से इस विचित्रता की गति का सम्बन्ध होता है। अत: उस तरंग को अपने प्रचरण में जिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा उन्हीं सब पर उस विलक्षणता की गति भी अवलम्बित होगी। यही कारण है कि कणिका की गति चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के नियमों का पालन नहीं करेगी क्योंकि वह तो शुद्ध विन्दु-यांत्रिकी[1] है अर्थात् उसमें कणिका पर केवल उन्हीं बलों का प्रभाव पड़ता है जो उसके गमन-पथ में उस पर लगते रहते हैं और उस गमन-पथ से बहुत दूर अवस्थित अवरोधों[2] का उसकी गति पर कुछ भी असर नहीं होता। किन्तु इसके विपरीत मेरी धारणा के अनुसार उस विचित्रता की गति पर उन सब अवरोधों का भी प्रभाव पड़ेगा जिनका प्रभाव उससे संलग्न तरंग के प्रचरण पर पड़ता है। फलत: व्यतिकरण और विवर्तन की घटनाओं के अस्तित्व की भी व्याख्या हो जायगी।

किन्तु फिर भी कठिनाई यह समझने में है कि तरंग-यांत्रिकी का विकास प्रचरण-समीकरणों के विचित्रता-विहीन संतत हलों[3] की ही सहायता से क्यों हुआ है। ये ही हल साधारणत: ग्रीक अक्षर ψ के द्वारा व्यक्त किये जाते हैं। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि जब मैंने एक-वर्ण समतल ψ—तरंग के प्रचरण का सम्बन्ध कणिका की सरल-रेखात्मक अचर-वेगीय गति से जोड़ा था, तब मुझे इसी कठिनाई का सामना करना पड़ा था कि कणिका की आनुपगिक तरंग के आवृत्ति और तरंग-दैर्घ्य जिस तरंग-कला के द्वारा निर्दिष्ट होते हैं उसमें तो प्रत्यक्ष भौतिक वास्तविकता है, किन्तु मेरी दृष्टि में उस तरंग का अपरिवर्ती आयाम कणिका के संभव स्थानों का केवल सांख्यिकीय निरूपण ही हो सकता है। यह एकक[4] और सांख्यिकीय का मिश्रण ही मुझे व्यथित कर रहा था और इसी का स्पष्टीकरण मुझे अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता था।

इस विषय में मेरी जो टिप्पणियाँ १९२४ से १९२७ तक प्रकाशित हुई थीं उन्हें देखने से पता लग जायगा कि किस प्रकार धीरे-धीरे मेरी विचार-धारा उस सिद्धान्त की ओर झुकी जिसे मैंने उस समय 'द्वि-साधन सिद्धान्त' का नाम दिया था। मैंने इस सिद्धान्त का पूरा विवरण जूरनाल-दे-फ़िज़ीक[5] के जून १९२७ के अंक (भाग ८, १९२७ पृष्ठ २२५) में प्रकाशित किया था और इस प्रश्न के सम्बन्ध में पूर्ण विवरण इस समय केवल इसी लेख में उपलब्ध है। इस लेख में मैंने साहस करके इस अधिमान्य नियम का

1. Point-mechanics 2. Obstacles 3. Continuous solutions 4. Individual 5. Journal de Physique

प्रतिपादन किया था कि तरंग-यांत्रिकी के समीकरणों के प्रत्येक संतत हल ψ के साथ-ही-साथ किसी अज्ञात नियम के अनुसार एक द्वितीय हल μ भी विद्यमान रहता है जो विचित्रता-युक्त होता है और μ की तथा ψ की कलाएँ समान होती हैं। सामान्यतः यह विचित्रता (कणिका) अचल नहीं होती। दोनों ही हल ψ तथा μ तरंग-रूपी होते हैं और दोनों की ही कला x, y, z, t के एक ही फलन के द्वारा निरूपित होती है, किन्तु दोनों के आयाम सर्वथा भिन्न होते हैं क्योंकि μ के आयाम में तो विचित्रता विद्यमान होती है, किन्तु ψ का आयाम संतत होता है। μ तथा ψ दोनों के प्रचरण-समीकरण को एक ही मानकर और उसी से प्रारम्भ करके मैंने निम्नलिखित मूल प्रमेय को सिद्ध कर दिया। "काल के प्रवाह में μ की गतिशील विचित्रता ऐसे गमन-पथ पर चलती है जिसके प्रत्येक विन्दु पर उस विचित्रता का वेग कला की प्रवणता[1] का अनुपाती होता है।" यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार तरंग की केन्द्रगत विचित्रता पर तरंग-प्रचरण की प्रतिक्रिया इस समस्या में निविष्ट हो जाती है। मैंने यह भी प्रमाणित कर दिया था कि इस कणिकारूपी विचित्रता को एक क्वांटम-विभव[2] के अधीन समझ लेने से यह प्रतिक्रिया व्यक्त की जा सकती है। वस्तुतः यह क्वांटम-विभव तरंग की स्वयं अपने ही पर होनेवाली प्रतिक्रिया का गणितीय व्यंजक[3] है। इस प्रकार मैंने प्रकाश के प्राचीन कणिका-सिद्धान्त के समर्थकों की उस धारणा को स्वीकारकर लिया था जिसमें यह माना जाता था कि किसी अवरोध की कोर से प्रकाश का जो विवर्तन होता है उसमें इस अवरोध का किनारा प्रकाश की कणिका पर कुछ प्रतिक्रिया करता है और इसी कारण वह कणिका अपने सरल-रेखात्मक पथ से विचलित हो जाती है।

और यदि गतिशील विचित्रतायुक्त μ—तरंग ही कणिका का और उसके चारों ओर की तरंगमय घटना का निरूपण कर देती है तब फिर ψ—तरंग का क्या अर्थ था? मेरे लिए तो उसकी भौतिक सार्थकता कुछ भी नहीं थी क्योंकि वास्तविकता को तो μ—तरंग ही व्यक्त करती है। किन्तु यह बताया जा चुका है कि ψ—तरंग की कला μ—तरंग की कला से अभिन्न होती है और कणिकारूपी विचित्रता सदा इस कला की प्रवणता की दिशा में ही गमन करती है। अतः कणिका के संभव गमनपथ ψ के समकलीय पृष्ठों[4] पर अभिलम्बित[5] वक्रों के संपाती[6] होंगे और तब मैंने सरलतापूर्वक यह भी

1. Gradient of phase 2. Quantum potential 3. Expression 4. Surfaces of equal phase 5. Orthogonal 6. Coincident

प्रमाणित कर दिया कि इसी बात के आधार पर हमें यह मानना पड़ेगा कि कणिका को किसी विन्दु पर पाने की प्रायिकता ψ–तरंग के आयाम के वर्ग की अथवा उस तरंग की तीव्रता की अनुपाती होती है।

तरंग-यांत्रिकी के इसी गूढ़ और विचित्र निर्वचन का मैंने १९२७ में प्रतिपादन किया था। किन्तु मुझे यह समझने में भी देर नहीं लगी कि उसको तर्क-संगत प्रमाणित करने में अत्यन्त विकट गणितीय कठिनाइयाँ उपस्थित होंगी। क्योंकि पहले तो यही प्रमाणित करना आवश्यक था कि तरंग-यांत्रिकी में जिस सुनिर्दिष्ट समस्या के सीमान्त प्रतिबन्ध[1] ज्ञात हों और जिसका ψ–जाति का हल भी ज्ञात हो उसका दूसरा भी एक हल होता है जो गतिशील विचित्रतायुक्त और μ–जाति का होता है। यह भी आवश्यक था कि व्यतिकरण की घटनाओं के सिद्धान्त का पुनर्गठन ऐसा किया जाय जिसमें केवल विचित्रतायुक्त μ-तरंग का ही उपयोग हो क्योंकि उसी में भौतिक वास्तविकता होती है और संतत तरंग का सहारा बिलकुल भी न लिया जाय क्योंकि उसे अब हम काल्पनिक समझते हैं। और कणिका-निकायों के लिए श्रोडिंगर ने विन्यासाकाश[2] के ढाँचे में जिस तरंग-यांत्रिकी का निर्माण किया था उसका निर्वचन भी अब μ-तरंगों के द्वारा ही करना ज़रूरी था। किन्तु मुझमें इतनी क्षमता नहीं थी कि ऐसी कठिन गणितीय समस्याओं की मीमांसा कर लेता जिनके लिए विचित्रतायुक्त हलों का दुःसाध्य अध्ययन आवश्यक था।

अब मैंने अपने १९२७ के विचारों का पुनः परीक्षण किया है और इससे मैं μ-तरंग की परिभाषा में कुछ परिवर्तन कर सका हूँ। १९२७ में तो मैंने इसे तरंग-यांत्रिकी की ψ–तरंग के लिए स्वीकृत रैखिक समीकरणों का ही विचित्रतायुक्त हल समझा था। किन्तु कई कारणों से, विशेषकर व्यापक आपेक्षिकतावाद से तुलना करने पर (जिसका ज़िकर मैं आगे करूँगा) मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि संभवतः μ–तरंग के यथार्थ प्रचरण-समीकरण आइन्स्टाइन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त के समीकरणों के ही समान अ-रैखिक[3] हों, किन्तु जब μ का मान पर्याप्त रूप से छोटा हो तब वे तरंग-यांत्रिकी के रैखिक समीकरणों का सन्निकटित रूप ग्रहण कर लेते हों। यदि यह दृष्टिकोण सही हो तो यह भी माना जा सकता है कि μ–तरंग में कोई गतिशील विचित्रता (इस शब्द के शुद्ध अर्थ में) होती ही नहीं। उसमें केवल एक अत्यन्त छोटा-सा (निःसन्देह ही $१०^{-१३}$ सम० की कोटि के मान का) विचित्रतायुक्त गतिशील प्रदेश होता है जिसके

1. Boundary Conditions 2. Space of configuration 3. Non-linear

भीतर μ का मान इतना बड़ा रहता है कि वहाँ रैखिक सन्निकटन मान्य नहीं समझा जा सकता, किन्तु इस छोटे-से प्रदेश से बाहर वह सन्निकटन तब भी मान्य ही रहता है। दुर्भाग्यवश, दृष्टिकोण का यह परिवर्तन भी उन गणितीय समस्याओं का समाधान करने में सहायक नहीं हुआ जो अब भी हमारे सामने विद्यमान थीं क्योंकि यदि रैखिक समीकरणों के विचित्रतायुक्त हलों का साधन बहुधा कठिन होता है तो अ-रैखिक समीकरणों के हलों का साधन तो और भी अधिक कठिन होता है।

अब फिर ज़रा १९२७ पर लौट आइए। उस बसन्त में लोरैन्ट्ज़[1] ने मुझसे कहा कि अगले अक्टूबर में ब्रसैल्स में होनेवाली भौतिक विज्ञान की पाँचवीं सॉलवे कांग्रेस के लिए तरंग-यांत्रिकी के विषय में एक रिपोर्ट तैयार कर दो। तब यह देखकर कि द्वि-साधन[2] के विषय में मेरे विचार गणितीय प्रकृष्टता[3] अथवा दृढ़-नियमितता की दृष्टि से यथेष्टतः संतोषजनक नहीं थे और उनको स्पष्टतः व्यक्त करने में मुझे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा, मैंने उस सरलतर दृष्टिकोण का आश्रय लेने का निश्चय किया जिसकी संभावना की ओर मैंने अपने 'जूरनाल-दे-फ़िज़ीक' वाले लेख के अन्त में इंगित किया था। उस समय मेरी धारणा यह थी कि ψ तथा μ जाति के हलों की समान कला की प्रवणता के द्वारा ही कणिका की गति निर्धारित होती है और समस्त घटना इस प्रकार घटती है मानो संतत ψ—तरंग ही उस कणिका का पथ-प्रदर्शन[4] करती है। इसलिए मेरे विचार में यह आया कि इस समस्या के लिए निम्न-लिखित दृष्टिकोण भी उपयुक्त हो सकता है। "कणिका का अस्तित्व एक स्वतंत्र सत्ता के रूप में स्वीकार कर लो और यह मान लो कि उसका पथ-प्रदर्शन ψ—तरंग इस सूत्र के अनुसार करती है कि कणिका का वेग सदा ψ—की कला की प्रवणता का अनुपाती रहता है।" समस्या के इस प्रकार प्रस्तुत करने की विधि को मैंने "नाविक-तरंग-सिद्धान्त"[5] का अर्थ-बोधक नाम दे दिया था और इसी का मैंने अपनी रिपोर्ट में विस्तृत विवेचन किया था। यह पाँचवीं सॉलवे कांग्रेस के संक्षिप्त विवरण में प्रकाशित हुआ था। उस समय मैं यह नहीं समझ सका कि इस प्रकार के तर्क का सहारा लेकर मैंने अपने ही पक्ष को बहुत निर्बल बना दिया है। वस्तुतः यद्यपि द्वि-साधन की परिकल्पना का गणितीय समर्थन कठिन है तथापि यदि सफलता मिल जाय तो वह द्रव्य की संरचना का तथा कणिका-तरंग-मय द्वैत का गंभीर समीक्षण प्रस्तुत करने में समर्थ हो सकेगा और, जैसा कि हम देखेंगे, संभवतः उसके द्वारा क्वांटम-धारणाओं और आपेक्षिकीय

1. Lorentz 2. Double Solution 3. Rigour 4. Guide 5. Pilot-wave theory

धारणाओं में सांगत्य भी स्थापित हो सकेगा। यद्यपि सरलीकृत नाविक-तरंग-सिद्धान्त भी कुछ अंशों में एक प्रकार से द्वि-साधन-सिद्धान्त का ही एक परिणाम है, किन्तु उसमें इन बातों की क्षमता नहीं है। यह भली प्रकार सिद्ध हो चुका है और ऐसा मालूम पड़ता है कि सभी इसे स्वीकार भी करते हैं कि ψ–तरंग सर्वथा काल्पनिक है और उसकी प्रकृति सांख्यिकीय है, किन्तु नाविक-तरंग-सिद्धान्त में इसी तरंग के द्वारा कणिका की गति निर्धारित होती है। इसी कारण यह सिद्धान्त मान्य नहीं हो सकता। स्वयं ψ–तरंग का कोई वास्तविक भौतिक अस्तित्व है ही नहीं। वह तो उसके उपयोगकर्ता के ज्ञान की अवस्था पर अवलम्बित होती है। अतः जब इस ज्ञान में सहसा कोई परिवर्तन हो जाता है तब तरंग भी बदल जाती है। यदि मेरी १९२७ की धारणाओं को फिर किसी दिन पुनरुज्जीवित होना होगा तो केवल द्वि-साधन के गूढ़ रूप में ही ऐसा हो सकता है—नाविक-तरंग के पंगु और अग्राह्य रूप में नहीं।

१९२७ की सॉलवे कांग्रेस में मेरे नाविक-तरंग-सिद्धान्त को समर्थन बहुत ही कम मिला। पॉली[1] ने मेरी धारणाओं के विरुद्ध कई गंभीर आपत्तियाँ उठायीं। मुझे उन आपत्तियों के एक संभव उत्तर की कुछ झलक तो दिखाई दी, किन्तु मैं उस उत्तर को पूर्णतः परिष्कृत नहीं बना सका। श्रोडिंगर तो मेरे पक्ष में हो ही नहीं सकते थे क्योंकि कणिकाओं के अस्तित्व में उनका विश्वास था ही नहीं। बोह्र, हाइज़नबर्ग, बोर्न, पॉली, डिरैक आदि शुद्ध प्रायिकतामूलक निर्वचन का ही प्रतिपादन कर रहे थे और यही अब शास्त्रसम्मत[2] निर्वचन माना जाता है। किन्तु उस कांग्रेस के सभापति लोरैन्ट्ज़ इस निर्वचन को स्वीकार नहीं कर सके और उन्होंने दृढ़तापूर्वक यह विश्वास प्रकट किया था कि सैद्धान्तिक भौतिकी को तो नियतिवादी ही बनाये रखना चाहिए और उसमें दिक्-काल के चिरप्रतिष्ठित ढाँचे से संगत स्पष्ट प्रतिरूपों का ही उपयोग करना चाहिए। आइन्स्टाइन ने प्रायिकतामूलक निर्वचन की कड़ी आलोचना की थी और उसके विरुद्ध बड़ी विक्षोभक आपत्तियाँ भी प्रस्तुत की थीं। यद्यपि इन्होंने मेरे प्रयास का स्पष्ट रूप से अनुमोदन नहीं किया, फिर भी जिस मार्ग का मैंने अवलम्बन किया था उसी पर चलते रहने के लिए उन्होंने मुझे उत्साहित किया था।

जब मैं पेरिस लौटकर आया तब इस वाद-विवाद के कारण मेरा मन बहुत क्षुब्ध था और इस विषय पर बहुत विचार करके मैं इसी परिणाम पर पहुँचा कि उपर्युक्त कारणों से तथा अन्य भी अनेक कारणों से नाविक-तरंग-सिद्धान्त का समर्थन संभव नहीं

1. Pauli 2. Orthodox

है। और गणितीय कठिनाइयों के कारण यह भी साहस नहीं हुआ कि पुनः द्वि-साधन का अनुसरण करूँ। अतः निराश होकर मैं भी बोह्र और हाइज़नबर्ग के शुद्ध प्रायिकता-मूलक निर्वचन का पक्षपाती बन गया।

पच्चीस वर्षों से लगभग सभी भौतिकज्ञ बोह्र और हाइज़नबर्ग के इस शुद्ध प्रायिकता-मूलक निर्वचन के ही पक्ष में हैं। किन्तु आइन्स्टाइन और श्रोडिंगर के समान कुछ विख्यात भौतिकज्ञ इसके स्मरणीय विरोधी भी हैं। ये इसे स्वीकार करने के लिए कभी राज़ी नहीं हुए और बराबर उसके विरुद्ध प्रबल आपत्तियाँ उठाते रहे हैं। १९२७ की सॉलवे कांग्रेस में आइन्स्टाइन ने निम्नलिखित आपत्ति उठायी थी। मान लो कि एक चपटे परदे में एक छोटा-सा छिद्र है और इस पर कोई कणिका अपनी आनुषंगिक तरंग के साथ अभिलम्बतः आपतित होती है। ψ– तरंग तो छेद में से विवर्तित होकर परदे के दूसरी ओर अपसारी[1] गोलीय तरंग का रूप प्राप्त कर लेगी। यदि परदे के पीछे एक अर्धगोलाकार फ़िल्म रख दी जाय तो इस अर्ध-गोल के किसी भी विन्दु **प** पर कणिका की उपस्थिति फ़ोटोग्राफ़िक क्रिया द्वारा अंकित हो जायगी। इस बात से सभी सहमत हैं कि तरंग-यांत्रिकी के नियमानुसार **प** पर कणिका की उपस्थिति की प्रायिकता ψ–तरंग के आयाम के वर्ग द्वारा निर्धारित होती है। यदि प्रत्येक क्षण पर उस कणिका की उपस्थिति किसी-न-किसी विन्दु पर वास्तव में रहती हो तो (अव्यक्त चरों[2] के द्वारा) हम उसका गमन-पथ अवश्य ही निर्धारित कर सकेंगे। अतः हम यह आसानी से समझ सकते हैं कि उस कणिका का गमन-पथ अज्ञात होने का परिणाम यह होगा कि हम केवल इतना ही बता सकेंगे कि फ़िल्म के किसी एक विन्दु में से गमन-पथ के गुजरने की प्रायिकता कितनी है। किन्तु **प** पर कणिका की जो फ़ोटोग्राफ़िक क्रिया होती है वह यह बात प्रमाणित करती है कि उस कणिका का गमन-पथ **प** में से अवश्य गुजरा था। और इस सूचना के मिलते ही फ़िल्म के अन्य विन्दुओं में से गमन-पथ के गुजरने की प्रायिकता शून्य हो जायगी। इस घटना की यही सीधी-सादी व्याख्या है। किन्तु जो व्याख्या शुद्ध प्रायिकता-मूलक निर्वचन द्वारा प्राप्त होगी उससे यह सर्वथा भिन्न है। उस निर्वचन के अनुसार फ़ोटोग्राफ़िक अंकन से पहले कणिका परदे के पीछे के प्रदेश के सभी विन्दुओं पर संभाव्य रूप में विद्यमान[3] रहती है और उसकी उपस्थिति की प्रायिकता ψ–तरंग के आयाम के वर्ग के बराबर होती है। **प** पर फ़ोटोग्राफ़िक अंकन होते ही कणिका का स्थान **प** पर निश्चित हो जाता है या यों कहना चाहिए कि वह **प**

1. Divergent 2. Variables 3. Potentially present

पर सघनित[1] हो जाती है और उसी क्षण फ़िल्म के किसी भी अन्य विन्दु पर कणिका की उपस्थिति की प्रायिकता घटकर शून्य हो जाती है। अब आइन्स्टाइन का कहना यह था कि इस प्रकार का निर्वचन आकाश और काल सम्बन्धी हमारी समस्त धारणाओं से (उनके आपेक्षिकीय दिक्-कालीय रूप से भी) तथा आकाश में भौतिक क्रियाओं के प्रचरण-वेग के परिमित होने की धारणा से भी असंगत है। यह कह देना काफ़ी नहीं है कि हमारे स्थूल स्तरीय अनुभव से निर्मित आकाश और काल सम्बन्धी धारणाएँ पारमाणविक स्तर पर सही नहीं होंगी। वास्तव में फ़िल्म का विस्तार तो स्थूलस्तरीय ही है (उसका क्षेत्रफल एक वर्ग मीटर भी हो सकता है)। अतः इससे स्थूल-मापदंडीय स्तर पर भी तो हमारी आकाश और काल सम्बन्धी धारणाएँ अपर्याप्त प्रमाणित हो जायेंगी। किन्तु इस बात में विश्वास करना तो वास्तव में कठिन मालूम देता है। आइन्स्टाइन की इस आपत्ति का जहाँ तक मुझे मालूम है किसी ने भी संतोषजनक उत्तर नहीं दिया है। इसके अतिरिक्त श्रोडिंगर ने भी कुछ और बातें प्रस्तुत की हैं और स्वयं आइन्स्टाइन ने भी एक और आपत्ति पारस्परिक क्रिया[2] के सम्बन्ध में उठायी है। इन सब तर्कों का विवरण यहाँ नहीं दिया जा सकता। मैं केवल इतना ही कहूँगा कि आइन्स्टाइन की १९२७ वाली आपत्ति की ही तरह इनसे भी विरोधाभासी[3] परिणाम निकलते हैं और आकाश (दिक्) और काल सम्बन्धी हमारी पूर्ववर्ती धारणाओं की सत्यता में स्थूल-स्तरीय क्षेत्र में भी सन्देह होने लगता है।

जब कुछ महीने हुए बोह्म[4] का वह लेख प्रकाशित हुआ जिसका उल्लेख मैं इस खंड के प्रारम्भ में कर चुका हूँ, तब इस समस्या की यही स्थिति थी और पिछले पच्चीस वर्षों में इसमें प्रायः कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ है। इस लेख में कोई भी बात तत्त्वतः नयी नहीं थी, क्योंकि उन्होंने केवल उसी नाविक-तरंग-सिद्धान्त का पुनः प्रतिपादन किया था जिसको मैं सॉलवे कांग्रेस में पहले ही प्रस्तुत कर चुका था और जिसमें द्वि-साधन की परिकल्पनावाली विचित्रता-युक्त μ–तरंग के स्थान में प्रायिकतामूलक ψ-तरंग का उपयोग होने के कारण अनेक ऐसी कठिनाइयाँ उपस्थित होती थीं जो मुझे दुर्लंघ्य जान पड़ती थीं। फिर भी इन प्रश्नों की ओर पुनः ध्यान आकर्षित करने के अतिरिक्त उन्हें इस बात का भी श्रेय है कि उन्होंने इस सम्बन्ध में कई अत्यन्त रोचक बातें लिखी थीं और विशेषकर उन्होंने नापने की प्रक्रियाओं का नाविक-तरंग के दृष्टिकोण से ऐसा विश्लेषण किया था जिससे उन आपत्तियों का निराकरण हो जाने की संभावना दिखाई

1. Condensed 2. Interaction 3. Paradoxical 4. Bohm

देने लगी थी जो पॉली ने १९२७ में मेरी धारणाओं के विरुद्ध प्रस्तुत की थीं। मुझे श्री बोह्म के लेख का तथा श्री विजियर[1] के विचारों का पता लगते ही मैंने इस विषय-सम्बन्धी अपने विचारों का एक संक्षिप्त विवरण दो टिप्पणियों के रूप में तैयार किया जो ऐकेडमी आफ साइन्सेज़ के 'कोंत रांदी[2]' के सितम्बर १९५१ और अक्टूबर १९५२ के अंकों में प्रकाशित हुई थीं। विजियर के विचारों के विषय में तो मैं बाद में लिखूँगा; किन्तु जिन बातों की ओर मेरा ध्यान अब आकर्षित हुआ था उनमें से एक निम्नलिखित बात भी थी। "न्यूमान[3] के तर्क का दावा यह है कि तरंग-यांत्रिकी के प्रायिकता-मूलक वितरणों[4] का निर्वचन गुप्त प्रांचलों[5] के कार्यकारण[6] सिद्धान्त के द्वारा किसी प्रकार भी संभव नहीं है। किन्तु यद्यपि यह नहीं समझा जा सकता कि द्वि-साधन-सिद्धान्त अथवा नाविक-तरंग-सिद्धान्त प्रमाणित हो गये हैं तथापि उन सिद्धान्तों का अस्तित्व तो है ही। अतः यह समझ में नहीं आता कि न्यूमान के प्रमेय के साथ इन दोनों सिद्धान्तों के अस्तित्व का सांगत्य कैसे हो सकता है।" इस उक्ति के देखने पर मैंने उस प्रमेय की उपपत्ति का पुनः समीक्षण किया और अब मेरी समझ में यह आ गया है कि यह उपपत्ति मुख्यतः निम्नलिखित अधिमान्यता पर अवलम्बित है—"तरंग-यांत्रिकी में जितने भी प्रायिकतामूलक वितरण संभव माने जाते हैं उन सबका भौतिक अस्तित्व उस प्रयोग को करने से पहले भी विद्यमान रहता है जिस प्रयोग के द्वारा उनमें से केवल एक ही वितरण वास्तविकता प्राप्त कर लेता है।" अतः कणिका के स्थान और गति की अवस्था के सम्बन्ध में उस तरंग के ज्ञान से जिन प्रायिकता-मूलक वितरणों का निगमन होता है वे सब उस स्थान और गति की अवस्था का यथार्थतः नाप करनेवाले प्रयोगों से पहले ही विद्यमान रहते हैं। इसके विपरीत यह भी आसानी से मान लिया जा सकता है कि इन प्रायिकता-मूलक वितरणों की अथवा कम-से-कम इनमें से कुछ की सृष्टि तो नापने की क्रिया के द्वारा भी हो सकती है और उनका अस्तित्व केवल नाप की क्रिया समाप्त हो चुकने के बाद में, परन्तु नाप के परिणाम का ज्ञान प्राप्त होने से पहले तक ही रहता है। आजकल समस्त क्वांटम-भौतिकज्ञ नापने की क्रिया का जो परिणाम अनिवार्य मानते हैं उससे भी यह बात सुसंगत है। द्वि-साधन-सिद्धान्त में और नाविक-तरंग-सिद्धान्त में (जिनमें इस दृष्टि से कोई भेद नहीं है) यह माना जाता है कि संतत ψ—तरंग के आयाम के वर्ग द्वारा निर्णीत प्रायिकता-मूलक स्थान-सापेक्ष वितरण तो नाप से पहले भी विद्यमान रहता है, किन्तु अन्य प्रायिकतामूलक वितरण (यथा संवेग-सम्बन्धी

1. Vigier 2. Comptes Rendus 3. Von Neumann 4. Distributions 5. Hidden parameters 6. Causal

वितरण) नापने की क्रिया से उत्पन्न होते हैं। अतः जिस अधिमान्यता पर न्यूमान का तर्क आश्रित है वह पहले (स्थान-सापेक्ष) वितरण के लिए अनुप्रयोज्य ही नहीं है। फलतः इस तर्क के परिणाम का अस्तित्व ही नहीं रहता। शुद्ध प्रायिकता-मूलक निर्वचन समस्त प्रायिकतामूलक वितरणों को बिलकुल एक-सा मानता है। यही कारण था कि न्यूमान ने इस समानता को अधिमान्यता के रूप में स्थापित कर लिया था। किन्तु ऐसा करने से उन्होंने केवल यही प्रमाणित किया है कि यदि हम शुद्ध प्रायिकतामूलक निर्वचन की मूल धारणाओं को मान लें तो हमें उस निर्वचन को स्वीकार करने के लिए भी बाध्य होना पड़ेगा। किन्तु यह तो एक प्रकार का दूषित चक्र (विशस सर्किल) है और अब न्यूमान के प्रमेय में वह महत्त्व नहीं रह गया है जो गत कई वर्षों तक मैं भी मानता रहा था।

श्री बोह्म के इस प्रारम्भिक कार्य के बाद आंरी प्वांकरे इन्स्टीट्यूट[1] में काम करने वाले श्री विजियर के मन में यह अत्यन्त रोचक विचार उत्पन्न हुआ कि द्वि-साधन-सिद्धान्त में और आइन्स्टाइन द्वारा प्रमाणित एक प्रमेय में आनुरूप्य स्थापित करना चाहिए। (आइन्स्टाइन ने यह प्रमेय १९२७ में मेरे अनुसंधानों से सर्वथा स्वतंत्र रूप में प्रमाणित किया था क्योंकि उस समय मैं तो क्वांटमों पर काम कर रहा था और व्यापक आपेक्षिकता की ओर मेरा ध्यान नहीं था, किन्तु आइन्स्टाइन का मनोयोग व्यापक आपेक्षिकता पर केन्द्रित था और वे क्वांटमों का अध्ययन नहीं कर रहे थे।) इस आनुरूप्य की चित्ताकर्षकता को हृदयंगम करने के लिए यह समझना आवश्यक है कि इस समय सैद्धान्तिक भौतिकज्ञ दो असंधेय[2] दलों में विभक्त हैं। आइन्स्टाइन और उनके शिष्यों का एक छोटा-सा दल तो व्यापक आपेक्षिकता की धारणाओं के विस्तारण के द्वारा आपेक्षिकीय विचारधारा में प्रगति करना चाहते हैं, किन्तु सैद्धान्तिकों का विपुल बहुमत पारमाणविक समस्याओं की रोचकता से आकृष्ट होकर क्वांटम-भौतिकी की प्रगति के कार्य को आगे बढ़ाने में लगा हुआ है और व्यापक आपेक्षिकता की धारणाओं की ओर उसका ध्यान बिलकुल नहीं है। इसमें सन्देह नहीं कि तरंग-यांत्रिकी ने विशिष्ट आपेक्षिकता की धारणाओं को ग्रहण करके उन्हें समाविष्ट करने का प्रयत्न किया है। डिरैक[3] के इलैक्ट्रान-नर्तन[4] के सिद्धान्त में और उससे भी बाद के टोमोनागा,[5]

1. Henry Poincare Institute 2. Irreconcilable 3. Dirac 4. Electron spin 5. Tomonaga

श्विन्गर[1], फ़ेनमान[2] और डाइसन[3] के उत्कृष्ट सिद्धान्तों में आपेक्षिकीय सहचरण[4] की धारणाओं का उपयोग किया गया है। *

इन सबमें सदैव विशिष्ट आपेक्षिकता का ही उपयोग हुआ है। किन्तु हमें विदित है कि अकेली विशिष्ट आपेक्षिकता पर्याप्त नहीं है और उसका व्यापकीकरण आवश्यक है। यही १९१६ में आइन्स्टाइन ने किया था। अतः यह बड़े आश्चर्य की बात है कि आधुनिक भौतिक विज्ञान के दो महान सिद्धान्तों में—व्यापक आपेक्षिकता के सिद्धान्त में और क्वांटम-सिद्धान्त में—कोई संपर्क नहीं है और वे एक दूसरे की उपेक्षा करते हैं। किसी-न-किसी को इन दोनों का संश्लेषण करने में किसी दिन सफलता मिल जाना अत्यन्त आवश्यक है।

व्यापक आपेक्षिकता के सिद्धान्त की प्रमुख रूपरेखा का निर्माण कर लेने के पश्चात् आइन्स्टाइन ऐसी युक्ति की खोज में लग गये जिससे गुरुत्वीय बल-क्षेत्र की विचित्रताओं के द्वारा ही द्रव्य की पारमाणविक संरचना का निरूपण संभव हो जाय। उसी समय वे निम्नलिखित प्रश्न के अध्ययन में भी व्यस्त थे। व्यापक आपेक्षिकता-सिद्धान्त में यह मान लिया जाता है कि वक्र दिक्-काल[5] में किसी वस्तु की गति उसी दिक्-काल की अल्पान्तरी रेखा[6] के द्वारा निरूपित होती है। इसी अधिमान्यता की सहायता से आइन्स्टाइन ने ग्रहों की सूर्य-परिक्रमा के सूत्रों का पुनर्निगमन करने में सफलता प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त इसी के द्वारा बुध[7] के परिसौर विन्दु[8] के दीर्घकालिक[9] प्रगमन[10] की व्याख्या हो सकी थी। किन्तु यदि हमें यह अभीष्ट हो कि गुरुत्वीय क्षेत्र की विचित्रताओं के अस्तित्व के द्वारा द्रव्य की मूल कणिकाओं का निरूपण करें तो केवल गुरुत्व-क्षेत्रीय समीकरणों को ही लेकर यह प्रमाणित करना संभव होना चाहिए कि ये विचित्रताएँ दिक्-काल की अल्पान्तरी रेखाओं पर ही गमन करती हैं और इस बात को स्वतंत्र अधिमान्यता के रूप में निविष्ट करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। दीर्घकाल तक आइन्स्टाइन इसी प्रश्न पर विचार करते रहे थे और १९२७ में ग्रोमर[11] के सहयोग से

1. Schwinger 2. Feynmann 3. Dyson 4. Relativistic Co-variance

* इन सिद्धान्तों का उद्देश्य कण-निकायों के सर्वांगपूर्ण तथा प्रकृष्ट आपेक्षिकीय सिद्धान्त का निर्माण है जो तरंग-यांत्रिकी को निकायों के लिए उपयुक्त बनाने की समस्या को हल करने के लिए आवश्यक है। इसका विवेचन परिच्छेद १२ के खंड १ के अन्त में किया गया है।

5. Curved space-time 6. Geodesic 7. Mercury 8. Perihelion 9. Secular 10. Advance 11. Grommer

इच्छानुकूल प्रमेय को प्रमाणित करने में वे सफल भी हो गये थे। बाद में इस प्रमाण को स्वयं आइन्स्टाइन और उनके सहकारी इनफ़ेल्ड[1] तथा होफ़मान[2] ने कई दिशाओं में प्रवर्धित किया। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आइन्स्टाइन के प्रमेय के प्रमाण में और मेरे १९२७ में दिये हुए उस प्रमाण में कुछ समानता है जिसके द्वारा मैंने यह सिद्ध किया था कि कणिका जिस ψ–तरंग की विचित्रता हो उसी तरंग की कला की प्रवणता की दिशा में ही उस कणिका का वेग होना चाहिए। विजियर दिक्कालीय मापतंत्र[3] की परिभाषा में ही μ–तरंग-फलन को निविष्ट करके इस समानता को अधिक परिच्छिन्न करने के प्रयत्न में व्यस्त हैं। यद्यपि अभी तक इन प्रयासों के फल संभवतः पूर्ण रूप से विश्वसनीय नहीं माने जा सकते, तब भी यह निश्चित है कि जिस दिशा में वे अग्रसर हो रहे हैं वह अत्यन्त रोचक है क्योंकि यह संभव है कि इसी मार्ग से व्यापक आपेक्षिकता तथा तरंग-यांत्रिकी के सम्मेलन में सफलता मिल जाय। यदि द्रव्य की कणिकाओं को (और उसी प्रकार फ़ोटानों को) दिक्कालीय मापतंत्र की विचित्रताओं द्वारा निरूपित किया जाय और यह मान लिया जाय कि यह मापतंत्र एक तरंगित क्षेत्र द्वारा परिवेष्टित है और कणिकाएँ स्वयं भी उसी क्षेत्र की अंग हैं तथा उस क्षेत्र की परिभाषा से ही प्लांक के नियतांक का प्रादुर्भाव हो जाता है तो कणिकासम्बन्धी आइन्स्टाइन की धारणाओं तथा मेरे द्वि-साधन-सिद्धान्त की धारणाओं का सम्मेलन करने में सफलता मिल सकती है। किन्तु क्या आपेक्षिकता तथा क्वांटमों का यह सुन्दर संश्लेषण सचमुच संभव हो सकेगा? यह तो भविष्य ही बतायेगा।

मैं इस बात को नितान्त आवश्यक मानता हूँ कि ऐसा संश्लेषण हो जाने पर तरंग-यांत्रिकी के जिस प्रचलित निर्वचन में पारमाणविक निकाय का क्वांटमीकरण तथा हाइज़नबर्ग की अनिश्चितताएँ और सामान्यतः सूक्ष्म-स्तरीय भौतिक मापों के परिणामों की प्रागुक्ति की असंभवता भी सम्मिलित हैं, उसके द्वारा अब तक जितने परिणाम प्राप्त हुए हैं, और जितनी भी परिकलन की विधियों का उसमें उपयोग किया जाता है उन सबकी व्युत्पत्ति फिर से करनी पड़ेगी और उनकी तर्क-संगतता को फिर से प्रमाणित करना पड़ेगा। किन्तु तब शायद आप यह कहें कि यदि प्रचलित निर्वचन में सभी प्रेक्षणीय घटनाओं की व्याख्या करने की सामर्थ्य है तब उसे बदलने की तथा द्वि-साधन और विचित्रतायुक्त हल आदि की निरर्थक जटिलताओं को प्रविष्ट करने की क्या आवश्यकता है? इसमें तो नवीन विकट बाधाओं के प्रादुर्भाव की ही आशंका है। इसका

1. Infeld 2. Hoffmann 3. Space-time Metric

उत्तर यह है कि सबसे पहले तो आकाश और काल की सत्यता सम्बन्धी सुस्पष्ट कार्तीय[1] धारणाओं को पुनः स्वीकार करने से बहुतों को मानसिक संतुष्टि प्राप्त हो जायगी और हम न केवल आइन्स्टाइन तथा श्रोडिंगर की आपत्तियों का निराकरण कर सकेंगे, किन्तु हमें आजकल के निर्वचन के कई विलक्षण परिणामों से भी छुटकारा मिल जायगा। वास्तव में इस निर्वचन में भौतिक घटनाओं का निरूपण केवल संतत ψ–फलन के द्वारा करने का प्रयत्न किया गया है और इस फलन का प्रकृत रूप निश्चित रूप से सांख्यिकीय है। अतः इसका तर्क-संगत परिणाम एक प्रकार का "व्यक्तिनिष्ठवाद"[2] है जो दार्शनिक अर्थ में "प्रत्ययवाद"[3] के ही सदृश है और जो प्रेक्षण से स्वतंत्र किसी भौतिक वास्तविकता के अस्तित्व को ही नहीं मानता। किन्तु भौतिकज्ञ का अन्तर्मन वास्तववादी[4] होता है और इस बात के कई बहुत प्रबल कारण भी हैं। व्यक्तिनिष्ठ निर्वचन से उसके मन में अशांति की भावना उत्पन्न होती है और मेरा विश्वास है कि अन्त में इस भावना से मुक्ति पाने पर ही वह सुखी हो सकेगा।

किन्तु बोह्म के मतानुसार यह भी तो संभव है कि यदि वर्तमान निर्वचन परमाणविक मापदंड ($१०^{-८}$ से $१०^{-१०}$ सम० तक) की घटनाओं के लिए उपयुक्त हो तो भी वह नाभिकीय मापदंड ($१०^{-१३}$ सम०) के लिए उपयुक्त न हो क्योंकि वहाँ शायद विभिन्न कणिकाओं के विचित्र प्रदेश[5] परस्पर अतिव्याप्त[6] हो जायँ और एक दूसरे से पृथक् न समझे जा सकें। यह तो स्वीकार करना ही पड़ता है कि इस समय नाभिकीय घटनाओं का सिद्धान्त—विशेषकर नाभिक में स्थायित्व उत्पन्न करनेवाले बलों के सम्बन्ध में—बहुत ही असंतोषजनक अवस्था में है। इसके अतिरिक्त इस समय द्रव्य-कणिकाओं के सिद्धान्त की सख्त जरूरत इसलिए भी है कि आजकल प्रायः प्रतिमास एक नवीन प्रकार के मेसान[7] * का आविष्कार हो रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि

1. Cartesian 2. Subjectivism 3. Idealism 4. Realist 5. Singular zones 6. Overlap 7. Meson

* मेसान की धारणा सैद्धान्तिक कारणों से युकावा (Yukawa) ने १९३५ में प्रस्तुत की थी और उसका अस्तित्व प्रयोगशाला के प्रयोगों से १९४८ में प्रमाणित हुआ था। किन्तु आज पाँच प्रकार के मेसानों का अस्तित्व तो निश्चित रूप से प्रमाणित हो गया है। प्साई-मेसान (ψ) + म्यू-मेसान ($+\mu$), — म्यू-मेसान ($-\mu$), + पाई-मेसान ($+\pi$), - पाई-मेसान ($-\pi$) तथा अनाविष्ट पाई-मेसान (π)। और चार अन्य प्रकार के मेसानों का अस्तित्व भी संभाव्य समझा जाता है। + कापा-मेसान ($+\kappa$), - कापा-मेसान ($-\kappa$), + टा-मेसान ($+\tau$), — टा-मेसान ($-\tau$)। द्रव्य की इन तथा अन्य मौलिक कणिकाओं के गुणों के विवेचन के लिए जनवरी, १९५२ के 'साइन्टिफ़िक अमेरिकन' में पृष्ठ २२-२७ पर मार्शक (R. E. Marshak) का लेख देखिए। (अंग्रेजी-अनुवादक)

इस समय भौतिक विज्ञान के लिए आवश्यकता यह है कि शीघ्र ही इन कणिकाओं की संरचना के स्वरूप का कुछ निर्णय हो जाय और विशेष कर लोरैन्ट्ज़ के पुराने सिद्धान्त में जैसी इलैक्ट्रान की त्रिज्या[1] की धारणा थी वैसी ही धारणा पुनः स्थापित हो सके। किन्तु इन कणिकाओं के वर्णन में केवल सांख्यिकीय ψ– तरंगों के ही उपयोग के कारण इस काम में अनेक बाधाएँ उपस्थित हो गयी हैं क्योंकि यह इन कणिकाओं के लिए किसी भी प्रकार के संरचनात्मक प्रतिरूप के उपयोग का निषेध करता है। यह विश्वास करना अनुचित नहीं समझा जा सकता कि शायद दृष्टिकोण को बदलकर पुनः दिक्-कालीय निरूपण पर लौट आने से इस सम्बन्ध में कुछ सहायता मिले। स्पष्टतः यह केवल एक आशा मात्र ही है। पॉली तो शायद इसे निरंक चैक[2] ही कहें। किन्तु हमारी समझ में इस संभावना को पहले से ही बिलकुल कल्पनातीत समझना ठीक नहीं है, अन्यथा यह आशंका हो सकती है कि क्वांटम-भौतिकी के शुद्ध प्रायिकतामूलक निर्वचन में विश्वास बहुत अधिक हो जाने से अन्त में कहीं प्रगति बिलकुल ही बन्द न हो जाय।

अन्त में जिस प्रश्न का उत्तर हमें चाहिए वह यह है और आइन्स्टाइन बहुधा इसी पर जोर देते रहे हैं कि क्या वर्तमान निर्वचन जिसमें पूर्णतः सांख्यिकीय ψ–तरंग का उपयोग किया जाता है वास्तविकता का सर्वांगपूर्ण विवरण है ? यदि ऐसा हो तो अनियतिवाद को स्वीकार कर ही लेना पड़ेगा और यह भी मान लेना पड़ेगा कि आकाश और काल के संस्थान में परमाणु-स्तरीय वास्तविकता का परिशुद्ध निरूपण असंभव है। अथवा इसके विपरीत क्या यह निर्वचन अपूर्ण है और चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान के अन्य अधिक पुराने सांख्यिकीय सिद्धान्तों के ही समान क्या इसके पीछे भी पूर्ण नियतिमूलक वास्तविकता छिपी है जिसका वर्णन आकाश और काल के संस्थान में ऐसे चरों के द्वारा किया जा सकता है जो हमारे लिए गुप्त ही रहेंगें अर्थात् जिनको प्रयोगों के द्वारा हम निर्णीत करने में असमर्थ रहेंगे ? यदि यह द्वितीय परिकल्पना कभी सफल होगी तो मेरा विश्वास है कि वह द्वि-साधन-सिद्धान्त के ही रूप में होगी। इसमें सन्देह नहीं कि उसमें थोड़े-बहुत परिवर्तन करके तथा उसे व्यापक आपेक्षिकता से अधिक सुसंगत रूप देकर अधिक सुस्पष्ट अवश्य कर लेना पड़ेगा। किन्तु ऐसा कहने में मैं न तो उन विकट—संभवतः अलंघ्य—कठिनाइयों की उपेक्षा कर रहा हूँ जो ऐसे प्रयत्न के समक्ष उपस्थित होंगी और न उन कठिन गणितीय समर्थनों की जो उसकी जड़ को दृढ़ता-पूर्वक जमाने के लिए आवश्यक होंगे। यदि यह प्रयास सफल होना असंभव प्रमाणित हो जाय तब तो

1. Radius 2. Blank cheque

हमें फिर शुद्ध प्रायिकतामूलक निर्वचन का आश्रय लेना ही पड़ेगा, किन्तु अभी तो मुझे इस समस्या की पुनः मीमांसा करना निरर्थक नहीं मालूम होता।

इसमें सन्देह नहीं कि यह देखकर कि इस दिशा में जो प्रयास मैं प्रारम्भ में करता रहा था उन्हें छोड़कर मैं पहले तो पिछले पच्चीस वर्षों से अपने सब लेखों में बोह्र तथा हाइज़नबर्ग के निर्वचन का ही प्रतिपादन बराबर करता रहा और अब इस सम्बन्ध में नयी शंकाएँ प्रकट कर रहा हूँ, कुछ लोग मुझ पर असंगतता का दोष लगायेंगे और मुझसे पूछेंगे कि क्या मेरा पहलेवाला दृष्टिकोण ही वास्तव में सही नहीं था ? यदि परिहास क्षम्य हो तो वोल्टेयर के शब्दों में इसका मैं यह उत्तर दे सकता हूँ कि "मूर्ख मनुष्य वह है जो अपने विचारों को कभी बदलता नहीं।" किन्तु इससे अधिक गंभीर उत्तर भी संभव है। विज्ञान के इतिहास से यह बात स्पष्ट है कि जब-जब कुछ धारणाओं पर लोगों का आगम[1] के सदृश अगाध विश्वास हो गया, तब-तब ऐसी धारणाओं के निष्ठुर प्रभाव के कारण विज्ञान की प्रगति में सदैव विघ्न पड़ता रहा है। इसलिए जिन सिद्धान्तों को हम निर्विवाद मानने लगे हैं उनकी समय-समय पर अत्यन्त सूक्ष्म आलोचना करते रहना ही उचित है। पिछले २५ वर्षों में तरंग-यांत्रिकी के विशुद्ध प्रायिकता-मूलक निर्वचन से भौतिकज्ञों को बड़ी सहायता मिली है क्योंकि इसने उन्हें उन दुरूह समस्याओं के अध्ययन से परास्त नहीं होने दिया है जिनकी मीमांसा उतनी ही कठिन है जितनी कि द्वि-साधनसम्बन्धी धारणाओं की, और यह इसी का परिणाम है कि बहुसंख्यक अनुप्रयोगों[2] की दिशा में इतनी अनवरत और सफल प्रगति संभव हुई है। किन्तु आज तरंग-यांत्रिकी के पढ़ाने का ढंग ऐसा हो गया है कि उसकी अन्वेषक शक्ति[3] बहुत ही घट गयी है। यह बात सभी स्वीकार करते हैं और विशुद्ध प्रायिकता-मूलक निर्वचन के पक्षपाती स्वयं भी ऐसी नवीन धारणाओं के निविष्ट करने का प्रयत्न कर रहे हैं जो और भी अधिक अमूर्त[4] हैं और जो चिरप्रतिष्ठित प्रतिरूपों से और भी अधिक दूर हैं यथा मैट्रिक्स[5], अल्पिष्ठ-दैर्घ्य[6], अ-रैखिक बल-क्षेत्र[7]। इन प्रयासों की रोचकता को अस्वीकार किये बिना भी यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि क्या यह अधिक अच्छा न होगा कि हमारे प्रयत्न दिक्-कालीय निरूपण की सुस्पष्टता को पुनः प्राप्त करने की दिशा में हों। जो भी हो, तरंग-यांत्रिकी के निर्वचन की कठिन समस्या का पुनः अध्ययन करने की आवश्यकता यह जानने के लिए तो है ही कि इस समय जो मत शास्त्रसम्मत[8] माना जाने लगा है, क्या वास्तव में केवल वही ऐसा मत है जो स्वीकार करने योग्य है ?

1. Dogma 2. Applications 3. Heuristic power 4. Abstract 5. Matrix 6. Minimal length 7. Non-linear field 8. Orthodox

ग्यारहवाँ परिच्छेद

इलैक्ट्रान का नर्तन[1]

१. सूक्ष्म रचनाएँ तथा चुम्बकीय विषमताएँ[2]

हम इलैक्ट्रान की तरंग-यांत्रिकी के सिद्धान्त के विकास का विवरण दे चुके हैं। अब यह बताना आवश्यक है कि बहुत सफलता मिलने पर भी यह यांत्रिकी अपने मूल रूप में अपर्याप्त क्यों समझी गयी और क्यों उसमें महत्त्वपूर्ण संशोधन करने पड़े। इसका कारण यह था कि इलैक्ट्रान की तरंग-यांत्रिकी के मूल रूप के द्वारा कई ऐसे स्पैक्ट्रमीय तथा चुम्बकीय तथ्यों की व्याख्या नहीं हो सकी थी जो कई वर्षों से ज्ञात तो थे, किन्तु जिनका रहस्य पुराने क्वांटम-सिद्धान्त के द्वारा भी अधिक स्पष्ट नहीं हो सका था।

ऐसे दुरूह तथ्यों का प्रथम वर्ग तो स्पैक्ट्रम-विज्ञान सम्बन्धी है। यह तो विदित ही है कि पुराने क्वांटम-सिद्धान्त ने और बाद में नवीन यांत्रिकी ने बहुसंख्यक स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के अस्तित्व की यथार्थतापूर्ण प्रागुक्ति प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त कर ली थी। किन्तु इन सिद्धान्तों के द्वारा स्पैक्ट्रमीय पदों[3] की जो सारणियाँ तैयार की गयी थीं उनकी सूक्ष्म परीक्षा करने पर यह प्रमाणित हो गया कि वे स्पैक्ट्रमों की वास्तविक जटिलता की व्याख्या के लिए पर्याप्त नहीं हैं। दूसरे शब्दों में, प्रकाश के तथा एक्स-किरणों के स्पैक्ट्रमों में कई रचनाएँ ऐसी विद्यमान हैं जिनके रहस्य का उद्‌घाटन अब तक नहीं हो सका है। हम देख चुके हैं कि आपेक्षिकीय धारणाओं की सहायता से सामरफ़ेल्ड ने पुराने क्वांटम-सिद्धान्त के आधार पर ही हाइड्रोजन स्पैक्ट्रम तथा एक्स-किरण स्पैक्ट्रम की सूक्ष्म-रचनाओं का रहस्य समझाने में सफलता प्राप्त कर ली थी। यद्यपि प्रारम्भ में यह व्याख्या बहुत सन्तोषप्रद जान पड़ती थी, किन्तु हम परिच्छेद ६ खंड ३ के अन्त में जोर देकर बता चुके हैं कि अधिक सूक्ष्म अध्ययन से इस अनुकूल धारणा

1. The Spin of the Electron 2. The Fine-Structures and the Magnetic Anomalies 3. Spectral terms

का पूर्णतः समर्थन नहीं हो सका। सामरफ़ेल्ड का सिद्धान्त बामर श्रेणी[1] तथा एक्स-किरण श्रेणी की द्विक रेखाओं[2] के अस्तित्व की प्रागुक्ति तो सही कर देता ह, किन्तु वह उनके वास्तविक स्थान को सही नहीं बतलाता। सामरफ़ेल्ड की इस आभासी सफलता को सर्वथा आकस्मिक भी नहीं समझा जा सकता। अतः ऐसा प्रतीत हुआ कि उनके सिद्धान्त में किसी महत्त्वपूर्ण अवयव की कमी रह गयी है। तरंग-यांत्रिकी के विकास से इस स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ, वरन् वह कुछ अधिक ही बिगड़ गयी। वस्तुतः सामरफ़ेल्ड के प्रयास को तरंग-यांत्रिकी में रूपान्तरित करने के लिए उसमें आपेक्षिकता को निविष्ट करना आवश्यक हो गया। हम देख ही चुके हैं कि जो आपेक्षिकीय तरंग-समीकरण सरलता से प्राप्त हो गया था, वह काल की अपेक्षा द्वितीय वर्ण[3] का होने के अतिरिक्त श्रोडिंगर के समीकरण का प्रकृत आपेक्षिकीय व्यापकीकरण[4] भी दिखाई देता था। ऐसा मालूम देता था कि सामरफ़ेल्ड के सूत्रों को पुनः प्राप्त करने के लिए केवल इतना ही पर्याप्त होगा कि इस समीकरण में क्वांटमीकरण की नवीन विधि का उपयोग कर लिया जाय अर्थात् उसके इष्टमानों[5] को मालूम कर लिया जाय। किन्तु इस परिकलन का परिणाम निराशाजनक सिद्ध हुआ। जो सूत्र प्राप्त हुआ वह रूप में तो सामरफ़ेल्ड के सूत्र से मिलता-जुलता था, किन्तु फिर भी वह बिलकुल भिन्न ही था और जिन प्रायोगिक तथ्यों की व्याख्या करना था उनसे इस सूत्र का सांगत्य भी पहले से कुछ अधिक अच्छा नहीं था। अतः असफलता संपूर्ण थी। तरंग-यांत्रिकी सामरफ़ेल्ड के सिद्धान्त में वांछित नवीन अवयव का निवेषण नहीं कर सकी। इस समय तक उह्लेनबेक और गूडस्मिट[6] की गवेषणाओं के कारण इस नवीन अवयव की रूपरेखा का ज्ञान प्राप्त हो चुका था। इसके विषय में हम आगे चलकर विवेचन करेंगे।

किन्तु सामरफ़ेल्ड के द्विकरेखाओं से सम्बन्धित प्रश्नों के अतिरिक्त सूक्ष्म रचनाओं के विषय में कुछ अन्य कठिनाइयाँ भी उपस्थित हो गयीं। सामरफ़ेल्ड के सिद्धान्त ने एक्स-किरण स्पैक्ट्रमों में विद्यमान कुछ सूक्ष्म रचनाओं की तो बहुत सही प्रागुक्ति कर दी थी। किन्तु इस सिद्धान्त के सूत्रों के अनुसार जैसी होनी चाहिए थी उससे कहीं अधिक जटिल रचना वास्तव में उन स्पैक्ट्रम श्रेणियों की थी। इस बात का एक उदाहरण यह है कि तत्त्वों के एक्स-किरण-स्पैक्ट्रमों में सदा तीन L—श्रेणियाँ विद्यमान रहती हैं और इनकी रेखाएँ आवृत्तियों के क्रम में अतिव्याप्त[7] होती हैं। किन्तु सामरफ़ेल्ड

1. Balmer's Series 2. Doublets 3. Second order 4. Relativistic generalisation 5. Proper values 6. Uhlenbeck and Goudsmit 7. Overlapping

के सिद्धान्त से दो—केवल दो—ही श्रेणियों की प्रागुक्ति संभव है। उसमें तीसरी के लिए कोई स्थान ही नहीं है। ऐसी अनपेक्षित स्पैक्ट्रमीय रेखाओं के वर्गीकरण के लिए सामरफ़ेल्ड ने बाद में अपने सिद्धान्त की दो क्वांटम-संख्याओं के साथ एक तीसरी क्वांटम-संख्या को और जोड़ दिया और उसका बहुत कुछ असमर्थनीय नाम रख दिया "आभ्यन्तर क्वांटम-संख्या"[1]। उस समय इस तीसरी क्वांटम-संख्या का निवेशन बिलकुल ही आनुभविक[2] था और उसके सैद्धान्तिक निर्वचन के जितने भी प्रयत्न किये गये थे उन सबको छोड़ देना पड़ा था। इसके अतिरिक्त तरंग-यांत्रिकी भी इस मामले में अधिक भाग्यशाली नहीं निकली और उसको भी इस अतिरिक्त श्रेणी तथा आभ्यन्तर क्वांटम-संख्या के निर्वचन में कोई सफलता नहीं मिली। यहाँ भी फिर उसी पूर्वोक्त नवीन अवयव के निवेशन की आवश्यकता दिखाई दी।

अब जिन घटनाओं की व्याख्या पुराने क्वांटम-सिद्धान्त के द्वारा नहीं हो सकी थी उनके दूसरे वर्ग—चुम्बकीय विषमताओं—की तरफ़ देखिए। हम असामान्य[3] ज़ीमान-प्रभाव का ज़िकर पहले ही कर चुके हैं और बता चुके हैं कि इसके अस्तित्व की व्याख्या न तो लोरैन्ट्ज़ के मूल इलैक्ट्रान-सिद्धान्त के द्वारा हो सकी थी न पुराने क्वांटम-सिद्धान्त के द्वारा और न तरंग-यांत्रिकी के द्वारा। इस सार्वत्रिक असफलता का कारण यह था कि इन तीनों ही सिद्धान्तों में ज़ीमान-प्रभाव के निर्वचन के मूल में एक ही अधिमान्यता[4] स्वीकार कर ली गयी थी। यह अधिमान्यता यह थी कि परमाणुओं में जितना भी चुम्बकीय घूर्ण होता है उस सबका एक मात्र कारण परमाणुओं के आभ्यन्तरिक इलैक्ट्रानों की कक्षीय गति ही है। यदि यह बात मान ली जाय तो यह परिणाम अनिवार्य है कि परमाणु के संपूर्ण संवेग-घूर्ण[5] और उसके संपूर्ण चुम्बकीय घूर्ण[6] का अनुपात किसी नियत मान का होगा और यह मान केवल इलैक्ट्रान के वैद्युत आवेश और उसके द्रव्यमान के अनुपात पर ही अवलम्बित होगा। चिरप्रतिष्ठित इलैक्ट्रान-सिद्धान्त, पुराना क्वांटम-सिद्धान्त और तरंग-यांत्रिकी का मूल रूप—इन तीनों से ही यही परिणाम निकलता है और तीनों ही सिद्धान्तों के अनुसार समस्त ज़ीमान-प्रभाव उसी सामान्य[7] प्रकार का होना चाहिए जिसकी लोरैन्ट्ज़ ने प्रागुक्ति की थी और जिसका ज़ीमान ने आविष्कार किया था। असामान्य ज़ीमान-प्रभाव का अस्तित्व भी उपर्युक्त अन्य स्पैक्ट्रमीय तथ्यों के अस्तित्व के समान ही सिद्धान्त में एक नवीन अवयव के निवेशन की

1. Inner quantum number 2. Empirical 3. Complex 4. Postulate 5. Moment of momentum 6. Magnetic moment 7. Normal

आवश्यकता को प्रकट करता है और यह भी प्रकट करता है कि इस नवीन अवयव का चुम्बकत्व से कुछ-न-कुछ सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए।

इसके अतिरिक्त असामान्य ज़ीमान-प्रभाव का प्रायोगिक अध्ययन ज़ीमान के आविष्कार के बाद से ही अनवरत रूप से चलता रहा था और उसके सम्बन्ध में कई आनुभविक नियम अच्छी तरह से ज्ञात हो गये थे। यहाँ हम उन आनुभविक नियमों का विवेचन नहीं कर सकते। हम केवल यही कह कर संतोष करेंगे कि लैन्डे[1] ने पुराने क्वांटम-सिद्धान्त में एक गुणक —लैन्डे का g–गुणक—का निवेशन करके इन बहुसंख्यक नियमों को एक संक्षिप्त रूप देने में सफलता प्राप्त कर ली थी। किन्तु इस g–गुणक का यथार्थ निर्वचन अभी तक संशयात्मक ही था। इसमें संदेह नहीं कि असामान्य ज़ीमान-प्रभाव सम्बन्धी इस समस्त अनुसन्धान कार्य ने इस घटना के सर्वांगपूर्ण सिद्धान्त के निर्माण में बड़ी सहायता की थी क्योंकि जिन नियमों की व्याख्या करना था उनके यथातथ गणितीय रूप हमें इस प्रकार पहले से ही मालूम हो गये थे।

किन्तु केवल असामान्य ज़ीमान-प्रभाव सम्बन्धी घटनाएँ ही ऐसी चुम्बकीय घटनाएँ नहीं थीं, जिनकी व्याख्या नहीं हो सकी थी। घूर्ण-चुम्बकीय विषमताओं[2] की व्याख्या भी नहीं हो सकी थी। पारमाणविक चुम्बकत्व का कारण परमाणु के आभ्यन्तरिक इलैक्ट्रानों का कक्षीय परिभ्रमण है, इस परिकल्पना से यह परिणाम निकलता है कि यदि कोई लोहे की बेलनाकार छड़ उसके किसी अक्षीय विन्दु से लटकी हो और उसे चुम्बकित कर दिया जाय तो वह छड़ अपने अक्ष पर घूमने लगेगी। विपरीततः यदि उस छड़ को अपने अक्ष पर घुमाया जाय तो उसमें चुम्बकीय घूर्ण की सृष्टि हो जायगी। इसके अतिरिक्त दोनों ही अवस्थाओं में छड़ के संवेग-घूर्ण तथा चुम्बकीय घूर्ण का अनुपात उपर्युक्त नियतांक के बराबर होना चाहिए और इस नियतांक का मान इलैक्ट्रान के विशिष्ट गुणों पर अवलम्बित होगा। इस सिद्धान्त की प्रागुक्ति के सत्यापन के लिए कई प्रयोग किये गये थे—आइन्स्टाइन और डि-हास[3] द्वारा तथा बारनेट[4] द्वारा। इनसे प्रमाणित हो गया कि दोनों ही परस्पर विपरीत घटनाएँ वास्तविक हैं। चुम्बकित छड़ वास्तव में घूमने लगती है और घूमने के कारण चुम्बकत्व भी उत्पन्न हो जाता है। किन्तु यहाँ चुम्बकीय घूर्ण और संवेग-घूर्ण के अनुपात का मान प्रागुक्त मान से दुगुना निकला। इस अप्रत्याशित परिणाम से कुछ संकेत मिला कि निवेश्य नवीन अवयव की तलाश किस दिशा में करनी चाहिए। यह स्पष्ट हो गया कि परमाणु का समस्त

1. Lande′ 2. Gyro-magnetic anomalies 3. De Haas 4. Barnett

चुम्बकत्व इलैक्ट्रानों के कक्षीय परिभ्रमण के कारण उत्पन्न नहीं होता और परमाणु में अन्य प्रकार के चुम्बकीय घूर्ण तथा संवेग-घूर्ण भी विद्यमान रहते हैं जिनके अनुपात का मान उतना नहीं होता जितना उस समय तक माना जाता था। इस संकेत का अनुसरण करके ऊहलेनबैक तथा गूडस्मिट के मन में यह महत्त्वपूर्ण विचार आया कि स्वयं इलैक्ट्रान में भी कुछ निजी नर्तन-गति[1] और निजी चुम्बकत्व विद्यमान होते हैं।

२. ऊहलेनबैक और गूडस्मिट की परिकल्पना

१९२५ के एक महत्त्वपूर्ण लेख में ऊहलेनबैक और गूडस्मिट ने यह प्रतिपादित किया था कि इलैक्ट्रान में केवल वैद्युत आवेश ही नहीं होता, किन्तु उसमें चुम्बकीय घूर्ण और नर्तन-घूर्ण[2] भी होते हैं। ऐसे चुम्बकीय तथा नर्तक इलैक्ट्रान का चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्तानुमोदित चित्र प्रस्तुत करना बहुत आसान है। इसके लिए इतना ही काफी है कि इलैक्ट्रान को एक छोटे-से गोले के समान समझ लिया जाय जो ऋण विद्युत् से आविष्ट है और जो अपने किसी एक व्यास पर घूम रहा है या नाच रहा है। ऊहलेनबैक और गूडस्मिट ने अपनी परिकल्पना को अधिक परिच्छिन्न बनाने के लिए यह मान लिया कि इलैक्ट्रान के निजी चुम्बकीय घूर्ण तथा उसके निजी संवेग-घूर्ण के अनुपात का मान चिरप्रतिष्ठित साधारण मान से दुगुना होता है। इस परिकल्पना का विचार उनके मन में घूर्ण-चुम्बकीय[3] प्रयोगों के परिणामों के द्वारा उत्पन्न हुआ था। इसके अतिरिक्त विद्युत् से आविष्ट और घूमते हुए गोले के चिरप्रतिष्ठित प्रतिरूप के द्वारा भी इस परिकल्पना के औचित्य का समर्थन किया जा सकता था। किन्तु इस चिरप्रतिष्ठित प्रतिरूप को स्वीकार करने में क्वांटम-दृष्टिकोण से जो कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं उनके कारण यह समर्थन अधिक विश्वास के योग्य नहीं समझा जा सका। फिर भी हम देखेंगे कि ऊहलेनबैक और गूडस्मिट की परिकल्पना अपनी उपलक्षणाओं[4] के द्वारा बहुत ही अच्छी तरह सत्यापित हो चुकी है और पहले के समस्त सिद्धान्तों में जिस अवयव की कमी थी उसका अब पता चल गया है।

हमारी इच्छा है कि इस नवीन परिकल्पना के पारिमाणिक पक्ष को और अधिक सुस्पष्ट कर दिया जाय। क्वांटम-सिद्धान्त में पारमाणविक इलैक्ट्रानों का जो कक्षीय संवेग-घूर्ण क्वांटमित अवस्थाओं में होता है, उसका मान सदैव प्लांक के नियतांक के

1. Spin 2. Moment of rotation 3. Gyro-magnetic 4. Implications

$\frac{१}{२\pi}$ —वें भाग के किसी पूर्ण अपवर्त्य[1] के बराबर होता है। यह क्वांटमीकरण का ही परिणाम है। इन इलैक्ट्रानों में कक्षीय चुम्बकीय घूर्ण भी होता है जिसका मान "बोह्र का मैंगनेटान"[2] नामक एक मूल राशि के किसी पूर्ण अपवर्त्य के बराबर होता है। यह मैंगनेटान ठीक इस प्रकार का काम करता है मानो वह सचमुच चुम्बकत्व का परमाणु ही हो और आज तो चुम्बकीय घटनाओं के समस्त व्यापक सिद्धान्तों में इसका उपयोग अनिवार्य हो गया है। स्टर्न और गरलाक[3] के जिस विख्यात प्रयोग के द्वारा अकेले एक परमाणु का चुम्बकीय घूर्ण नापा जा सकता है, उसने तो बोह्र के मैंगनेटान के भौतिक अस्तित्व को निश्चित रूप से प्रमाणित कर दिया है। इसके अतिरिक्त बोह्र के मैंगनेटान में संवेग-घूर्ण के क्वांटमीय मात्रक $\frac{h}{२\pi}$ का भाग देने से जो भागफल प्राप्त होता है उसका मान वही चिरप्रतिष्ठित मान है जिसका उल्लेख हम ऊपर कई उदाहरणों में कर चुके हैं। ऊहलेनबैक और गूडस्मिट ने इलैक्ट्रान के निजी संवेग-घूर्ण का मान क्वांटम-मात्रक $\frac{h}{२\pi}$ के आधे भाग के बराबर निर्धारित किया है। अतः दोनों प्रकार के घूर्णों के अनुपात का मान चिरप्रतिष्ठित मान से ठीक दुगुना ठहरता है। उन्होंने इलैक्ट्रान के निजी घूर्णन और तत्सम्बन्धी संवेग-घूर्ण को व्यक्त करने के लिए अंग्रेजी शब्द स्पिन[4] का प्रयोग किया है। इस शब्द को सभी भौतिकज्ञों ने पसंद कर लिया है और अब वे इसी का व्यवहार करते हैं।*

जिस समय इन दो हालैण्ड निवासी भौतिकज्ञों के मन में इलैक्ट्रान के नर्तन की भावना का प्रादुर्भाव हुआ था, उस समय नवीन यांत्रिकी का जन्म होने ही वाला था। अतः यह समझना आसान है कि क्यों इस परिकल्पना का विकास पहले पुराने क्वांटम-सिद्धान्त की सीमाओं के अन्तर्गत ही हुआ। सबसे पहले ऊहलेनबैक और गूडस्मिट ने तथा बाद में अन्य भौतिकज्ञों ने, जिनमें टामस और फ़्रेन्केल[5] का नाम उल्लेखनीय है, सूक्ष्म-रचना और ज़ीमान-प्रभाव के सिद्धान्त में इलैक्ट्रान के इन नवाविष्कृत गुणों का निवेशन किया था। इसके परिणाम बहुत संतोषजनक निकले और यह बात स्पष्ट हो गयी कि हमें सही मार्ग मिल गया है। जो थोड़ी-सी कठिनाइयाँ बच गयी थीं उनका कारण

1. Whole multiple 2. Bohr's magneton 3. Stern and Gerlach 4. Spin 5. Thomas and Frenkel

* हम हिन्दी में इसे "नर्तन" शब्द के द्वारा व्यक्त कर सकते हैं।

स्पष्टतः पुरानी क्वांटमीय विधियों का उपयोग था। और तरंग-यांत्रिकी में इलैक्ट्रान-नर्तन के निविष्ट करने पर इन कठिनाइयों का दूर हो जाना निश्चित था। किन्तु यह निवेशन बिना कठिनाई के नहीं हो सका था। अन्त में पॉली[1] की एक महत्त्वपूर्ण गवेषणा के आधार पर डिरैक ने इसमें अत्यन्त रोचक ढंग से सफलता प्राप्त कर ली और इससे अनेक प्रकार की नवीन संभावनाएँ प्रकट हो गयीं। डिरैक के सिद्धान्त के अध्ययन के लिए अधिक अच्छी तरह प्रस्तुत होने के लिए पहले पॉली की प्रारम्भिक गवेषणा के विषय में कुछ कह देना आवश्यक है।

३. पॉली का सिद्धान्त

इलैक्ट्रान के नर्तन में और फ़ोटान के उस गुण में जिसे हम प्रकाश का ध्रुवण[2] कहते हैं बहुत कुछ सादृश्य है। वस्तुतः इसके द्वारा इलैक्ट्रान में एक प्रकार की सम-दिगत्व[3] की कमी अथवा असंमिति प्रकट होती है। निश्चय ही इन दोनों में पूर्ण तादात्म्य नहीं है क्योंकि नर्तन में अक्ष की दिशा भी होती है और उस दिशा में दक्षिणावर्ती या वामावर्ती अभिदिशाएँ[4] भी होती हैं। किन्तु ध्रुवण में प्राकाशिक दिष्ट[5] के कम्पन के कारण दिशा तो निर्दिष्ट होती है, किन्तु उस दिशा में कोई अभिदिशा नहीं होती। फिर भी यदि हमें तरंग-यांत्रिकी में नर्तन को निविष्ट करना है तो अधिक संभावना यही मालूम देती है कि हमें उसी मार्ग का सहारा लेना पड़ेगा जिसके द्वारा प्रकाश की द्वैतमयी धारणा में ध्रुवण के साथ फ़ोटान के अस्तित्व का सांगत्य संभव हुआ था, क्योंकि यह उद्गमन विधि[6] उसी विधि का अनुक्रम है जिसके द्वारा प्रकाश-तरंगों के ज्ञात सिद्धान्त से प्रारम्भ करके द्रव्य-तरंगों[7] का सिद्धान्त प्राप्त किया गया था। ऐसा जान पड़ता है कि पॉली को अपने नर्तन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण अनुसंधानों की प्रगति में इसी विचार से पथ-प्रदर्शन मिला था।

इसलिए पहले हम इसी बात का विवेचन करेंगे कि प्रकाश के ध्रुवण का और फ़ोटान के अस्तित्व का सांगत्य कैसे स्थापित किया जाय। मान लीजिए कि किसी निकल-प्रिज़्म[8] पर एक सम-ध्रुवित[9] रश्मि पड़ रही है। प्रकाश-विज्ञान के चिरप्रतिष्ठित तरंग-सिद्धान्तों के अनुसार तो घटना इस प्रकार होती है मानो निकल-प्रिज़्म की उपस्थिति के कारण आपतित समतल तरंग-कम्पन का ऐसी दो समकोणिक अक्षों (D तथा D′) की दिशाओं में विघटन हो जाता है जो उस प्रिज़्म की संरचना द्वारा

1. Pauli 2. Polarisation 3. Isotropy 4. Senses 5. Light-vector 6. Inductive method 7. Material waves 8. Nicol prism 9. Plane polarised

निर्धारित होती हैं और D की दिशा का संघटक तो प्रिज़्म में से पार निकल जाता है, किन्तु D′ की दिशा का संघटक रुक जाता है। यदि निकल को ९०° घुमा दिया जाय तो हम यह समझ सकते हैं कि D तथा D′ अक्षों की दिशाएँ तो बदली नहीं हैं, किन्तु अब सिर्फ D′ की दिशावाला संघटक ही प्रिज़्म के पार निकल सकता है। अतः यदि प्रकाश-प्रचरण की दिशा से समकोणिक कोई भी दो अक्ष D तथा D′ ऐसे लिये जायँ जो परस्पर भी समकोणिक हों तो आपतित कम्पन D तथा D′ की दिशाओं में विघटित किया जा सकता है और तब समुचित प्रकार से अनुन्यस्त[1] निकल प्रिज़्म उन दोनों संघटकों में से किसी एक को या दूसरे को अलग करके रोक लेगा। यदि आपतित प्रकाश सम-ध्रुवित न हो और उसका ध्रुवण अन्य किसी प्रकार का हो तब भी घटना ऐसी ही रहेगी। प्रचरण की दिशा से लम्ब-रूप दो समकोणिक अक्षों की दिशाओं में किसी भी आपतित प्रकाश के ऐसे संभाव्य विघटन अनन्त प्रकार के हो सकते हैं क्योंकि ये दोनों अक्ष अपने समतल में अनन्त प्रकार से अनुन्यस्त हो सकते हैं। निकल-प्रिज़्म द्वारा दो परस्पर समकोणिक दिशाओं में ध्रुवित प्रकाश-रश्मियों का पृथक्करण इनमें से प्रत्येक विघटन के अनुरूप संभव है। अब फ़ोटान के अस्तित्व को मानकर इसी घटना का विवेचन कीजिए। मान लीजिए कि किसी ज्ञात ध्रुवण की तरंग से सम्बन्धित फ़ोटान-समूह निकल-प्रिज़्म में प्रवेश करता है। इनमें से कुछ फ़ोटान तो प्रिज़्म के पार निकल जाते हैं और उससे बाहर निकलते ही वे D–दिशा में ध्रुवित तरंग से अनुषंगित हो जाते हैं। शेष फ़ोटान प्रिज़्म से रुक जाते हैं। तरंग-सिद्धान्त के अनुसार निर्गत प्रकाश-ऊर्जा का नाप आपतित कम्पन के D–दैशिक संघटक की तीव्रता[2] के द्वारा अथवा उसके आयाम[3] के वर्ग के द्वारा होता है और प्रिज़्म द्वारा रुकी हुई प्रकाश-ऊर्जा का नाप समकोणिक संघटक की तीव्रता के द्वारा होता है। अतः हमें यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि जितने फ़ोटानों का ध्रुवण निकल प्रिज़्म में से निर्गत होने पर D–दिशा में होगा उनकी संख्या का और आपतित फ़ोटानों की संख्या का अनुपात आपतित प्रकाश के D–दैशिक संघटक की तीव्रता के द्वारा नापा जा सकता है और जितने फ़ोटान निकल से रुक गये उनका अनुपात उससे समकोणिक संघटक की तीव्रता द्वारा निर्धारित होता है। किन्तु यह मान लेने में कोई बाधा नहीं है कि इस प्रयोग में आपतित प्रकाश की तीव्रता अत्यन्त ही कम भी हो सकती है। तब प्रिज़्म पर उत्तरोत्तर एक फ़ोटान के बाद दूसरा पहुँचेगा। ऐसी दशा में जैसा कि हमें व्यतिकरण[4] की घटना के सम्बन्ध में पहले

1. Oriented 2. Inte sity 3. Amplitude 4. Interference

भी करना पड़ा था वैसा ही अब भी करना पड़ेगा अर्थात् सांख्यिकीय दृष्टिकोण के स्थान में प्रायिकता के दृष्टिकोण का आश्रय लेना पड़ेगा और यह कहना पड़ेगा कि कोई आपतित फ़ोटान निकल में से निर्गत होने के बाद D–दिशा में ध्रुवित दिखाई पड़ेगा, इस बात की प्रायिकता का नाप भी आपतित प्रकाश-कम्पन के D–दैशिक संघटक की तीव्रता के द्वारा ही होगा। हम अब भी यह कह सकते हैं कि प्रत्येक समकोणिक अक्षयुग्म D–D′ के लिए फ़ोटान के सम-ध्रुवण की दो संभाव्यताएँ हैं और इन दोनों संभाव्यताओं की अपनी-अपनी प्रायिकताएँ आपतित कम्पन के D तथा D′ दिशाओंवाले दोनों संघटकों की तीव्रताओं द्वारा निर्धारित होती हैं। बिलकुल स्पष्ट है कि जिन धारणाओं को हमने यांत्रिक राशियों के नाप के लिए स्वीकार कर लिया था ठीक उसी प्रकार की धारणाओं पर हम यहाँ भी पहुँच गये हैं। अब हम निकल-प्रिज़्म को एक ऐसा यंत्र समझ सकते हैं जिसके द्वारा हम यह जान सकते हैं कि आपतित फ़ोटान D–दिशा में ध्रुवित था या D′–दिशा में। और यदि आपतित फ़ोटान की आनुषंगिक तरंग द्वारा निरूपित अवस्था ज्ञात हो तो भी सामान्यतः हम इस नाप के परिणाम की यथातथ प्रागुक्ति नहीं कर सकेंगे। केवल दोनों संभाव्य परिकल्पनाओं की प्रायिकताएँ ही निर्धारित कर सकेंगे। और चूँकि D और D′ अक्षों को चुनने के असंख्य तरीके हो सकते हैं, अतः फ़ोटान की प्रारम्भिक अवस्था में असंख्य प्रकार के सम-ध्रुवण भी संभाव्य रूप में विद्यमान रहते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे जिस कणिका की आनुषंगिक तरंग एक-वर्ण नहीं होती, उसकी एक ही अवस्था में भी ऊर्जा के अनेक मान संभाव्य रूप में विद्यमान रहते हैं। यह हो सकता है कि कुछ असाधारण स्थितियों में किसी फ़ोटान पर निकल की क्रिया के परिणाम की यथातथ प्रागुक्ति संभव हो जाय। ऐसा तब ही होगा जब फ़ोटान की प्रारम्भिक अवस्था ध्रुवण की दिशा D–D′ की दृष्टि से शुद्ध अवस्था[1] हो अथवा दूसरे शब्दों में जब आपतित तरंग या तो D–दिशा में सम-ध्रुवित हो अथवा D′–दिशा में। जो कुछ हम अभी कह चुके हैं वह सब बिना कठिनाई के उस दशा में भी ठीक निकलेगा जब निकल के समान सम-तलीय ध्रुवण-विश्लेषक[2] के स्थान में किसी वृत्तीय अथवा दीर्घ-वृत्तीय ध्रुवण-विश्लेषक का उपयोग किया जाय।

इस सब विवेचन से यह परिणाम निकलता है कि किसी प्रकाश-तरंग के आनुषंगिक फ़ोटान के विषय में यह प्रश्न नहीं पूछा जा सकता कि "उस फ़ोटान के ध्रुवण का तल कौन-सा है ?" यह प्रश्न अर्थहीन है और इसका कोई तर्क-संगत उत्तर संभव ही नहीं है।

1. Pure case 2. Analyser

हम केवल निम्नलिखित प्रश्न ही पूछ सकते हैं। "यदि किसी प्रयोग में सम-तलीय ध्रुवण-विश्लेषक का उपयोग किया जाय तो फ़ोटान पर प्रकाश के प्रचरण से समकोणिक किसी विशेष दिशावाला सम-ध्रुवण आरोपित होने की प्रायिकता कितनी है?" हम अभी देख चुके हैं कि तरंग-सिद्धान्त इस प्रश्न का उत्तर किस प्रकार देता है और किस प्रकार यह उत्तर मूलतः तरंग-फलन को दो संघटकों में विघटित कर सकने की संभाव्यता पर अवलम्बित है।

पॉली ने यह विचार किया कि तरंग-यांत्रिकी में इलैक्ट्रान के नर्तन को निविष्ट करने के लिए भी यह समझना आवश्यक होगा कि ψ–तरंग के भी दो संघटक होते हैं। किन्तु यह मानना आवश्यक नहीं है कि प्रकाश के समान ही यहाँ भी ये संघटक किसी दिष्ट-राशि के दो समकोणिक संघटक हैं। जिस प्रकार सामान्यतः किसी फ़ोटान के सम-ध्रुवण की दिशा ठीक-ठीक नहीं बतायी जा सकती उसी प्रकार यह भी नहीं कहा जा सकता कि इलैक्ट्रान के नर्तन की दिशा कौन-सी है। हम केवल इतना ही अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि इलैक्ट्रान में किसी विशेष दिशावाले नर्तन के पाये जाने की प्रायिकता कितनी है। किन्तु हम ऊपर बता चुके हैं कि नर्तन में दिशा के अतिरिक्त एक अभिदिशा[1] भी होती है तथा इस नर्तन का मान संवेग-घूर्ण के क्वांटम मात्रक के अर्धांश अर्थात् $\frac{h}{४\pi}$ के बराबर होता है। अतः पॉली ने यह परिकल्पना बनायी कि प्रत्येक दिशा D के लिए दो संभव अभिदिशाओं के अनुरूप ही नर्तन के भी दो मान संभव हैं $\left(\pm\frac{h}{४\pi}\right)$। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि ψ–तरंगें अनुप्रस्थ[2] नहीं होतीं। अतः यह आवश्यक नहीं है कि नर्तन की D–दिशा तरंग-प्रचरण से समकोणिक ही हो। अतः हमें निम्नलिखित प्रश्न भी पूछने पड़ेंगे। "इस बात की प्रायिकता कितनी है कि किसी प्रयोग के द्वारा इलैक्ट्रान के D–दैशिक नर्तन का मान $+\frac{h}{४\pi}$ निकले?" और "इस बात की प्रायिकता कितनी है कि किसी प्रयोग के द्वारा इलैक्ट्रान के D–दैशिक नर्तन का मान $-\frac{h}{४\pi}$ निकले?" प्रकाश के ध्रुवण की भाँति ही पॉली ने यह परिकल्पना बनायी कि प्रत्येक दिशा D के लिए ψ–तरंग का विघटन दो संघटकों में किया जा सकता है और इन्हीं की तीव्रताओं से उस D–दिशा के नर्तन के दोनों संभाव्य मानों

1. Sense 2. Transverse

$\left(\pm\frac{h}{४\pi}\right)$ की अपनी-अपनी प्रायिकताएँ निर्णीत होती हैं। यदि D–दिशा बदल दी जाय तो स्वभावतः ही ψ–तरंग का विघटन भिन्न प्रकार का होगा, ठीक उसी तरह जैसे कि प्रकाश-कम्पन का दो समकोणिक संघटकों में विघटन विभिन्न समकोणिक अक्षयुग्मों के लिए विभिन्न प्रकार का होता है। पॉली ने वे दो यौगपदिक[1] अवकल समीकरण लिख दिये जिनको सन्तुष्ट करना किसी भी विशेष D–दिशा से सम्बन्धित ψ–तरंग के दोनों संघटकों के लिए आवश्यक है। और तब उन्होंने इस बात का अध्ययन किया कि D–दिशा को बदलने से इन दोनों संघटकों का रूपान्तर कैसा होता है। ऐसा करने से उन्हें मालूम हो गया कि ψ–तरंग के दोनों संघटकों का रूपान्तर दिष्ट संघटकों[2] के समान नहीं होता। भौतिक विज्ञान में यह (नर्तक कणिका की ψ–तरंग) ऐसी गणितीय सत्ता का पहला उदाहरण है जिसकी गणना टेन्सरों[3] के व्यापक वर्ग में और फलतः दिष्टों[4] और अदिष्टों[5] में भी नहीं हो सकती, क्योंकि यह विदित ही है कि दिष्ट और अदिष्ट भी टेन्सर ही के विशेष प्रकार के रूप हैं। इस नवीन प्रकार की गणितीय सत्ता का अध्ययन कर लिया गया है और उसे अर्ध-दिष्ट[6] अथवा नार्तनिक[7] नाम दिये गये हैं।

यहाँ हम पॉली के सिद्धान्त की वैधानिक प्रक्रियाओं[8] का विस्तृत वर्णन नहीं करेंगे। उसका उपयोग भी अधिक नहीं हुआ है क्योंकि शीघ्र ही उसका स्थान डिरैक[9] के सिद्धान्त ने ले लिया था। इसके अतिरिक्त पॉली का सिद्धान्त आपेक्षिकीय भी नहीं है। अतः वह सामरफ़ेल्ड द्वारा निर्दिष्ट अर्थ में सूक्ष्म-रचना की प्रागुक्ति के लिए भी उपयोगी नहीं है। किन्तु पॉली की धारणाएँ अधिक चित्ताकर्षक थीं। उन्हीं से इस बात का संकेत मिला था कि तरंग-यांत्रिकी में नर्तन को निविष्ट करने के लिए किसी भी दिशा की दो संभाव्य अभिदिशाओं की प्रायिकता का विचार करना आवश्यक होगा। और यह भी आवश्यक होगा कि अकेले एकपदीय ψ–फलन के स्थान में अनेक संघटकोंवाला ψ–फलन प्रतिस्थापित करना पड़ेगा। यह डिरैक के प्रतिभापूर्ण प्रयास का ही फल था कि उन्होंने इस अस्पष्ट प्रारूप[10] को परिपूर्णता देने में सफलता प्राप्त कर ली।

४. डिरैक का सिद्धान्त[11]

इसमें सन्देह नहीं कि डिरैक को पॉली के विचारों से सहायता मिली थी, किन्तु

1. Simultaneous 2. Vector Components 3. Tensors 4. Vectors 5. Scalars 6. Half-vector 7. Spinor 8. Formalism 9. Dirac. 10. Rough draft 11. The Theory of Dirac

उनके सामने एक और भी पथ-प्रदर्शक उद्देश्य था। उनकी इच्छा थी कि ऐसी आपेक्षिकीय तरंग-यांत्रिकी का निर्माण किया जाय जो वास्तव में संतोषजनक हो। हम देख चुके हैं कि तरंग-यांत्रिकी के निश्चयात्मक विकास के प्रारम्भ में ही एक ऐसी आपेक्षिकीय तरंग-यांत्रिकी का प्रस्ताव किया गया था जिसका मूल तरंग-समीकरण काल-सापेक्ष द्वितीय वर्ण[1] का था। इसकी सूक्ष्म समीक्षा करने के बाद डिरैक इस परिणाम पर पहुँचे कि यह प्रस्ताव स्वीकार करने के योग्य नहीं है। इसके विरुद्ध उनकी मुख्य आपत्ति यही थी कि इसमें प्रचरण का समीकरण काल की अपेक्षा द्वितीय वर्ण का था। इस बात का परिणाम आपेक्षिकताहीन तरंग-यांत्रिकी से विपरीत यह निकलता है कि यदि ψ–तरंग के किसी प्रारम्भिक रूप द्वारा निर्दिष्ट कोई प्रारम्भिक अवस्था ज्ञात हो तो सम्पूर्ण प्रायिकता[2] की अपरिवर्तनीयता स्वतः ही सुनिश्चित नहीं हो जाती और संपूर्ण प्रायिकता की स्वतः उत्पन्न अपरिवर्तनीयता का प्रतिबन्ध इस बात के लिए आवश्यक है कि नवीन यांत्रिकी के व्यापक नियमों का संरक्षण हो सके। प्रबल युक्तियों से इस तर्क का अनुसरण करके डिरैक इस परिणाम पर पहुँचे कि आपेक्षिकीय तरंग-यांत्रिकी के समीकरण अनिवार्यतः काल-सापेक्ष प्रथम वर्ण के होने चाहिए। फलतः आकाश और काल की आपेक्षिकीय संमिति[3] के कारण ये समीकरण आकाशीय निर्देशांकों की अपेक्षा भी प्रथम वर्ण के ही होने चाहिए। इसके बाद उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि आपेक्षिकीयतरंग-यांत्रिकी में तरंग-फलन के चार संघटक होने चाहिए जो आंशिक व्युत्पन्नों के चार यौगपदिक समीकरणों को सन्तुष्ट करेंगे और ये चारों समीकरण आपेक्षिकता-हीन तरंग-यांत्रिकी के अकेले एक प्रचरण-समीकरण का स्थान ले लेंगे। इसके लिए जिन युक्तियों का उन्होंने उपयोग किया था उनका विवरण देने की यहाँ आवश्यकता नहीं है। और अन्त में डिरैक ने इस बात का पता लगाने का प्रयत्न किया कि निर्देशांक-तंत्र[4] में परिवर्तन करने से प्रचरण-समीकरणों और तरंग-फलन के संघटकों का रूपान्तर कैसा होता है। यह आश्चर्य की बात है कि उन्होंने लोरैन्ट्ज़-रूपान्तरण की दृष्टि से इन समीकरणों को निश्चर[5] पाया। इससे तुरन्त ही उनका सिद्धान्त आपेक्षिकीय दृष्टिकोण से सन्तोषजनक हो गया। उन्होंने तरंग-फलन के चारो संघटकों के रूपान्तरण के सूत्रों का निर्माण कर लिया। ये किसी दिक्कालीय दिष्ट-राशि के रूपान्तरण-सूत्र नहीं थे, किन्तु, जैसा कि आगे अधिक अच्छी तरह

1. Second order 2. Total probability 3. Symmetry 4. Coordinate system 5. Invariant

बताया जायगा, वे नवीन प्रकार के नार्तनिकीय[1] रूपान्तरण-सूत्र थे जिनसे पॉली का परिचय पहले ही हो चुका था।

किन्तु डिरैक के सिद्धान्त में यहीं एक अनपेक्षित विलक्षणता है। यद्यपि उनके सिद्धान्त के समीकरण शुद्ध आपेक्षिकीय तथा क्वांटमीय तर्कों के द्वारा प्राप्त किये गये थे और उनमें नर्तन-परिकल्पना का समावेश कहीं भी नहीं किया गया था तथापि उनमें स्वतः ही नर्तक और चुम्बकीय इलैक्ट्रान के समस्त गुण विद्यमान हैं। वस्तुतः इन नवीन प्रचरण-समीकरणों मे यह प्रमाणित करना आसान है कि इलैक्ट्रान का आचरण ठीक ऐसा होगा मानो उसका निजी चुम्बकीय घूर्ण एक बोह्र मैगनेटान[2] के बराबर हो और निजी संवेग-घूर्ण, संवेग-घूर्ण के क्वांटम-मात्रक के अर्धांश के बराबर हो। यद्यपि आधुनिक सैद्धान्तिक भौतिकी में अनेक अद्‌भुत परिणाम प्राप्त हो चुके हैं, किन्तु जिन समीकरणों को प्राप्त करने में नर्तन की धारणा का जरा-सा भी उपयोग नहीं किया गया उन्हीं में से नर्तन की उत्पत्ति का संभव हो जाना अवश्य ही सबसे अधिक अद्‌भुत बात है।

अब हम यह बताने का प्रयत्न करेंगे कि डिरैक का सिद्धान्त किस प्रकार पॉली के सिद्धान्त पर आश्रित है। डिरैक के सिद्धान्त में यह अनिवार्य है कि नर्तन सम्बन्धी प्रश्नों को पॉली द्वारा बताये हुए रूप में ही प्रस्तुत किया जाय। अतः हमारे सामने प्रश्न यह है कि किसी विशेष दिशा D के लिए नर्तन के दो संभाव्य मानों में से प्रत्येक की प्रायिकता कितनी है। इस प्रश्न का उत्तर देने से पहले यह जानना जरूरी है कि यदि D–दिशा को Z–अक्ष मान लिया जाय तो ψ-फलन चार संघटकों में किस प्रकार विघटित होगा। तब नर्तन के एक मान $+\frac{h}{४\pi}$ की प्रायिकता सम-पदवी[3] (द्वितीय और चतुर्थ) वाले संघटकों की तीव्रताओं के जोड़ के द्वारा प्राप्त होगी और दूसरे मान $-\frac{h}{४\pi}$ की प्रायिकता विषम-पदवी[4] (प्रथम और तृतीय) वाले संघटकों की तीव्रताओं के जोड़ के द्वारा प्राप्त होगी। किन्तु डिरैक के समीकरणों की सूक्ष्म परीक्षा से ज्ञात होता है कि यदि कणिका का वेग प्रकाश-वेग की अपेक्षा कम हो तो तरंग-फलन के पहले दो संघटक, पिछले दो संघटकों की तुलना में, उपेक्षणीय होंगे। इसी बात को दूसरे ढंग से यों कह सकते हैं कि जब आपेक्षिकता के प्रभाव को उपेक्षणीय

1. Spinorial 2. Bohr magneton 3. Even rank 4. Odd rank

समझा जा सकता है तब दो संघटकोंवाले तरंग-फलन का ही उपयोग पर्याप्त है और तब एक संघटक की तीव्रता से नर्तन के एक मान की प्रायिकता प्राप्त हो सकती है और दूसरे संघटक की तीव्रता से दूसरे संभव मान की। ठीक यही तो पॉली के सिद्धान्त का रूप था। अतः हम पॉली के सिद्धान्त को डिरैक के सिद्धान्त का आपेक्षिकता रहित न्यूटनीय[1] सन्निकटन समझ सकते हैं। साथ ही यह समझना भी आसान है कि डिरैक के सिद्धान्त में पॉली के सिद्धान्तवाले दो संघटकों के स्थान में ψ के चार संघटक क्यों हैं। नर्तन के अस्तित्व के लिए ψ—फलन को दो संघटकों में विघटित करना आवश्यक है और आपेक्षिकता का अस्तित्व इन दोनों संघटकों को पुनः दो-दो संघटकों में विघटित कर देता है। न्यूटनीय सन्निकटन में इस दूसरे विघटन की कोई आवश्यकता नहीं होती। यहाँ हम यह और कह देना चाहते हैं कि नवीन यांत्रिकी का प्रायिकता-मूलक निर्वचन बड़ी सरलता से डिरैक के सिद्धान्त पर भी बैठाया जा सकता है, किन्तु तब उसकी संकेत-प्रणाली[2] कुछ अधिक जटिल हो जायगी।

और अब हम इस नवीन सिद्धान्त के उपयोगों और सफलताओं का वर्णन करेंगे। सबसे पहले तो इसके द्वारा सूक्ष्म-रचना की समस्या की अच्छी व्याख्या हो जाती है और यह सामरफ़ेल्ड के सूत्रों का औचित्य निश्चित रूप से प्रमाणित कर देता है तथा उन सूत्रों को संशोधित भी कर देता है। वास्तव में यदि डिरैक के समीकरणों के द्वारा हाइड्रोजन परमाणु के क्वांटमीकरण पर पुनः विचार किया जाय तो हम देखेंगे कि नर्तन द्वारा निरूपित अवयव के प्रादुर्भाव के कारण एक ऐसी नवीन क्वांटम-संख्या निविष्ट हो जाती है जिसका पूर्ववर्ती सिद्धान्तों में कहीं पता भी नहीं था और जिसका उस "आभ्यन्तर क्वांटम संख्या"[3] से पूर्ण तादात्म्य है जो प्रेक्षित स्पैक्ट्रमीय पदों के वर्गीकरण के लिए वर्षों पहले केवल अनुभव के ही आधार पर निविष्ट किया गया था। इस प्रकार सूक्ष्म-रचना का ऐसा सूत्र प्राप्त हो जाता है जिसका रूप तो ठीक सामरफ़ेल्ड के सूत्र के सदृश ही है, किन्तु जिसमें पुरानी दिगंशीय[4] क्वांटम-संख्या के स्थान में यह नवीन क्वांटम-संख्या प्रतिस्थापित कर दी गयी है। इस प्रतिस्थापन से ही सब बातें सुव्यवस्थित हो जाती हैं और सिद्धान्त अब प्रागुक्त द्विक-रेखाओं का स्थान ठीक वहीं बताता है जहाँ प्रयोग द्वारा वे पायी जाती हैं, और जहाँ तक सरलकारी परिकल्पनाओं की सहायता से परिकलन संभव है वहाँ तक तो

1. Newtonian 2. Symbolism 3. Inner quantum-number 4. Azimuthal

अधिक भारी परमाणुओं के सम्बन्ध में भी यही परिणाम निकलता है। एक्सकिरण-स्पैक्ट्रम की द्विक-रेखाओं के सम्बन्ध में जो कठिनाइयाँ थीं वे भी दूर हो जाती हैं। इस प्रकार यह प्रमाणित हो जाता है कि सामरफ़ेल्ड ने जिस मूल धारणा के अनुसार सूक्ष्म-रचना की व्याख्या करने के लिए क्वांटम-सिद्धान्त में आपेक्षिकता को निविष्ट किया था वह तो सही थी ही, किन्तु वास्तव में संतोषप्रद परिणाम प्राप्त करने के लिए नर्तन का निवेशन भी उतना ही जरूरी था। सामरफ़ेल्ड की प्रारम्भिक सफलता आकस्मिक नहीं थी। उनकी धारणाओं में केवल एक आवश्यक अवयव "नर्तन" की कमी रह गयी थी।

डिरैक का सिद्धान्त चुम्बकीय विषमताओं[1] के निर्वचन में भी बहुत भाग्यशाली रहा। जीमान-प्रभाव की समस्या में जिन असामान्य प्रभावों ने पूर्ववर्ती सैद्धान्तिकों को उलझन में डाल दिया था उनके अस्तित्व का रहस्य इस सिद्धान्त द्वारा खुल गया। इस सफलता का कारण समझना आसान है। इन असामान्य प्रभावों की व्याख्या के लिए यह आवश्यक था कि किसी-न-किसी प्रकार परमाणु के चुम्बकीय-घूर्ण तथा संवेग-घूर्ण के अनुपात का मान तथाकथित "सामान्य" मान से भिन्न निर्धारित किया जाय। इस बात की चर्चा हम कई बार कर चुके हैं। यह सामान्य मान इस परिकल्पना पर आश्रित है कि परमाणु का चुम्बकीय घूर्ण केवल उसके इलैक्ट्रानों के कक्षीय परिभ्रमण से उत्पन्न होता है। ऊह्लेनबैक तथा गूडस्मिट की परिकल्पना के अनुसार इलैक्ट्रान में इतने निजी चुम्बकीय घूर्ण का अस्तित्व स्वीकार कर लेने से कि जिसका इलैक्ट्रान के निजी संवेग-घूर्ण से अनुपात सामान्य अनुपात से भिन्न (दुगुना) हो, डिरैक के सिद्धान्त को सामान्य जीमान-प्रभावों के चक्कर से मुक्त होने में और असामान्य प्रभावों की प्रागुक्ति करने में सफलता मिल गयी। और परिकलन के द्वारा तो सचमुच ही लैन्डे[2] के सूत्रों का सैद्धान्तिक समर्थन भी प्राप्त हो गया और असामान्य प्रभावों के विवरण में इस वैज्ञानिक ने जिस गुणक g का बहुत कुछ आनुभविक रीति से ही निवेशन किया था उसके मान की भी यथातथ प्रागुक्ति संभव हो गयी।

इस प्रकार डिरैक की इस वास्तव में सुन्दर गवेषणा से कई आश्चर्यजनक परिणाम निकले हैं। जिन स्पैक्ट्रमीय तथा चुम्बकीय घटनाओं के समुदाय की व्याख्या प्राप्त करने के समस्त प्रयत्नों की असफलता ने नर्तन के निवेशन की आवश्यकता

1. Magnetic anomalies 2. Lande'

प्रकट की थी उनको, इसके द्वारा, सैद्धान्तिक निर्वचन-युक्त भौतिक तथ्यों की सूची में सम्मिलित करना संभव हो गया। इसने अधिकतम प्रशंसनीय रीति से क्वांटम दृष्टिकोण का और ऊह्लेनबैक तथा गूडस्मिट की परिकल्पना का समन्वय कर दिया। प्रत्यक्षतः ही यह प्रश्न उठ सकता है कि इसके द्वारा क्वांटम-धारणाओं और आपेक्षिकीय धारणाओं का समाधान और एकीकरण कितनी दूर तक हो सका है क्योंकि क्वांटम धारणाएँ तो अनिवार्यतः असंतत होती हैं और आपेक्षिकीय धारणाओं में सांतत्य पूर्णतः अभिरंजित है। यह प्रश्न कठिन है और अभी हम उसकी समीक्षा करना नहीं चाहते। हमें तो ऐसा ही जान पड़ता है कि अभी डिरैक के सिद्धान्त के द्वारा आपेक्षिकीय और क्वांटमीय धारणाओं का एकीकरण पूर्णतः संतोषजनक नहीं हो सका है। किन्तु सब बातों को ध्यान में रखकर यही कहना पड़ेगा कि इस सिद्धान्त की रचना प्रशंसनीय है और इलैक्ट्रान की तरंग-यांत्रिकी का इस समय तो यही उत्कृष्ट रूप है।

डिरैक के सिद्धान्त के अन्य उपयोगों की, यथा द्रव्य द्वारा विकिरण के प्रकीर्णन[१] की समस्या (क्लाइन और निशिना[२] के सूत्र) का विवेचन न करके अब हम डिरैक के समीकरणों के एक विलक्षण परिणाम पर विचार करेंगे जो प्रारम्भ में तो इस सिद्धान्त का दूषण जान पड़ता था, किन्तु अन्त में जो उसके लिए बहुत हितकारी प्रमाणित हुआ था।

५. ऋणात्मक ऊर्जावाली अवस्थाएँ तथा धन-इलैक्ट्रान[३]

डिरैक के सिद्धान्त के समीकरणों में एक विलक्षण गुण यह है कि उनके ऐसे हल भी संभव हैं जिनके द्वारा आनुषंगिक कणिका की ऐसी अवस्थाएँ व्यक्त होती हैं जिनमें ऊर्जा ऋणात्मक होती है। यदि इलैक्ट्रान ऐसी ही किसी अवस्था में विद्यमान हो तो उसमें कुछ अद्भुत लक्षण दिखाई देंगे। उसके वेग में वृद्धि करने के लिए उसमें से कुछ ऊर्जा को निकाल लेना पड़ेगा। विपरीततः उसका वेग घटाने के लिए और उसे स्थिर कर देने के लिए उसे कुछ ऊर्जा और देना पड़ेगा। किन्तु किसी भी प्रयोग में कभी भी इलैक्ट्रान का ऐसा अद्भुत आचरण नहीं देखा गया और यह विश्वास करने के भी समुचित कारण हैं कि डिरैक का सिद्धान्त जिन ऋणात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं को संभव बताता है उनका अस्तित्व प्रकृत जगत् में वस्तुतः

1. Scattering 2. Klein and Nishina 3. States of Negative Energy and the Positive Electron

होता ही नहीं। शायद यह कहना अनुचित नहीं कि इस सिद्धान्त में आवश्यकता से अधिक क्षमता है। कम-से-कम आभास तो ऐसा ही होता है।

इसमें सन्देह नहीं कि डिरैक के समीकरणों में ऋणात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं की संभावना का उद्‌गम इन समीकरणों में निहित आपेक्षिकता ही है। सच तो यह है कि विशिष्ट आपेक्षिकता-सिद्धान्त[1] के प्रारम्भ में ही जब आइन्स्टाइन ने इलैक्ट्रान के आपेक्षिकीय गति-विज्ञान का विकास किया था, तब भी ऋणात्मक ऊर्जावाली गतियों की संभावना प्रकट हुई थी। किन्तु उस समय यह कठिनाई बहुत गंभीर नहीं थी क्योंकि पूर्ववर्ती सिद्धान्तों के अनुसार ही आइन्स्टाइन के गति-विज्ञान में यह मान लिया गया था कि समस्त भौतिक क्रियाएँ संतत[2] होती हैं, और इलैक्ट्रान का नैज द्रव्यमान[3] परिमित होने के कारण इलैक्ट्रान में कुछ परिमित मान की आभ्यन्तरिक ऊर्जा सदा ही विद्यमान रहती है, क्योंकि आपेक्षिकता के सिद्धान्त के अनुसार ऊर्जा में भी अवस्थितित्व[4] का गुण होता है। इस आभ्यन्तरिक ऊर्जा का लोप होना संभव नहीं है, अतः धनात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं से ऋणात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं को संतत परिवर्तन के द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। अतः उस समय जो परिकल्पना प्रचलित थी उसके अनुसार ऐसा संक्रमण वर्जित समझा जाता था। उस समय इतना ही मान लेना काफ़ी समझ लिया गया था कि काल के प्रारम्भ में समस्त इलैक्ट्रान धनात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं में ही थे। फलतः वे सदा ऐसी ही अवस्थाओं में रहे हैं और भविष्य में भी रहेंगे। किन्तु डिरैक की यांत्रिकी में यह कठिनाई बहुत अधिक गंभीर है क्योंकि यह तो क्वांटमीय सिद्धान्त है। उसमें असंतत[5] घटनाएँ असंभव नहीं है और यह सरलता से प्रकट हो जाता है कि धनात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं से ऋणात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं में संक्रमण केवल संभव ही नहीं है; किन्तु बहुधा हो भी जाता है। क्लाइन[6] ने एक रोचक उदाहरण के द्वारा प्रमाणित कर दिया है कि जब कोई धनात्मक ऊर्जावाला इलैक्ट्रान किसी ऐसे प्रदेश में पहुँचता है जहाँ बल-क्षेत्र क्षिप्र-परिवर्ती हो तो उस प्रदेश से होकर निकलने पर वह ऋणात्मक ऊर्जा की अवस्था को प्राप्त कर सकता है। अतः डिरैक के सिद्धान्त के लिए यह बात बड़ी असुविधाजनक सिद्ध हुई कि किसी भी प्रयोग में कभी भी ऐसा इलैक्ट्रान नहीं पाया गया जिसकी ऊर्जा ऋणात्मक हो।

इस कठिनाई को दूर करने के लिए डिरैक को एक विलक्षण उपाय सूझा।

1. Special Relativity 2. Continuous 3. Proper mass 4. Inertia 5. Discontinuous 6. Klein

पॉली के अपवर्जन नियम[1] के अनुसार (जिसका वर्णन अगले परिच्छेद में किया जायगा) किसी भी अवस्था-विशेष में इलैक्ट्रानों की संख्या एक से अधिक नहीं हो सकती। यह देखकर उन्होंने यह परिकल्पना बनायी थी कि विश्व की सामान्य अवस्था में इलैक्ट्रान ऋणात्मक ऊर्जावाली समस्त अवस्थाओं में विद्यमान रहते हैं। इससे यह परिणाम निकलता है कि ऋणात्मक ऊर्जावाले इलैक्ट्रानों का घनत्व सर्वत्र एक-सा होता है। डिरैक की धारणा के अनुसार ऐसा एक-समान घनत्व प्रेक्षणगम्य नहीं हो सकता। किन्तु ऋणात्मक ऊर्जावाली समस्त अवस्थाओं को भरने के लिए जितने इलैक्ट्रानों की आवश्यकता है उससे अधिक इलैक्ट्रान जगत् में विद्यमान हैं। ये बचे हुए इलैक्ट्रान ही धनात्मक ऊर्जावाले होते हैं। और ये ही हमारे प्रयोगों में प्रकट होते हैं। कुछ असाधारण स्थितियों में किसी बाह्य कारण से संक्रमित होकर ऋणात्मक ऊर्जावाला इलैक्ट्रान धनात्मक ऊर्जा की अवस्था को प्राप्त कर सकता है। उसी समय प्रायोगिक इलैक्ट्रान का आकस्मिक प्रादुर्भाव होता है और उसी समय ऋणात्मक ऊर्जावाले इलैक्ट्रानों के वितरण में एक गर्त[2] बन जाता है। डिरैक ने प्रमाणित कर दिया कि ऐसा गर्त प्रयोग द्वारा प्रेक्ष्य होना चाहिए और उसका आचरण बिलकुल ऐसा होना चाहिए मानो वह इलैक्ट्रान के बराबर द्रव्यमानवाली कणिका हो और उसमें विद्युत् की मात्रा इलैक्ट्रान के आवेश के बराबर, किन्तु विपरीत चिह्नीय हो; अर्थात् उसे प्रति-इलैक्ट्रान[3] अथवा धनात्मक इलैक्ट्रान के रूप में प्रकट होना चाहिए। इसके अतिरिक्त इस आकस्मिक गर्त को धनात्मक ऊर्जावाले इलैक्ट्रान से भर जाने में अधिक देर भी नहीं लगेगी। इस इलैक्ट्रान का संक्रमण स्वतः ही हो जायगा और जो ऋणात्मक ऊर्जावाली अवस्था क्षण भर के लिए खाली हो गयी थी उसमें वह जा पहुँचेगा और उसकी ऊर्जा विकिरण[4] के रूप में उत्सर्जित हो जायगी। इस प्रकार डिरैक ने ऋणात्मक ऊर्जावाली अवस्थाओं की अप्रेक्ष्यता की भी व्याख्या कर दी और साथ ही धनात्मक इलैक्ट्रानों के संभाव्य, किन्तु असाधारण और क्षणिक अस्तित्व की प्रागुक्ति भी कर दी।

डिरैक की परिकल्पना सचमुच विलक्षण थी, किन्तु सूक्ष्म विचार के अभाव में वह कृत्रिम-सी ही जान पड़ी। अधिकतर भौतिकज्ञों के मन में तो शायद इस पर विश्वास होता ही नहीं यदि तुरन्त ही प्रयोग द्वारा उन धन-इलैक्ट्रानों का अस्तित्व प्रमाणित न हो गया होता जिनके सामान्य लक्षणों की प्रागुक्ति डिरैक ने कुछ ही समय पहले की थी। १९३२ में पहले तो ऐन्डरसन[5] के और बाद में ब्लैकेट और

1. Exclusion principle 2. Hole 3. Anti-electron 4. Radiation 5. Anderson

ओकियालिनी[1] के सुन्दर प्रयोगों ने सचमुच प्रमाणित कर दिया कि जब अंतरिक्ष किरणों[2] के द्वारा परमाणुओं का विघटन[3] होता है तब कुछ ऐसी कणिकाएँ भी प्रकट होती हैं जिनका आचरण बिलकुल धन-इलैक्ट्रानों के समान होता है। यद्यपि उस समय यह पूर्ण दृढ़तापूर्वक नहीं कहा जा सकता था कि इन नवीन कणिकाओं का द्रव्यमान इलैक्ट्रानों के द्रव्यमान के ही बराबर होता है और उनका आवेश भी इलैक्ट्रान-आवेश के बराबर, किन्तु विपरीत चिह्नीय होता है तथापि बाद में किये गये प्रयोगों ने इस समानता को अधिकाधिक प्रायिक बना दिया था। इसके अतिरिक्त इन धन-इलैक्ट्रानों में यह प्रवृत्ति भी पायी गयी कि द्रव्य के संपर्क में आने पर वे शीघ्र ही विलुप्त हो जाते हैं और उनके स्थान में विकिरण उत्पन्न हो जाता है। थीबों[4] और जोलिओ[5] के प्रयोगों के द्वारा इस विषय में कोई सन्देह शेष नहीं रह जाता। धन-इलैक्ट्रानों की उत्पत्ति का असाधारण ढंग और उनकी विलुप्त होने की शक्ति ये दोनों ही वे लक्षण हैं जिनकी प्रागुक्ति डिरैक ने पहले ही कर दी थी। अतः अब स्थिति उलट गयी है क्योंकि डिरैक के समीकरणों को संशय में डालना तो दूर रहा अब तो उनके ऋणात्मक ऊर्जावाले हलों का अस्तित्व उलटे यह बतलाता है कि इन समीकरणों में धन-इलैक्ट्रानों का अस्तित्व और उनके लक्षण भी निहित हैं।

इतना होने पर भी हमें स्वीकार करना पड़ता है कि डिरैक की गर्तोंवाली धारणा को कई अत्यन्त गंभीर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है—विशेषकर शून्याकाश के विद्युत्-चुम्बकीय गुणों के सम्बन्ध में। हमें तो इस बात की संभावना अधिक दिखाई देती है कि डिरैक के सिद्धान्त का ऐसा रूपान्तरण अवश्यम्भावी है जिससे दोनों प्रकार के इलैक्ट्रानों में अधिक संमिति स्थापित हो जाय और गर्तों की धारणा का लोप होकर तत्सम्बन्धी कठिनाइयाँ दूर हो जायें। इस विषय का विवेचन हम अगले परिच्छेद में करेंगे। जो भी हो इस बात की सत्यता में सन्देह नहीं हो सकता कि जिन धन-इलक्ट्रानों को अब पाज़ीट्रान[6] कहते हैं उनके प्रायोगिक आविष्कार ने डिरैक की यांत्रिकी की मूल धारणाओं का नवीन और अत्यन्त विलक्षण समर्थन कर दिया है। डिरैक के समीकरणों की कुछ वैश्लेषिक विशेषताओं के सूक्ष्म निरीक्षण से जो दोनों प्रकार के इलैक्ट्रानों की संमिति प्रकट होती है वह निश्चय ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और इसमें सन्देह नहीं कि भौतिक सिद्धान्तों के भविष्य-विकास में इसका महत्त्वपूर्ण हाथ रहेगा।

1. Blackett and Occhialini 2. Cosmicrays 3. Disintegration 4. Thibaud 5. Joliot 6. Positron

बारहवाँ परिच्छेद

निकायों की तरंग-यांत्रिकी और पॉली का नियम

१. कणिका-निकायों की तरंग-यांत्रिकी[1]

अब तक तो हमने नवीन यांत्रिकी में केवल उसी स्थिति का अध्ययन किया था जिसमें अकेली एक ही कणिका किसी बल-क्षेत्र में गमन करती है। और कभी-कभी तो हमने प्रच्छन्न रूप से यह भी मान लिया था कि निकायों के लिए भी उसी तरह के नियम उपयुक्त हैं क्योंकि भौतिक विज्ञान कणिका-नियमों की मूल भौतिक सत्ताओं को वस्तुतः असांतत्य-मूलक समझता है। अब हमें यह स्पष्ट करना चाहिए कि निकायों की तरंग-यांत्रिकी की स्थापना कैसे हुई है।

प्रारम्भ में ही यह कह देना उचित है कि वास्तव में "निकाय" उसे कहते हैं जिसकी कणिकाओं में पारस्परिक क्रियाएँ[2] विद्यमान हों। इनके अभाव में तो कणिकाएँ अलग-अलग ही समझी जा सकती हैं; और तब तो इसमें और अकेली कणिका में कोई फ़र्क ही नहीं हो सकता। यह बात पुरानी और नवीन दोनों ही यांत्रिकियों में मान्य है।

अब हम यह स्मरण करा देना चाहते हैं कि चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी ने परस्पर-क्रियाशील कणिकाओं के निकाय की गति की समस्या को किस प्रकार हल किया था। पहले तो प्रत्येक कणिका के लिए न्यूटन का वह मूल समीकरण लिख दिया गया जिसके द्वारा द्रव्य-विन्दु के त्वरण और उस पर लगनेवाले बल की आनुपातिकता व्यक्त होती है, और पारस्परिक क्रिया का अस्तित्व मान लेने के कारण यह भी प्रकट है कि प्रत्येक कणिका पर जो बल लगता है वह समस्त अन्य कणिकाओं के स्थानों पर भी अवलम्बित होगा। अतः जो समीकरण प्राप्त हुए थे उन्हें यौगपदिक अवकल समीकरण[3]

1. The Wave-Mechanics of Systems of Corpuscles 2. Interactions
3. Simultaneous differential equations

मानना पड़ेगा। यदि समकोणिक कार्तीय निर्देशांक पद्धति[1] का अनुसरण करके ये समीकरण स्पष्टतः[2] लिखे जायँ तो उनकी संख्या कणिकाओं की संख्या से तीन गुनी होगी क्योंकि प्रत्येक कणिका के निर्देशांक तीन होते हैं। जब इन समीकरणों को हल करना संभव होता है तब हमें ऐसे व्यंजक[3] प्राप्त होते हैं जिनमें प्रत्येक निर्देशांक काल के फलन के रूप में व्यक्त होता है। अर्थात् तब हम काल-प्रवाह में प्रत्येक कणिका के स्थान और उसकी गति का अनुसरण कर सकते हैं और किसी प्रारम्भिक क्षण पर कणिकाओं के स्थान और वेग अर्थात् निकाय के तत्क्षणिक विन्यास[4] और गति ज्ञात होने पर जो समीकरण प्राप्त होंगे उनके हल पूर्णतः निर्णीत होंगे। इस प्रकार निकायों की चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में यांत्रिकीय नियतिवाद की सत्यता प्रमाणित हो जाती है।

निकायों की चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी के विकास का विस्तृत विवरण तो हम यहाँ नहीं देंगे, किन्तु केवल यही कह देना चाहते हैं कि इन गति-समीकरणों का रूपान्तरण हो सकता है और जो परिस्थितियाँ बहुधा हमारे सामने आती हैं उनमें इन्हें लाग्रांज[5] और हैमिल्टन[6] के सुविख्यात समीकरणों का रूप दिया जा सकता है। इस विषय का विवेचन हम प्रथम परिच्छेद में कर चुके हैं। किन्तु गति-समीकरणों के इन अधिक अमूर्त रूपों के लिए निकाय का एक नवीन ज्यामितीय निरूपण अधिक उपयोगी है। निकाय की प्रत्येक कणिका का प्रत्येक क्षण पर कोई स्थान निर्दिष्ट करके उस निकाय को तीन विमितियों[7] वाले भौतिक आकाश में निरूपित न करके हम यह भी कर सकते हैं कि समस्त कणिकाओं के निर्देशांकों को एकत्र करके ऐसे अमूर्त आकाश की कल्पना कर लें जिसकी विमितियों की संख्या कणिकाओं की संख्या से तीन गुनी हो। यदि कणिकाओं की गति की स्वतन्त्रता पर कुछ प्रतिबन्ध लगे हों तो विमितियों की संख्या कम भी हो सकती है। इस अमूर्त आकाश में, जिसे विन्यासाकाश[8] भी कहते हैं, निकाय की प्रत्येक अवस्था एक विन्दु द्वारा निरूपित होती है जिसके निर्देशांक निकाय की समस्त कणिकाओं के निर्देशांकों के बराबर होते हैं। काल-प्रवाह में इस निकाय का जो परिणमन होगा वह इस निरूपक-विन्दु के विन्यासाकाशीय विस्थापन के द्वारा व्यक्त होगा। अतः समस्त यांत्रिकीय समस्या केवल इस निरूपक-विन्दु की गति और गमन-पथ के परिगणन की ही समस्या हो जाती है और चिर-

1. System of rectangular Cartesian coordinates 2. Explicity 3. Expressions 4. Configuration 5. Lagrange 6. Hamilton 7. Dimensions 8. Configuration space

प्रतिष्ठित यांत्रिकी द्वारा प्राप्त समीकरण-समूह को हम इस निरूपक-विन्दु के गति-समीकरण समझ सकते हैं। इस प्रकार हमने त्रिविमितीय[1] भौतिक आकाश में बहु-संख्यक विन्दुओं की गतियों के अध्ययन को कल्पित विन्यासाकाश में केवल एक ही विन्दु की गति के अध्ययन का रूप दे दिया है। अब यांत्रिक नियतिवाद को सरलता से हम यों व्यक्त कर सकते हैं कि यदि विन्यासाकाश में इस निरूपक-विन्दु के प्रारंभिक स्थान और वेग ज्ञात हों तो उसकी भविष्य गति पूर्णतया निश्चित या नियत होती है।

यदि निकायों के गति-विज्ञान में याकोबी के प्रमेय[2] का उपयोग करना हो तो विन्यासाकाश का उपयोग अनिवार्य हो जाता है। भौतिक निर्वचन के अनुसार इस सिद्धान्त का मूल उद्देश्य यह है कि उपस्थित समस्या की संभाव्य गतियों का ऐसा वर्गीकरण कर दिया जाय कि प्रत्येक वर्ग की समस्त संभाव्य गतियों में तथा किसी एक ही तरंग-प्रचरण की समस्त किरणों में आनुरूप्य स्थापित हो सके। यह तो स्पष्ट ही है कि यदि समस्त गतिशील कणिकाएँ भौतिक आकाश में निरूपित की जायँ तो गमन-पथों की बहुलता के कारण ऐसा आनुरूप्य[3] स्थापित करना असंभव है; किन्तु विन्यासाकाश में यह आनुरूप्य स्थापित करना आसान है क्योंकि इस आकाश में निकाय की प्रत्येक गति निरूपक-विन्दु के एक ही गमन-पथ से निरूपित होती है। फलतः याकोबी के सिद्धान्त के द्वारा हम निकाय की संभाव्य गतियों का अर्थात् विन्यासाकाश में निरूपक विन्दु की संभाव्य गतियों का ऐसा वर्गीकरण कर सकते हैं जिसमें निरूपक-विन्दु के गमन-पथों का एक वर्ग ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान के समान ही तरंग-प्रचरण की किरणों को विन्यासाकाश में निरूपित कर दे। इस बहुविमितीय आकाश[4] में तरंग-प्रचरण का ज्यामितीय प्रकाश-वैज्ञानिक समीकरण यही याकोबी का समीकरण होगा जो निकाय की समस्त कणिकाओं के निर्देशांकों पर अर्थात् विन्यासाकाश के समस्त निर्देशांकों पर आश्रित होगा। न्यूनतम क्रिया का नियम तब फ़रमा के नियम के ही तुल्य जान पड़ेगा। यह सब हम प्रथम परिच्छेद के चौथे खण्ड में पहले ही बता चुके हैं।

चूँकि याकोबी का सिद्धान्त और न्यूनतम क्रिया का नियम पुरानी यांत्रिकी से तरंग-यांत्रिकी तक पहुँचने का राजमार्ग खोल देते हैं इसलिए हम आशा कर सकते हैं कि शायद तरंग-यांत्रिकी का विकास भी विन्यासाकाश के ढाँचे में हो सके और ठीक यही हुआ भी है। जिस विधि से श्रोडिंगर को एक किरण का प्रचरण-समीकरण

1. Three-dimensional 2. Jacobis' Theorem 3. Correspondence 4. Space of multiple dimensions

प्राप्त करने में सफलता मिली थी उसीके व्यापकीकरण के द्वारा निकाय की ψ–तरंग के प्रचरण-समीकरण को विन्यासाकाश में प्रस्तुत करने में भी उन्हें सफलता मिल गयी। यह समीकरण इस प्रकार निर्मित हुआ है कि यदि ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान का सन्निकटन ठीक समझा जाय तो हमें पुनः याकोबी का समीकरण प्राप्त हो जाता है। किन्तु यहाँ ψ–फलन परिणमनशील काल के अतिरिक्त निकाय की समस्त कणिकाओं के समस्त निर्देशांकों पर भी अवलम्बित होता है और उसका प्रचरण विन्यासाकाश में होता है। अतः इसमें ψ–तरंग का सांकेतिक रूप एक कणिका सम्बन्धी ψ–तरंग की अपेक्षा और भी अधिक स्पष्ट हो जाता है। शायद यह बात विचित्र भी मालूम पड़े कि निकाय का गति-सम्बन्धी विवेचन त्रिविमितीय आकाश में नहीं हो सकता और इस काम के लिए हमें अनिवार्यतः काल्पनिक विन्यासाकाश को माध्यम बनाना पड़ता है। चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी में वहुधा विन्यासाकाश सुविधाजनक तो होता है, किन्तु उसका उपयोग ऐच्छिक होता है, क्योंकि निकाय की समस्त कणिकाएँ भौतिक आकाश में भी सदैव निरूपित हो सकती हैं। तरंग-यांत्रिकी में विन्यासाकाश के अनिवार्य उपयोग के कारण इस पुस्तक के लेखक का मन बहुत समय से चिन्ताकुल रहा है और आज भी वह यही आशा करता है कि किसी दिन निकायों की तरंग-यांत्रिकी के नियम कुछ कम कृत्रिम रूप में व्यक्त हो सकेंगे और हम भौतिक आकाश और कणिकाओं की प्रचलित धारणाओं के स्थान में ऐसी धारणाएँ स्थापित कर सकेंगे जो वास्तविकता के लिए अधिक उपयुक्त हों।*

जो भी हो, इस समय तो निकायों की तरंग-यांत्रिकी विन्यासाकाशीय तरंग-प्रचरणों के द्वारा ही व्यक्त की जाती है और हम देखेंगे कि उसकी विधियों को सफलता भी मिली है। निकाय का क्वांटमीकरण करने के लिए यह मालूम किया जाता है कि ऊर्जा के किस मान के लिए (जो तरंग की आवृत्ति को h से गुणा करने से प्राप्त होता है) विन्यासाकाश में स्थावर ψ–तरंगों का अस्तित्व संभव है अथवा यों कहिए

* अंग्रेजी अनुवादकर्ता की टिप्पणी—जिन निकायों में सब कणिकाएँ एक ही प्रकार की हों उनमें कल्पित विन्यासाकाश के अनिवार्य उपयोग से अतिक्वांटमीकरण (Super-Quantisation) अथवा द्वितीय क्वांटमीकरण (Second Quantisation) के द्वारा छुटकारा मिल सकता है। यह विधि इस बात पर आश्रित है कि ऐसे निकाय के विकास में कणिकाओं की संख्या सदा पूर्ण की ही रहेगी। कल्पित आकाश का निरसन द्वि-साधन (Double-Solution) के उस नवीन सिद्धान्त की भी बड़ी सफलता समझी जायगी जिसका विवेचन परिच्छेद १० खंड ६ में किया गया था।

कि प्रचरण-समीकरण के इष्टमान[1] मालूम किये जाते हैं और इन क्वांटमित निकायों के लिए इष्टमानों के असंतत स्पैक्ट्रम[2] प्राप्त हो जाते हैं और इनके अनुरूप इष्ट फलनों[3] की भी एक पूरी संहति[4] प्राप्त हो जाती है और इसी प्रकार तरंग-यांत्रिकी के भौतिक निर्वचन का भी व्यापकीकरण तुरन्त ही हो जाता है। विन्यासाकाश के प्रत्येक विन्दु पर ψ—तरंग की तीव्रता इस बात की प्रायिकता को व्यक्त करेगी कि निकाय की कणिकाओं के स्थान-निर्णायक प्रयोग में उस निकाय का विन्यास वही निकले जो उस विन्दु द्वारा निरूपित हुआ हो। और इसी तरह ऊर्जा के इष्ट फलनों के रूप में तरंग फलन के स्पैक्ट्रमीय विघटन द्वारा जो संघटक प्राप्त होंगे उनकी आंशिक तीव्रताएँ यह व्यक्त करेंगी कि यथातथ-मापी प्रयोग से ऊर्जा का मान हैमिल्टोनियन[5] के विभिन्न इष्ट मानों के बराबर पाये जाने की प्रायिकताएँ कितनी-कितनी हैं। संक्षेप में प्रायिकता-मूलक निर्वचन के समस्त नियम ज्यों-के-त्यों बने रहेंगे। अधिक विस्तार में न जाकर हम यह भी कह देना चाहते हैं कि निकाय के गुरुत्व केन्द्र की परिभाषा भी हो सकती है और कीनिंग[6] के प्रमेय के सदृश शुद्ध यांत्रिकी[7] के चिरप्रतिष्ठित प्रमेयों के अनुरूपी प्रमेय भी तरंग-यांत्रिकी में विद्यमान हैं।

श्रोडिंगर की गवेषणाओं से निकायों की तरंग-यांत्रिकी का जो रूप हमें प्राप्त हुआ है वह आपेक्षिकीय नहीं है। वह न्यूटनीय निकाय-यांत्रिकी का ही तरंगीकरण[8] है, आइन्स्टाइन की निकाय-यांत्रिकी का नहीं, और इसका समुचित कारण यह है कि निकायों की आपेक्षिकीय यांत्रिकी का अभी तक निश्चित रूप से निर्माण हुआ ही नहीं। निकायों की गति के परिशुद्ध परिकलन के लिए आपेक्षिकीय यांत्रिकी की असमर्थता के कई कारण हैं, जिनमें विशेष उल्लेखनीय यह है कि आपेक्षिकता का सिद्धान्त दूरतः संपन्न तत्क्षणिक क्रिया[9] का अनिवार्यतः निषेध करता है। डिरैक की आपेक्षकीय तरंग-यांत्रिकी किसी ज्ञात बल-क्षेत्र में स्थित केवल अकेली कणिकाओं के लिए उपयोगी है। निकायों के लिए उसका व्यापकीकरण कठिन समस्या है जिसका पूर्ण हल प्राप्त करना अभी बहुत दूर की बात है।

खंड ४ में हम निकायों की तरंग-यांत्रिकी के कई सुन्दर उपयोगों पर विचार करेंगे। किन्तु उससे पहले उस महत्त्वपूर्ण निकाय का अध्ययन आवश्यक है जिसमें

1. Proper values 2. Discontinuous spectra 3. Proper functions 4. Set 5. Hamiltonian 6. Koenig 7. Rational Mechanics 8. Waving 9. Instantaneous action at a distance

नवीन यांत्रिकी की कुछ पूर्णतः लाक्षणिक परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। ऐसे निकाय की समस्त कणिकाएँ बिलकुल एक-सी होती हैं।

२. एक-सी कणिकाओं के निकाय और पॉली का नियम[1]

जिस विषय का विवेचन हम अब करेंगे उसमें उस सर्वथा नवीन, किन्तु आवश्यक धारणा का आधिपत्य है जिसका प्रादुर्भाव क्वांटम-सिद्धान्त में उस समय हुआ था जब सांख्यिकीय यांत्रिकी में क्रिया के क्वांटम का निवेशन वांछनीय हो गया था। हम खंड ५ में समझायेंगे कि यह निवेशन किस प्रकार किया गया था। किन्तु इस समय तो हम इतना ही बतायेंगे कि इससे कौन-सी धारणा का जन्म हुआ। पारमाणविक भौतिक विज्ञान में सदैव यह बात मान ली गयी थी कि एक ही जाति की दो कणिकाएँ (यथा दो इलैक्ट्रान) बिलकुल एकात्मक[2] होती हैं। फिर भी यह अभिन्नता इतनी पूर्ण नहीं मानी जाती थी कि उन दोनों एकात्मक कणिकाओं में विभेद—कम से कम विचार में भी—संभव ही न हो। इसी कारण से सांख्यिकीय परिकलनों में एक ही निकाय की ऐसी दो अवस्थाएँ भिन्न समझी जाती थीं जिनमें केवल इतना ही भेद हो कि उनमें एक ही जाति की दो कणिकाओं के कार्यों का पक्षान्तरण[3] हो गया हो। फलतः जब इलैक्ट्रानों द्वारा निर्मित किसी निकाय पर विचार किया जाता था तो निकाय की जिस सामूहिक अवस्था[4] में प्रथम इलैक्ट्रान की व्यक्तिगत अवस्था **क** हो तथा द्वितीय इलैक्ट्रान की व्यक्तिगत अवस्था **ख** हो, वह उस सामूहिक अवस्था से भिन्न समझी जाती थी जिसमें अन्य सब इलैक्ट्रानों की व्यक्तिगत[5] अवस्थाएँ तो ज्यों-की-त्यों रहें, किन्तु प्रथम इलैक्ट्रान की अवस्था **ख** हो जाय तथा द्वितीय की अवस्था **क** हो जाय। क्वांटम-सांख्यिकी के विकास ने एक ही निकाय में विद्यमान एक ही जाति की दो कणिकाओं में विभेद करने की संभावना का पूर्णतः निषेध कर दिया है और किसी निकाय की जिन दो अवस्थाओं में केवल दो एक-सी कणिकाओं के पक्षान्तरण का ही भेद हो उन्हें एकात्मक और अविभेद्य[6] स्वीकार कर लिया है। इस बात पर हम बाद में विचार करेंगे कि मूल-कणिकाओं में व्यक्तित्व[7] के इस अभाव का अर्थ क्या है। इस समय तो हम केवल इसके परिणामों पर ही विचार करेंगे।

निकायों की तरंग-यांत्रिकी में एक ही जाति की कणिकाओं के पक्षान्तरण के

1. Systems Containing Particles of the Same Nature. Pauli's Principle 2. Identical 3. Transposition 4. Collective state 5. Individual 6. Indistinguishable 7. Individuality

अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिणाम होते हैं। मान लीजिए कि किसी निकाय में समस्त कणिकाएँ एक ही जाति की हैं और मान लीजिए कि इस निकाय के संभाव्य तरंग-फलनों में से एक ψ है। परिभाषा के अनुसार यह तरंग-फलन दो कणिकाओं की अपेक्षा संमित[1] तब कहलाता है जब उन दोनों कणिकाओं के निर्देशांकों का पक्षान्तरण करने से भी उसके व्यंजक के मान में कोई परिवर्तन नहीं होता। विपरीत इसके यदि दो कणिकाओं के निर्देशांकों के पक्षान्तरण से उसके व्यंजक का मान तो न बदले, किन्तु केवल उसका चिह्न ही बदल जाय तो वह फलन दो कणिकाओं की अपेक्षा प्रति-संमित[2] कहलाता है। यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि सामान्यतः तरंग-फलन न तो संमित होता है और न प्रति-संमित। किन्तु एक ही जाति की दो कणिकाओं की विनिमयता[3] के द्वारा निम्नलिखित प्रमेय सिद्ध किया जा सकता है। "यदि किसी निकाय में कणिकाएँ एक ही जाति की हों तो सदैव कुछ तरंग-फलन ऐसे विद्यमान रहते हैं जो एक ही जाति की कणिकाओं के समस्त युग्मों की अपेक्षा या तो संमित होते हैं या प्रति-संमित।" निकाय की जिस अवस्था का तरंग-फलन संमित हो उसे हम "संमित अवस्था" कहेंगे और जिसका तरंग-फलन प्रति-संमित हो उसे हम "प्रति-संमित अवस्था" कहेंगे। "पारस्परिक-क्रिया-विभव[4] प्रत्येक कणिका-युग्म पर संमितत: अवलम्बित होते हैं" इस तथ्य के द्वारा एक दूसरा प्रमेय भी सिद्ध किया जा सकता है जो प्रथम प्रमेय की अपेक्षा कम महत्त्व का नहीं है। "किसी निकाय का संमित अवस्था से प्रति-संमित अवस्था में अथवा प्रति-संमित अवस्था से संमित अवस्था में संक्रमण[5] कराना संभव नहीं है।" दूसरे शब्दों में यह संभव नहीं है कि एक ही प्रकार की अवस्थाओं के समान ही विसदृश अवस्थाओं का भी रिट्ज़[6] के अर्थ में संयोजन[7] हो सके। इससे यह परिणाम निकलता है कि एक ओर तो संमित अवस्थाओं का समूह और दूसरी ओर प्रति-संमित अवस्थाओं का समूह एक दूसरे से सर्वथा पृथक् हैं और इन दोनों समूहों में किसी प्रकार का संपर्क संभव नहीं है। अतः तरंग-यांत्रिकी का इस नियम से मेल बैठ सकता है कि वास्तव जगत् में अमुक प्रकार की कणिकाओं की केवल संमित अवस्थाएँ और अमुक प्रकार की कणिकाओं की केवल प्रति-संमित अवस्थाएँ ही पायी जाती हैं क्योंकि काल के प्रारम्भ में जिस किसी अवस्था का अस्तित्व था वह अवस्था सदा वैसी ही बनी रही

1. Symmetrical 2. Anti-symmetric 3. Interchangeability 4. Interaction potentials 5. Transition 6. Ritz 7. Combination

है और सदा वैसी ही बनी रहेगी। यह नियम तरंग-यांत्रिकी का परिणाम नहीं है क्योंकि उसमें तो दोनों ही प्रकार की अवस्थाओं के लिए स्थान है। किन्तु इसका तरंग-यांत्रिकी से कोई विरोध भी नहीं है। अब हम यह स्पष्ट करेंगे कि पॉली को ऐसे नियम के अस्तित्व की कल्पना कम-से-कम इलैक्ट्रानों के लिए क्यों करनी पड़ी।

परमाणु की संरचना का अध्ययन करते समय हम चौथे परिच्छेद के चौथे खंड में ऊर्जा-स्तरों[1] की संतृप्ति[2] की घटना की ओर ध्यान आकर्षित कर चुके हैं और उसके मौलिक महत्त्व पर जोर भी दे चुके हैं क्योंकि तत्त्वों के अनुक्रम में परमाणु-संरचना के उत्तरोत्तर विकास पर और इन तत्त्वों के रासायनिक, प्राकाशिक तथा चुम्बकीय गुणों की समस्त विभिन्नताओं पर इसी घटना का आधिपत्य है। हम यह भी बता चुके हैं कि परमाणु में नये इलैक्ट्रानों के सम्मिलित होने से किस प्रकार ऊर्जा-स्तर उत्तरोत्तर संतृप्त होते जाते हैं। इस बात का आनुभविक निर्णय भी हो चुका है। इसका संक्षिप्त नियम स्टोनर[3] ने प्रस्तुत किया था। किन्तु प्रारम्भ में उसका सैद्धान्तिक समर्थन अच्छी तरह से नहीं हो सका था। किन्तु स्टोनर के इस नियम की कृपा से हमें यह ज्ञात हो गया है कि परमाणु का प्रत्येक ऊर्जा-स्तर इलैक्ट्रानों की किस महत्तम संख्या को ग्रहण कर सकता है। इन तथ्यों का रहस्य समझने के प्रयत्न में ही पॉली के मस्तिष्क में यह विचार उत्पन्न हुआ कि ऊर्जा-स्तरों की संतृप्ति का मूल कारण यह है कि दो इलैक्ट्रानों की क्वांटमित अवस्थाओं का पूर्णतः एक-सी होना असंभव है अर्थात् सर्वथा अभिन्न क्वांटम-संख्याओं के द्वारा दोनों इलैक्ट्रानों की अवस्थाओं का निरूपण संभव नहीं है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि यदि किसी एक क्वांटम-अवस्था में एक इलैक्ट्रान पहले से ही विद्यमान हो तो उसी अवस्था में अन्य किसी इलैक्ट्रान की उपस्थिति वर्जित है। यही कारण है कि इस नवीन भौतिक नियम को "अपवर्जन-नियम"[4] का नाम दे दिया गया। तरंग-यांत्रिकी की भाषा में पॉली का नियम निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है। "वास्तव जगत् में इलैक्ट्रान केवल प्रति-संमित अवस्थाओं में ही पाये जाते हैं।" हम देख ही चुके हैं कि ऐसी उक्ति नवीन यांत्रिकी के प्रतिकूल नहीं है। यह समझने के लिए कि अपवर्जन नियम के उपर्युक्त दोनों रूप सचमुच ही अभिन्न हैं, मान लीजिए कि किसी निकाय में दो इलैक्ट्रानों की व्यक्तिगत अवस्थाएँ बिलकुल एक-सी हैं। यदि द्वितीय रूप के अनुसार यह मान लिया जाय कि इस इलैक्ट्रान-युग्म की अपेक्षा तरंग-फलन

1. Energy-levels 2. Saturation 3. Stoner 4. Exclusion Principle

प्रति-संमित है तो दोनों इलैक्ट्रानों की क्रियाओं का पक्षान्तरण करने से फलन का चिह्न बदल जाना चाहिए। किन्तु दोनों इलैक्ट्रानों की व्यक्तिगत अवस्थाएँ एक-सी होने के कारण तरंग-फलन में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। फलतः चूंकि पक्षान्तरण से तरंग-फलन का चिह्न बदलना भी चाहिए और नहीं भी बदलना चाहिए, इसलिए अनिवार्यतः ही उस फलन का मान शून्य के बराबर होना चाहिए और नवीन यांत्रिकी में तरंग-फलन का मान शून्य होने का अर्थ यह है कि जिस स्थिति की कल्पना की गयी थी उसका अस्तित्व संभव ही नहीं है। अर्थात् दो इलैक्ट्रान कभी एक-सी व्यक्तिगत अवस्थाओं में रह ही नहीं सकते। इस प्रकार अपवर्जन नियम के द्वितीय रूप से ही हमें प्रथम रूप प्राप्त हो जाता है। इसका विलोम[1] प्रमेय भी आसानी से प्रमाणित किया जा सकता है।

अतः तरंग-यांत्रिकी में पॉली के अपवर्जन नियम का वैश्लेपिकीय रूप यह है कि इलैक्ट्रान-निकायों के लिए वे ही तरंग-फलन उपादेय[2] हैं जो समस्त इलैक्ट्रान-युग्मों की अपेक्षा प्रति-संमित हों। किन्तु इस नियम के उपयोग में यह स्मरण रखना आवश्यक है कि इलैक्ट्रान में नर्तन भी विद्यमान रहता है। अतः उसकी व्यक्तिगत अवस्था व्यक्त करनेवाला फलन केवल उसके निर्देशांकों का ही फलन नहीं होता, किन्तु वह उसके नर्तन के मान का भी फलन होता है और पॉली के नियमानुसार उपादेय फलन समस्त निर्देशांकों के अतिरिक्त नर्तन की अपेक्षा भी प्रति-संमित होते हैं। यह बात इस सिद्धान्त के गणितीय विकास के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, किन्तु हम उसका और अधिक विवेचन नहीं करेंगे।

पॉली के नियम में यह बड़ा गुण है कि वह ऊर्जा-स्तरों की संतृप्ति की उत्तम व्याख्या प्रस्तुत कर देता है। क्वांटम-संख्याओं के विभिन्न संचयों[3] के द्वारा निरूपित अनेक विभिन्न अवस्थाओं में ऊर्जा का मान बिलकुल बराबर हो सकता है और फलतः वे सब अवस्थाएँ एक ही ऊर्जा-स्तर में समाविष्ट होती हैं। इस तथ्य का उपयोग करके पॉली के नियम में से ही स्टोनर के नियम का भी सही निगमन[4] हो जाता है। अतः पॉली के नियमानुसार किसी ऊर्जा-स्तर के इलैक्ट्रानों की महत्तम संख्या मालूम करने के लिए इतना ही काफी है कि गिनकर हम यह देख लें कि उस ऊर्जा-स्तर के अन्तर्गत विभिन्न क्वांटम-अवस्थाओं की संख्या अधिक से अधिक कितनी हो सकती है, क्योंकि जब प्रत्येक क्वांटम अवस्था में एक-एक इलैक्ट्रान बैठ जाता है तभी उस ऊर्जा-स्तर

1. Inverse 2. Admissible 3. Combinations 4. Deduction

में इलैक्ट्रानों की संख्या महत्तम हो जाती है। इसी गणना से स्टोनर का नियम प्राप्त हो जाता है। निकायों की तरंग-यांत्रिकी के उपयोगों में पॉली के नियम का क्या मौलिक महत्त्व है और किस प्रकार इलैक्ट्रान निकायों के लिए वह फ़रमी-डिरैक सांख्यिकी[1] को जन्म देती है, इन विषयों पर हम बाद में विचार करेंगे।

यदि इलैक्ट्रानों की संभव अवस्थाएँ केवल प्रति-संमित ही होती हैं तो यह प्रश्न उठ सकता है कि सूक्ष्म-स्तरीय भौतिक विज्ञान की अन्य मूल[2] तथा यौगिक[3] कणिकाओं की अवस्थाएँ कैसी होती हैं। क्या पॉली का नियम उन पर भी लागू होता है? या इसके विपरीत क्या उनकी संभव अवस्थाएँ केवल संमित ही होती हैं? या दोनों ही प्रकार की अवस्थाएँ संभव हैं? यह तो निश्चित ही जान पड़ता है कि इस अंतिम विकल्प का अनुभव हमें कभी भी नहीं होता। प्रकृत जगत् में या तो केवल प्रति-संमित अवस्थाओं का या केवल संमित अवस्थाओं का अस्तित्व ही पाया जाता है। प्रति-संमित अवस्थावाली कणिकाओं के वर्ग में इलैक्ट्रान तथा कई परमाणु-नाभिक[4] सम्मिलित हैं। प्रत्येक क्वांटम-अवस्था में इस प्रकार की कणिकाएँ एक से अधिक नहीं रह सकतीं। अतः जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं इनके लिए फ़रमी-डिरैक की सांख्यिकी ही अनुप्रयोज्य होती है। संमित अवस्थावाली कणिकाओं के वर्ग में फ़ोटान, आलफ़ा-कण और अन्य परमाणु-नाभिक सम्मिलित हैं। इनके लिए एक ही क्वांटम-अवस्था में अनेक कणिकाओं के एकत्र हो जाने में कोई बाधा नहीं है क्योंकि संमित फलन में दो एक-सी कणिकाओं के पक्षान्तरण से कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। अतः इन संमित फलनवाली कणिकाओं के लिए जो सांख्यिकी अनुप्रयोज्य होती है वह बोस-आइन्स्टाइन सांख्यिकी[5] कहलाती है। फ़ोटानों के लिए प्लांक का नियम इसी सांख्यिकी का परिणाम है। व्यापक रूप से ऐसा जान पड़ता है कि जिन कणिकाओं का नर्तन-घूर्ण[6] नर्तन के मात्रक $\frac{h}{4\pi}$ का विषम अपवर्त्य[7] होता है वे पॉली के नियम का पालन करती हैं और जिन कणिकाओं का नर्तन-घूर्ण शून्य होता है अथवा $\frac{h}{4\pi}$ का सम-अपवर्त्य[8] होता है वे बोस-आइन्स्टाइन सांख्यिकी के अधीन होती हैं। यह अर्ध-आनुभविक नियम महत्त्वपूर्ण है। नर्तन और सांख्यिकी के प्रश्नों का पट्टीवाले-

1. Fermi-Dirac Statistics 2. Fundamental 3. Complex 4. Atomic nuclii 5. Bose-Einstein Statistics 6. Spin moment 7. Odd multiple 8. Even multiple

स्पैक्ट्रमों[1] के अध्ययन में तथा पारमाणविक नाभिकों की संरचना में महत्त्वपूर्ण स्थान है। अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होने पर भी इन बातों का विवेचन यहाँ नहीं किया जा सकता।

पॉली का नियम अपने अधीन इलैक्ट्रानों तथा अन्य कणिकाओं के एक अद्भुत गुण को व्यक्त करता है। वास्तव में आज भी यह समझना असंभव है कि दो एक-सी कणिकाओं में से एक कणिका दूसरी को अपनी ही जैसी अवस्था प्राप्त करने से कैसे रोक सकती है। यह पारस्परिक क्रिया चिरप्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान की क्रियाओं से सर्वथा भिन्न है और इसके भौतिक रहस्य का अभी तक हमें पता नहीं लग सका है। आगामी काल के सैद्धान्तिक भौतिक विज्ञान के सामने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, किन्तु बहुत ही कठिन समस्या यह है कि अपवर्जन-नियम के भौतिक कारण को खोजने में उसे सफलता कैसे प्राप्त हो।

यह समझने के लिए कि इस प्रसंग में हम प्राचीन धारणाओं से कितनी दूर पहुँच गये हैं, ऐसी गैस पर विचार करिए जिसकी समस्त कणिकाएँ एक ही जाति की हों और पॉली के नियम का पालन करनेवाली हों—यथा, इलैक्ट्रान-गैस। अपवर्जन-नियम के अनुसार ऐसी गैस में यह असंभव है कि दो इलैक्ट्रान एक ही सरल-रेखात्मक अचर वेगवाली[2] अवस्था में विद्यमान हों क्योंकि यहाँ क्वांटमित अवस्थाएँ वही होती हैं जिनमें गति सरल-रेखात्मक तथा अचर वेगवाली हो। चिरप्रतिष्ठित धारणाओं के अनुसार इसका अर्थ यह होगा कि जिस पात्र में यह गैस भरी है उसके भीतर के किसी एक विन्दु पर अवस्थित कणिका किसी भी अन्य कणिका को ठीक अपनी जैसी अवस्था प्राप्त नहीं करने देगी। यह बात बिलकुल विरुद्धाभासी[3] है क्योंकि गैस के पात्र को हम जितना चाहें उतना बड़ा मान सकते हैं। फलतः उन दोनों कणिकाओं की दूरी भी जितनी चाहें उतनी बड़ी समझी जा सकती है। किन्तु इस विरुद्धाभास का हाइज़नबर्ग के अनिश्चितता के अनुबन्धों से घनिष्ठ सम्बन्ध है और यदि उनको मान लिया जाय तो इसका निराकरण हो जाता है। बात यह है कि कणिकाओं की सरल-रेखात्मक और अचर वेगवाली गतियों के अनुरूप ही उनकी सुनिर्णीत ऊर्जाएँ होती हैं। अतः अनिश्चितता के अनुबन्ध दो कणिकाओं की गत्यात्मक अवस्थाओं और उनके स्थानों की यौगपदिक चर्चा का निषेध करते हैं। कणिकाओं की ऊर्जात्मक अवस्थाओं को सुनिर्णीत मानने से ही उनके स्थान सर्वथा अनिश्चित हो जाते हैं और तब उनकी पारस्परिक दूरी की चर्चा भी असंभव हो जाती है। इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाता

1. Band spectra 2. Uniform rectilinear motion 3. Paradoxical

है कि अपवर्जन-नियम का भौतिक निर्वचन चिरप्रतिष्ठित प्रतिरूपों की परिधि से बाहर ही ढूंढ़ना पड़ेगा।

३. निकायों की तरंग-यांत्रिकी के उपयोग

पॉली के नियमानुसार परिवर्धित तथा नर्तन की धारणा द्वारा संशोधित निकाय-तरंग-यांत्रिकी के उपयोगों से बहुत-सी विलक्षण सफलताएँ प्राप्त हुई हैं। हीलियम के स्पैक्ट्रम की व्याख्या इन्हीं में से एक है। यद्यपि बोह्र के सिद्धान्त द्वारा आयनित हीलियम[1] के स्पैक्ट्रम की व्याख्या प्रारम्भ में ही हो गयी थी (क्योंकि आयनित हीलियम भी एक इलक्ट्रानवाले परमाणु-निकायों की सूची में आ जाता है) तथापि अनाविष्ट[2] हीलियम का स्पैक्ट्रम प्रहेलिका ही बना रहा। अनाविष्ट हीलियम की रेखाएँ वास्तव में दो सर्वथा भिन्न वर्गों में विभाजित हो सकती हैं और इन दोनों वर्गों के आनुषंगिक स्पैक्ट्रमीय पद कम-से-कम प्रथम सन्निकटन तक तो संयोजित हो नहीं सकते। इन सर्वथा स्वतंत्र रेखाओं के समुदायों को दो पृथक् नाम भी दे दिये गये थे—आर्थो-हीलियम[3] स्पैक्ट्रम तथा पार-हीलियम[4] स्पैक्ट्रम, और दीर्घकाल तक यही धारणा बनी रही कि हीलियम परमाणु ही दो विभिन्न प्रकार के होते हैं और दोनों भिन्न-भिन्न प्रकार के स्पैक्ट्रम उत्सर्जित करते हैं। किन्तु अन्त में यह स्वीकार करना संभव हो गया कि वास्तव में आर्थो-हीलियम तथा पार-हीलियम अलग-अलग नहीं हैं। हीलियम का एक ही परमाणु परिस्थितियों के अनुसार आर्थो-हीलियम स्पैक्ट्रम का अथवा पार-हीलियम स्पैक्ट्रम का उत्सर्जन कर सकता है। एक विख्यात लेख में हाइज़नबर्ग ने इस प्रहेलिका के रहस्य का उद्घाटन कर दिया था। अनाविष्ट हीलियम परमाणु के दोनों ग्रहीय इलैक्ट्रान पॉली के नियम के अधीन होते हैं। इस कारण इस परमाणु के तरंग-फलन दोनों इलैक्ट्रानों के समस्त निर्देशांकों तथा नर्तनों की अपेक्षा प्रति-संमित होने चाहिए। किन्तु ऐसा दो प्रकार से हो सकता है। यह भी हो सकता है कि तरंग-फलन निर्देशांकों की अपेक्षा तो संमित हों, किन्तु नर्तनों की अपेक्षा प्रति-संमित हों और यह भी हो सकता है कि वे निर्देशांकों की अपेक्षा तो प्रति-संमित हों और नर्तनों की अपेक्षा संमित हों। अतः तरंग-फलन दो जातियों के होंगे। फलतः स्पैक्ट्रम पद भी दो विभिन्न जातियों के होंगे, और एक ही जाति के न होने के कारण उनका संयोजन भी कम-से-कम प्रथम सन्निकटन तक तो नहीं हो सकेगा। अतः हीलियम स्पैक्ट्रम के दो स्वतंत्र भागों में विभाजित होने की पूर्णतः

1. Ionised helium 2. Neutral 3. Ortho-helium 4. Par-helium

संतोषजनक व्याख्या प्राप्त करने के लिए इतना ही यथेष्ट है कि हम एक जाति के पदों को आर्थो-हीलियम के पद समझ लें और दूसरी जाति के पदों को पार-हीलियम के। इस निर्वचन के द्वारा हाइज़नबर्ग को आर्थो-हीलियम तथा पार-हीलियम स्पैक्ट्रमों की कई विचित्रताओं को समझने में सफलता मिल गयी—विशेषकर यह समझने में कि पार-हीलियम की रेखाएँ तो सरल अथवा एकक[1] होती हैं, किन्तु आर्थो-हीलियम की तीन-तीन रेखाओं के त्रिक[2] बन जाते हैं। हाइज़नबर्ग के सिद्धान्त के द्वारा केवल इस छोटे-से तथ्य की प्रागुक्ति ही पॉली के नियम का अच्छा सत्यापन है क्योंकि दोनों प्रकार की रेखाओं की सूक्ष्म-रचनाओं में यह विभेद पॉली के नियम का ही परिणाम है। इस नियम के अभाव में बिलकुल ही दूसरी प्रागुक्तियाँ प्राप्त होतीं और वे प्रयोगों द्वारा समर्थित नहीं हो सकती थीं।

निकाय-तरंग-यांत्रिकी का दूसरा उल्लेखनीय उपयोग हुआ है हाइड्रोजन अणु के सिद्धान्त में और व्यापक रूप से समस्त सम-ध्रुवी[3] अणुओं के सिद्धान्त में। जिस अणु के परमाणुओं के वैद्युत आकर्षण विभिन्न प्रकार के हों अर्थात् जो विषम-ध्रुवी[4] हों उसके परमाणुओं को जोड़नेवाले बन्धन[5] का कारण चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्त के द्वारा भी कुछ-कुछ समझ में आ जाता है। यहाँ तो वस्तुतः यह कल्पना भी की जा सकती है ऐसे अणु के विभिन्न परमाणु, अपने इलैक्ट्रानों का पारस्परिक आदान-प्रदान करके, आयनों[6] में परिणत हो जाते हैं और इसलिए यह भी समझा जा सकता है कि आणविक रचना के स्थायित्व का कारण उस अणु के संघटक आयनों के बीच का कूलम्बीय बल ही है। किन्तु सम-ध्रुवी अणुओं की समस्या (उदाहरण के लिए दो बिलकुल एक-से परमाणुओं से बने हुए अणुओं की समस्या) पुराने भौतिक विज्ञान के लिए बड़ी उलझन में डालनेवाली समस्या थी क्योंकि कोई भी ऐसा कारण नहीं है कि जिससे एक ही प्रकार की वैद्युत बन्धुता[7] वाले परमाणु विभिन्न चिह्नीय आयनों में परिणत हो जायें। फलतः यह समझ में नहीं आता कि इन अनाविष्ट परमाणुओं के बीच में किस प्रकार का बल बन्धन का काम करता है। और जिन बलों की कल्पना की भी जा सकती है वे सब इस काम के लिए अत्यन्त क्षीण होते हैं। तरंग-यांत्रिकी की यह कोई छोटी-मोटी विजय नहीं है कि उसने "विनिमय-ऊर्जाओं"[8] के निवेशन के द्वारा सम-ध्रुवीय बन्धनों के रहस्य का उद्घाटन कर दिया। इन रहस्यमय शब्दों का अर्थ यह है कि जब हम तरंग-यांत्रिकी के द्वारा एक-सी कणिकाओं के निकाय के विकास की

1. Singlets 2. Triplets 3. Homopolar 4. Heteropolar 5. Bond 6. Ions 7. Affinity 8. Exchange energies

समीक्षा करते हैं तब कणिकाओं की ज्ञात पारस्परिक क्रियाओं के अस्तित्व को व्यक्त करनेवाले पदों के साथ-साथ उस निकाय की ऊर्जा के व्यंजक में कुछ नवीन प्रकार के पद भी प्रकट हो जाते हैं, जिनका सम्बन्ध उन एक-सी कणिकाओं के पक्षान्तरण[1] की संभावना से होता है। इन्हीं पदों का नाम "विनिमय-ऊर्जा" रखा गया है। इनका सम्बन्ध उन सर्वथा नवीन प्रकार के बलों से है जिनका चिरप्रतिष्ठित विधि से किसी भी प्रकार का दिष्ट-राशीय[2] निरूपण संभव नहीं है, किन्तु जिनके परिमाण बहुत बड़े हो सकते हैं। ये नये बल नवीन यांत्रिकी के विधान के अनिवार्य परिणाम हैं, किन्तु इनका भौतिक निरूपण (इस शब्द के प्राचीन अर्थ में) बिलकुल ही असंभव मालूम देता है। एक बार फिर हमारे समक्ष ऐसा तथ्य उपस्थित हो जाता है जो समस्त चिरप्रतिष्ठित धारणाओं की सीमा से बाहर है और जो यह प्रकट कर देता है कि त्रिविमितीय संतत आकाश में भौतिक सत्ताओं के अवस्थापन[3] की हमारी साधारण विधि कितनी भ्रान्तिपूर्ण है। यहाँ यह बता देना बड़ा शिक्षाप्रद होगा कि विनिमय-ऊर्जा का अस्तित्व केवल तभी होगा जब आकाश के एक ही प्रदेश में दो एक-सी कणिकाओं के पाये जाने की प्रायिकता शून्य न हो। दूसरे शब्दों में सामान्यतः तरंग-यांत्रिकी में कणिकाओं का स्थान तो निर्दिष्ट नहीं किया जा सकता, किन्तु उनका कुछ संभाव्य घनत्व-वितरण[4] निर्धारित हो सकता है और विनिमय ऊर्जा का अस्तित्व केवल उसी अवस्था में संभव है जब दो एक-सी कणिकाओं के घनत्व-वितरण अतिव्याप्त[5] हों। इस बात से विनिमय-ऊर्जा का और आकाश में कणिकाओं के अवस्थापन की असंभवता का सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है।

विनिमय-ऊर्जा के इन अत्यन्त रोचक गुणों का विवेचन छोड़कर अब हम यह बताना चाहते हैं कि सम-ध्रुवी अणुओं के निर्माण की व्याख्या यह किस प्रकार करती है। ऐसे अणुओं का सबसे सरल उदाहरण हाइड्रोजन का अणु है जिसके दोनों परमाणुओं में एक-एक इलैक्ट्रान होता है। जब दो दूरस्थ हाइड्रोजन परमाणु एक दूसरे के निकट आ जाते हैं, तब उनका एक यांत्रिक निकाय बन जाता है जिसमें दो इलैक्ट्रान होते हैं। अतः इन दोनों इलैक्ट्रानों के बीच में विनिमय-ऊर्जा का प्रादुर्भाव हो जाता है। पॉली के नियम का तथा नर्तन का उपयोग करके तरंग-यांत्रिकी की प्रक्रियाओं से इस विनिमय-ऊर्जा का परिकलन हो सकता है। हाइटलर तथा लन्डन[6] ने यह परिकलन किया

1. Transposition 2. Vectorial 3. Localisation 4. Density-distribution 5. Overlapping 6. Heitler and London

था। उनके परिकलन का परिणाम यह निकला कि यदि दोनों इलैक्ट्रानों के नर्तन की अभिदिशा[1] एक ही हो तब तो विनिमय-ऊर्जा ऐसी होती है जिससे प्रकट होता है कि दोनों परमाणुओं में पारस्परिक प्रतिकर्षण[2] है। अतः अणु बन ही नहीं सकता, किन्तु इसके विपरीत, यदि नर्तनों की अभिदिशाएँ विपरीत हों तो विनिमय-ऊर्जा ऐसी होती है जो प्रकट करती है कि परमाणुओं में आकर्षण[3] होता है, किन्तु यदि वे अधिक निकट आ जायें तो यह आकर्षण बदलकर प्रतिकर्षण हो जाता है। अतः इस दशा में स्थायी अणु बनने की प्रवृत्ति होती है। यह सिद्धान्त हाइड्रोजन अणु के निर्माण और उसके गुणों की बहुत अच्छी व्याख्या कर देता है। इसके सारभाग को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है। दोनों हाइड्रोजन परमाणुओं के इलैक्ट्रानों में यह क्षमता है कि उनका ऐसा युग्म बन जाय जिसमें नर्तन विपरीत अभिदिशाओंवाले हों। ऐसे युग्म में स्थायित्व का गुण बहुत अधिक मात्रा में होता है और यही दोनों परमाणुओं के बीच में बन्धन का काम करता है और उन्हें एक ही अणु में युग्मित रखता है। इस रूप में व्यक्त होने से समस्त द्वि-परमाणुक अणुओं के और बहु-परमाणुक अणुओं के संघटन के लिए भी इसी व्याख्या का व्यापकीकरण हो सकता है। उदाहरण के लिए किसी भी द्वि-परमाणुक अणु को लीजिए। जिन दो परमाणुओं से यह अणु बन सकता है उनमें बहुत से इलैक्ट्रान होंगे। इनमें से प्रत्येक परमाणु में कुछ इलैक्ट्रानों के युग्म तो ऐसे होंगे जिनके दोनों इलैक्ट्रानों की ऊर्जा तो बराबर होगी, किन्तु नर्तन विपरीत अभिदिशावाले होंगे। किन्तु थोड़े से इलैक्ट्रान ऐसे भी होंगे जो इस प्रकार युग्मित न हों। इन अ-युग्मित इलैक्ट्रानों का परिहासमय नाम "अविवाहित इलैक्ट्रान"[4] है और इनमें यह प्रवृत्ति होती है कि यदि अवसर मिले तो किसी दूसरे परमाणु के इलैक्ट्रान से मिलकर ये अपना जोड़ा बना लेते हैं। परिकलन से मालूम होता है कि अनुकूल परिस्थितियों में दो परमाणुओं के पास-पास आने से ऐसा अणु बन जाता है जिसमें दोनों परमाणुओं के कम-से-कम थोड़े से अविवाहित इलैक्ट्रान तो परस्पर युग्मित हो जाते हैं। ऐसे जोड़ों के बनने से ही दोनों परमाणुओं के बीच में आणविक बन्धन की सृष्टि हो जाती है। स्पष्टतः ही इस व्याख्या का व्यापकीकरण दो से अधिक परमाणुओंवाले अणुओं के लिए भी हो सकता है।

विपरीत नर्तनोंवाले इलैक्ट्रानों के जोड़ों की सृष्टि के द्वारा अणुओं के निर्माण की व्याख्या से ही हमें संयोजकता[5] नामक रसायन-विज्ञान की अत्यन्त मौलिक धारणा

1. Sense 2. Repulsion 3. Attraction 4. Bachelor electrons 5. Valency

का भी निर्वचन प्राप्त हो जाता है। व्यापक रूप में हम यह कह सकते हैं कि यदि किसी परमाणु की साधारण संरचना में अविवाहित इलैक्ट्रानों की संख्या n हो तो उसकी रासायनिक संयोजकता भी n के बराबर होगी। ऐसा परमाणु n हाइड्रोजन परमाणुओं से संयोजित होकर अणु बना सकता है क्योंकि उसका प्रत्येक अविवाहित इलैक्ट्रान एक हाइड्रोजन परमाणु के इलैक्ट्रान के साथ युग्मित हो सकता है। अतः ऐसा परमाणु n—संयोजक होगा—कम-से-कम उसकी महत्तम संयोजकता n होगी। इससे प्रकट होता है कि रासायनिक संयोजकता का अस्तित्व दो इलैक्ट्रानों की विनिमय-ऊर्जा से सम्बन्धित होता है और इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि अन्य प्रकार के बलों के समान संयोजक-बलों का निरूपण किसी भी दिष्टीय[1] व्यवस्था के द्वारा संतोषजनक क्यों नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त युग्मित हो जाने पर दोनों इलैक्ट्रान एक प्रकार से उदासीन हो जाते हैं और फिर आणविक संयोजन में इनसे कोई सहायता नहीं मिलती। इस तथ्य से संयोजकता-संतृप्ति की भी व्याख्या हो जाती है। जब तक संयोजकता का निरूपण पुरानी तरह के बलों के द्वारा करने का प्रयत्न होता रहा तब तक यह संतृप्ति बिलकुल ही बोध-गम्य नहीं हो सकी थी। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि तरंग-यांत्रिकी पर आधारित संयोजकता का यह नवीन सिद्धान्त कितना लाभदायक और बौद्धिक संतोष देनेवाला है।

किन्तु यद्यपि संयोजकता के सिद्धान्त का यह नवीन आधार अब असंदिग्ध जान पड़ता है तथापि इस सिद्धान्त से सम्बद्ध अनेक तथ्यों की (यथा बहु-संयोजकता[2] अथवा दिष्ट-संयोजकता[3], त्रिविमितीय-रसायन[4], स्वतंत्र बन्धन[5] आदि की) विस्तृत व्याख्या प्राप्त करने के लिए अभी कड़े परिश्रम की आवश्यकता है। यह काम अत्यन्त अध्यवसायपूर्वक प्रारम्भ हो चुका है, किन्तु यह गणितीय-रसायन[6] बड़ा कठिन विज्ञान है और उसे पूर्ण बनाने के लिए अभी बहुत परिश्रम करना पड़ेगा। अभी तक तो हाइड्रोजन-अणु के समान सरल प्रकार के अणुओं के अतिरिक्त अन्य अणुओं के इष्ट-मानों तथा इष्ट-फलनों का स्पष्ट परिकलन ही संभव नहीं हुआ है। जिन तरंग-फलनों के व्यंजक लिखने में हम असमर्थ हैं उनका संमिति के गुण के अनुसार वर्गीकरण करके और उनके इष्ट-मानों को गिनकर ही अभी तो संतोष करना पड़ेगा। इस समय तो हमें संघ-सिद्धान्त[7] की अत्यन्त व्यापक विधियों का ही उपयोग करना पड़ेगा। यह सिद्धान्त जिससे भौतिकज्ञ अभी तक अधिक परिचित नहीं थे, तरंग-यांत्रिकी की इस

1. Vectorial 2. Multiple valency 3. Directed valency 4. Stereo-Chemistry 5. Free binding 6. Mathematical Chemistry 7. Group-theory

शाखा में अनिवार्य हो गया है और उसकी सहायता से अत्यन्त शीघ्रता तथा सुन्दरतापूर्वक श्रेष्ठ और अत्यन्त व्यापक परिणाम निकल आये हैं। किन्तु जो सैद्धान्तिक भौतिकज्ञ इस कठिन विधि का उपयोग करना जानते हैं, उन्हें रसायन-विज्ञान के बहुसंख्यक जटिल मौलिक तथ्यों का अध्ययन करने का अवकाश ही नहीं मिला है। अतः जो परिणाम प्राप्त हो गये हैं उन्हें पूर्णता प्रदान करने के लिए ऐसे भौतिकज्ञों का रसायनज्ञों के साथ घनिष्ट सहयोग स्थापित करने की नितांत आवश्यकता है। जो भी हो, आज भी रसायन-विज्ञान के कई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नियमों के रहस्य का उद्घाटन कर देने का श्रेय सबसे अधिक इस नवीन यांत्रिकी को ही दिया जा सकता है।

४. क्वांटम-सांख्यिकी[1]

इस नवीन यांत्रिकी के विकास का प्रभाव बोल्ट्ज़मान तथा गिब्स[2] की चिरप्रतिष्ठित सांख्यिकीय यांत्रिकी पर भी पड़ना अनिवार्य ही था। इस सांख्यिकी को स्थूल-स्तरीय भौतिक विज्ञान में प्रचुर सफलता मिल चुकी थी। यहाँ हम इस बात की विस्तृत चर्चा नहीं कर सकते कि क्रिया के क्वांटम के प्रादुर्भाव ने सांख्यिकीय यांत्रिकी के मूल आधारों में कितना परिवर्तन कर दिया है। हम केवल इतना ही कर सकते हैं कि तरंग-यांत्रिकी द्वारा प्रस्तुत प्रतिरूपों की सहायता से आदर्श गैस[3] पर विचार करके इस परिवर्तन का कुछ आभास मात्र दे दें। आदर्श गैस में टक्करों को छोड़कर शेप समय में परमाणुओं की अवस्थाएँ ऐसी होती हैं जिनमें उनकी गति सरल-रेखात्मक तथा अचर वेगवाली होती है। चिरप्रतिष्ठित सांख्यिकीय यांत्रिकी में गति की इन अवस्थाओं की परम्परा संतत मानी जाती है क्योंकि वेग की समस्त दिशाएँ और उसके समस्त मान समान रूप से संभाव्य होते हैं। बोल्ट्ज़मान और गिब्स की विधि तत्त्वतः यही है कि ऊर्जा के किसी विशेप मान के लिए गति की इन विभिन्न अवस्थाओं में गैस-परमाणुओं के संभव वितरणों की गिनती करके यह पता लगा लिया जाय कि सबसे अधिक प्रायिकता किस वितरण की है। जिस समय परमाणु की गति के साथ किसी तरंग-प्रचरण की आनुपंगिकता स्थापित करके क्रिया के क्वांटम का निवेशन किया गया था (यथा तरंग-यांत्रिकी में) तब यह स्थिति बदल गयी थी क्योंकि किसी अचल पात्र में भरी होने के कारण तरंग-यांत्रिकी में, क्वांटमीकरण की मूल धारणा के अनुसार, उस गैस में केवल उन्हीं अप्रगामी तरंगों का भौतिक अस्तित्व संभव हो सकता है जो पात्र के

1. Quantum Statistics 2. Boltzmann and Gibbs 3. Perfect gas

विस्तार की अपेक्षा अनुनादी[1] हों। इसलिए पहले तो इन स्थावर अवस्थाओं की संख्या की गणना करना आवश्यक होगा और तब पूर्ण-ऊर्जा के किसी भी ज्ञात मान के लिए इन अवस्थाओं में परमाणुओं के संभव वितरण का हिसाब लगाना पड़ेगा। स्थूल मापदंडीय पात्र के लिए (और समस्त व्यवहारोपयोगी पात्र वास्तव में केवल इसी प्रकार के हो सकते हैं) प्लांक के नियतांक की स्वल्पता के कारण इन स्थावर अवस्थाओं की परम्परा असंतत तो होती है, किन्तु अत्यन्त स्वल्पान्तरालित[2] भी होती है। इसलिए हम यह विश्वास कर सकते हैं कि हमारे प्रेक्षण में सब कुछ ऐसा ही मालूम देता है मानो यह परम्परा संतत ही हो। सांख्यिकीय यांत्रिकी के उपयोग की उचितता का यही कारण है। इस विश्वास में बहुत सचाई है और पुरानी सांख्यिकीय विधियों की सफलता का रहस्य भी इसी से समझ में आ जाता है। फिर भी इस स्थूल-मापदंडीय स्तर पर भी क्रिया के क्वांटम के निवेशन के कुछ ऐसे विचित्र परिणाम प्रकट हुए हैं जिनका सत्यापन भी संभव है। इनमें प्रमुख परिणाम तो यह है कि इसके द्वारा ऐन्ट्रोपी का नियतांक[3] निर्णीत हो सका है। चिरप्रतिष्ठित सांख्यिकीय यांत्रिकी में यह नियतांक अनन्त माना जाता था। यह बात बड़ी विचित्र मालूम देती थी। किन्तु अब हम जान गये हैं कि इसका कारण यही था कि भौतिक जगत् के स्थायित्व के लिए क्रिया का जो क्वांटम अपरित्याज्य[4] है, प्रमादवश उसी की उपेक्षा की गयी थी। कुछ लोगों ने इस कठिनाई से यह कहकर बचना चाहा था कि ऊष्मा-गतिकी[5] में ऐंट्रोपी का नियतांक मनमाना[6] होने के कारण उसे अनन्त मान लेने में भी कोई हानि नहीं है। किन्तु क्वांटम-सिद्धान्त ने ऐंट्रोपी के मान को परिमित[7] बना दिया और प्लांक के नियतांक के फलन के रूप में उसका परिकलन भी संभव कर दिया, और तब मालूम पड़ा कि किसी वाष्प और उसके संघनित[8] के सन्तुलन के पूर्ण परिकलन में ऐंट्रोपी के नियतांक का प्रभावशाली स्थान होता है और इसी बात से इस नियतांक के क्वांटम-सिद्धान्त द्वारा प्राप्त मान का पारिमाणिक सत्यापन भी संभव हो गया है।

किन्तु सांख्यिकीय यांत्रिकी के क्वांटम-रूप के पूर्ण विकास के लिए विभिन्न संभाव्य क्वांटम-अवस्थाओं में उस निकाय के परमाणुओं अथवा अन्य अवयवों के विभिन्न वितरणों की संख्या का परिकलन आवश्यक है और यह प्रश्न उठते ही हमें यह भी ध्यान में रखना पड़ेगा कि इसी परिच्छेद के खंड २ में जो बातें बतायी गयी थीं उनका इस

1. Resonant 2. Closely spaced 3. Constant of entropy 4. Indispensable 5. Thermo-dynamics 6. Arbitrary 7. Finite 8. Condensate

परिकलन पर अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। सबसे पहले तो हम यह देख ही चुके हैं कि एक ही जाति की दो कणिकाओं की एकात्मकता हमें बाध्य करती है कि जो दो वितरण ऐसी कणिकाओं के पक्षान्तरण[1] द्वारा प्राप्त होंगे उनको भी हम अभिन्न ही समझें। वितरणों के गिनने की इस नवीन विधि का उपयोग पुरानी सांख्यिकीय यांत्रिकी में भी हो सकता था क्योंकि यह कोई क्वांटमीय धारणा नहीं है। और इससे कई परिणाम ऐसे निकले भी थे जो बोल्ट्ज़मान-गिब्स की सांख्यिकी के परिणामों से सर्वथा भिन्न थे। किन्तु इससे कुछ और परिणाम भी निकलते हैं। इन वितरणों के परिकलन में हमें इस बात का भी ख़याल रखना पड़ेगा कि हमारे निकाय की कणिकाएँ पॉली के नियम का पालन करती हैं या नहीं अर्थात् हमें यह स्मरण रखना पड़ेगा कि यदि उनके तरंग-फलन आवश्यक रूप से प्रति-संमित हों तब तो प्रत्येक अवस्था में अधिक-से-अधिक एक ही कणिका रह सकती है, किन्तु इसके विपरीत यदि वे पॉली के नियम का पालन नहीं करती हों तो हमें विदित ही है कि उनके तरंग-फलन अवश्य ही संमित होंगे और तब प्रत्येक संभव अवस्था में कणिकाओं की संख्या को सीमित रखने का कोई भी कारण नहीं हो सकता। इन दोनों स्थितियों में वितरणों की संख्या बिलकुल अलग-अलग निकलेगी। पहली स्थिति में जिस परिकलन-विधि का उपयोग होगा वह फ़रमी-डिरैक की सांख्यिकी[2] के नाम से विख्यात है, किन्तु उसे हम 'पॉली की सांख्यिकी' भी कह सकते हैं क्योंकि उसका अस्तित्व अपवर्जन नियम में प्रच्छन्न रूप से निहित है। दूसरी स्थिति के लिए उपयोगी परिकलन-विधि बोस-आइन्स्टाइन सांख्यिकी[3] कहलाती है और यह तरंग-यांत्रिकी सम्बन्धी प्रारम्भिक गवेषणाओं में ही संभाव्य रूप से निहित है।

यदि h का मान घटकर शून्य के नजदीक पहुँच जाय तो इन दोनों नवीन सांख्यिकियों का चिरप्रतिष्ठित सांख्यिकी से अनन्त-स्पर्शी तादात्म्य हो जाता है। यह प्रागुक्ति तो पहले से ही की जा सकती थी। यदि ऊष्मा-गतिकी का निर्माण इन दोनों सांख्यिकियों के अनुसार किया जाय तो हमें दो प्रकार की ऊष्मा-गतिकियाँ प्राप्त हो जायेंगी जिनमें बहुत ही थोड़ा-सा फर्क होगा। किन्तु यदि h अत्यन्त स्वल्प हो तो ये दोनों भी चिरप्रतिष्ठित ऊष्मागतिकी से बिलकुल मिल जायेंगी। इन विभिन्न ऊष्मा-गतिकियों के द्वारा आदर्श-गैस के नियमों का निगमन करने से हमें ऐसे नियम प्राप्त होते हैं जिनमें चिरप्रतिष्ठित नियमों का व्यतिक्रम[4] विपरीत दिशाओं में होता है। उदाहरण के लिए एक सांख्यिकी के अनुसार तो गैस की संपीड्यता[5] मेरियट-गे-लूसैक[6] के नियम

1. Transposition 2. Fermi-Dirac Statistics 3. Bose-Einstein Statistics 4. Departure 5. Compressibility 6. Mariotte-Gay-Lussac

द्वारा निर्दिष्ट मान की अपेक्षा अधिक निकलेगी, किन्तु दूसरी के अनुसार कम। किन्तु दुर्भाग्यवश, जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, सामान्य परिस्थितियों में गैस-नियमों के ये सांख्यिकीय व्यतिक्रम अत्यन्त स्वल्प होते हैं। इस कारण इनका पता लगाना असंभव है और यह असंभवता इस कारण और भी अधिक बढ़ जाती है कि वास्तविक गैसें आदर्श गैसें नहीं होतीं और मेरियट-गे-लूसैक के नियम में जो व्यतिक्रम अन्य कारणों से उत्पन्न होते हैं (यथा अणुओं की पारस्परिक क्रिया तथा उनके परिमित आयतन आदि कारणों से), वे सांख्यिकी के प्रभाव से उत्पन्न व्यतिक्रम को ढक लेते हैं। अतः वास्तविक गैसों के अध्ययन से नवीन सांख्यिकी का सत्यापन नहीं किया जा सकता। किन्तु सौभाग्य से दोनों ही सांख्यिकियों का एक-एक अनुप्रयोग ऐसा है जिससे उनकी यथार्थता प्रमाणित हो सकती है। बोस-आइन्स्टाइन की सांख्यिकी का ऐसा अनुप्रयोग कृष्ण-वस्तु-विकिरण[1] के सम्बन्ध में है और फ़रमी-डिरैक की सांख्यिकी का धातुओं में विद्यमान इलैक्ट्रानों के सम्बन्ध में है। अब हम इन दोनों के विषय में कुछ शब्द कहेंगे।

हम देख चुके हैं कि फ़ोटान पॉली के नियम का पालन नहीं करते। अतः अनेक फ़ोटानों की अवस्था एक-सी होने में कोई बाधा नहीं है। फलतः फ़ोटानों द्वारा संघटित गैस बोस-आइन्स्टाइन की सांख्यिकी के अनुसार आचरण करेगी। यह विदित ह कि किसी समतापीय[2] कोष्ठक[3] में विद्यमान सन्तुलन-विकिरण[4] की तुलना फ़ोटान-गैस के साथ पूर्ण रूप से हो सकती है। अन्तर केवल इतना होता है कि विकिरण में फ़ोटानों की संख्या आवश्यक रूप से अचर नहीं रहती क्योंकि कोष्ठक की दीवारें भी विकिरण का अवशोषण और उत्सर्जन कर सकती हैं। सन्तुलन-विकिरण पर बोस-आइन्स्टाइन की सांख्यिकी का उपयोग करके और उपर्युक्त विशेष परिस्थिति को ध्यान में रखकर प्लांक का स्पैक्ट्रमीय वितरण सम्बन्धी नियम बड़ी आसानी से प्राप्त हो जाता है। प्लांक का नियम तो प्रयोग द्वारा पूर्णतः सत्यापित हो ही चुका है। अतः इससे बोस-आइन्स्टाइन की सांख्यिकी का भी विलक्षण रूप से समर्थन हो जाता है और यह समर्थन और भी अधिक विश्वसनीय यों है कि सन्तुलन-विकिरण में फ़ोटानों का यथार्थ स्पैक्ट्रमीय वितरण न तो चिरप्रतिष्ठित सांख्यिकी से प्राप्त हो सकता है और न फ़रमी-डिरैक की सांख्यिकी से।

इसी प्रकार फ़रमी-डिरैक-सांख्यिकी का भी विलक्षण सत्यापन धातुओं के इलैक्ट्रान-सिद्धान्त द्वारा हो गया है। पुराने इलैक्ट्रान-सिद्धान्त के समर्थकों ने विशेषतः ड्रूड[5]

1. Black-body radiation 2. Isothermal 3. Enclosure 4. Equilibrium radiation 5. Drude

और लोरैन्ट्ज़ ने धातुओं के गुणों की व्याख्या करने का प्रयत्न किया था—खासकर ऊष्मा तथा विद्युत् के चालन[1] सम्बन्धी गुणों का। उनकी परिकल्पना यह थी कि धातुओं में परमाणु अंशतः आयनित[2] हो जाते हैं और इस आयनीकरण से धातु में स्वतंत्र इलैक्ट्रानों की एक गैस बन जाती है। इस इलैक्ट्रान-गैस पर सांख्यिकीय यांत्रिकी की विधियों का उपयोग करने से उन्हें धातुओं के अनेक गुणों की प्रागुक्ति प्रस्तुत करने में सफलता भी मिली थी। फिर भी इस सिद्धान्त में अनेक कठिनाइयाँ बनी रहीं। सबसे महत्त्वपूर्ण कठिनाई धातुओं की विशिष्ट-ऊष्मा[3] के सम्बन्ध में थी। स्वतंत्र-इलैक्ट्रानों की उपस्थिति के कारण इसका मान प्रयोगलब्ध मान से बहुत ज्यादा होना चाहिए था। नवीन सांख्यिकी का विकास होने पर सामरफ़ेल्ड ने इनमें से कुछ कठिनाइयों को तो दूर कर दिया। इलैक्ट्रान अपवर्जन-नियम के अधीन होते हैं। अतः उन पर तो फ़रमी-डिरैक की सांख्यिकी लागू होनी चाहिए। सरल संख्यात्मक परिकलन से प्रकट हो जाता है कि जिन परिस्थितियों में इलैक्ट्रान धातु में रहते हैं, वे उन परिस्थितियों से बहुत भिन्न होती हैं जिनमें साधारण स्थूल-स्तरीय गैसों के परमाणु पाये जाते हैं। यद्यपि इन परमाणुओं के सम्बन्ध में चिरप्रतिष्ठित सांख्यिकी और फ़रमी-डिरैक की सांख्यिकी द्वारा प्राप्त परिणामों में कोई प्रेक्षण-गम्य अन्तर नहीं होता तथापि धातु के इलैक्ट्रानों के सम्बन्ध में फ़रमी की सांख्यिकी से वही परिणाम नहीं निकलते जो बोल्ट्ज़मान की सांख्यिकी से निकलते हैं। इस प्रभेद का कारण यह है कि द्रव्य-परमाणुओं की अपेक्षा इलैक्ट्रान बहुत ही हलके होते हैं। यदि क्वांटम-सांख्यिकी की सत्यता स्वीकार कर ली जाय तो ड्रूड और लोरैन्ट्ज़ के सिद्धान्तों का विकास फिर से पूर्णतः संशोधित रूप में करना पड़ेगा। सामरफ़ेल्ड ने ही यह काम सबसे पहले किया। इस प्रकार पुराने सिद्धान्त के सही परिणाम तो ज्यों-के-त्यों रहे, बल्कि उनमें भी कुछ अधिक पूर्णता आ गयी। इसके अतिरिक्त जो कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गयी थीं उनमें से भी बहुतों का निराकरण हो गया। उदाहरण के लिए फ़रमी-डिरैक की सांख्यिकी के ही परिणामों से उन्होंने इस बात की सरल व्याख्या कर दी कि धातु की विशिष्ट-ऊष्मा के मान में स्वतंत्र इलैक्ट्रानों द्वारा कोई प्रेक्षणगम्य अंशदान नहीं हो सकता और इस विशिष्ट ऊष्मा का मान ऐसा होता है मानों स्वतंत्र इलैक्ट्रानों का कोई अस्तित्व ही नहीं है। इस प्रकार पुराने सिद्धान्त के मार्ग में जो बहुत बड़ी बाधा थी वह दूर हो गयी। सामर-फ़ेल्ड की इस गवेषणा से जो रास्ता खुल गया था उसी का अनुसरण करके अनेक

1. Conduction 2. Ionised 3. Specific heat

सैद्धान्तिकों ने पूर्ववर्ती परिणामों को विभिन्न दिशाओं में परिवर्धित कर दिया है। इनमें लियों ब्रिलां[1] फ़ेलिक्स ब्लाक[2] और पीयर्ल्स[3] के नाम उल्लेखनीय हैं।

क्वांटम-भौतिकी की इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और वृहत् शाखा का पूरा विवरण इस छोटी-सी पुस्तक में देना संभव नहीं है। किन्तु यह न भूलना चाहिए कि इन चमत्कारी परिणामों के साथ-साथ अब भी अनेक बातें अँधेरे में ही रह गयी हैं। यथा-अति-चालकता[4] जैसी विचित्र और महत्त्वपूर्ण घटना की अभी तक कोई संतोषजनक व्याख्या नहीं हो सकी है।

क्वांटम-सांख्यिकी के अन्य अनुप्रयोगों में से हम केवल उसी की संक्षिप्त चर्चा करेंगे जिसमें परमाणुओं के गुणों का निगमन करने के लिए फ़रमी ने साहसपूर्वक प्रत्येक परमाणु को ऐसी गैस मान लिया है जो नाभिक[5] के बल-क्षेत्र में अवस्थित बहुत से इलैक्ट्रानों द्वारा संघटित हो। इसमें फ़रमी ने अपनी सांख्यिकी का बहुत अच्छा उपयोग किया है।

५. व्यक्तित्व की सीमाएँ[6]

हम देख चुके हैं कि एक ही प्रकृति की कणिकाओं के निकायों की तरंग-यांत्रिकी में और उनकी क्वांटम-सांख्यिकी में कणिकाओं के व्यक्तित्व की धारणा का थोड़ा-बहुत परित्याग निहित है। किन्तु यह कहना कि कणिकाओं के व्यक्तित्व की धारणा का पूर्णतः परित्याग करना आवश्यक होगा हमारी समझ में अतिशयोक्ति होगी। हम तो समझते हैं कि कणिकाओं के व्यक्तित्व की धारणा का सम्बन्ध आकाश के विभिन्न प्रदेशों में उनके अवस्थापन की संभावना से है। यह संभावना तो सदैव उपस्थित रहती ही है। अतः प्रयोग के द्वारा कणिकाओं में व्यक्तित्व-निवेशन की भी संभावना सदैव रहेगी। किन्तु एक-समान कणिकाओं के व्यक्तित्व का "अनुसरण करना" उस समय संभव नहीं हो सकेगा जब उनके संभाव्य प्रायिकता-घनत्व[7] के वितरण परस्पर अति-व्याप्त[8] हों, क्योंकि तब कणिकाओं का विनिमय संभव हो जायगा। इसका सम्बन्ध उस बात से है जो खंड ३ में हम विनिमय-ऊर्जा के विषय में कह चुके हैं। तरंग-यांत्रिकी में जिन निकायों का अध्ययन किया जाता है उनमें से अधिकांश निकायों में यही दशा होती है, विशेषकर ऐसी गैस में जिसके कणों की ऊर्जा सुनिर्णीत समझी जाती है अर्थात् जिसके कणों की आनुषंगिक तरंग यथार्थतः अथवा लगभग एक-वर्ण समतल तरंग होती है और पूरे कोष्ठक[9] में व्याप्त रहती है। इससे हम समझ सकते हैं कि चिरप्रतिष्ठित

1. Leon Brouillon 2. Felix Block 3. Peierls 4. Super-conductivity 5. Nucleus 6. Limits of Individuality 7. Probability density 8. Overlapping 9. Enclosure

सिद्धान्तों में कणिकाओं की व्यक्तित्वहीनता क्यों मान्य नहीं है, क्योंकि इसका सम्बन्ध आकाश के एक ही प्रदेश में दो कणिकाओं के एक साथ रहने की—कम-से-कम रह सकने की—संभावना से है और यह संभावना नवीन यांत्रिकी की धारणाओं की ही विशेषता है।

यदि हम खंड ३ और ४ के कुछ वक्तव्यों पर थोड़ा-सा विचार करें तो यह स्पष्ट हो जायगा कि कणिकाओं की व्यक्तित्व-हीनता, अपवर्जन–नियम और विनिमय-ऊर्जा-इन तीनों रहस्यमय तथ्यों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन तीनों की उत्पत्ति का कारण मूल भौतिक सत्ताओं को त्रिविमितीय आकाश-सांतत्यक में अथवा अधिक व्यापक रूप से चतुर्विमितीय दिक्-काल सांतत्यक में यथार्थतः निरूपित करने की असंभवता है। यदि किसी दिन हम इस ढाँचे से छुटकारा पा जायँ तो नवीन भौतिक विज्ञान के इन तीन महान् पथ-प्रदर्शक नियमों का जो रहस्य इस समय बिलकुल अभेद्य है, उसका उद्घाटन करने में शायद कुछ अधिक सफलता प्राप्त हो सके।

दूसरे दृष्टि-कोण से यह कहा जा सकता है कि व्यष्टि की भौतिक धारणा निकाय की धारणा की परिपूरक[1] है (बोह्र के अर्थ में)। कणिका का व्यक्तित्व केवल उसी समय सुनिर्दिष्ट होता है जब वह बिलकुल अकेली हो। जैसे ही उसके और अन्य कणि-काओं के बीच में पारस्परिक क्रिया होने लगती है तैसे ही उसका व्यक्तित्व भी घट जाता है। संभवतः चिरप्रतिष्ठित सिद्धान्तों में यह बात यथेष्ट रूप से स्पष्ट नहीं की गयी थी कि किसी निकाय की स्थितिज ऊर्जा की धारणा में यह बात भी निहित है कि निकाय की समस्त कणिकाओं की पूर्ण ऊर्जा के कुछ अंश का, स्थितिज ऊर्जा के रूप में, संकोषण[2] हो जाता है और यह उस निकाय के अवयवों के व्यक्तित्व को कुछ निर्बल कर देता है। नवीन यांत्रिकी में तो यह समझा जाता है कि एक ही जाति की कणिकाएँ किसी-न-किसी प्रकार एक ही समय में आकाश के एक ही प्रदेश में विद्यमान रहती हैं। अतः वहाँ तो यह व्यक्तित्व बिलकुल ही लुप्त हो जाता है। पारस्परिक क्रियाहीन अकेली कणिकाओं से प्रारम्भ करके यदि हम उत्तरोत्तर परिवर्तन के द्वारा उपर्युक्त निकायों के निर्माण पर विचार करें तो हम देखेंगे कि ज्यों-ज्यों निकाय का व्यक्तित्व प्रबल होता जाता है त्यों-त्यों कणिकाओं के व्यक्तित्व की धारणा अधिक-अधिक अस्पष्ट होती जाती है। अतः ऐसा मालूम पड़ता है कि व्यक्ति और निकाय बहुत कुछ परिपूरक आदर्शीकरण[3] है। यह विचार ऐसा है जिसका संभवतः अधिक सूक्ष्म और गहन समीक्षण वांछनीय है।

1. Complementary 2. Pooling 3. Idealisations

उपसहार

अन्य कतिपय प्रश्न, जिनके सम्बन्ध में इस पुस्तक में विचार नहीं किया गया

१. तरंग-यांत्रिकी और प्रकाश

हम देख चुके हैं कि प्रकाश के द्वैध स्वरूप के कारण कसे तरंग-यांत्रिकी की मूल धारणाओं का प्रादुर्भाव हुआ था। फ़ोटानों और प्रकाश-तरंगों की आनुषंगिकता पर विचार करने से जिन धारणाओं का जन्म हुआ था उन्हीं को द्रव्य पर विस्तारित करने से द्रव्य-कणों और उनकी ψ–तरंगों की आनुषंगिकता का विचार उत्पन्न हुआ था। प्रकाश के द्वैध स्वरूप से ही हमें इस पुस्तक में द्रव्य के द्वैध स्वरूप के स्पष्टीकरण में सहायता मिली है। ऐसी परिस्थिति में शायद यह बात लगभग निश्चित ही मालूम पड़े कि तरंग-यांत्रिकी के व्यापक ढाँचे में ही प्रकाश के सिद्धान्त को भी स्वाभाविक रूप से स्थान मिल जायगा। यह बात चाहे कितनी ही विरुद्धाभासी क्यों न मालूम पड़े, किन्तु सच तो यह है कि ऐसा बिलकुल ही नहीं हो सकता। यह सत्य है कि तरंगों और कणिकाओं से सम्बन्धित राशियों में व्यापक अनुबन्ध स्थापित करने की पूरी सामर्थ्य तरंग-यांत्रिकी में थी। इन अनुबन्धों का विस्तृत विवरण हम परिच्छेद ८ के प्रारम्भ में दे चुके हैं। ये अनुबन्ध फ़ोटानों और द्रव्य-कणिकाओं के लिए समान रूप से उपयुक्त है। किन्तु इनके आधार पर प्रकाश के सर्वांगपूर्ण सिद्धान्त के निर्माण में गंभीर कठिनाइयाँ उपस्थित हो गयीं। अनेक वर्ष पहले हाइज़नबर्ग और पॉली ने क्वांटम-क्षेत्र-सिद्धान्त[1] की स्थापना करने का सुन्दर प्रयास किया था। वे ऐसे क्वांटमित विद्युत्-चुम्बकीय सिद्धान्त का निर्माण करना चाहते थे कि जिसमें प्रकाश के क्वांटम-सिद्धान्त को बिलकुल स्वाभाविक स्थान मिल जाय, किन्तु यद्यपि इस प्रयास की वैश्लेषिक सुन्दरता असंदिग्ध है और यद्यपि इसके अच्छे परिणाम चिरस्थायी भी रहेंगे तथापि उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था और उससे प्रकाश के द्वैत का सच्चा चित्र प्रस्तुत नहीं हो

1. Quantum-field-theory

सका। इसी प्रकार के दूसरे सिद्धान्त का प्रतिपादन डिरैक ने और उसके बाद फ़रमी तथा अन्य लोगों ने किया था, किन्तु वह मूलतः इससे अभिन्न नहीं था। इसमें फ़ोटानों के अस्तित्व पर अधिक जोर दिया गया था और इस कारण यह सिद्धान्त भी बहुत चित्ताकर्षक था। किन्तु हमें तो ऐसा नहीं मालूम देता कि इसके द्वारा द्वैत का वांछित चित्र कुछ भी अधिक अच्छे रूप में प्रस्तुत हुआ हो।

इन कठिनाइयों के कारण कुछ भौतिकज्ञ तो द्वैत के सम्बन्ध में प्रकाश और द्रव्य की वास्तविक संमिति के अस्तित्व में ही शंका करने लगे हैं। इस बात में हमारा मत बिलकुल विपरीत है। द्रव्य और प्रकाश की जिस संमिति के आधार पर तरंग-यांत्रिकी का विकास हुआ है, जो चित्त को इतना संतुष्ट करनेवाली है और जिसे हम इन नवीन सिद्धान्तों की सफलता का इतना गंभीर कारण समझते हैं उसे किसी भी मूल्य पर छोड़ देने के लिए हम राज़ी नहीं हैं। इसीलिए पिछले कई वर्षों से हम प्रकाश की यथार्थतः द्वैतमयी धारणा के निकट पहुँचने का प्रयास करने में लगे हैं। हम इस प्रयास के सम्बन्ध में केवल थोड़े-से ही शब्द कहेंगे क्योंकि अभी तो यह दुस्साहस मात्र ही है।

एक बात ऐसी है जिससे इनकार नहीं किया जा सकता। यद्यपि प्रकाश के द्वैत-सिद्धान्त ने द्रव्य के द्वैत-सिद्धान्त के निर्माण के लिए नमूने का काम दिया था, किन्तु अब वह इस नवीन सिद्धान्त से पीछे रह गया है। इस अद्‌भुत तथ्य के पीछे क्या रहस्य है? एक कारण तो निश्चय ही वह रूप है जो तरंग-यांत्रिकी ने अपनी तीव्र प्रगति के प्रारम्भ में धारण किया था। हम देख चुके हैं कि यह रूप आपेक्षिकीय नहीं था। अतः उसका उपयोग केवल उन्हीं कणिकाओं के लिए हो सकता था जिनका वेग प्रकाश-वेग की अपेक्षा बहुत कम हो। अतः वह फ़ोटानों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता था। इसके अतिरिक्त उसमें कोई भी संमिति-द्योतक अवयव विद्यमान नहीं था, जिसके द्वारा किसी प्रकार का ध्रुवण निर्दिष्ट हो सके। इलैक्ट्रान-सिद्धान्त के नमूने पर फ़ोटान-सिद्धान्त का निर्माण न हो सकने का दूसरा कारण यह है कि फ़ोटान में कुछ गुण ऐसे होते हैं जिनके द्वारा इलैक्ट्रान से उसकी भिन्नता स्पष्ट प्रकट हो जाती है। एक गुण तो यह है कि बहु-संख्यक फ़ोटानों का समूह बोस-आइन्स्टाइन सांख्यिकी के नियमों का पालन करता है। इलैक्ट्रानों के समान फ़रमी-डिरैक-सांख्यिकी के नियमों का नहीं। दूसरे, प्रकाश-वैद्युत प्रभाव में फ़ोटान लुप्त हो जाता है—उसका नाश हो जाता है। द्रव्य-कणिकाओं में ऐसा कोई गुण नहीं होता।

इन व्यापक अभ्युक्तियों से हम इस परिणाम पर पहुँचे कि फ़ोटान के उपयुक्त सिद्धान्त का निर्माण करने के लिए सबसे अधिक आवश्यकता एक तो इस बात की है

कि तरंग-यांत्रिकी के ऐसे आपेक्षिकीय रूप का उपयोग किया जाय जिसमें ध्रुवण के सदृश संमिति-द्योतक अवयव विद्यमान हों और दूसरे उसमें कुछ ऐसी बात भी निविष्ट करने की आवश्यकता है जो फ़ोटानों तथा इलैक्ट्रानों की भिन्नता को प्रकट कर सके। इस कार्यक्रम का प्रथम भाग तो डिरैक के चुम्बकीय इलैक्ट्रान के सिद्धान्त के उपयोग से तुरन्त पूर्ण हो गया। इसका विवेचन हम पहले कर चुके हैं। यह विदित ही है कि डिरैक का सिद्धान्त सचमुच आपेक्षिकीय भी है और उसमें संमिति-द्योतक अवयव भी विद्यमान हैं जिनका प्रकाश के ध्रुवण से स्पष्टतः घनिष्ठ सम्बन्ध है। फिर भी केवल यह मान लेने से काम नहीं चल सकता कि फ़ोटान भी डिरैक के सिद्धान्त के समीकरणों का पालन करनेवाली, किन्तु उपेक्षणीय द्रव्यमानवाली कणिका है क्योंकि इस प्रकार फ़ोटान का जो प्रतिरूप प्राप्त होगा उसकी संमिति वास्तविक फ़ोटान की अपेक्षा आधी कही जा सकती है। इसके अतिरिक्त ऐसा भी मालूम पड़ता है कि वह इलैक्ट्रान के समान ही फ़रमी-डिरैक-सांख्यिकी के नियमों का पालन करेगा और प्रकाश-वैद्युत प्रभाव में वह नष्ट भी नहीं हो सकेगा। अतः अभी इस सिद्धान्त में कुछ और नयी बात निविष्ट करने की अत्यन्त आवश्यकता है। और इस नवीन बात के निवेशन का प्रयत्न हमने यह मान कर किया है कि प्रत्येक फ़ोटान दो डिरैक-कणिकाओं के सम्मेलन से बना है—एक से नहीं। और तब यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि ये दोनों कणिकाएँ अथवा अर्ध-फ़ोटान[1] परस्पर संपूरक[2] होंगे—उस अर्थ में जिसमें कि डिरैक के गर्तसिद्धान्त[3] के अनुसार धन-इलैक्ट्रान ऋण-इलैक्ट्रान का संपूरक होता है (परिच्छेद ११ खंड ५), न कि बोह्र द्वारा प्रतिपादित अर्थ में। संपूरक कणिकाओं का ऐसा युग्म द्रव्य के सम्पर्क में आने पर अपनी सब ऊर्जा का उत्सर्ग करके स्वयं नष्ट हो सकता है। इस बात से प्रकाश-वैद्युत प्रभाव की सब विशेषताओं की सर्वांगपूर्ण व्याख्या हो जाती है। इसके अतिरिक्त $\frac{h}{4\pi}$ के नर्तनवाली दो कणिकाओं द्वारा निर्मित होने के कारण फ़ोटान को बोस-आइन्स्टाइन-सांख्यिकी के नियमों का पालन करना चाहिए। प्लांक के कृष्ण-वस्तु-विकिरण के नियम की उत्कृष्ट यथार्थता की यही माँग है। अन्त में फ़ोटान के इस प्रतिरूप के द्वारा हम फ़ोटान के नष्ट होने की प्रायिकता से सम्बद्ध ऐसा विद्युत्-चुम्बकीय बल-क्षेत्र भी निर्धारित कर सकते हैं जो मैक्सवल के समीकरणों को सन्तुष्ट करता हो और जिसमें विद्युत्-चुम्बकीय प्रकाश-तरंग के सभी लक्षण विद्यमान हों।

1. Demi-photons 2. Complementary 3. Theory of holes

यद्यपि इस प्रयास की सफलता के सम्बन्ध में कोई निश्चित मत प्रकट करने का समय अभी नहीं आया है तथापि इसमें कोई सन्देह नहीं कि इससे कई चित्ताकर्षक परिणाम निकले हैं और यह उन संपूरक कणिकाओं के संमितीय गुणों की ओर हमारा ध्यान प्रबल रूप से आकर्षित करता है जिनके अस्तित्व का संकेत डिरैक के सिद्धान्त से मिला था और जिनकी वास्तविकता को धन-इलैक्ट्रान के आविष्कार ने सत्यापित कर दिया है।*

२. नाभिकीय भौतिक विज्ञान[1]

परमाणु के नाभिक[2] सम्बन्धी ज्ञान का विकास पिछले कुछ वर्षों में आश्चर्यजनक वेग से हुआ है और अतुल संपदा से परिपूर्ण नाभिकीय भौतिक विज्ञान का निर्माण इस समय हो रहा है। अतः शायद यह बात कुछ विचित्र-सी लगे कि हम इतने महत्त्वपूर्ण विषय पर इतनी देर में पहुँचे हैं। किन्तु हमारा विचार नाभिकीय भौतिक विज्ञान की रूप-रेखा देने का है ही नहीं। इसके दो कारण हैं। पहला कारण तो यह है कि इस क्षेत्र में अभी हाल में ही इतने अधिक आविष्कार हुए हैं कि उनका अंशतः पूर्ण आभास देने के लिए भी या तो हमें इस पुस्तक का एक द्वितीय भाग लिखना पड़ता या इसी को औचित्य की सीमा से अधिक लम्बा कर देना पड़ता। दूसरा कारण यह है कि अभी हमारा नाभिक सम्बन्धी ज्ञान बहुत कुछ प्रायोगिक ही है। नाभिकीय भौतिक विज्ञान में सिद्धान्त की प्रगति अभी बहुत थोड़ी हुई है और जो कुछ हुई है वह भी अभी अस्थायी अथवा अन्तःकालीन[3] ही है। बहुत संभव है कि नाभिक के कल्पनातीत छोटे-से प्रदेश में जो बहु-संख्यक कणिकाएँ संगृहीत और सम्मिश्रित पायी जाती हैं उनके आचरण की व्याख्या करने के लिए नवीन यांत्रिकी में भी कई परिवर्तन करने पड़ेंगे। कुछ सिद्धान्त—यथा गैमो[4] का सिद्धान्त—जो चित्र प्रस्तुत करते हैं वे निश्चय ही अपरिष्कृत योजना-चित्र[5] मात्र हैं और इस प्रसंग में हाइज़नबर्ग का अत्यन्त विलक्षण प्रयास भी अभी अपूर्ण प्रारूप[6] ही है।

* फ़ुटनोट जो १९४६ में जोड़ा गया—इस पुस्तक की समाप्ति के बाद डिरैक, फ़ियर्ज़ (Fierz) तथा पॉली की गवेषणाओं से और उन अन्य गवेषणाओं से जो आंरी प्वांकरे इन्स्टीट्यूट (Henri Poincarè Institute) में मुख्यतः जिरार्ड पेतो (Gerard Petiau), तोनिलात (M. A. Tonnelat) और स्वयं हमारे द्वारा सम्पन्न हुई थीं, नर्तक कणिकाओं के एक व्यापक सिद्धान्त का निर्माण हुआ है। फ़ोटान की जिस तरंग-यांत्रिकी की रूप-रेखा हमने यहाँ दी है वह इसी व्यापक सिद्धान्त का एक विशिष्ट रूप है।

1. Physics of the Nucleus 2. Nucleus 3. Provisional 4. Gamow 5. Schematic picture 6. Rough draft

[हाइज़नबर्ग का यह सिद्धान्त अब मैसान बल-क्षेत्र के सिद्धान्त[1] के रूप में पूर्णता को प्राप्त कर चुका है, किन्तु अभी तक इसका विकास भी बहुत कुछ संशयापन्न ही है। (१९४६)]

वास्तव में नाभिकीय भौतिक विज्ञान की अवस्था अभी तक ऐसी ही है जिसमें केवल तथ्यों की सूची बनाकर आनुभविक[2] नियमों की स्थापना हो रही है। बोह्र के सिद्धान्त से पहले जो अवस्था स्पैक्ट्रम-विज्ञान की थी वैसी ही अवस्था इस समय नाभिकीय विज्ञान की है। किन्तु हमारा उद्देश्य तो ऐसी पुस्तक लिखने का था जिसमें मुख्यतः समकालीन क्वांटम-सिद्धान्तों का ही विवेचन किया जाय। अतः हमने यही निश्चय किया कि यद्यपि नाभिकीय भौतिक विज्ञान का आज की वैज्ञानिक प्रगति में बड़ा महत्त्व है फिर भी हमें इसकी चर्चा केवल एक अंतिम खंड में ही करनी चाहिए।

इसलिए नाभिकीय विज्ञान-सम्बन्धी ज्ञान की आश्चर्यजनक वृद्धि के विषय में थोड़े-से शब्द कहकर ही हम इस चर्चा को समाप्त कर देना चाहते हैं और समस्थानिकों[3] तथा नाभिकीय नर्तन[4] के सदृश अन्य उतने ही महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के विषय में कुछ भी नहीं कहना चाहते ।

हमें विदित है कि जिस परमाणु का परमाणु-क्रमांक Z हो उसके नाभिक में एक प्रोटान के आवेश की अपेक्षा Z–गुणा धन-आवेश होता है और उस परमाणु के लगभग पूरे द्रव्यमान का स्थान भी यही नाभिक होता है। बहुत समय तक ऐसा समझा जाता था कि परमाणु के नाभिक प्रोटानों और इलैक्ट्रानों द्वारा संघटित होते हैं और नाभिकाभ्यन्तरिक[5] इलैक्ट्रानों की अपेक्षा प्रोटानों की संख्या में Z की अधिकता होती है तथा लगभग समस्त द्रव्यमान प्रोटानों के ही कारण होता है। नाभिक यौगिक[6] होता है, यह धारणा बहुत-कुछ स्वोत्सर्जिता के निर्वचन की देन है।

हेनरी बैकरैल[7] द्वारा पूर्व-प्रेक्षित स्वोत्सर्जिता का वास्तविक आविष्कार पियरे क्यूरी[8] और उनकी पत्नी तथा सहकारिणी श्रीमती मेरी स्क्लोडौस्का क्यूरी[9] ने किया था। स्वोत्सर्जी पदार्थ वे भारी तत्त्व हैं जिनके क्रमांक मेण्डलीफ़[10] की सारणी में सबसे ऊँचे हैं (८३ से ९२ तक)।

इनका मुख्य लक्षण यह है कि वे स्वतः ही अस्थायी होते हैं। अर्थात् समय-समय पर ऐसे परमाणु के नाभिक का विस्फोट हो जाता है और वह अपेक्षाकृत हलके परमाणु में

1. Theory of the meson field 2. Empirical 3. Isotopes 4. Nuclear spin 5. Intra-nuclear 6. Complex. 7. Henri Becquerel 8. Pierre Curie 9. Mme Marie Sklodowska Curie 10. Mendelejeff

परिणत हो जाता है। इस विघटन[1] के साथ ही साधारणतः उसमें से इलैक्ट्रान (बीटा-किरणें)[2] आयनित हीलियम परमाणु (आलफा किरणें)[3] और उच्च आवृत्ति का अत्यन्त वेधनशील विकिरण[4] (गामा किरणें[5]) उत्सर्जित होते हैं। इन घटनाओं का आविष्कार भौतिकज्ञों के लिए अत्यन्त रोचक था, क्योंकि इससे यह प्रमाणित हो गयाथा कि नाभिक वास्तव में यौगिक[6] कणिका होता है और दूसरे विघटन के द्वारा इस नाभिक में से अन्य सरलतर नाभिक उत्पन्न हो जाते हैं अर्थात् मध्य-युग के कीमियागर[7] जिस तत्त्वान्तरण[8] के स्वप्न देखा करते थे उसका भी प्रत्यक्ष अनुभव हो गया। दुर्भाग्यवश स्वोत्सर्जिता ऐसी घटना है जिस पर हम कोई प्रभाव अपनी इच्छा से नहीं डाल सकते। फलतः हम इस घटना का केवल प्रेक्षण ही कर सकते हैं, किन्तु उसकी प्रक्रिया में कुछ भी परिवर्तन नहीं कर सकते। इसलिए स्वोत्सर्जिता के आविष्कार के बीस वर्ष बाद जब १९१९ में महान् अंग्रेज़ भौतिकज्ञ लार्ड रदरफ़ोर्ड को तत्त्वों के कृत्रिम विघटन में सफलता मिली तब इस घटना सम्बन्धी ज्ञान के विकास में सहसा बड़ी उन्नति हो गयी। हलके परमाणुओं पर स्वोत्सर्जी पदार्थों से उत्सर्जित आलफा-कणों की गोलाबारी[9] से उन्होंने उन परमाणुओं के नाभिकों को तोड़ने में सफलता प्राप्त कर ली। इससे सरलतर परमाणु प्राप्त हो गये और कृत्रिम तत्त्वान्तरण वास्तव में सम्पन्न हो गया।* १९३० के बाद लारेंस[10] द्वारा आविष्कृत[11] साइक्लोट्रोन[12] के सदृश विलक्षण और प्रबल यंत्रों की सहायता से नाभिकीय तत्त्वान्तरण की प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक गोलाबारी की उत्कृष्टता बड़ी शीघ्रता से बढ़ गयी है। इन अनुसंधानों से ही जोलियो-क्यूरी[13] दम्पति ने एक महत्त्वपूर्ण आविष्कार कर लिया। उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि कुछ गोलाबारी की क्रियाओं से अस्थायी नाभिक (कृत्रिम स्वोत्सर्जी तत्त्व) उत्पन्न हो जाते हैं जो बाद में स्वतः ही विघटित होकर किसी दूसरे तत्त्व को तथा विविध प्रकार की किरणों को उत्पन्न कर देते हैं।

१९३१–३२ में न्यूट्रान[14] तथा धन-इलैक्ट्रान या पाजीट्रान[15] नामक दो नवीन

1. Disintegration 2. β-rays 3. α-rays 4. Penetrating radiation 5. γ-rays 6. Complex 7. Alchemist 8. Transmutation. 9. Bombardment

*यहाँ से लेकर इस खंड के अन्त तक की विषय-वस्तु पुस्तक के मूल संस्करण में नहीं थी। वह पैरिस से १९५१ में प्रकाशित लूई दे ब्रोगली की "L' Energie Atomic et Ses Applications" नामक पुस्तक से ली गयी है।

10. Lawrence 11. invented 12. Cyclotron 13. Joliot-Curie 14. Neutron 15. Positron

कणिकाओं के आविष्कार से नाभिकीय भौतिक विज्ञान में गंभीर परिवर्तन हो गया। बोथे तथा बैकर[1] के, क्यूरी-दम्पति के तथा चैडविक[2] के अनुसंधानों से सिद्ध हो गया कि ग्लूसीनियम[3] पर आलफ़ा-कणों की गोलाबारी करने से एक ऐसी कणिका—न्यूट्रान[4] उत्पन्न होती है जिसका अस्तित्व अब तक अज्ञात था और जो वैद्युतिक दृष्टि से अनाविष्ट होती है और जिसका द्रव्यमान लगभग प्रोटान के बराबर ही होता है। इसके बाद तो न्यूट्रान अनेक नाभिकीय प्रतिक्रियाओं में तथा अंतरिक्ष किरणों[5] में भी पाया गया है।

धन-इलैक्ट्रान या पाज़ीट्रान साधारण इलैक्ट्रान के बराबर द्रव्यमानवाली कणिका होती है और इस पर आवेश इलैक्ट्रान के आवेश के बराबर, किन्तु विपरीत-चिह्नीय होता है। इसका आविष्कार ऐन्डरसन ने तथा ब्लैकैट तथा ओकियालिनी[6] ने अन्तरिक्ष-किरणों में किया था। द्रव्य की उपस्थिति में पाज़ीट्रान अस्थायी होता है। वस्तुतः उसकी प्रवृत्ति द्रव्य में विद्यमान इलैक्ट्रानों के आवेश को नष्ट करने की है। एक पाज़ीट्रान तथा एक इलैक्ट्रान के यौगपदिक विनाश[7] से विकिरण का उत्सर्जन होता है। दो विजातीय इलैक्ट्रानों का यह विनाश वास्तव में द्रव्य का द्रव्यत्वविलोपन[8] ही है। इससे विपरीत घटना का भी अस्तित्व है। कुछ विशेष परिस्थितियों में विकिरण से भी विजातीय इलैक्ट्रानों के युग्म की सृष्टि के रूप में द्रव्यत्व-सृजन[9] हो सकता है। ये घटनाएँ और ऐसी ही अन्य घटनाएँ ऊर्जा के अवस्थितित्व[10] के सिद्धान्त के अनुकूल हैं। इनसे केवल उसका रूप थोड़ा बदल जाता है।

न्यूट्रान के आविष्कार के बाद हाइज़नबर्ग ने नाभिक की संरचना के सम्बन्ध में एक नया विचार प्रस्तुत किया था। अनुप्रयोगों की दृष्टि से पुरानी धारणाओं की अपेक्षा यह अत्यन्त उत्कृष्ट सिद्ध हुआ है।

इसके अनुसार नाभिक प्रोटानों और इलैक्ट्रानों के द्वारा नहीं, किन्तु प्रोटानों और न्यूट्रानों के द्वारा संघटित होता है। प्राकृतिक अथवा कृत्रिम विघटनों में जो ऋण-इलैक्ट्रान अथवा धन-इलैक्ट्रान उत्पन्न होते हैं उनका कारण यह नहीं है कि ये इलैक्ट्रान नाभिक में पहले से ही विद्यमान थे जैसा कि उस समय तक समझा जाता था। वास्तविक कारण यह है कि या तो कोई नाभिकीय प्रोटान बदलकर न्यूट्रान बन जाता है या न्यूट्रान के रूपान्तरण से प्रोटान बन जाता है और इन क्रियाओं में एक धन या ऋण

1. Bothe and Becker 2. Chadwick. 3. Glucinium 4. Neutron 5. Cosmic rays 6. Blackett and Occhialini 7. Annihilation 8. Dematerialisation 9. Materialisation 10. Inertia

इलैक्ट्रान की सृष्टि हो जाती है। इस मत के अनुसार पारमाणविक नाभिकों में मूलतः एक ही भारी कणिका न्यूक्लियान[1] होती है और प्रोटान तथा न्यूट्रान इसी कणिका की दो अवस्थाएँ होती हैं —एक धनाविष्ट और दूसरी अनाविष्ट। आजकल का नाभिकीय-सिद्धान्त इन्हीं विचारों पर आश्रित है और जिन नाभिकीय घटनाओं की चर्चा अब हम करेंगे उनकी प्रागुक्ति में इससे बहुत सहायता मिली है।

अब हम उस ऊर्जा के उपयोग को अधिक स्पष्ट कर देना चाहते हैं जो पारमाणविक ऊर्जा[2] कहलाती है, किन्तु जिसे वास्तव में नाभिकीय ऊर्जा[3] कहना चाहिए क्योंकि वह पूरे परमाणु में व्याप्त नहीं रहती, किन्तु केवल केन्द्रीय नाभिक में ही संचित रहती है। दीर्घकाल से मनुष्य को उस ऊर्जा के उपयोग की विधि मालूम है जो परमाणुओं की पारस्परिक प्रतिक्रिया से उस समय प्रकट होती है जब परमाणुओं के संयोजन से नये अणु बनते हैं या जब पहले से विद्यमान अणु के विघटन से परमाणु अलग-अलग हो जाते हैं (रासायनिक ऊर्जा[4])। परमाणुओं के संयोजित अवस्था के ये रूपान्तरण बहुधा ऊष्माक्षेपक[5] होते हैं अर्थात् उनमें ऊष्मा की उत्पत्ति होती है और हम इस ऊर्जा का लाभदायक उपयोग कर सकते हैं। इसका सरलतम उदाहरण दहन[6] द्वारा आक्सीकरण[7] है जिसे हम "जलना" कहते हैं और जिसके आविष्कार से आद्य-मानव के इतिहास ने निस्सन्देह ही अत्यन्त वास्तविक मोड़ लिया था। नाइट्रो-ग्लीसरीन[8] और टी० एन० टी०[9] जैसे प्रचण्ड विस्फोटक पदार्थों के आविष्कार ने हमें यह भी सिखा दिया था कि अत्यन्त ध्वंसकारी प्रभावों को उत्पन्न करने योग्य ऊर्जा की प्रचुर मात्रा स्वल्प काल में किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है। किन्तु इन सब बातों का सम्बन्ध तो केवल रासायनिक ऊर्जा से है जो उन घटनाओं से उत्पन्न होती है जो परमाणु की बाह्य सीमा के निकट घटती हैं और जिनसे केवल परमाणुओं के पारस्परिक बन्धनों का ही परिवर्तन होता है।

तब पारमाणविक ऊर्जा कहलानेवाली इस नवीन प्रकार की उपयोज्य ऊर्जा की विशेषता क्या है? यह विशेषता इस बात में है कि इस ऊर्जा का उद्गम परमाणु का वह सीमान्त प्रदेश नहीं है जहाँ आणविक बन्धन बनते और बिगड़ते हैं, किन्तु वह अन्तरतम[10] प्रदेश है जो नाभिक कहलाता है। हम बता चुके हैं कि लगभग ४० वर्षों से हमें मालूम है कि प्रत्येक परमाणु के केन्द्र में एक नाभिक होता है जो उस परमाणु के रासायनिक

1. Nucleon 2. Atomic energy 3. Nuclear energy 4. Chemical energy 5. Exothermic 6. Combustion 7. Oxidation 8. Nitro-glycerine 9. T. N. T. 10. Innermost.

विशिष्टता को निर्धारित करता है और जिसमें उसके द्रव्यमान का अधिकांश भाग अवस्थित होता है। इस नाभिक के चारों ओर के असाधारणतः छोटे, किन्तु नाभिकीय परिमाण की अपेक्षा अत्यन्त वृहत् प्रदेश में सीमान्तवर्ती इलैक्ट्रान परिभ्रमण करते हैं। परमाणु के इसी बाह्य प्रदेश के भीतरी भाग में वे प्रक्रियाएँ होती हैं जिनसे एक्स-किरण का उत्सर्जन होता है और इसी का बाहरी भाग दृश्य विकिरण का तथा रासायनिक घटनाओं की प्रवर्तक प्रतिक्रियाओं का उद्गम स्थान है। हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि दीर्घकालीन प्रयत्न के बाद भी पारमाणविक नाभिकों की आभ्यन्तरिक संरचना को स्पष्टतः समझने में असफल होने पर भौतिकज्ञ अन्त में इस परिणाम पर पहुँचे थे कि नाभिक को ऐसा संकुल निकाय समझना चाहिए जो दो प्रकार की कणिकाओं—प्रोटानों और न्यूट्रानों—के संश्लेषण द्वारा निर्मित होता है और ज्यों-ज्यों परमाणु तथा नाभिक का भार बढ़ता जाता है त्यों-त्यों इन कणिकाओं की संख्या भी बढ़ती जाती है। इन निकायों की संरचना यथार्थतः कैसी होती है और उन्हें स्थायित्व प्रदान करनेवाले बल किस प्रकार के होते हैं, इत्यादि बातों का ज्ञान तो अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही है। नाभिक की इन आभ्यन्तरिक घटनाओं को समझने के लिए अभी उसमें बहुत उन्नति करने की आवश्यकता है। किन्तु जिस बात का निश्चित ज्ञान हुए अधिक वर्ष नहीं हुए वह यह है कि परमाणुओं के सीमान्तवर्ती परिवर्तनों के द्वारा—विशेषकर रासायनिक प्रतिक्रियाओं के द्वारा—हमें जितनी ऊर्जा प्राप्त हो सकती है उससे बहुत ही अधिक ऊर्जा हमें इन संभाव्य नाभिकीय रूपान्तरणों से प्राप्त हो सकती है और जब इन रूपान्तरणों की संख्या अधिक हो तो यह ऊर्जा अन्त में ऊष्मा के रूप में प्रकट हो जाती है। यह स्मरण रहे कि इसका यह अर्थ नहीं है कि केवल एक ही नाभिक के तत्त्वान्तरण से जो ऊर्जा हमें प्राप्त हो सकेगी उसकी मात्रा बहुत अधिक होगी। वस्तुतः जितनी ऊर्जा का हम कोई लाभदायक उपयोग कर सकते हैं उसकी अपेक्षा यह एक नाभिक से प्राप्त ऊर्जा बहुत ही कम होगी। किन्तु जितनी ऊर्जा आणविक रूपान्तरण[1] की अकेली एक प्रक्रिया से उत्पन्न हो सकती है उससे तो यह बहुत ही ज्यादा होगी। फिर भी यद्यपि हमें दीर्घकाल से ऐसी रासायनिक प्रक्रियाएँ ज्ञात थीं जिनसे सहसा इतनी अधिक ऊर्जा उत्पन्न हो सकती है कि मानवीय मापदंड से उसके परिणाम भयंकर हो सकते हैं तथापि नाभिकीय रूपान्तरण के द्वारा प्रचुर मात्रा में ऊर्जा की प्राप्ति केवल पिछले ६ वर्षों में ही हो सकी है। इसका क्या कारण है ?

1. Molecular transformation

साधारणतः जब किसी बड़ी द्रव्य-राशि में कोई रासायनिक प्रतिक्रिया प्रारम्भ होती है तो वह उस समस्त राशि में फैल जाती है। इस प्रक्रिया का प्रारम्भ तो केवल थोड़े-से परमाणुओं से ही होता है, किन्तु बहुधा यह बड़े वेग से फैलकर असंख्य प्रतिवेशी परमाणुओं को ग्रस्त कर लेती है। प्रत्येक परमाणु में से तो बहुत ही थोड़ी ऊर्जा निकलती है, किन्तु अरबों-खरबों परमाणुओं में से निकलनेवाली सम्पूर्ण ऊर्जा का परिमाण उपयोज्य ही नहीं, भीषण भी हो जाता है। किन्तु यद्यपि १९१९ में किये गये रदरफ़ोर्ड के विख्यात प्रयोग के समय से ही हमें यह ज्ञात हो गया था कि नाभिकों के आभ्यन्तरिक रूपान्तरण अथवा कृत्रिम तत्त्वान्तरण किस प्रकार संपन्न हो सकते हैं तथापि उस समय समस्त द्रव्यराशि में केवल थोड़े-से नाभिकों का ही रूपान्तरण वस्तुतः हो पाता था। इसमें सन्देह नहीं कि रासायनिक प्रतिक्रिया से प्रत्येक परमाणु में से जितनी ऊर्जा प्राप्त हो सकती है उसकी अपेक्षा प्रत्येक नाभिक में से बहुत अधिक ऊर्जा प्राप्त होती थी। किन्तु इन तत्त्वान्तरणों से प्राप्त संपूर्ण ऊर्जा अत्यन्त नगण्य होती थी क्योंकि थोड़े-से नाभिकों पर की गयी क्रिया पूरी द्रव्यराशि में फैलती नहीं थी।

१९३८-३९ में यूरेनियम के विखंडन[1] के महत्त्वपूर्ण आविष्कार ने यह स्थिति बिलकुल बदल दी। इस पृथ्वी में जितने स्थायी रासायनिक तत्त्व हैं उनमें यूरेनियम सबसे भारी है अर्थात् उसके परमाणु का द्रव्यमान महत्तम है। उसके नाभिक में ९२ प्रोटान होते हैं क्योंकि उसका परमाणु क्रमांक[2] $Z = ९२$ है और उसके विभिन्न समस्थानिकों में १४० से १४६ तक न्यूट्रान होते हैं। इसकी संरचना बड़ी जटिल है और थोड़ी-बहुत अस्थायी भी है। इस अस्थायित्व के कारण ही उसमें स्वतः ही विघटित होने की प्रवृत्ति होती है और यही उसकी प्रकृत स्वोत्सर्जिता का कारण है। १९३८-३९ में हान[3], माइटनर[4], स्ट्रासमैन,[5] फ्रिश[6] और जोलियो-क्यूरी[7] की गवेषणाओं से एक नवीन महत्त्वपूर्ण नाभिकीय घटना का—यूरेनियम के विखंडन या विदलन[8] का—आविर्भाव हुआ। पहले तो यह देखा गया कि यूरेनियम पर न्यूट्रानों की गोलाबारी करने से यूरेनियम के नाभिक का विघटन हो जाता है। इसके विषय में पहले यह समझा गया कि आपतित न्यूट्रान यूरेनियम के नाभिक में समाविष्ट हो जाता है और उसमें से इलैक्ट्रानों का उत्सर्जन हो जाता है। इसी से ऐसे उत्तर-यूरेनियम[9] तत्त्वों के अस्तित्व की घोषणा की गयी जिनके परमाणु-क्रमांक ९२ से अधिक होंगे और जिनके कारण मेण्डलीफ़ श्रेणी यूरेनियम से आगे की तरफ बढ़ जायगी। किन्तु ऐसे तत्त्व

1. Fission 2. Atomic number 3. Hahn 4. Meitner 5. Strassmann 6. Frisch 7. Joliot-Curie 8. Splitting 9. Trans-uranic

साधारणत: प्रकृत जगत् में उपलब्ध नहीं होते । इसके बाद अन्य गवेषणाओं से (फ्रांस में मुख्यत: जोलियो-क्यूरी की गवेषणाओं से) यह प्रमाणित हो गया कि जब किसी विशेष प्रकार के यूरेनियम नाभिकों पर न्यूट्रानों की टक्कर लगती है तब इन नाभिकों के लगभग बराबर भार के दो टुकड़े होकर दो नये नाभिकों की सृष्टि हो जाती है । यूरेनियम-नाभिक का ऐसा विस्फोट अनेक प्रकार से हो सकता है और विभिन्न परि-स्थितियों में जो नवीन नाभिक उत्पन्न होते हैं वे स्वयं भी अस्थायी होते हैं और बाद में उनका भी तत्त्वान्तरण हो जाता है और उनमें से धन अथवा ऋण इलैक्ट्रानों का उत्सर्जन भी होता है ।

यूरेनियम के विखंडन के आविष्कार के बाद कुछ समय तक ऐसा समझा जाने लगा कि यूरेनियम-नाभिक पर न्यूट्रान की टक्कर से उत्तर-यूरेनियम तत्त्वों की उत्पत्ति संभव है, यह धारणा बिलकुल ग़लत थी । किन्तु इस समस्या के अधिक गंभीर अध्ययन से प्रकट हुआ कि वास्तव में यूरेनियम पर न्यूट्रानों की बौछार करने से दोनों ही काम होते हैं । विखंडन भी होता है और उत्तर-यूरेनियम तत्त्वों की सृष्टि भी होती है। इस बात को समझने के लिए हमें समस्थानिकों की धारणा का सहारा लेना पड़ेगा। यूरेनियम प्रकृति में जिस रूप में पाया जाता है उसमें दो समस्थानिकों का मिश्रण होता है। दोनों का ही परमाणु-क्रमांक ९२ होता है। बहुलतर[1] समस्थानिक $U_{२३८}$ का परमाणु-भार २३८ होता है और उसके नाभिक में ९२ प्रोटान तथा १४६ न्यूट्रान होते हैं। दूसरे समस्थानिक $U_{२३५}$ का परमाणु भार २३५ होता है । उसके नाभिक में प्रोटानों की संख्या तो उतनी ही (९२) होती है, किन्तु न्यूट्रानों की संख्या केवल १४३ ही होती है । यह प्राकृतिक यूरेनियम में अत्यन्त छोटे अनुपात (७/१०००) में उप-स्थित रहता है। यह विरल समस्थानिक बिलकुल अस्थायी होता है और न्यूट्रानों की टक्कर से इसी के नाभिक के विस्फोट से विखंडन की घटना की उत्पत्ति होती है। बहुल $U_{२३८}$ के नाभिक में एक न्यूट्रान समाविष्ट हो जाता है जिससे एक नवीन यूरेनियम नाभिक $U_{२३९}$ बन जाता है । इसका परमाणु-क्रमांक अब भी ९२ ही रहता है, किन्तु उसमें न्यूट्रानों की संख्या १४७ हो जाती है । फलत: परमाणु-भार २३९ हो जाता है। यह नवीन नाभिक अस्थायी होता है। इसके विघटन से एक इलैक्ट्रान उत्पन्न होता है और एक नवीन नाभिक भी उत्पन्न होता है जिसका परमाणु-क्रमांक ९३ और परमाणु-भार २३९ होता है (९३ प्रोटान और १४६ न्यूट्रान) । इस प्रकार एक ऐसे नवीन तत्त्व

1. More abandant

की सृष्टि हो जाती है जिसका प्रकृति में अस्तित्व होता ही नहीं। इसका नाम नेप्ट्यूनियम[1] रख दिया गया है। प्राकृतिक यूरेनियम पर न्यूट्रानों की बौछार से उत्पन्न नेप्ट्यूनियम नाभिक $Np_{२३९}$ भी आपतित न्यूट्रान का अवशोषण करके नेप्ट्यूनियम के भारी समस्थानिक $Np_{२४०}$ के नाभिक को जन्म दे सकता है जिसका परमाणु-क्रमांक तो ९३ ही रहता है, किन्तु परमाणु-भार २४० हो जाता है। यह भारी नेप्ट्यूनियम भी अस्थायी होता है। इसके विघटन से एक इलैक्ट्रान उत्पन्न होता है और एक प्लूटोनियम[2] का नाभिक जिसका परमाणु-क्रमांक ९४ और परमाणुभार २४० होता है। यह दूसरा उत्तर-यूरेनियम तत्त्व है। संक्षेप में प्राकृतिक यूरेनियम पर न्यूट्रानों से गोलाबारी करने से विरल $U_{२३५}$ का तो विखंडन होता है और बहुल $U_{२३८}$ से उत्तरोत्तर नेप्ट्यूनियम तथा प्लूटोनियम बन जाते हैं।

ये सब बातें मालूम हुए दस वर्ष से भी अधिक हो गये हैं। और इसके बाद हमें ९४ से भी अधिक परमाणु-क्रमांकवाले अन्य उत्तर-यूरेनियम नाभिक बनाने में भी सफलता मिल गयी है। ये निम्नलिखित हैं—अमेरीशियम[3] (Z=९५), क्यूरियम[4] (Z=९६) बर्कीलियम[5] (Z=९७), कैलिफोर्नियम[6] (Z=९८), एथीनियम[7] (Z=९९) और शायद शीघ्र ही प्राप्त हो जायगा सेन्ट्यूरियम[8] (Z=१००)। ये सब नाभिक बहुत ही अस्थायी होते हैं और प्राकृतिक स्वोत्सर्जिता के कारण ये विघट्टित हो, जाते हैं। संभव है कि सृष्टि के प्रारम्भ में इनका अस्तित्व प्रकृत जगत् में रहा हो किन्तु प्राकृतिक स्वोत्सर्जिता के कारण बहुत शीघ्र ही इनका नाश हो गया होगा। बीसवीं शताब्दी के मध्य में मनुष्य इन विलुप्त तत्त्वों के पुनःसर्जन में सफल हो गया है। यह बात आश्चर्यजनक है कि मानव-बुद्धि इस जगत् के विकास की प्राकृतिक धारा को कम-से-कम इस पृथ्वी पर परिवर्तित करने में समर्थ हो गयी है।

अब फिर नाभिकीय ऊर्जा पर लौट आइए। विखंडन के आविष्कार से पहले उपर्युक्त नाभिकीय प्रतिक्रियाओं में भाग लेनेवाले परमाणु-नाभिकों की संख्या बहुत थोड़ी होती थी और इन प्रतिक्रियाओं में इतनी सैद्धान्तिक मनोहरता होने पर भी वे केवल प्रयोगशाला का तामाशा ही समझी जाती थीं। उनका कोई व्यावहारिक उपयोग नहीं था। किन्तु १९३९ में भौतिकज्ञों ने इस बात को समझ लिया कि उनके सामने एक भयानक नवीन संभावना उपस्थित हो गयी है। बात यह है कि जब विखंडन की

1. Neptunium 2. Plutonium 3. Americium 4. Curium 5. Berkeleyum 6. Californium 7. Athenium 8. Centurium

घटना में नये न्यूट्रानों की भी उत्पत्ति होती है तो इन नये न्यूट्रानों से भी अन्य प्रतिवेशी परमाणुओं का विखंडन संभव होना चाहिए। अतः यदि परिस्थिति अनुकूलहो तो यूरेनियम में विद्यमान अन्य $U_{२३५}$ के परमाणुओं में भी यह विखंडन शृंखला-क्रम[1] से फैल सकना चाहिए। किन्तु प्रत्येक विखंडन की क्रिया से एक अर्ग[2] के तीन करोड़वें भाग के बराबर गतिज ऊर्जा उन्मुक्त होती है और यह ऊष्मा में परिवर्तित हो सकती है। यह ऊर्जा विखंडित नाभिक की ऊर्जा में से ही प्राप्त होती है। इस ऊर्जा की मात्रा तो अत्यन्त स्वल्प होती है, किन्तु यदि यह विखंडन पूरे यूरेनियम-पुंज में फैल जाय तो संपूर्ण उन्मुक्त ऊर्जा का परिमाण बहुत ही बड़ा हो सकता है। इस प्रकार एक किलोग्राम विरल $U_{२३५}$ के विखंडन से, नाभिकों की अति वृहत् संख्या के कारण, इतनी अधिक ऊष्मा उत्पन्न हो सकती है कि जिससे दस लाख टन पानी का टेम्परेचर ०° से बढ़कर $१००^{\circ}C$ हो जाय। सिद्धान्ततः इस क्रिया के द्वारा डाइनेमाइट[3] जैसे प्रचंड विस्फोटक से भी दस लाख गुणा प्रचंड विस्फोटक हमें प्राप्त हो सकता है।

किन्तु अभी इस भयंकर संभावना को वास्तविकता में परिणत करने का काम बाकी था। अधिक विस्तार में न जाकर हम केवल इतना ही कहेंगे कि इस प्रयत्न ने दो मार्गों का अनुसरण किया। (i) प्राकृतिक यूरेनियम में जो विरल समस्थानिक $U_{२३५}$ अत्यन्त स्वल्प अनुपात में वर्तमान रहता है उसका पृथक्करण। इसका उद्देश्य यह था कि हमें ऐसा पदार्थ मिल जाय जिसमें विखंडित हो सकने योग्य नाभिक बहुत बड़ी संख्या में विद्यमान हों। (ii) $U_{२३८}$ पर न्यूट्रानों की क्रिया से प्लूटोनियम का उत्पादन। यह प्लूटोनियम भी $U_{२३५}$ के समान ही विखंडित हो सकता है। अतः यह भी पारमाणविक बम बनाने के काम में आ सकता है। $U_{२३५}$ और प्लूटोनियम दोनों के ही बम बनाये गये। हिरोशिमा[4] पर जो बम डाला गया था वह शायद प्रथम प्रकार का था और नागासाकी[5] वाला बम शायद द्वितीय प्रकार का था। पिछले युद्ध की समाप्ति के बाद बम बनाने की इन विधियों में निष्पन्नता प्राप्त हो गयी है और जो समाचार मिले हैं उसके अनुसार अब एक नवीन प्रकार के बम का निर्माण होने ही वाला है जिसमें हाइड्रोजन जैसे हलके परमाणु के समस्थानिक के नाभिक के तत्त्वान्तरण का उपयोग किया जायगा। यही विख्यात हाइड्रोजन बम होगा।*

1. Chainwise 2. Erg 3. Dynamite 4. Hiroshima 5. Nagasaki

*अब यह हाइड्रोजन बम निस्सन्देह बन चुका है।

ग्रीक दार्शनिकों की सरल कल्पनाओं से प्रारम्भ करके हमने परमाणु-गर्भ में छिपी हुई ऊर्जा पर मानव-आधिपत्य प्राप्त कर लिया है। पारमाणविक ऊर्जा का मानव-हित के लिए उपयोग करने की संभावना ने मानव इतिहास में एक नवीन युग की स्थापना कर दी है। मानव-बुद्धि सच्चा अभिमान कर सकती ह कि गंभीर और अनवरत प्रयास के द्वारा द्रव्य की आभ्यन्तरिक संरचना के रहस्य का उद्घाटन करने में उसने इतनी सफलता प्राप्त कर ली है कि ऊर्जा का जो खजाना उसमें संचित है उसका उपयोग अब हम कर सकते हैं। इस दृष्टि से वज्ञानिकों के जिस शताब्दियों-व्यापी परिश्रम ने उन्हें द्रव्य की असंतत संरचना से अधिकाधिक स्पष्ट रूप से परिचित कर दिया है उसकी गाथा एक महाकाव्य है जिसको अब तो दिव्यत्व भी प्राप्त हो गया है।

लूई दे ब्रोगली का संक्षिप्त जीवनवृत्त

तरंग-यांत्रिकी के स्रष्टा लूई-दे-ब्रोगली एक विश्व-विख्यात वैज्ञानिक हैं जिनकी भौतिक विज्ञान सम्बन्धी सैद्धान्तिक गवेषणाओं ने तथा उनकी आदरणीय साहित्यिक प्रतिभा ने आधुनिक भौतिक विज्ञान का अति गंभीर रूपान्तर कर दिया है और उन्हें इस समय के अग्रगण्य वैज्ञानिकों में प्रतिष्ठित कर दिया है ।

उनका जन्म फ्रांस के दीप[1] नगर में १८९२ में हुआ था । वे एक विख्यात अभिजात कुल के वंशज हैं । उनकी माध्यमिक शिक्षा पेरिस के एक स्कूल[2] में हुई थी और १९०९ में वे पेरिस विश्वविद्यालय से इतिहास के स्नातक हुए थे । किन्तु विज्ञान में रुचि होने के कारण इतिहास और प्राचीन शिलालेखमय जीवन का परित्याग कर वे पुनः पेरिस विश्वविद्यालय में लौट गये और १९१३ में वे विज्ञान के भी स्नातक हो गये ।

प्रथम विश्व-युद्ध में सैनिक सेवा समाप्त करके वे अपने बड़े भाई मारिस-दे-ब्रोगली[3] द्वारा स्थापित प्रयोगशाला में काम करने लगे और वहाँ वे उन उच्च-आवृत्ति-वाले विकिरणों के प्रायोगिक अध्ययन से परचित हो गये जिनका स्पैक्ट्रमीय अनुसंधान अभी प्रारम्भ हुआ ही था, और जिनके द्वारा प्रकाशीय घटनाओं के कणिकामय और तरंगमय निर्वचनों में से किसी एक को चुनने की समस्या अधिक स्पष्ट रूप में उनके सामने आयी थी । १९२४ में लूई-दे-ब्रोगली ने डाक्टर की डिगरी के लिए अपना अनुसंधान-प्रबन्ध (थीसिस) निवेदित किया जिसका शीर्षक था "क्वांटम-सिद्धान्त सम्बन्धी गवेषणाएँ"[4] और जिसमें उन्होंने इन दोनों परस्पर विरोधी सिद्धान्तों का समन्वय करने का प्रयत्न किया था । प्रत्येक गतिशील कण के साथ उन्होंने एक आनुषंगिक तरंग की कल्पना की थी । जिन कणों का द्रव्यमान प्रेक्षण-ग्राह्य परिमाण का होता है और

1. Dieppe 2. Lyceum 3. Maurice de Broglie 4. Investigations into the Quantum Theory

जिनका अध्ययन चिर-प्रतिष्ठित यांत्रिकी में किया जाता है उनमें तो कणिकाओं के गुणों का ही लगभग पूर्ण प्राधान्य रहता है, किन्तु परमाणु-स्तरीय कणिकाओं में तरंगीय गुण प्रमुख हो जाते हैं। अपने सिद्धान्त की गंभीर क्रान्तिकारी धारणाओं से भयभीत होकर उन्होंने अनेक परिकल्पनाओं के द्वारा चिर-प्रतिष्ठित भौतिक विज्ञान के परम्परागत नियतिवादी निर्वचनों को सुरक्षित रखने का प्रयत्न किया। किन्तु विकट कठिनाइयों के कारण उन्हें ऐसे प्रायिकत्व-मूलक तथा नियति-वर्जक[1] निर्वचनों का समर्थन करने के लिए बाध्य होना पड़ा जिनमें चिरप्रतिष्ठित यांत्रिकी को किसी अधिक व्यापक तरंग-यांत्रिकी का केवल एक विशेष रूप माना जाता है। चार वर्ष बाद इन सिद्धान्तों का प्रायोगिक सत्यापन बैल-टेलीफोन[2] की प्रयोगशाला में कुछ अमरीकी भौतिकज्ञों द्वारा सम्पन्न हुआ जिन्होंने देखा कि इलैक्ट्रानों और प्रोटानों के सदृश पारमाणविक कणिकाओं में उनकी आनुषंगिक तरंगों के कारण प्रकाश और एक्स-किरणों के समान ही विवर्तन की घटना का अस्तित्व होना चाहिए। बाद में इन्हीं विचारों का व्यावहारिक उपयोग चुम्बकीय लैन्सों[3] के विकास में हुआ जिन पर इलक्ट्रान-सूक्ष्मदर्शक[4] आधारित है।

१९२९ में लुई-दे-ब्रोगली को नोबल पुरस्कार मिला और उसी वर्ष "फ्रेंच एकेडेमी आफ साइन्सेज" (फ़्रांसीसी वैज्ञानिक अकादमी) ने उन्हें आंरी प्वांकरे-पदक[5] प्रदान किया। यह पदक उसी वर्ष प्रथम बार प्रदान किया गया था। १९३३ में ये उस अकादमी के सभासद भी निर्वाचित हो गये और १९४२ में एमील पिकार[6] के स्थान में उसके चिर स्थायी मंत्री भी नियुक्त हो गये।

इसके अतिरिक्त १९२६ से वे शिक्षण सम्बन्धी मामलों में भी कार्य कर रहे हैं। १९२८ में उन्होंने पेरिस के सारबोन[7] में और हैमबुर्ग[8] विश्वविद्यालय में कई व्याख्यान दिये और आंरी प्वांकरे इन्स्टीट्यूट में वे सैद्धान्तिक भौतिकी के प्रधानाध्यापक नियुक्त किये गये और उनके ही प्रयत्न से यह संस्था समकालीन भौतिक सिद्धान्तों के अध्ययन के लिए एक केन्द्र बन गयी। विज्ञान और शिल्प में सहयोग की कमी के कारण जो कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गयी थीं उन्हें दूर करने की इच्छा से १९४३ में उन्होंने प्वांकरे इन्स्टीटयूट की एक और शाखा की स्थापना की जिसका उद्देश्य अनुप्रयुक्त यांत्रिकी[9] का अध्ययन था। विज्ञान के व्यावहारिक अनुप्रयोगों में उनकी रुचि उनकी

1 Indeterministic 2. Bell Telephone 3. Magnetic lenses 4. Electron microscope 5. Henri Poincare medal 6. Emile Picard 7. Sarbonne 8. Hamburg 9. Applied Mechanics

कुछ हाल की पुस्तकों से भी प्रकट हाती है जो कणिका-त्वरित्रों[1], तरंग-प्रणालों[2], पारमाणविक ऊर्जा[3] तथा साइबरनेटिक्स[4] आदि विषयों पर लिखी गयी हैं।

लूई-दे-ब्रोगली ने पारमाणविक कणिकाओं तथा प्रकाश-विज्ञान पर महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक पुस्तकें प्रकाशित की हैं। यथा—एक्स-किरणों तथा गामा किरणों पर अपने भाई के सहयोग से लिखी हुई पुरानी पुस्तक, तरंग-यांत्रिकी पर मौलिक अनुसंधान-पत्र तथा पारमाणविक तथा नाभिकीय सिद्धान्तों पर उच्च कोटि की पाठ्य पुस्तकें। इन नवीन सिद्धान्तों के दार्शनिक पक्षों का विवेचन इन्होंने अपने व्याख्यानों और लोकप्रिय पुस्तकों में किया है। इस क्षेत्र में उनकी नवीनतम पुस्तक आधुनिक भौतिक विज्ञान के १९११ की प्रथम भौतिकीय सॉलवे कांग्रेस[5] से लेकर आज तक के इतिहास के विषय में लिखी गयी है।

उनके साहित्यिक कार्य के कारण १९४५ में वे फ्रांसीसी अकादमी[6] के सदस्य निर्वाचित हुए। वे फ्रांसीसी वैज्ञानिक लेखक संघ[7] के सम्मानित सभापति हैं और १९५२ में उन्हें वैज्ञानिक लेखन की उत्कृष्टता के लिए कलिंग-प्रतिष्ठान[8] द्वारा प्रदत्त प्रथम पुरस्कार मिला था।

जब १९४५ में फ्रांसीसी सरकार ने पारमाणविक ऊर्जा के उच्च आयोग[9] की स्थापना की तो लूई-दे-ब्रोगली उसके तकनीकी परामर्शदाता नियुक्त किये गये और जब १९५१ में उस आयोग का पुनः संघटन हुआ तब भी वे परामर्शदात्री वैज्ञानिक कौंसिल[10] के मेम्बर बने रहे।

1. Particle accelartors 2. Wave-guides 3. Atomic enrgy 4. Cybernetics 5. First Solway Congress of Physics 6. French Academy 7. French Association of Sceince Writers 8. Kalinga Foundation 9. High Commission for Atomic Energy 10. Advisory Scientific Council

कालानुक्रमणिका

बीसवीं शताब्दी की क्वांटम तथा पारमाणविक सिद्धान्तों के विकास-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण घटनाओं की कालानुक्रमणिका।

१९०१—कृष्ण-विकिरण की क्वांटम परिकल्पना। आधुनिक भौतिकी में क्वांटम की धारणा का प्रथम प्रादुर्भाव (प्लांक)।

१९०५—विशिष्ट आपेक्षिकता का सिद्धान्त (आइन्स्टाइन)।

—प्रकाश-वैद्युत प्रभाव की प्रकाश-क्वांटम (फ़ोटान) के द्वारा व्याख्या (आइन्स्टाइन)।

१९०७—विशिष्ट-ऊष्मा का क्वांटमीय निर्वचन (आइन्स्टाइन तथा डिबाई)।

१९१०—परमाणु का ग्रहीय प्रतिरूप (रदरफ़ोर्ड)।

१९१३—परमाणु के ग्रहीय प्रतिरूप का सैद्धान्तिक आधार और स्पैक्ट्रमीय रेखाओं की व्याख्या (बोह्र)।

—समस्थानियों का आविष्कार (टामसन)।

१९१६—आपेक्षिकता का व्यापक सिद्धान्त (आइन्स्टाइन)।

—पुराने क्वांटम-सिद्धान्त की पराकाष्ठा (सामरफ़ेल्ड तथा विलसन)।

—आनुरूप्य-नियम का प्रतिपादन (बोह्र)।

१९१९—कृत्रिम स्वोत्सर्जिता (रदरफ़ोर्ड)।

१९२३—काम्पटन-प्रभाव का आविष्कार और निर्वचन (काम्पटन तथा डिबाई)।

—द्रव्य-कणिकाओं की तरंगीय प्रकृति की परिकल्पना (दे ब्रोगली)।

—प्रकाश के वर्ण-विक्षेपण का क्वांटम-सिद्धान्त (क्रामर्स, हाइज़नबर्ग)।

१९२५—क्वांटम-यांत्रिकी अथवा मैट्रिक्स-यांत्रिकी (हाइज़नबर्ग)।

—इलैक्ट्रान के नर्तन की परिकल्पना (उहलनबैक तथा गूडस्मिट)।

१९२७—अनिश्चितता के अनुबन्धों का प्रकाशन (हाइज़नबर्ग)।

—द्वि-साधन-सिद्धान्त और नाविक-तरंग-सिद्धान्त (दे ब्रोगली)।

—तरंग-यांत्रिकी का परिशुद्ध रूप (दे ब्रोगली, श्रोडिंगर)।

—इलैक्ट्रान-विवर्तन का प्रायोगिक प्रमाण और द्रव्य-कणों की तरंगीय प्रकृति (डेविसन तथा गर्मर)।

१९२८—परमाणु-नाभिकों का क्वांटम-सिद्धान्त (सुरंग-प्रभाव) (गैमो)।

१९३०—इलैक्ट्रान का सम्पूर्ण आपेक्षिकीय सिद्धान्त (डिरैक)।

१९३१—न्यूट्रान का आविष्कार (बोथे, बैकर, चैडविक)।

१९३२—पाज़ीट्रान का आविष्कार (ऐण्डरसन, ब्लैकेट तथा ओकियालिनी)।

१९३५—मेसानों के अस्तित्व की परिकल्पना (युकावा)।

१९३८—यूरेनियम का विखंडन (हान, माइटनर इत्यादि)।

१९४२—प्रथम स्वतःपोषित पारमाणविक शृंखलित प्रतिक्रिया (फ़रमी इत्यादि)।

१९४६—नाभिकीय उत्सर्जन का मेसान-क्षेत्र-सिद्धान्त (हाइज़नबर्ग)।

१९४८—मेसानों का कृत्रिम उत्पादन (गार्डनर तथा लैटेस)।

१९५२—क्वांटम-प्रक्रियाओं के नियतिवादी निर्वचन का पुनरुद्धार (दे-ब्रोगली बोह्म)।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

(क) चिरप्रतिष्ठित पृष्ठ-भूमि सम्बन्धी साधारण अवलोकनीय ग्रन्थ।

1. Maxwell : Matter and Motion.
2. Maxwell : A Treatise on Electricity and Magnetism (1946).
3. Einstein and Infeld: The Evolution of Physics (1938).
4. Jeans : Physics and Philosophy (1946).
5. Planck : The Universe in the Light of Modern Physics (1937).

(ख) क्वांटम-सिद्धान्त।

1. Gamow : Mr Tompkins in Wonderland (1940).
2. Hoffman : The Strange Story of the Quantum (1947).
3. Bergmann : Basic Theories of Physics : Heat and Quanta (1951).
4. Perisco : Fundamentals of Quantum Mechanics (1950).
5. Heitler : The Quantum Theory of Radiation (1944).

(ग) विशिष्ट प्रसंग।

1. Loeb : The Nature of a Gas (1931)
2. Rutherford: The Newer Alchemy (1937).
3. Frank : Relativity and its Astronomical Implications (1943).

4. Heisenberg : The Physical Principles of the Quantum Theory (1930).
5. Herzberg : Atomic spectra and Atomic Structure (1937).
6. Coulson : Valence (1952).

(घ) लुई दे ब्रोगली के अन्य ग्रन्थ ।

1. Matter and Light (New York, 1937).
2. Continu et Discontinu en Physique Modern (Paris,1941).
3. De la Mecanique Ondulatoire a la Theorie du Noyau (Paris, 1946).
4. Physique et Microphysique (Paris, 1947)
5. Optique Electronique et Corpusculaire (Paris, 1947).
6. L'Energy atomic et ses Applications (Paris, 1951).

पारभाषिक शब्दावली

हिन्दी-अंगरेजी

अकणीय	Non-corpuscular
अचर	Constant
अचर वेग	Constant velocity; Uniform vel
अणु	Molecule
अति-क्वांटमीकरण	Super-quantisation
अतिचालकता	Super conductivity
अतिव्याप्त होना	Overlap
अतिव्याप्ति	Overlapping
अदिष्ट	Scalar
अद्वितीय	Unique
अधिमान्यता	Postulate
अधिमान्य नियम	Postulate
अधिष्ठित (आकाश)	Occupied (space)
अधिसंख्य	Super numerary
अध्यारोपण	Superimposition; Super position
अनन्त	Infinite
अनन्तस्पर्शी	Assymptotic
अनन्ती	Infinity
अनन्य संसक्त	Isolated
अनाविष्ट	Neutral (eletrically)
अनियतिवादी	Indeterministic
अनिर्णीत	Indeterminate
अनिर्णीतता	Indeterminacy; Indeterminism

अनिश्चितता	Uncertainty, Ambiguity
अनिश्चितता के अनुबन्ध	Uncertainty Relations
अनुकल	Integral
अनुकल, प्रथम	First Integral
अनुकल, रैखिक	Line integral
अनुकलन	Integration
अनुक्रम	Sequence
अनुनाद	Resonance
अनुन्यस्त	Oriented
अनुपात	Ratio; proportion
अनुपाती	Proportional
अनुप्रयोग	Application
अनुप्रयुक्त	Applied
अनुप्रस्थ	Transverse
अनुबन्ध	Relation
अनुभवगम्य	Appreciable
अनुरूपी	Corresponding
अनुस्थापन	Orientation
अन्तराल	Interval
अन्तरालित	Spaced
अन्तरिक्ष किरणें	Cosmic rays
अन्तःकालीन	Provisional
अन्तःपरमाणुक	Intra-atomic
अन्योन्य क्रिया	Interaction
अन्योन्य प्रभावक	Interacting
अन्योन्यानुवर्तत्व	Reciprocity
अन्योन्यानुवर्ती	Reciprocal
अन्योन्याश्रयत्व	Interdependence
अपकृष्ट	Degenerate (maths)
अपकेन्द्र बल	Centrifugal force

अपरित्याज्य	Indispensable
अपवर्जन नियम	Exclusion Principle
अपवर्जित	Excluded
अपवर्त्य	Multiple
अपवर्त्य, पूर्णांकी	Integral multiple
अपवाद	Exception
अपसारी	Divergent
अप्रगामी तरंग	Stationary wave
अभिदिशा	Sense (of a direction)
अभिलम्ब	Normal (to a surface)
अभिलम्बत:	Normally
अभिव्यक्ति	Significance
अमूर्त	Abstract
अर्ध-दिष्ट	Half-vector
अर्ध-पूर्णांक	Half-integer
अर्ध-पूर्णांकी	Half integral
अर्धायु	Half-life
अल्पान्तरी	Geodesic
अवकल	Differential
अवकलज	Derivative
अवकल गुणांक	Differential coefficient
अवकल समीरकण	Differential equation
अवकलन	Differentiation
अवकलन का वर्ण	Order of Differentiation
अवधारण	Concept
अवमन्दित	Damped (motion)
अवरक्त	Infra-red
अवरोध	Obstacle
अवशोषण	Absorption
अवस्थापन	Localisation

अवस्था-समीकरण	Equation of state
अवस्थितित्व	Inertia
अविकर्णी अवयव	Non-diagonal element
अविकल्पतः	Uniquely
अविचल	Invariant
अविनाशिता	Conservation
अविभेद्य	Indistinguishable
अविरुद्ध	Compatible
अव्यवहित	Immediate (neighbourhood)
असंतत	Discontinuous
असंधेय	Irreconcilable
असंपीडयता	Incompressibility
असंबद्ध	Uncoordinated
असामान्य (ज़ीमान-प्रभाव)	Anomalous or complex (Zeeman effect)
आकार	Size
आकाश	(1) Space (2) Sky
आकाशीय	Spatial
आकुंचन	Contraction
आकृति	Shape
आक्सीकरण	Oxidation
आगम	Dogma
आदर्श गैस	Perfect gas
आदर्शीकरण	Idealisation
आनुभविक	Empirical
आनुरूप्य	Correspondence
आनुरूप्य-नियम	Correspondence principle
आनुषंगिक	Corresponding; Associated
आपतन	Incidence
आपतित	Incident

आपेक्षिकता	Relativity
आपेक्षिकता, विशिष्ट	Special Relativity
आपेक्षिकता, व्यापक	General Relativity
आपेक्षिकीय	Relativistic
आभासी	Apparent
आयन	Ion
आयनित	Ionised
आयाम	Amplitude
आयोग	Commission
आर्थो-हीलियम	Ortho-helium
आलफ़ा-कणिका	Alpha-particle
आवर्त	Periodic
आवर्त-कल्प	Quasi-periodic
आवर्त-काल	Period; Periodic time
आवर्त-क्रम	Periodic system
आवर्त-गति	Periodic motion
आवर्तत्व	Periodicity
आवर्तन-चक्र	Cycle
आवर्ताभासी	Quasi-periodic
आविष्कार	Invention
आविष्कृत	Invented
आवृत्ति	Frequency
आवेश	Charge
आवेषण	Electrification
इलैक्ट्रान	Electron
इष्ट	Proper
इष्ट-फलन	Proper function
इष्ट-मान	Proper value
ईथर	Ether
उत्तर-यूरेनियम	Trans-uranium

उत्तरोत्तर	Successively
उत्तरोत्तरवर्ती	Successive
उत्सर्जन	Emission
उद्गमन विधि	Inductive method
उन्मीलित	Open
उपकरण	Apparatus
उपत्यका, विभव–	Valley of potential
उपयोग	Application
उपलभासिता	Opalescence
उपलभ्य	Available
उपादेय	Admissible
ऊर्जा	Energy
ऊर्जा, गतिज	Kinetic energy
ऊर्जा, स्थितिज	Potential energy
ऊर्जा-विज्ञान	Energetics
ऊष्मा	Heat
ऊष्मा, पारमाणविक	Atomic heat
ऊष्मा, विशिष्ट	Specific heat
ऊष्मा-क्षेपक	Exothermic
ऊष्मा-गतिकी	Thermodynamics
ऋण	Negative
एकक	(1) Single, individual, (2) Singlet
एकमानीय	Single-valued; monotonic
एकमुखी	Monotonic
एक-वर्ण	Monochromatic
एक-समान	Uniform
एकात्मक	Identical
एकान्तरत:	Alternately
एक्स-किरण	X-ray

एरियल	Arial; Antenna
ऐन्ट्रोपी	Entropy
अंक-सारणी	Table of numbers
अंश	(1) Part (2) Numerator
आंशिक अवकलन	Partial Differentiation
कक्षा	Orbit
कठोर (परिकलन)	Rigorous (Calculation)
कण	Particle
कणिका	Corpuscle, particle
कणिका-त्वरित्र	Particle accelerator
कम्पन	Vibration
कर्ल	Curl
कला	Phase
कला-तरंग	Phase wave
कला-वेग	Phase velocity
कल्पित	Imaginary
कारक	Operator (mathematical)
कार्तीय	Cartesian
कार्य	Work
कार्य-कारण-सिद्धान्त	Causal theory
कार्य-कारण-सम्बन्ध	Causal bond or relationship
कालानुकल	Time integral
किरण	Ray
किरणावली	Beam
कीमियागर	Alchemist
कुल	Family
कुल, पृष्ठ–	Family of surfaces
कुल, वक्र–	Family of curves
कृष्ण-वस्तु	Black-body
कैथोड किरण	Cathode ray

कैन्द्रिक	Central
कोटि (परिमाण की)	Order of magnitude
कोटि (स्वतंत्रता की)	Degree of freedom
कोटि (मैट्रिक्स की)	Rank (of Matrix)
कोष्ठक	Enclosure
क्रमागत	Successive
क्रिया	Action; operation
क्रिया, दूरतः सम्पन्न	Action at a distance
क्रिया का अनुकल	Integral of action
क्रिस्टल	Crystal
क्वांटम	Quantum
क्वांटम, क्रिया का	Quantum of action
क्वांटम-भौतिकी	Quantum Physics
क्वांटम-क्षेत्र-सिद्धान्त	Quantum field theory
क्वांटम-संख्या	Quantum number
क्वांटम, विभव	Quantum potential
क्षय	Extinction
क्षारीय तत्त्व	Alkaline element
खगोलीय यांत्रिकी	Celestial Mechanics
खोलक	Shell
गतिकी	Dynamics
गतिकीय	Dynamical
गतिमिति	Kinematics
गति विज्ञान	Dynamics
गत्यात्मक	Dynamic
गत्यामक सिद्धान्त	Kinetic theory
गणना	(1) Calculation (2) Counting
गमन पथ	Trajectory; path
गर्त	Hole
गामा किरणें	Gama rays

गुणात्मक	Qualitative
गुरुत्व	Gravity
गुरुत्वाकर्षण	Gravitation
गुरुत्व-केन्द्र	Centre of gravity
गोलाबारी	Bombardment
गोला	Sphere
गोलीय	Spherical
ग्रह	Planet
ग्रहतुल्य	Planetary
ग्रहीय	Planetary
ग्राम-अणु	Gram-molecule
ग्राम-परमाणु	Gram-Atom
ग्रेटिंग	Grating
घटना	Phenomenon
घटनामूलक	Phenomenological
घट-बढ़	Fluctuation
घन	(1) Cube (2) Solid
घनत्व	Density
घात	Power (algebra); Degree of equation
घातांक	Index (Power)
घूर्ण	(1) moment (2) rotating
घूर्ण, चुम्बकीय	Magnetic Moment
घूर्ण–संवेग	Moment of momentum
घूर्ण-चुम्बकीय	Gyro-magnetic
घूर्णन	Rotation
चक्र	Cycle
चक्रीय अनुकल	Cyclic integral
चतुर्दिष्ट	Four-vector
चाक्रिक आवर्तकाल	Cyclic period

चालकता	Conductivity
चालन	Conduction
चिर-प्रतिष्ठित	Classical
चुम्बक	Magnet
चुम्बक-प्राकाशिकी	Magneto-optics
जटिल	Complex
जटिलता	Complexity
जीमान प्रभाव	Zeeman effect
ज़ीमान प्रभाव, असामान्य	Zeeman effect, complex Zeeman effect, anomalous
ज़ीमान प्रभाव, सामान्य	Zeeman effect, normal
जैव	Vital
ज्या	Sine
ज्या-गति	Sine motion
ज्या-फलन	Sine function
ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान	Geometrical Optics
टेन्सर	Tensor
टेम्परेचर	Temperature
ढाँचा	Framework
तकनीकी	Technical
तत्त्व	Element
तत्त्वान्तरण	Transmutation
तत्त्वान्तरणशील	Transmutable
तत्संगत	Corresponding
तनाव	Tension
तरंग	Wave
तरंग-गुच्छ	Wave-packet
तरंग, गोलीय	Wave, spherical
तरंग-पृष्ठ	Wave-surface
तरंग-प्रणाल	Wave-guide

तरंग-माला	Wave-train
तरंग-यांत्रिकी	Wave-Mechanics
तरंग, समतल	Wave, plane
तरंग-समीकरण	Wave-equation
तरंग-संघ	Wave-group
तरंगाग्र	Wvae-front
तरंगांक	Wave-number
तात्कालिक	Immediate; instantaneous
तापदीप्त	Incandescent
तापायनिक	Thermionic
तापीय संक्षोभ	Thermal agitation
ताराभौतिकी	Astrophysics
तीव्रता	Intensity
त्रिगुण	Triple
त्रिज्या	Radius
त्रिविमितीय	Three-dimensional
त्रिविमितीय रसायन	Stereo-chemistry
त्वरण	Acceleration
त्वरित्र	Accelerator
दबाव	Pressure
दहन	Combustion
दिक्-काल	Space-time
दिगन्तराल	Distance in space
दिगानुस्थापन	Orientation
दिगंश	Azimuth
दिगंशीय	Azimuthal
दिष्ट	Vector
दिष्टीय	Vectorial
दीर्घकालिक	Secular
दीर्घवृत्त	Ellipse

दीर्घवृत्तीय कक्षा	Elliptical orbit
दूर-संचार	Telecommunication
दूषित-चक्र (दुश्चक्र)	Vicious circle
दृढ़	Rigid
देहली	Threshold
दोलक	Oscillator
दोलन	Oscillation
द्रव	Liquid
द्रव-यांत्रिकी	Hydraulics
द्रव्य	Matter
द्रव्य-तरंग	Material wave; Matter wave
द्रव्य-विन्दु	Material point
द्रव्यत्व-विलोपन	Dematerialisation
द्रव्यत्व-सर्जन	Materialisation
द्रव्य-मान	Mass
द्विक	Doublet
द्विक-रेखा	Doublet line
द्वि-परमाणुक	Diatomic
द्वि-वर्तन	Double refraction; Birefringence
द्वि-साधन	Double solution (of equation)
द्वैत	Duality
द्वैतमय	Dualistic
द्वैतीयिक	Secondary
द्वैध	Dual
धारणा	Concept; idea
धारा	Current
ध्रुवण	Polarisation
ध्रुवण, वृत्त	Polarisation, circular

ध्रुवण, समतल	Polarisation, plane
ध्रुवण-शील	Polarisable
ध्रुवत्व	Polarity
ध्रुवित	Polarised
ध्वनि	Sound
ध्वानिकी	Acoustics
नक्षत्र	Star
नक्षत्र-भौतिकी	Astro-physics
नर्तक	Spinning;
नर्तन	Spin
नाभिक	Nucleus
नाभिकाभ्यन्तरिक	Intra-nuclear
नाभिकीय	Nuclear
नार्तनिक	Spinor
नार्तनिकीय	Spinorial
नाविक-तरंग	Pilot wave
निकल	Nicol
निकाय	System (of bodies)
निगमन	Deduction
निमीलित	Closed
नियतांक	Constant
नियतिवाद	Determinism
नियतिमूलक	Deterministic
नियतिवर्जक	Indetermenistic
नियम	Rule, Law, Principle
नियंत्रक	Restraining (adj)
निरसन	Elimination
निरूपक विन्दु	Representative point
निरूपण	Representation
निर्णीत	Determinate

निर्देशाक्ष	Coordinate axis
निर्देशाक्ष तंत्र	System of Coordinate axes
निर्देशांक	Coordinates
निर्वचन	Interpretation
निविष्ट करना	Introduce
निवेषण	Introduction
निश्चयात्मक	Definitive
निश्चर	Invariant
नैज द्रव्यमान	Proper mass
नैज समय	Proper time
न्यास	Data
न्यूक्लियान	Nucleon
न्यूट्रान	Neutron
न्यूनतम-क्रिया-सिद्धान्त	Principle of Least Action
न्यूनतम-समय-सिद्धान्त	Principle of least time
पक्षान्तरण	Transposition
पट्टी	Band (in spectrum)
पट्टीदार स्पैक्ट्रम	Band spectrum
पद	Term
पद, स्पैक्ट्रमीय	Spectral Term
पदवी	Rank (of Matrix)
परम टेम्परेचर	Absolute Temperature
परम-मापक्रम	Absolute scale
परमाणु	Atom
परमाणु-क्रमांक	Atomic number
परमाणु-भार	Atomic weight
पारमाणविक	Atomic
परा बैंगनी	Ultra-violet
परास	Range
परिकलन	Calculation

परिकल्पना	Hypothesis
परिक्षेपण	Scattering
परिच्छद	Shell
परिच्छिन्न	Precise
परिच्छिन्नता	Precision
परिणमन	Variation
परिपथ	Circuit (electrical)
परिपूरक	Complementary
परिपूरकता	Complementarity
परिमित	Finite
परिलक्षक राशि	Characterising quantity
परिवहन	Transport
परिसीमन / परिसीमा	Limitation
परिसौर विन्दु	Perihelion
पाजीट्रान	Positron
पारगमन	Transmission
पारवैद्युतांक	Dielectric constant
पारस्परिक ऊर्जा	Mutual energy
पारस्परिक क्रिया	Interaction
पारहीलियम	Parhelium
पारिमाणिक	Quantitative
पूर्ण अपवर्त्य	Whole multiple
पूर्णांक	Whole number; integer
पूर्वापर विरोधहीन	Coherent
पूर्वविधानता	Precaution
परम्परानिष्ठ	Orthodox
प्रकाश-विज्ञान	Optics
प्रकाश-विद्युत्	Photo-electricity
प्रकाश-वैद्युत	Photo-electric

प्रकृत-जगत्	Nature
प्रकृति	Nature
प्रकृष्ट	Rigorous (calculation)
प्रक्षेप	Throw
प्रक्षप-पथ	Trajectory
प्रगतिशील	Progressive
प्रचरण	Propagation
प्रच्छन्न रूप	Potential; implied, hidden
प्रणोदित दोलन	Forced oscillation
प्रति-इलैक्ट्रान	Anti-electron
प्रतिकृति	Model
प्रति-कैथोड	Anti-cathode
प्रतिक्रिया	Reaction
प्रतिपादन	Treatment (of a subject)
प्रतिबन्ध	Condition
प्रतिबिम्ब	Image
प्रतिरूप	Model; image
प्रतिवेश	Neighbourhood
प्रतिषेध	Contradiction
प्रतिस्थापन	Substitution
प्रति-संमित	Anti-symmetric
प्रतिविस्थापन-बल	Restoring force
प्रत्ययवाद	Idealism
प्रत्यावर्ती धारा	Alternating Current
प्रत्यास्थ	Elastic
प्रत्यास्थता	Elasticity
प्रदीपन	Illumination; exposure to light
प्रमेय	Theorem
प्रयोग	Experiment
प्रयोग-लब्ध मान	Experimental (value)

प्रयोग-विन्दु	Point of Application (of force)
प्रवणता	Gradient; slope
प्रवाह	Flux
प्रसार	Expansion { (in size) (math)
प्रसंवादी	Harmonic
प्राकाशिक ईथर	Luminiferous ether
प्राकाशिक दिष्ट	Light-vector
प्राक्षेपिक	Ballistic
प्रागुक्ति	Prediction
प्राचल	Parameter
प्राथमिक	Primary
प्रायिक	Probable
प्रायिकता	Probability
प्रायिकता-कलन	Calculus of probabilities
प्रायिकतामूलक	Probabilistic
प्रायोगिक	Experimental
प्रारूप	Draft
प्रावैधिक	Technical
प्रिज़्म	Prism
प्रेक्षण	Observation
प्रेक्षण गम्य	Observable
प्रेक्षित मान	Observed value
प्रेक्ष्य	Observable
प्रेरण	Induction
प्रेरित	Induced
प्रोटान	Proton
फलन	Function (Maths)
फ़ोटान	Photon
फ़ाटाग्राफ़क	Photographic

फ़िंज	Fringe
फ़िंज, अदीप्त	Fringe, dark
फ़िंज, दीप्त	Fringe, bright
बन्धन	Bond
बल-गतिकी	Kinetics
बहिर्वेशन	Extrapolation
बहु-परमाणुक	Multi-atomic
बहुमानी	Multi-valued
बहुल	Abundant
बहु-सयाजकता	Multiple valency
बीजातीत	Transcendental (Maths)
बीजीय	Algebraical
बुध (ग्रह)	Mercury
बोधगम्य	Appreciable
बन्धुता	Affinity
भार	Weight
भारित माध्य	Weighted mean
भूल	Error
भौतिक	Physical
भौतिक विज्ञान	Physics
भौतिकी	Physics
मन्दन	Retardation; slowing (of clock)
मात्रक	Unit
मात्रा	Quantity
माध्य	Mean
माध्यम	Medium
मान्यता	Validity
मापतंत्र	Matric
मापदंड	Scale
मापांक	Modulus

मूल कणिका	Fundamental particle Elementary particle
मेघिता	Opalascence
मेसान	Meson
मैगनेटान	Magneton
मैट्रिक्स	Matrix
मैट्रिक्स की पंक्ति	Matrix, row of—
मैट्रिक्स का स्तंभ	Matrix, column of—
	Random; arbitrary
यदृच्छता	Randomness
यांत्रिक	Mechanical
यांत्रिक तुल्यांक	Mechanical equivalent
यांत्रिकी	Mechanics
यांत्रिकी, शुद्ध	Rational mechanics
योगफल	Addition
योजनात्मक	Schematic
यौगपदिक	Simultaneous
यौगिक	Compound;Complex (particle)
रक्तविस्थापक	Red-shift
रक्ताभिमुखी विस्थापन	Red-shift
रचना	Construction
राशि	Quantity
रांजन किरणें रंजन किरणें	X-rays; Rontgen Rays
रूढ़िनिष्ठ	Orthodox
रूपान्तरण	Transformation
रेखा-अनुकल	Line-integral
रैखिक	Linear
लम्ब	Perpendicular
लम्बकोणिक	Orthogonal

लाक्षणिक	Characteristic
लागरिथ्म	Logarithm
वक्र	Curve
वक्ररेखीय	Curvilinear
वरण	Selection
वरण-नियम	Selection Principle
वर्ग	Square; class
वर्ण	(1) Clour (2) Order of Differentiation
वर्ण-विक्षेपण	Dispersion
वर्तक	Refracting
वर्तन	Refraction
वर्तनांक	Refractive index
वलय (न्यूटन के)	Rings (Newton's)
वास्तववादी	Realist
वास्तविक	Real
विकर्ण	Diagonal
विकर्णी अवयव	Diagonal elements
विकल्पत:	Alternatively
विकार	Perturbation
विकास	Evolution; development
विकिरण	Radiation
विकिरण ऊर्जा	Radiant energy
विकीर्णन	Scattering
विकृति	Strain; deformation
विक्षेप	Deflection
विक्षोभ	Disturbance
विखंडन	Fission
विघटन	Disintegration
विघटनांक	Disintegration constant

विचरित होना	Vary
विचलन	Deviation
विचित्रता	Singularity
विचित्र प्रदेश	Singular zone
विचित्र विन्दु	Singular point
वितरण	Distribution
विदलन	Splitting
विद्युतन	Electrification; charging
विद्युत्-गतिकी	Electro-dynamics
विद्युत्-चुम्बकीय पद्धति	Electro-magnetic System
वि ाशिकी	Electro-optics
विनिमय	Exchange
विनिमय ऊर्जा	Exchange energy
विनिमेयता	Interchangeability
विन्दु-कल्प	Point like
विन्दु-यांत्रिकी	Point-Mechanics
विन्यास	Configuration
विन्यासाकाश	Configuration space
विपर्यय	Inversion
विभव	Potential
विभव उपत्यका	Potential valley
विभव पर्वत	Mountain of Potential
विभाज्यता	Divisibility
विभेदन शक्ति	Resolving power
विमिति	Dimensions of space
विमितीय समीकरण	{ Dimension of Units Dimehsional equation
विरल	Rare
विरोधाभासी	Paradoxical
विलागक	Insulator

विलागित	Insulated
विलोम प्रमेय	Converse theorem
विवर्तन	Diffraction
विवर्तन आकृति	Diffraction figure
विशिष्ट ऊष्मा	Specific heat
विश्लेषण	(1) Analysis (2) Resolution (of forces etc) (3) Decomposition (spectral)
विश्व-बल	World-force
विश्व-रेखा	World-line
विषम (संख्या)	Odd (number)
विषमता	Anomaly
विषम दिक्	Anisotropic
विषम ध्रुवी	Heteropolar
विसरण	Diffusion
विसर्ग	Discharge
विसर्ग नलिका	Discharge Tube
विसंमिति	Dis-symmetry
विस्थापन	Displacement
वेधनशील	Penetrating
वैद्युत	Electric
वैध द्विक	Reguler Doublet
वैधानिक	Canonical
वैधानिकतः संयुग्मी	Canonically conjugate
वैधानिक पद्धति	Formal system
वैधानिक प्रक्रिया	Formalism
वैश्लेषिक	Analytical
व्यक्तिगत	Individual
व्यक्तित्व	Individuality
व्यक्तिनिष्ठवाद	Subjectivism

व्यतिकरण	Interference
व्यत्ययशील	Commutative
व्यत्ययहीन	Non-commutative
व्यापक	General
व्यापकीकृत	Generalised
व्यापकीकरण	Generalisation
व्यावहारिक	Practical
व्युत्क्रम	Reciprocal (maths)
व्युत्पन्न	Derived; Derivative
व्यंजक	Expression
शक्ति	Power
शब्द-विज्ञान	Acoustics
शुद्ध-दशा	Pure case
श्यानता	Viscosity
श्रेणी	Series
षड्गुण	Sextuple
सत्यापन	Verification
सदिश	Vector
सदिश त्रिज्या	Radius vector
सन्निकटतः	Approximately
सन्निकटन	Approximation
सन्निविष्ट करना	Incorporate
समकलीय	In same phase
समकोणिक	Rectangular
समतल	Plane
समता	Equality
समतापीय	Isothermal
समदिक्	Isotropic
समदिगत्व	Isotropy
सम-ध्रुवी	Homopolar

सम-विभाजन	Equipartition
सम-स्थानीय; समस्थानिक	Isotope
सम-धर्मी	Homologous
समानधर्मी	Homologous
समारोपित करना	Attribute
समाहरण	Assemblage
समांगी	Homogeneous, Uniform
सम्मिश्र राशि	Complex quantity
सरल आवर्तगति	Simple Harmonic motion
सरल आवर्त पद	Harmonic terms
सरल दोलक	Harmonic Oscillator
सहकर्षण	Drag
सहचरण, सहचरत्व	Co-variance
साधन	Solution (of equation)
सामान्य	Normal
सामान्यीकरण	Normalisation
सामूहिक अवस्था	Collective state
सार्वत्रिक नियतांक	Universal constant
सिद्धान्त	Theory; Principle
सैद्धान्तिक	Theoretical; Theorist
सीमान्त दशा	Limiting case
सुरंग-प्रभाव	Tunnel effect
सूक्ष्म-मापदंडीय सूक्ष्म-स्तरीय	Microscopic
सूक्ष्म रचना	Fine structure
सौर-जगत् सौर-मंडल	Solar System
संकल्पना	Pastulate; Assumption
संकालत्व	Synchronism
संकालन	Synchronisation

संकालित करना	Synchronise
संकेतांक	Index
संकोषण	Pooling
संक्रमण	Transition
संक्रमणिक	Critical
संक्षोभण	Perturbation
संघ	Group; System
संघटक	Component
संघट्ट	Collision
संघनित	Condensate; condensed
संघ-सिद्धान्त	Group Theary
संचय	Combination (algebra)
संचालन शक्ति	Motive power
संतत	Continuous
संतुलन	Equilibrium
संतृप्त	Saturated
संतृप्ति	Saturation
संपाती	Coincident
संपुट	Shell
संमिति	Symmetry
संयुग्मी	Conjugate
संयोजकता	Valency
संयोजकता, दिष्ट	Valency, directed
संयोजकता, बहु	Valency, multiple
संयोजन-नियम	Principle of Combination
संरचना	Constitution; Structure
संलग्न	Attached
संवर्तन	Becoming
संवहन	Convection
संवेग	Momentum

संश्लेषण	Synthesis
संश्लेषात्मक	Synthetic
संसंजन	Cohesion
संस्थान	(1) Framework (2) System
संहति	System (of equations)
सांकेतिक	Symbolic
सांकेतिकता	Sombolism
सांख्यिक मान	Numerical value
सांख्यिकी	Statistics
सांख्यिकीय यांत्रिकी	Statistical Mechanics
सांतत्य	Continuity
सांतत्यक	Continuum
स्थायी	Stable
स्थावर अवस्था	Stationary state
स्थितिज ऊर्जा	Potential energy
स्थिर अनुकल	Stationary integral
स्थिर क्रिया	Stationary action
स्थिर-वैद्युत पद्धति	Electrostatic system
स्थिरोर्ज क्षेत्र	Conservative field
स्थूल-मापदंडीय } स्थूल-स्तरीय }	Macroscopic
स्थैतिक	Static
स्थैतिकी	Statics
स्पर्श-रेखीय	Tangential
स्पष्ट	Explicit (Maths)
स्पष्टत:	Explicitly
स्पैक्ट्रम	Spectrum
स्पैक्ट्रम विज्ञान	Spectroscopy
स्पैक्ट्रम वैज्ञानिक	Spectroscopist
स्पैक्ट्रमीय	Spectral

स्वच्छन्द	Arbitrary
स्वतंत्र इलैक्ट्रान	Free electron
स्वतन्त्र बन्धन	Free binding
स्वल्पान्तरालित	Closely spaced
स्वेच्छ	Arbitrary
स्वोत्सर्जी	Radio-active
स्वोत्सर्जिता	Radio-activity
हर	Denominator
हल	Root (of equation)

अंग्रेज़ी-हिन्दी

Absolute Scale	परम मापक्रम
Absolute Temperature	परम टेम्परेचर
Absorption	अवशोषण
Abstract	अमूर्त
Acceleration	त्वरण
Accelerator	त्वरित्र
Accoustics	ध्वानिकी; शब्द-विज्ञान
Action	क्रिया
Affinity	बन्धुता
Alchemist	कीमियागर
Algebraical equation	बीजीय समीकरण
Alkaline elements	क्षारीय तत्त्व
Alpha particle	आलफ़ा-कणिका
Alpha ray	आलफ़ा-किरण
Alternately	एकान्तरतः
Alternatively	विकल्पतः
Alternating current	प्रत्यावर्ती धारा
Amplitude	आयाम
Analyser	विश्लेषक, ध्रुवण-विश्लेषक
Analysis	विश्लेषण
Analytical	वैश्लेषिक
Anisotropic	विषमदिक्
Annihilation	विनाश
Anomalous	असामान्य

Anomaly	विषमता
Antenna	एरियल
Anti-cathode	प्रति-कैथोड
Anti-electron	प्रति-इलैक्ट्रान
Anti-symmetric	प्रति-संमित
Apparatus	उपकरण
Apparent	आभासी
Application	अनुप्रयोग; उपयोग
Applied (Science)	अनुप्रयुक्त; उपयोगी
Appreciable	अनुभवगम्य; प्रेक्षणगम्य; बोधगम्य
Approximate	सन्निकट
Approximately	सन्निकटतः
Approximation	सन्निकटन
Approximation, degree of—	सन्निकटन की कोटि
Arbitrary	स्वेच्छ; मनमाना
Assemblage	समाहरण
Associated wave	आनुषंगिक तरंग
Assymptotic	अनन्तस्पर्शी
Astrophysics	तारा-भौतिकी
Atomic	पारमाणविक
Atomic number	परमाणु-क्रमाक
Atomic weight	परमाणु-भार
Available energy	उपलभ्य ऊर्जा
Azimuth	दिगंश
Azimuthal quantum-number	दिगंशीय क्वांटम-संख्या
Ballistic	प्राक्षेपिक
Band spectrum	पट्टीदार स्पैक्ट्रम
Beam	किरणावली
Birefringence	द्वि-वर्तन
Blackbody	कृष्ण-वस्तु

Bond	बन्धन
Boundary condition	सीमान्त प्रतिबन्ध
Calculation	परिकलन
Calculus, differential	अवकल-कलन
Calculus, integral	अनुकल-कलन
Calculus of probabilities	प्रायिकता-कलन
Canonical equations	वैधानिक समीकरण
Canonically conjugate	वैधानिक संयुग्मी
Cartesian	कार्तीय
Cathode ray	कैथोड किरण
Causal bond	कार्य-कारण सम्बन्ध
Celestial Mechanics	खगोल-यांत्रिकी
Central	कैन्द्रिक
Centrifugal force	अपकेन्द्र बल
Characteristic	लाक्षणिक
Charge	आवेश; चार्ज
Circuit	परिपथ
Circuit, closed	बंद या निमीलित परिपथ
Circuit, open	खुला या उन्मीलित परिपथ
Classical	चिरप्रतिष्ठित
Coherent	पूर्वापर-विरोधहीन
Cohesion	संसंजन
Coincident	संपाती
Collective State	सामूहिक अवस्था
Collision	टक्कर; संघट्ट
Combination (algebra)	संचय
Conbination (chemistry)	संयोजन
Combination principle	संयोजन-नियम
Combustion	दहन
Commutative	व्यत्ययशील

Complementarity	परिपूरकता; संपूरकता
Complementary	परिपूरक; संपूरक
Complex	जटिल
Complex (maths)	सम्मिश्र
Complex (particle)	यौगिक कणिका
Complex (Zeeman effect)	असामान्य ज़ीमान-प्रभाव
Component	संघटक; घटक
Compound	यौगिक
Concept	धारणा; अवधारणा
Condensate	संघनित
Condition	(१) अवस्था (२) प्रतिबन्ध
Conduction	चालकता
Configuration	विन्यास
Configuration space	विन्यासाकाश
Conjugate	संयुग्मी
Conservation (of energy)	अविनाशिता
Conservative field	स्थिरोर्ज क्षेत्र
Constant (adj.)	स्थिर; अचर
Constant (noun)	नियतांक
Constitution	संरचना
Construction	रचना
Continuity	सांतत्य
Continuous	संतत
Continuum	सांतत्यक
Contraction	आकुंचन
Contradictory	परस्पर विरोधी
Convection	संवहन
Converse theorem	विलोम प्रमेय
Coordinates	निर्देशांक
Coordinate, axis of	निर्देशाक्ष

Coordinates System of	(१) निर्देशांक-पद्धति (२) निर्देशांक-तंत्र
Corpuscle	कणिका
Correspondence	आनुरूप्य
Correspondence principle	आनुरूप्य-नियम
Corresponding	तत्संगत, अनुरूपी, आनुषंगिक
Cosmic rays	अन्तरिक्ष-किरणें
Co-variance	सहचरण; सहचरत्व
Critical (Temp.)	सांक्रमणिक
Crystal	क्रिस्टल
Curl	कर्ल
Current	धारा
Curve	वक्र
Curvilinear	वक्ररेखीय
Cybernetics	साइबर्नेटिक्स
Cycle	आवर्तन; चक्र
Cyclic	चक्रीय; चाक्रिक
Damped	अवमन्दित
Data	न्यास
Decomposition	विघटन
Deduction	निगमन
Deflection	विक्षेप
Deformation	विकृति
Degenerate	अपकृष्ट
Degree (Temp.)	डिगरी
Degree (equation)	घात
Degree, of freedom	स्वतंत्रता की कोटि, स्वातंत्र्य-कोटि
Dematerialisation	द्रव्यत्व-विलोपन
Denominator	हर
Density	घनत्व

Derivative	व्युत्पन्न; अवकलज
Derived	व्युत्पन्न
Determinate	निर्णीत
Determinism	नियतिवाद; प्राक्-निर्णीतता
Development	विकास
Development (of mathematical expression)	प्रसार
Deviation	विचलन
Diagonal elements (of matrix)	विकर्णी अवयव
Diatomic	द्वि-परमाणुक
Dielectric constant	पारवद्युताक
Differential	अवकल
Differentiation	अवकलन
Diffraction	विवर्तन
Diffusion	विसरण
Dimensions (of body)	नाप; विस्तार
Dimensions (of space)	विमिति
Dimensions (of units)	विमिति
Dimensional equation	विमितीय समीकरण
Discharge	विसर्ग
Discharge-tube	विसर्ग-नलिका
Discontinuous	असंतत
Disintegration	विघटन
Disintegration constant	विघटनांक
Dispersion	वर्ण-विक्षेपण
Displacement	विस्थापन
Displacement current	विस्थापन धारा
Dis-symmetry	विसंमिति
Distribution	वितरण
Disturbance	विक्षोभ

Divergent	अपसारी
Divisibility	विभाज्यता
Dogma	आगम
Double refraction	द्वि-वर्तन
Double solution Theory	द्वि-साधन-सिद्धान्त
Doublet	द्विक
Drag	सहकर्षण
Dual	द्वैध
Dualistic	द्वैतमय
Duality	द्वैत
Dynamic	गत्यात्मक
Dynamical	गतिकीय
Dynamics	गतिकी; गतिविज्ञान
Elastic	प्रत्यास्थ
Elasticity	प्रत्यास्थता
Electric moment	वैद्युत घूर्ण
Electric vector	वैद्युत दिष्ट
Electrification	आवेषण; विद्युतन
Electro-dynamics	विद्युत्-गतिविज्ञान विद्युत्-गतिकी
Electromagnetic	विद्युत्-चुम्बकीय
Electromagnetic system	विद्युत्-चुम्बकीय पद्धति
Electron	इलैक्ट्रान
Electro-optics	वैद्युत-प्राकाशिकी
Electro-static system	स्थिर-वैद्युत पद्धति
Element	तत्त्व
Elmentary	मूल; मौलिक
Elementary particles	मूल कणिकाएँ
Elimination	निरसन
Ellipse	दीर्घवृत्त

Elliptical orbit	दीर्घवृत्तीय कक्षा
Emission	उत्सर्जन
Empirical	आनुभविक
Enclosure	कोष्ठक
Energetics	ऊर्जा-विज्ञान
Energy	ऊर्जा
Energy, kinetic	गतिज ऊर्जा
Energy, potential	स्थितिज ऊर्जा
Entropy	ऐन्ट्रोपी
Equation	समीकरण
Equation of state	अवस्था-समीकरण
Equilibrium	सन्तुलन
Equi-partition	सम-विभाजन
Error	भूल
Evolution	विकास; प्रगति
Exception	अपवाद
Exchange energy	विनिमय-ऊर्जा
Exclusion Principle	अपवर्जन-नियम
Exo-thermic	ऊष्मा-निक्षेपक
Expansion	प्रसार
Experiment	प्रयोग
Experimental	प्रायोगिक; प्रयोगलब्ध
Explicit	स्पष्ट
Exposure (to light)	प्रदीपन
Expression	व्यंजक; पद-संहति
Extinction	क्षय
Extrapolation	बहिर्वेशन
Family (of Curves)	कुल
Finite	परिमित
Fine-struction	सूक्ष्म-रचना

Fission	विखंडन
Fluctuation	घट-बढ़
Flux	प्रवाह
Force	बल
Forced Oscillation	प्रणोदित दोलन
Formalism	वैधानिक प्रक्रिया
Four-vector	चतुर्दिष्ट
Framework	ढाँचा; संस्थान
Free binding	स्वतंत्र बन्धन
Free electron	स्वतंत्र इलैक्ट्रान
Frequency	आवृत्ति
Fringe	फ्रिंज
Fringe (bright)	दीप्त फ्रिंज,
Fringe (dark)	अदीप्त फ्रिंज
Function (maths)	फलन
Gama Rays	गामा किरणें
General	व्यापक
Generalisation	व्यापकीकरण
Generalised	व्यापकीकृत
Geodesic	अल्पान्तरी
Geometrical optics	ज्यामितीय प्रकाश-विज्ञान
Gradient	प्रवणता
Gram-atom	ग्राम-परमाणु
Gram-molecule	ग्राम-अणु
Grating	ग्रेटिंग
Gravity	गुरुत्वाकर्षण
Gravity, centre of–	गुरुत्व-केन्द्र
Group	वर्ग; संघ
Group theory	संघ-सिद्धान्त
Gyromagnetic anomaly	घूर्ण-चुम्बकीय विषमता

Half integer	अर्ध-पूर्णांक
Half-life	अर्धायु
Half-vector	अर्ध-दिष्ट
Harmonic	प्रसंवादी
Harmonic oscillator	सरल दोलक
Harmonic terms	सरल-आवर्त पद
Heat	ऊष्मा
Heat, atomic	पारमाणविक ऊष्मा
Heat, specific	विशिष्ट ऊष्मा
Hetero-polar	विषम-ध्रुवी
Hole	गर्त
Homogeneous	समांगी
Homologous	समधर्मी; समानधर्मी
Homopolar	समध्रुवी
Hydraulics	द्रव-यांत्रिकी
Hypothesis	परिकल्पना
Idealisation	आदर्शीकरण
Idealism	प्रत्ययवाद
Identical	एक-सा, एक समान, एकात्मक, अभिन्न
Illumination	प्रदीपन
Image	प्रतिबिम्ब; प्रतिरूप
Imaginary	कल्पित; काल्पनिक
Immediate	अव्यवहित; तात्कालिक
Incandescent	तापदीप्त
Incident	आपतित
Incompressibility	असंपीड्यता
Incorporation	सन्निवेषण
Indeterminacy	अनिर्णीतता
Indeterminate	अनिर्णीत
Indeterminism	अनियतिवाद

Indeterministic	अनियतिवादी; नियतिवर्जक
Index	(१) संकेतांक; (२) घातांक
Index of refraction	वर्तनांक
Indistinguishable	अविभेद्य
Individual (adj)	(१) एकक (२) व्यक्तिगत
Individuality	व्यक्तित्व
Induction	प्रेरण
Induction method	उद्गमन विधि
Inertia	अवस्थितित्व
Infinite	अनन्त
Infinity	अनन्ती
Infra-red	अवरक्त
Insulator	विलागक (पृथक्कारी)
Instantaneous	तात्कालिक
Integer	पूर्णांक
Integral	(१) पूर्णांकी (२) अनुकल
Integrat, line—	रैखिक अनुकल
Integration	अनुकलन
Intensity	तीव्रता
Interacting	अन्योन्य प्रभावक
Interaction	पारस्परिक क्रिया
Interchangability	विनिमेयता
Interdependence	अन्योन्याश्रयत्व
Interference	व्यतिकरण
Interpretation	निर्वचन
Interval	अन्तराल
Interval (of space)	दिगन्तराल
Interval (of time)	कालान्तराल
Intra-atomic	अन्तःपरमाणुक
Intra-nuclear	अन्तः नाभिकीय; नाभिकाभ्यन्तरिक

Introduce	निविष्ट करना
Introduction	निवेशन
Invariant	निश्चर
Invention	आविष्कार
Inverse	प्रतिलोम
Inversion	प्रतिलोमीकरण; विपर्यय
Ion	आयन
Ionised	आयनित
Irreconcilable	असंधेय
Isolated	अनन्य-संसक्त
Isothermal	समतापीय
Isotope	समस्थानीय
Isotropic	समदिक्
Isotropy	समदिगत्व
Juxta-position	सान्निध्य
Kinematics	गतिमिति
Kinetics	बल-गतिकी
Kinetic Theory	गत्यात्मक सिद्धान्त
Large Scale (phenomenon)	स्थूल-मापदंडीय (घटना)
Least action (principle)	न्यूनतम क्रिया नियम
Least Time (,,)	न्यूनतम काल नियम
Light-vector	प्राकाशिक दिष्ट
Limited	सीमित
Limiting case	चरम दशा
Linear equation	रैखिक समीकरण, एक-घात समीकरण
Linear Oscillator	रैखिक दोलक
Line-integral	रैखिक अनुकल; रेखा-अनुकल
Localisation	अवस्थापन
Logarithm	लागरिथ्म
Luminiferous ether	प्राकाशिक ईथर

Macroscopic	स्थूल-मापदंडीय; स्थूल-स्तरीय
Magneton	मैगनेटान
Magneto-optics	चुम्बक प्राकाशिकी
Mass	द्रव्यमान
Material wave	द्रव्य-तरंग
Materialisation	द्रव्यत्व-सजन
Matrix	मैट्रिक्स
Matrix rows	मैट्रिक्स की पंक्तियाँ
Matrix columns	मैट्रिक्स के स्तम्भ
Mean	माध्य
Mechanical Equivalent	यांत्रिक तुल्यांक
Mechanics	यांत्रिकी
Medium	माध्यम
Mercury (planet)	बुध (ग्रह)
Meson	मेसान
Metric	मापतंत्र
Micro-physics	सूक्ष्म-भौतिकी
Microscopic	सूक्ष्म मापदंडीय; सूक्ष्म-स्तरीय
Model	प्रतिरूप
Modulus	मापांक
Molecule	अणु
Moment	घूर्ण
Momentum	संवेग
Monochromatic	एक-वर्ण
Monotonic	एकमुखी; एक-मानी
Motive power	संचालन शक्ति
Mountain of potential	विभव पर्वत
Multi-atomic	बहु-परमाणुक
Multiple	अपवर्त्य
Multiple valency	बहु-संयोजकता

Multiple-valued	बहुमानी
Mutual energy	पारस्परिक ऊर्जा
Nature	(१) प्रकृति; जाति (२) प्रकृत जगत्
Neutron	न्यूट्रान
Nicol prism	निकल प्रिज्म
Non-commutation rules	व्यत्ययहीनता के नियम
Non-corpuscular	अकणीय
Non-diagonal element (of Matrix)	अविकर्णी अवयव
Non-linear	अरैखिक
Normal	(१) सामान्य (२) अभिलम्ब
Normalisation	सामान्याकरण
Normally	अभिलम्बत:
Nuclear energy	नाभिकीय ऊर्जा
Nuclear Physics	नाभिकीय भौतिकी
Nucleon	न्यूक्लियान
Nucleus	नाभिक; न्यूक्लियस
Numerator	अंश
Numerical value	संख्यात्मक मान
Observable	प्रेक्ष्य; प्रेक्षणगम्य
Observed	प्रेक्षित
Observer	प्रेक्षक
Obstacle	अवरोध
Occupy (space)	अधिष्ठित करना
Odd	विषम
Opalescence	मेघिता; उपलभासिता
Operator (Maths)	कारक
Operation	क्रिया; प्रक्रिया
Optics	प्रकाश-विज्ञान; प्राकाशिकी
Orbit	कक्षा

Orbital	कक्षीय
Order (of differentiation)	वर्ण
Order (of magnitude)	कोटि (पारिमाणिक)
Order (of arrangement)	क्रम; अनुक्रम
Orientation	अनुस्थापन; दिगानुस्थापन; अनुन्यास
Orthodox	शास्त्रसम्मत
Orthogonal	लम्बकोणिक
Ortho-helium	आर्थो-हीलीयम
Overlapping	अतिव्याप्ति
Oxidation	आक्सीकरण
Paradoxical	विरुद्धाभासी; विरोधाभासी
Parameter	प्राचल
Par-helium	पार-हीलियम
Partial	आंशिक
Particle	कण; कणिका
Particle accelerator	कणिका-त्वरित्र
Penetrating	वेधनशील
Perfect gas	आदर्श गैस
Perihelion	परिसौर विन्दु
Period	आवर्त काल
Periodic motion	आवर्त गति
Periodicity	आवर्तत्व
Perpendicular	लम्ब, लम्ब रूप, समकोणिक
Perturbation	संक्षोभण
Phase	कला
Phase, opposite	विषम कला; प्रतिकूल कला
Phase, same	समकला; अनुकूल कला
Phase velocity	कला-वेग
Phase wave	कला-तरंग
Phenomenological	घटनामूलक

Photo-electric	प्रकाश-वद्युत
Photo-electricity	प्रकाश-विद्युत्
Photon	फ़ोटान
Physics	भौतिकी; भौतिक विज्ञान
Physical	भौतिक
Physical optics	भौतिक प्रकाश-विज्ञान
Pilot wave	नाविक-तरंग
Planetary	ग्रहीय; ग्रहतुल्य
Point-like	विन्दु-कल्प
Point-mechanics	विन्दु-यांत्रिकी
Polarisable	ध्रुवणीय
Polarisation	ध्रुवण
Polarisation, circular	वृत्त-ध्रुवण
Polarisation, elliptical	दीर्घवृत्तीय ध्रुवण
Polarisation, plane	समतल-ध्रुवण
Polarised	ध्रुवित
Polarity	ध्रुवीयता
Pooling	संकोषण
Positron	पाज़ीट्रान
Postulate	अधिमान्यता; अधिमान्य नियम मूल कल्पना; संकल्पना
Potential	विभव
Potential energy	स्थितिज ऊर्जा
Potentially	संभाव्य रूप में; प्रच्छन्न रूप में
Power	शक्ति
Power (Maths)	घात
Practical	व्यावहारिक
Precaution	पूर्वावधानता
Precise	परिच्छिन्न; परिशुद्ध
Predicted	प्रागुक्त

Prediction	प्रागुक्ति
Pressure	दबाव; दाब
Primary	प्राथमिक
Principle	सिद्धान्त; नियम
Prism	प्रिज़्म
Probabilistic	प्रायिकता-मूलक
Probability	प्रायिकता
Probable	प्रायिक
Probable, most	प्रायिकतम
Propagation	प्रचरण
Proper function	इष्ट-फलन
Proper mass	नैज द्रव्यमान
Proper Time	नैज समय
Proper value	इष्ट-मान
Property	गुण
Proportional	अनुपाती
Proton	प्रोटान
Provisional	अन्तःकालीन
Qualitative	गुणात्मक
Quantity	(१) मात्रा, परिमाण, (२) राशि
Quantitative	मात्रात्मक; पारिमाणिक
Quantum	क्वांटम
Quantum of action	क्रिया का क्वांटम
Quantum field theory	क्वांटम-क्षेत्र-सिद्धान्त
Quantum number	क्वाटम-सख्या
Quantum number, azimuthal	दिगंशीय क्वांटम-संख्या
Quantum number, inner	आभ्यन्तरिक क्वांटम-संख्या
Quantum Physics	क्वांटम भौतिकी
Quantum potential	क्वांटम विभव
Quasi-periodic	आवर्त-कल्प; आवर्ताभासी

Quotient	भागफल, लब्धि
Radiant energy	विकिरण ऊर्जा
Radiation	विकिरण
Radiation, equilibrium	सन्तुलन-विकिरण
Radio-active	स्वोत्सर्जी; रेडियमधर्मी
Radio-activity	स्वोत्सर्जिता; रेडियमधर्मिता
Radius vector	सदिश त्रिज्या
Random	यदृच्छ; यादृच्छिक
Randomness	यदृच्छता; यादृच्छिकता
Range	परास
Rank (of matrix)	पदवी; कोटि
Rare	विरल
Ratio	अनुपात
Rational Mechanics	शुद्ध यांत्रिकी
Ray	किरण
Reaction	प्रतिक्रिया
Real	वास्तविक
Realist	वास्तववादी
Reality	वास्तविकता
Reciprocal	(१) व्युत्क्रम (२) अन्योन्यानुवर्ती
Reciprocity	अन्योन्यानुवर्तन
Rectangular	समकोणिक
Red-shift	रक्ताभिमुखी विस्थापन; रक्तविस्थापन
Refracting	वर्तक
Refraction	वर्तन
Regular doublet	वैध द्विक
Relation	अनुबन्ध
Relativistic	आपेक्षिकीय
Relativity theory	आपेक्षिकता का सिद्धान्त
Relativity, general	व्यापक आपेक्षिकता

Relativity, special	विशिष्ट आपेक्षिकता
Represent	निरूपित करना
Representation	निरूपण
Representative point	निरूपक विन्दु
Research	शोध, अनुसंधान; गवेषणा
Resolve	विश्लेषण करना
Resolution	विश्लेषण; विभेदन
Resolving power	विभेदन-शक्ति
Resonance	अनुनाद
Resonant	अनुनादी
Restoring force	प्रति-विस्थापन बल
Restraining force	नियंत्रक बल
Rigid	दृढ़; परिदृढ़
Rigorous (calculation)	कठोर; प्रकृष्ट
Ring	वलय
Rontgen rays	रंतजन, रांजन किरणें; एक्स-किरणें
Root (of equation)	हल
Rotation	घूर्णन
Saturated	संतृप्त
Saturation	संतृप्ति
Scalar	अदिष्ट
Scale	मापदंड
Scattering	परिक्षेपण; विकीर्णन
Schematic	योजनात्मक, व्यवस्थात्मक
Secondary	द्वैतीयिक
Secular	दीर्घकालिक
Selection principle	वरण-नियम
Sense (of direction)	अभिदिशा
Sequence	अनुक्रम
Series	श्रेणी

Sextuple	षड्गुण
Shape	आकृति
Shell	संपुट; खोलक; परिच्छद
Significant	सार्थ; अर्थपूर्ण
Simultaneous	यौगपदिक; समक्षणिक
Simultaneous equations	यौगपदिक समीकरण
Sine	ज्या
Singlet	एकक
Single-valued	एकमानीय
Singular (zone)	विचित्र प्रदेश
Singularity	विचित्रता
Size	आकार; नाप
Slope	प्रवणता
Slowing of clock	मन्दन
Solar system	सौर मंडल
Solution (of equation)	हल
Space	आकाश
Spaced closely	स्वल्पान्तरालित
Space-Time	दिक्-काल
Spatial	आकाशीय
Specific heat	विशिष्ट ऊष्मा
Spectral Term	स्पैक्ट्रमीय पद
Spectroscope	स्पैक्ट्रमदर्शी
Spectroscopist	स्पैक्ट्रम-वैज्ञानिक
Spectrum	स्पैक्ट्रम
Sphere	गोला
Spherical wave	गोलीय तरंग
Spin	नर्तन
Spinning	नर्तक
Spinor	नार्तनिक

Spinorial	नार्तनिकीय
Splitting	विदलन
Square	वर्ग
Stable	स्थायी
Static	स्थैतिक
Statics	स्थैतिकी
Stationary action	स्थिर क्रिया
Stationary integral	स्थिर अनुकल
Stationary State	स्थावर अवस्था
Stationary wave	अप्रगामी तरंग
Statistical mechanics	सांख्यिकीय यांत्रिकी
Statistics	सांख्यिकी
Stereo-chemistry	त्रिविमितीय रसायन
Structure	संरचना
Subjectivism	व्यक्तिनिष्ठवाद
Substitution	प्रतिस्थापन
Successive	क्रमागत; उत्तरोत्तर
Super-conductivity	अतिचालकता
Super-imposition	अध्यारोपण
Supernumerary	अतिरिक्त; अधिसंख्य
Super-quantisation	अति-क्वान्टमीकरण
Symbolic	सांकेतिक
Symbolism	सांकेतिकता; संकेत-प्रणाली
Symmetrical	संमित
Symmetry	संमिति
Synchronisation	संकालन
Synchronism	संकालत्व
Synthetic	संश्लेषित
Synthesis	संश्लेषण
System (of Coordinates)	तंत्र

System (of bodies)	निकाय; संघ
System (of equations)	संहति; संघ
Table	सारणी
Table of numbers	अंक-सारणी
Tangential	स्पर्श-रेखीय
Technical	तकनीकी; प्राविधिक
Tele-communication	दूर-संचारण
Temperature	टेम्परेचर
Tension	तनाव
Tensor	टेन्सर
Term	पद
Term, spectral	स्पैक्ट्रमीय पद
Theorem	प्रमेय
Theoretical	सैद्धान्तिक
Theory	सिद्धान्त
Thermal agitation	तापीय संक्षोभ
Thermionic	तापायनिक
Thermo-dynamics	ऊष्मा-गतिकी
Threshold	देहली
Time-integral	कालानुकल
Trajectory	गमन-पथ; प्रक्षेप-पथ
Transcendental (maths)	बीजातीत
Transformation	रूपान्तरण
Transition	संक्रमण
Transmission	पारगमन, संचारण
Transmutable	तत्त्वान्तरणशील
Transmutation	तत्त्वान्तरण
Transport	परिवहन
Transposition	पक्षान्तरण
Trans-uranic	उत्तर-यूरेनियम

Transverse	अनुप्रस्थ
Triple	त्रिगुण
Tunnel effect	सुरंग-प्रभाव
Ultra-violet	परा-बैंगनी
Uncertainty	अनिश्चितता
Uncertainty relations	अनिश्चितता के अनुबन्ध
Uncoordinated	असम्बद्ध
Uniform	एक-समान; समांगी
Uniform velocity	अचर वेग
Uniform field	समांगी क्षेत्र
Unique	अद्वितीय; अविकल्पी; अनन्य
Uniquely	अविकल्पत:; अनन्यत:
Unit	मात्रक; एकांक
Universal	सार्वत्रिक
Valency	संयोजकता
Valency, directed	दिष्ट संयोजकता
Valency, multiple	बहु-संयोजकता
Validity	वैधता, मान्यता, औचित्य
Valley of potential	विभव-उपत्यका
Variation	परिणमन; विचरण
Vary	विचरना; विचरित होना
Vector	दिष्ट; दिष्ट राशि; सदिश
Vectorial	दिष्टीय
Verification	सत्यापन
Verify	सत्यापित करना
Vibration	कम्पन
Vicious circle	दूषित चक्र (दुश्चक्र)
Viscosity	श्यानता
Vital	जैव
Wave	तरंग

Wave, plane	समतल तरंग
Wave, spherical	गोलीय तरंग
Wave, stationary	अप्रगामी तरंग
Wave-equation	तरंग-समीकरण
Wave-front	तरंगाग्र
Wave-group	तरंग-संघ
Wave-guide	तरंग-प्रणाल
Wave-Mechanics	तरंग-यांत्रिकी
Wave-number	तरंगांक
Wave-packet	तरंग-गुच्छ
Wave-surface	तरंग-पृष्ठ
Wave-train	तरंग-माला
Weight	भार
Weighted mean	भारित माध्य
Whole multiple	पूर्ण अपवर्त्य
Whole number	पूर्णांक
Work	कार्य
World-force	विश्व-बल
World-line	विश्वरेखा
X-rays	एक्स-किरण
Zeeman effect	जीमान-प्रभाव
Zeeman effect, anomalous	असामान्य जीमान-प्रभाव
Zeeman effect, complex	असामान्य जीमान-प्रभाव
Zeeman effect, normal	सामान्य जीमान-प्रभाव

दिनांक Date	उधारकर्त्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्त्ता की संख्या Borrower's No.

